बापूके पत्र – ५

कुमारी प्रेमाबहन कंटकके नाम

[ता० २८–२–'२९ से १६–१–'४८]

सम्पादक

काकासाहब कालेलकर

अनुवादक

रामनारायण चौधरी

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर

अहमदाबाद–१४

तीर्थस्नान

पाठक देखेंगे कि भिन्न भिन्न प्रकारके लोगोंको लिखे गये गांधीजीके पत्र-संग्रहोंमें भी प्रेमाबहनको लिखे गये अिस पत्र-संग्रहका महत्त्व कुछ विशेष है। अिसमें जिन विषयोंकी चर्चा की गअी है अुनकी विविधता तो ध्यान आकर्षित करती ही है। लेकिन अुसके सिवा समय समय पर दी गअी आश्रम-जीवन संबंधी हिदायतें गांधीजीके विचारों और अुनके कार्यको समझनेके लिअे कीमती मसालेका काम देती हैं।

सन् १९३० जैसे नाजुक समयमें जब नमककी कूचके सिलसिलेमें लगभग सारे आश्रमवासी आश्रम छोड़कर दांडीकी तरफ चले गये थे, तब आश्रमको चलानेका भार आश्रमकी बहनोंने अपने सिर पर लिया था। अिसलिअे आश्रम-जीवन संबंधी सिद्धान्तोंसे लेकर आश्रममें रहनेवाले बच्चोंके विकासको ध्यानमें रखकर दी गअी छोटीसे छोटी हिदायतें भी हमें अिसमें विस्तारसे जाननेको मिलती हैं।

बापूजीके पत्र-संग्रहका अर्थ है व्यापक मनुष्य-जीवनके अनेक छोटे-मोटे पहलुओं पर अेक क्रांतदर्शी समाजशास्त्रीका प्रकाश। गांधीजीने आजकलके अलग अलग शास्त्रोंका अध्ययन नहीं किया था। अिसीलिअे वे चाहे जितनी गहराअीमें अुतर कर, प्रत्येक विषयका मर्म समझकर, अत्यन्त सादी भाषामें लोगोंका मार्गदर्शन कर सके और खास तौर पर स्त्रियोंका मार्ग-दर्शन करनेके लिअे अुन्होंने अपने भीतर स्त्री-हृदयका विकास किया। गांधीजी द्वारा बहनोंको लिखे गये पत्रोंमें हमें ये सारी सिद्धियां देखनेको मिलती हैं।

हरअेक व्यक्तिकी योग्यता, अुसकी खूबी और अुसकी गहराअीको समझकर अुस व्यक्तिकी आकांक्षाओंकी तृप्ति हो सके अिस प्रकारकी हिदायतें वे देते थे।

और बापूजीमे धैर्य भी कितना था? मनुष्यका स्वय अपने अूपर जितना विश्वास हो अुससे कही अधिक विश्वास बापूजी अुस पर करते थे। हर व्यक्तिकी कमजोर श्रद्धाको वे मजबूत बनाते थे और अन्तमे मनुष्यकी सामान्य शक्तिसे अधिक काम सहज ही अुससे करा लेते थे।

गाधीजीके सार्वजनिक लेख और भाषण देशके सामने है और जो लोग गाधी-साहित्यका महत्त्व समझते है अुन्हे अब अुस साहित्यका गहरा अध्ययन करनेका मौका भी मिला है। लेकिन गाधीजीका पत्र-साहित्य अुनके भाषणो और लेखोसे कम नही है, कम महत्त्वका तो वह है ही नही। वहा अुनकी लेखन-शैली भी बिलकुल अनोखी होती है। किसी व्यक्तिकी रग-रगको पहचानकर अुसे तालीम देने, अुसका मार्गदर्शन करने, अुसे सभालने और आश्वासन या प्रेरणा देनेका काम करनेमे वे कभी थकते ही नही थे। अेक ही बातको अुन्ही शब्दोमे बार-बार कहनेमे वे अुकताते नही थे। जैसे दो व्यक्तियोके बीच यह होड लगी हो कि किसमे धैर्य ज्यादा है! अेक शिक्षकसे किसीने पूछा, "तुम अेक ही चीजको बीस बीस दफा, बार बार क्यो समझाते हो?" शिक्षकने अपने स्वधर्म-सुलभ धैर्यके साथ कहा, "अिसलिअे कि अुन्नीस बार कही हुअी बात बेकार न जाय।"

हमारे पास बहनोको लिखे गये बापूजीके पत्रोके कुछ सग्रह है और अुनसे भी ज्यादा भविष्यमे प्रकाशित होगे। अुन सबमें कुछ बाते तो समान रूपसे दिखाअी देगी, क्योकि मनुष्य सब जगह अेकसा ही रहता है। और फिर भी प्रत्येक व्यक्तिके साथ किये गये पत्र-व्यवहारमे बापू-जीका मार्ग अलग अलग दिखाअी देता है। अुनके सम्पर्कमे आअी हुअी विदेशी महिलाओमे से दो महिलाओको लिखे गये पत्र हमारे पास है —मीराबहनको लिखे गये पत्र और अेस्थर फेरिंगको लिखे गये पत्र। कुमारी फेरिंगने बादमे विवाह कर लिया और श्रीमती मैनन बन गअी। अेक मिशनरी बालिका भारतमे आकर अीसाके प्रेमका प्रचार करने लगती है, स्वय अेक भारतीय युवकके प्रेममें पडती है और भिन्न वशके लोगोके बीचमे होनेवाले विवाहकी दिक्कतोको महसूस करती है।

अिसमे ओीसाओी चर्चका प्रश्न, सरकारी नीतिका प्रश्न, दोनो ओरके कुटुम्बोका प्रश्न और सबसे ज्यादा अलग अलग धर्मोको माननेवालोके आध्यात्मिक प्रश्न -- ये सब प्रश्न अुस भोली बालिकाके सामने खडे होते है और वह ओीसा मसीह जितनी ही श्रद्धा बापूजी पर रख कर अुनमे आश्वासन प्राप्त करना चाहती है। अुसे लिखे गये पत्र अलग प्रकारके है और मीराबहनको लिखे गये पत्र अलग प्रकारके।

स्वदेशियोमे भी पटियाला तरफकी अेक अूचे मुस्लिम खानदानकी कुमारी अम्तुस्सलाम गाधीजीकी धर्मनिष्ठासे आकर्षित होकर अुनके पास आती है। पवित्र कुरानके प्रति अुनकी निष्ठा, अुज्ज्वल देशभक्ति और अुनकी तेजस्विताको देखकर गाधीजी अुनको रास्ता दिखाते है। अुनको लिखे गये पत्रोका सारा सग्रह दूसरे ही प्रकारका है। अेक अत्यत सस्कारी वृद्ध पुरुषको स्वेच्छासे पतिके रूपमे पसन्द करनेवाली और अुनके कार्यमे शत-प्रतिशत ओतप्रोत होनेवाली श्रीमती कुसुमबहन देसाओी, विधवा होनेके बाद, आश्वासनके लिअे बापूजीके पास आती है, पूज्य बाका हृदय जीत लेती है, लेकिन आश्रमका अग बनकर नही रहना चाहती — अिन कुसुमबहनको लिखे गये पत्र भिन्न प्रकारके है। कुसुमबहनकी सारी शक्ति अुनकी पतिनिष्ठामे प्रगट होती है। अुस निष्ठाको प्रोत्साहन देकर अुमीके द्वारा बापूजी अुन्हे समाज-सेवा करने और अपनी अुन्नति करनेकी प्रेरणा देते है।

बिहारके नेता ब्रजबाबूकी पुत्री और समाजसत्तावादी जयप्रकाश-नारायणकी पत्नी प्रभावतीबहन तो गाधीजीकी विशेष पुत्री रही है। अुनकी कोमल वृत्तिको सभालनेके लिअे गाधीजीने कितनी सावधानी बरती है!

बापूजीने भारतमे आकर अपना काम शुरू किया और राष्ट्र-सेविकाके रूपमे अुनकी नजर श्रीमती सरलादेवी चौधरी पर पडी। अिस शक्तिशाली गर्वीली स्त्रीको तालीम देनेका बापूजीका सारा तरीका अलग था। जब कि सब प्रकारसे तैयार होनेके बाद गाधीकार्य करनेके लिअे अपने

पास आओी हुओी राजकुमारी अमृतकौरसे काम लेनेकी बापूजीकी पद्धति अलग थी।

भोली भक्तिसे बापूजीके पास आश्वासन और प्रेरणा लेनेके लिअे आओी हुओी बुजुर्ग गगाबहनको लिखे गये पत्र अेक प्रकारके है, तो कॉलेजकी आधुनिक शिक्षा प्राप्त करके अपनी चर्चा-परायणता और हृदयकी निष्ठा दोनोको बापूजीके चरणोमें अर्पित करनेवाली प्रेमाबहनको लिखे गये पत्र दूसरे प्रकारके है।

अेक अेक व्यक्तिको लिखे गये गाधीजीके पत्रोका सग्रह गाधीजीका व्यक्तित्व समझनेके लिअे बहुत अुपयोगी है। अिसलिअे कुमारी प्रेमाबहन कटकसे मैने कहा कि अिन पत्रोको समझानेके लिअे पहले वे थोडा अपने बारेमे लिख दे और स्वय बापूजीके प्रति और अुनके कामके प्रति कैसे आकर्षित हुओी यह भी लिख दे।

बीस साल तक अखड रूपसे चलनेवाले अिस पत्र-व्यवहारके दिनोमे बापूजीके जीवनमे जो अनेक परिवर्तन हुअे और अुनके (प्रेमाबहनके) अपने जीवनमे भी जो परिवर्तन हुअे अुनका प्रतिबिब अिन पत्रोमे कैसे पडता है, यह समझानेके लिअे बीच बीचमे छोटी प्रस्तावना और टिप्प-णिया कडीके रूपमे देने और बापूजीके चले जानेके बाद अुनका काम आगे बढानेमे अुन्हे स्वय जो अनुभव हुअे वे अनुभव देकर सारी पुस्तक पूरी करनेकी बात मैने प्रेमाबहनसे कही।

*

अनेक पहाडो, प्रदेशो और तरह तरहकी भूरचनाओमे से पानीके प्रवाह आकर जिस तरह गगा, सिधु, ब्रह्मपुत्र, नर्मदा या कृष्णा जैसी नदियोमे मिलते है, अुसी तरह भिन्न भिन्न प्रकारके सस्कारोसे जिनका व्यक्तित्व बना था अैसे स्त्री-पुरुष गाधीजीसे आकर मिले और अुन्होने गाधी-कार्यमे अपना अपना हिस्सा अदा किया। अिसमे प्रेमाबहनका हिस्सा तर्कप्रधान किन्तु श्रद्धाधन महाराष्ट्रका हिस्सा माना जायगा। आखिरी दो-तीन पीढियोमे जो लोग महाराष्ट्रके वातावरणमे छोटेसे बडे हुअे

अुन सब पर शिवाजी, रामदास, ज्ञानेश्वर और तुकाराम आदि लोकोत्तर विभूतियोका असर पडा मालूम होता है। देशकी आजादी और आध्यात्मिक अुन्नति — अिन दोनो अुत्कट भावनाओका मेल अिन पीढियोमे देखनेको मिलेगा। अिन दोनो भावनाओके लिअे घरबारका त्याग करके, मस्कार-मुखको तिलाजलि देकर कोअी अद्भुत काम (something tremendous) करनेकी धुनके दर्शन अिन सबमे कम-ज्यादा मात्रामें होते है। माताकी अिच्छाका आदर करके विवाहके लिअे तैयार हुअे युवक नारायण पुरोहितोके मुहसे 'सुमुहूर्त सावधान' की चेतावनी सुनते ही चौंककर विवाह-मडपसे भाग गये और १२ वर्ष तक तपस्या करके समर्थ रामदास बने — यह प्रसग प्रत्येक महाराष्ट्रीके हृदयमे बसा हुआ हे। श्री रामदास स्वामीने छत्रपति शिवाजीकी मदद की और अध्यात्म तथा राजनीतिका समन्वय किया, यह श्रद्धा महाराष्ट्रके हृदयमे दृढ हे। श्रीकृष्ण और अर्जुन, शिवाजी और रामदास, विद्यारण्य और विजयनगरके राजा — अिस प्रकारकी जोडिया ढूढ निकालनेमे महाराष्ट्रको बहुत रस आता है। चन्द्रगुप्तका राजगुरु महामात्य चाणक्य मूलत वैराग्यशील तपस्वी ब्राह्मण था। अुसने अपना राजनीतिक मिशन सफल बनानेके लिअे चाहे जितने दावपेच किये हो, लेकिन अन्तमे अपने शत्रु अमात्य राक्षसको ही समझा-बुझाकर चद्रगुप्तका राज्य सोपा और स्वय गम्भीर प्रायश्चित्त करनेके लिअे जगलमे चला गया। अिस प्रकार अध्यात्म और राजनीतिका समन्वय करनेका प्रयत्न हमारे देशमे हमेशा होता आया है। और अिसमे जो सफल नही हुअे अुन्होने राजनीतिके अतमे अध्यात्मकी ही शरण ली है।

बापूजीने असत्य, कपट और हिंसाको टाला, 'सर्वभूतहिते रत' जैसे आदर्शके द्वारा राजनीति और अध्यात्म दोनोके द्वन्द्वको मिटाकर दोनोको अेक ही कर दिया।

पहले साधना और बादमे मेवा अैसा क्रम भी महाराष्ट्रमें — बल्कि सारे भारतमे माना जाता रहा है। पहले साधनाके द्वारा योग्यता हासिल करो और अुसके बाद चाहे जितनी समाज-सेवा करो, तब वह तुम्हारे

जीवनमे बाधक नही होगी, अैसा कहा जाता था। यह भी कहा जाता था कि सेवा करके तृप्त हो जानेके बाद अन्तमे धारणा, ध्यान और समाधिका ही मार्ग अपनाना है। बापूजीने यहा भी द्वैतको दूर करके सेवाको ही साधनाका रूप दे दिया। सेवा करनी हो तो वह पक्षपात-रहित विश्वात्मैक्य-बुद्धि धारण करके सबकी करनी चाहिये। जो हमारे पासके लोग है, हमारी सेवाके विशेष अधिकारी है, अुन्हीकी शुद्ध सेवासे प्रारम्भ करना चाहिये — अिस स्वदेशी तत्त्वको गाधीजीने सेवाका नियम और साधनाका आधार बनाया। हम अगर शुद्ध भाव और शुद्ध रीतिसे सेवा करते जायगे, तो हमारे योग्य क्षेत्र भगवान हमे देगा ही, अिस विश्वासके साथ अुन्होने सेवारूपी साधना की। अितनी ही नही, बल्कि अिस सेवाको ही अुत्कट ध्यानका साधन बनाया, और अिस योगके द्वारा ही अुन्होने अपना जीवन पूरा किया। ध्यानमे बैठकर समाधिमे हम पहुचते है तब शरीर अपने आप नष्ट हो जाता है। यह आदर्श हम पढते आये है। भौतिक नियमोके अनुसार शरीर-धारणकी जरूरत न रहने पर शरीर अपने आप नष्ट हो जाता होगा। लेकिन शरीरके नष्ट हो जानेके प्रकार अीश्वरके यहा अनन्त होते है। शिबि राजाने अपना शरीर अर्पित किया, गजेन्द्रका मोक्ष हुआ अुस समय भी भगवद्भक्ति द्वारा अुसे समाधि-लाभ ही हुआ था। अनासक्त सेवा करते करते चित्त प्रार्थनामय हो गया, अुस समय रामनामके स्मरणके साथ शरीर छूट गया, यह भी योग द्वारा देह छोडनेके अनेक प्रकारोमे से ही अेक प्रकार माना जाना चाहिये।

दूसरी दृष्टिसे देखे तो गाधीजीने माता-पिताकी सेवा करते हुअे पारिवारिक सद्गुणोका विकास किया। अुसमे से वे सारे कुटुम्बियोको अभेद दृष्टिसे देखने लगे। कुटुम्बका अर्थ अुनकी दृष्टिमे विशाल होता गया। अैसा करते करते 'अपने' और 'पराये' का भेद ही नही रहा। अुनका चिंतन अिस तरह चला कि किसी भी व्यक्ति या पक्षका द्रोह न हो, और अुनमे विश्वात्मैक्य-बुद्धि दृढ हुअी। अिस प्रकार प्राचीन कालकी अनेक साधना-परम्पराओमे गाधीजीने समन्वयके अेक नये प्रकारकी वृद्धि की।

हमारे जमानेमें अध्यात्म और समाज-सेवाके प्रयोग करनेवाले तीन महापुरुषोंको हम जानते हैं स्वामी विवेकानन्द, श्री अरविन्द घोष और महात्मा गांधी। तीनोंके प्रति महाराष्ट्रके साधकोंका असाधारण आकर्षण है। अिसी तरहके आकर्षणके कारण प्रेमाबहन बापूजीके पास आओीं। स्त्री-सुलभ व्यक्तिपूजा अुनमें भरपूर दिखाओी देती है। बापूजी अिस प्रकारकी व्यक्तिपूजाके पीछे रही भावनाका आदर करते थे, लेकिन अुसे प्रोत्साहन नहीं देते थे। व्यक्तिपूजासे मुक्त होकर हमें गुण-पूजक होना चाहिये और अुससे भी आगे जाकर अिन गुणोंकी प्रेरणा देनेवाले चेतनको — आत्मशक्तिको हमें अपनाना चाहिये — यह थी अुनकी अध्यात्म-साधना। व्यक्तिपूजा, वस्तुपूजा, मूर्तिपूजा आदि जडपूजाको वे अच्छी तरह समझ सकते थे और अिसीलिअे अिस भूमिकावाले लोगोंको आगेका रास्ता दिखाना अुनके लिअे संभव हुआ। आत्मशुद्धि, चित्तकी शान्ति और देशकी सेवा अिन तीनोंका गांधीजीने शुरूसे आखिर तक समन्वय किया था।

अैसा मालूम होता है कि प्रेमाबहनके सामने ज्ञानेश्वरकी छोटी बहन मुक्ताबाओी, नामदेवके घरकी दासी जनाबाओी और राजस्थानके राज-परिवारकी मीराबाओी अिन तीनोंके आदर्श अेकत्र हुअे हैं। अिसीसे अुनकी बापूभक्ति अितनी अुत्कट है। राष्ट्रसेवामें मार्गदर्शकके रूपमें गांधीजीको पसन्द करते हुअे अुनके सत्याग्रह पर प्रेमाबहनका मन मानों चिपक गया और अुन्होंने समझ लिया कि सत्याग्रहकी योग्यता हासिल करनी हो तो अुसके लिअे आश्रम-जीवन अनिवार्य है। अिसीलिअे सत्याग्रह आश्रमके साथ वे अितनी अेकरूप हो सकीं। साबरमतीका सत्याग्रह आश्रम छोडनेके बाद भी अुन्होंने सासवडमें आश्रम-जीवन ही खडा किया और अुसकी प्रवृत्तियोंको आगे बढाया। आज वे सारी प्रवृत्तियां समेट लेने पर भी अुनका जीवन और वृत्ति आश्रममय ही है। और यह आश्रम-जीवन ही अेक अैसी साधना है, जिसमें अध्यात्म और

व्यवहार, समाज-सेवा और आत्म-चिन्तन, कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग और ध्यानयोग सब अेक हो जाते है।

आश्रमके व्रतोकी जाच करने पर ही यह चीज स्पष्ट होगी। अिन व्रतोके अनुसार चलनेकी जागरूकता जिनमे होगी, वे ही अूपरके कथनकी सत्यताको स्वीकार करेगे।

बापूजीके पत्रोमे पग-पग पर अुनकी जीवन-साधना प्रगट होती है। स्वय अपनेको भूल जाना, शून्य बन कर रहना, अपने दोष देखना, दूसरे लोगोके गुण देखना, अपने प्रति कठोर बनना, दूसरेके प्रति अुदार रहना, जो दूर है अुन्हे समझनेके लिअे विशेष प्रयत्न करना — आदि बाते अुनके लेखोमे बहुत देखनेको नही मिलती, परन्तु अुनके पत्रोमे विशेष रूपसे दिखाअी देती है। और जो लोग अुनकी दृष्टिमे निकटके साधक थे या जिन्हे वे आश्रमके आदर्शोके मुताबिक ढालना चाहते थे, अुन्हे लिखे गये पत्रोमे बापूजीने अपनेको और अपनी साधनाको अुत्कट रूपमे प्रगट किया है।

पाठक यह न भूले कि यह पत्र-व्यवहार अुन लोगोके बीच हुआ है, जो पारमार्थिक भावसे अुत्कट रूपमे सेवामय जीवन जीना चाहते है। अिसमे दभके लिअे कोअी स्थान ही नही होता। अपने दोषोको छिपानेकी और सामनेवाले मनुष्यकी दृष्टिमे अच्छे दिखाअी देनेकी वृत्ति भी अिसमें नही होती। जिस खरेपनके गुणके कारण गाधीजीकी 'आत्मकथा' को दुनियाके तमाम राष्ट्रोके लोगोमे आदर मिला है, वही खरेपनका गुण अिस पुस्तकमे पग-पग पर दिखाअी देता है।

'अिन पत्रोमे से चुनकर निकाले हुअे ९० पत्रोका अनुवाद कअी साल पहले प्रकाशित हुआ था। अुसके लिअे मैने प्रस्तावना लिख दी थी। अुस पुस्तकका सम्पादन भी मेरे हाथो हुआ होता तो अेक-दो पत्रोमे मैने काफी काटछाट की होती। मै गम्भीर बीमारीमे फस गया और वे पत्र जैसेके तैसे छप गये। अुन परसे महाराष्ट्रमे काफी चर्चा और टीका हुअी। अुस टीकाका थोडासा प्रसाद मुझे भी मिला। गाधी-सेवा-सघके

अुस समयके अध्यक्ष श्री किशोरलालभाअीने अुस पुस्तकको वापस ले लेनेकी मुझे सूचना की। मैने अपनी अशक्ति वता कर अुन्हीसे अिसकी जिम्मेदारी लेनेकी प्रार्थना की। अन्तमे यह मामला पूज्य वापूजीके पास गया। अुन्होने कहा कि जिन पत्रोको लेकर अितनी टीका हुअी है अुनके छपनेसे कुछ भी नुकसान नही हुआ है, और अेक वार प्रकाशित होनेके वाद वे पत्र वापस तो लिये ही नही जा सकते।

अिस वार अिस सारे सग्रहका सपादन मेरे हाथो हुआ है। शिष्टाचारकी दृष्टिसे जो नाम प्रकाशित नही किये जा सकते अुन्हे छोड दिया गया है। कही कही अर्थको स्पष्ट करनेके लिअे कोष्ठकमे शब्द जोडे गये है। अिस वार भी कुछ ज्यादा काटछाट करनेकी मेरी अिच्छा थी, लेकिन गाधीजीको गये आज वारह वर्ष हो गये है। दुनियाभरके लोग अुनकी जीवन-साधनाके वारेमें अधिक जाननेकी अिच्छा प्रगट करते रहे है। ब्रह्मचर्यकी वात हमारे देशमे अेक ओर पुरानी है और दूसरी ओर रूढ़िके चौखटेमे वधी हुअी है, जिसे गाधीजी वाडा कहते थे। ब्रह्मचर्य अेक अद्‌भुत शारीरिक तप है, आध्यात्मिक साधना है और अव यह सवसे वडा सामाजिक प्रयोग भी वन गया है। स्त्री-पुरुषके वीचका समग्र सवध दुनियाकी गहरी चर्चाका विषय वन गया है। अैसे समयमे गाधीजी जैसे सत्यनिष्ठ और लोकोत्तर श्रद्धावाले व्यक्तिने जिस आदर्शका विकास किया और तत्सम्वन्धी जो अनुभव प्राप्त किया, दुनियाके अभ्यासियोके लिअे अुसका वहुत वडा महत्त्व है। अिस विषय पर पश्चिमके समाजशास्त्रियो और वैद्यकके विशारदोने वहुत लिखा है। समाजशास्त्री तो दुनियाके अनेक वशोमे प्रचलित रिवाजोको और अनेक धर्मोके साधकोने जो अच्छे-वुरे अनुभव प्राप्त किये है अुन अनुभवोको अिकट्ठा करके अुन्हीका गहरा अध्ययन करते है।

धर्मशास्त्रोने प्राचीन कालसे अिस विषयसे सवधित अनुभव और कल्पनाअे विना सकोच समाजके सामने पेश की है। हमारे देशके पारमार्थिक ग्रथकारोने कभी भी अिस विषयमे घृणा नही की।

लोगोंको गलत रास्ते ले जानेके लिअे या विकारोंका अधम कोटिका आनन्द भोगनेके लिअे जो साहित्य लिखा और छापा जाता है, अुसकी बात दूसरी है। अुससे तो अेक प्रकारका पागलपन ही पैदा होता है। लेकिन जीवनके अूचे आदर्शको सिद्ध करनेकी कोशिश करनेवाले लोकोत्तर साधकोंके अनुभव और वचन अिससे भिन्न होते है। अुनका पठन तो तीर्थस्नान जैसा माना जाता है। अुन्हे पढने और अुन पर मनन करनेसे मनुष्यकी आशय-शुद्धि होती है।[१]

नअी दिल्ली, काका कालेलकर
३०–१–'६०

१ मूल गुजराती सस्करणकी प्रस्तावना।

पूर्वरंग

फूल मगाऊ हार वनाऊ। मालिन वनकर आऊ।।ध्रु।।
गलेमे सैली हाथमे मुरली। वाजत वाजत घर जाऊ।।१।।
मीराके प्रभु गिरधर नागर। वैठत हरिगुन गाऊ।।२।।

*

पूज्य महात्माजीके प्रति वचपनसे ही मेरा आकर्पण हो गया था। वे सन् १९१५ मे दक्षिण अफ्रीकासे भारत वापस आये, तव मै सिर्फ ९ सालकी थी। ववअीकी अेक मराठी शालामे मै चौथी कक्षामे पढती थी। मुझे याद है कि विद्यार्थिनीके नाते मै सवसे अलग ही पडती थी। वह शाला थी तो लडकोकी, लेकिन हर कक्षामे थोडी थोडी लडकियोको भी प्रवेश मिलता था। सन् १९१५ के वाद लडकियोके लिअे अलग शाला होने लगी। लेकिन मेरे ४ साल तो लडकोमे ही वीते। शिक्षकोकी मुझ पर कृपा थी, क्योकि मै पढनेमे आलस्य नही करती थी। छुट्टीमे जव सारे वालक खेलते थे तव मै पढती थी।

अेक विद्वान और कुशल अध्यापक जीवनमे (अुस छोटी अुम्रमे भी) मेरा मार्गदर्शन करते थे। अुन्होने मुझे वाल्मीकि रामायण (मराठी अनुवाद) पढनेको दिया। अुसे पूरा करनेके वाद व्यासकृत महाभारतके वडे वडे पर्व पढनेके लिअे दिये। वे मैने स्त्रीपर्व तक पढ लिये। नौ वर्षकी छोटी अुम्रमे गम्भीर या गहरे तत्त्वज्ञानकी चर्चा समझमे आवे या न आवे, तो भी अुन्हे पढ जानेका मै प्रयत्न करती थी। अेकाध अुपनिषद् या स्मृति भी मैने पढ डाली थी, अैसा मुझे याद आता है। ये सव पुस्तके मूल सस्कृत ग्रथोका मराठी अनुवाद थी। फिर अुन अध्यापकने मुझे महाराष्ट्रका अितिहास पढाया। अुसमे से श्री शिवाजी महाराज और अुनके गुरु समर्थ रामदास स्वामी अिन दोनो महापुरुषोका मुझ

पर गहरा असर पडा। मुझे बताया गया कि हमारा देश आजाद नही है, गुलाम है। अुस पर अग्रेजोका आधिपत्य है। लोकमान्य तिलक महाराज जैसे व्यक्ति अुसे तोडनेका प्रयत्न कर रहे हैं। फलस्वरूप धर्म और अध्यात्मकी नीव पर वीरता और पराक्रमके सस्कारोकी अिमारत खडी हो गअी। मेरे मनमे अैसा लगने लगा कि हमे भी देशकी आजादीके लिअे पराक्रम करना चाहिये और अुसके लिअे ध्रुव और रामदास स्वामीकी तरह तपस्या करनी चाहिये।

अैसे समय छुट्टीके दिनोमे अेक बार अुन अध्यापक (नाम श्री मुळे)को अुनके कअी दूसरे साथियोके साथ बातचीत करते मैने देखा। मै तो छुट्टीके समयमे भी अुनके साथ ही अधिकाश समय बिताती थी। वे आपसमे जो बातचीत कर रहे थे वह तो अब याद नही है, लेकिन जिसके बारेमे चर्चा चल रही थी अुसका नाम याद है। बैरिस्टर गाधी। वे गाधीजीकी तारीफमे कह रहे थे कि अिस आदमीने दक्षिण अफ्रीकामे बडी वीरता दिखाकर वहाकी सरकारको हरा कर विजय पाअी है, और अब अिस देशमे वापस आया है। अेक शिक्षक बोले, "देखो तो सही, अितने बडे बैरिस्टर है, लेकिन कितने सादे है? धोती पहनते है और पैरोमें देशी जूते है।" अेक मराठी मासिक पत्रमे अुनका चित्र छपा था। वह चित्र वे सबको दिखाने लगे। मैने भी अेक नजर अुस चित्र पर डाली। कुर्सियो पर बैठे हुअे बहुतसे लोगोकी कतारमे गाधीजीका चित्र देखा। वे काठियावाडी पोशाकमे थे।

अिस प्रकार मुझे अुनका प्रथम परिचय हुआ, लेकिन बादके २–३ सालोमे अुनका ज्यादा परिचय प्राप्त करनेका कोअी खास प्रसग नही आया। अग्रेजी शालामे भरती होनेके बाद अैसा जाननेको मिला कि देशका वातावरण धीरे धीरे गरम होता जा रहा है। सन् १९१९ से देशमे युग-प्रवर्तक वातावरण पैदा हुआ और महात्मा गाधीका नाम जनताकी जबान पर चढ गया। मै भी अुनकी पुजारिन बन कर अुनके जीवन, विचार और पुरुषार्थके बारेमे अधिक जाननेका प्रयत्न करने लगी।

मेरे घरका वातावरण धार्मिक वृत्तियोका पोपक था। धार्मिक सस्कार, देवपूजा, विधि-विधान, त्योहार, अुत्सव सभी कुछ होते रहते थे। मेरे पिताजी वडे श्रद्धालु और अध्यात्म तथा धर्मके अभ्यासी थे। सरकारी नौकरीमे और साधारण मध्यम वर्गके होनेके कारण अुनकी प्रवृत्तियो पर मर्यादा लगी हुअी थी, लेकिन महात्मा गाधीजीके प्रति अुनका वडा आकर्पण था। महात्मा गाधी 'यग अिडिया' के सम्पादक हुअे तवसे पिताजी अुसके पाठक वने। वाचनालयसे हर हफ्ते 'यग अिडिया' का अक नियमित रूपसे वे लाते थे, स्वय पढते थे और मुझे भी पढनेके लिअे देते थे। तव मै अग्रेजीकी चौथी कक्षामे पढती होअूगी। मुझे अग्रेजीका अितना ज्ञान कहासे होता? फिर भी मै अुसे भक्तिपूर्वक और रस लेकर पढती थी और वादमे अच्छी तरह समझने भी लगी थी। पिताजी या मै 'यग अिडिया' का अेक भी अक पढना चूके नही। गर्मीकी छुट्टियोमे मै कभी महीने डेढ महीनेके लिअे वाहर जाती, तो पिताजी अुतने सप्ताहके सारे अक सभाल कर रख लेते थे और मै वापस आती तव मुझे पढनेके लिअे देते थे। अुस समय राष्ट्रीय साहित्य या महात्माजी सवधी साहित्य मराठीमे वहुत नही था। लेकिन मेरे सौभाग्यसे अग्रेजी शालामे दो अच्छे शिक्षक आये, जिनसे समय समय पर दोनो प्रकारके साहित्यके वारेमे मुझे जानकारी मिलने लगी। मै अग्रेजी चौथीमे थी तव श्री कृ० वे० गजेन्द्रगडकर नामके अेक शिक्षकने अेक वर्प तक पढाया। वे कॉलेजमे तत्त्वज्ञानके विद्यार्थी, महाराष्ट्रके प्रसिद्ध तत्त्वज्ञानी प्रो० रानडेके विद्यार्थी, स्वामी विवेकानन्दके भक्त और स्वदेशकी मुक्तिके लिअे लगन रखनेवाले व्यक्ति थे। अुनके कारण मुझे भारतीय और यूरोपीय तत्त्वज्ञानियोका परिचय हुआ। कोअी अेक साल वाद वे शाला छोड कर चले गये। अुसके वाद भी अुनके साथ वर्पो तक मेरा सवध वना रहा। आगे चल कर प्रो० गजेन्द्रगडकर नासिकके हसराज प्रागजी ठाकरसी कॉलेजमे पहले प्राध्यापक वने और वादमे आचार्य हुअे।

अुनके जानेके वाद दूसरे साल श्री भालचन्द्ररावजी धुरन्धर शिक्षकके रूपमे आये। वे श्री अरविन्दवाबूके पुजारी, योगके अभ्यासी और महात्मा गाधीके भक्त थे। अहमदावाद काग्रेसमे वे शरीक हुअे थे, खादी पहनने लगे थे और पाडीचेरी जाकर श्री अरविन्दवाबूसे मुलाकात भी कर आये थे। अुनसे मुझे सत्याग्रह आश्रमके वारेमे जाननेको मिला। वार वार वे महात्माजीके वारेमे चर्चा करते थे और यूरोप तथा अमेरिकाके विचारको और साहित्यिकोका परिचय भी कराते थे।

अिन दो सज्जनोके वाद अेक तीसरे महापुरुषने विद्यार्थी-जीवनमे मेरे मन पर गहरा प्रभाव डाला। ववअीमें ठाकुरद्वारमे चलनेवाले स्टुडेन्ट्स लिटररी अेन्ड साअिन्टिफिक सोसाअिटीज गर्ल्स हाअीस्कूलमे मैं पढती थी। यह अुस समयका प्रसिद्ध विद्यालय था। न्यायमूर्ति चदावरकर जैसे वडे वडे समाज-सेवक वहा स्त्रीशिक्षाको प्रोत्साहन देनेके लिअे अवैतनिक शिक्षकके रूपमे अपनी सेवाअे अर्पित करते थे। अुसके सुपरिन्टेन्डेन्ट थे स्व० श्री गजानन भास्कर वैद्य। वे अेनी वेसेन्टके शिष्य, थियोसॉफिस्ट और स्त्रीशिक्षा तथा समाज-सुधारके वडे हिमायती थे। हिन्दू धर्म और तत्त्वज्ञानके लिअे अुन्हे गर्व था। अुन्होने धर्म-प्रचारके लिअे हिन्दू मिशनरी सोसाअिटीकी स्थापना की थी। विद्यालयमे रोज सुवह-शाम प्रार्थना होती थी, सुवहकी प्रार्थनामे गीताजीके श्लोक पढे जाते थे और हर शनिवारको सुवह श्री वैद्य स्वय प्रवचन करते थे। अुनकी प्रभावशाली वाणी और विचारोने मेरे मन पर गहरा असर डाला। हमे वे अुपदेश देते थे कि, "तुम सव ब्रह्मचारिणी बन जाओ, शकराचार्य वन जाओ। सारी दुनियामे घूम कर हमारे धर्मका और गीताजीका प्रचार करो।" अिस अुपदेशसे मुझे सदा प्रेरणा मिलती थी।

मैंने स्वामी रामकृष्ण परमहस, स्वामी विवेकानन्द, भगवान वुद्ध और दूसरे अनेक महात्माओका साहित्यिक परिचय प्राप्त कर लिया। मुझे पढना अच्छा लगता था। लेकिन समय वीतनेके साथ ललित साहित्यमे मेरी रुचि नही रही, परन्तु धर्म, अध्यात्म, अितिहास, राजनीति, समाजशास्त्र,

मानसशास्त्र, अर्थशास्त्र अिन सब विषयोंके प्रति मेरी अभिरुचि बढती गअी। और मराठी या अंग्रेजी भाषामें अुपरोक्त विषयों पर जो भी पुस्तकें मेरे हाथमें आती अुन्हें मैं पढती गअी। महाराष्ट्रका सन्त-साहित्य मुझे बहुत प्रिय लगता था। संत-महिलायें ब्रह्मचारिणी मुक्ताबाअी और जनाबाअीके प्रति मेरा बडा आकर्षण था। राजस्थानकी संत-महिला मीराबाअीका चरित्र मैंने पढा और मनमें यह आकांक्षा जागी कि मैं भी मीराबाअीकी तरह भगवानको पति मान कर पवित्र जीवन बिताअू तो कैसा हो!

पिताजीके साथ मैं कीर्तन-प्रवचन सुनने भी नियमपूर्वक जाती थी। हाअीस्कूलमें थी तभी योगमार्गकी ओर मेरा विशेष आकर्षण हुआ था, लेकिन परिस्थिति अनुकूल न होनेकी वजहसे अुस क्षेत्रमें मैं प्रयोग न कर सकी।

अिस प्रकार मैं विविध संस्कार ग्रहण कर ही रही थी कि पंजाबमें अत्याचार हुअे और फिर असहयोग आन्दोलन शुरू हुआ। मुझे अुसमें बडा रस आता था। अिस प्रसंगके बाद कभी कभी अखबार पढनेको मिलते थे। मेरे पिताजीकी अिजाजत लेकर १९२१ से मैंने खादी पहननी शुरू की। पिताजीने स्वयं भी कुछ समय तक खादी पहनी। वे मेरे लिअे अेक चरखा भी ले आये और मैं कातने लगी। 'यंग अिंडिया' में महात्माजी जो विचार प्रगट करते थे अुन पर अपने जीवनमें अमल करनेका प्रयत्न मैं करने लगी। १९२२ में महात्माजी गिरफ्तार हुअे तब अदालतमें अुन्होंने जो बयान दिया अुसे मैं पढ गअी। अुससे मुझे नया जीवन मिला! अुन्हें ६ वर्षकी सजा मिलनेके समाचार पढकर मैं रो पडी। मनमें धुन सवार हुअी कि किसी दिन अुनके सत्याग्रह आश्रममें जाकर तालीम लूंगी। लेकिन अब ६ सालमें क्या होगा, आश्रम टिकेगा भी या नहीं, अैसा डर मनमें पैदा हो गया!

पूज्य महात्माजी जेलमें गये तो भी देश अुन्हें भूला नहीं। सभायें होती थीं, जुलूस निकलते थे। मैं भी अुनमें भाग लेने जाती थी।

लेकिन पिताजी मुझ युवा लडकीको अकेले नही जाने देते थे। अिसलिअे मै अपनी बडी बुआ सौ० श्री राधाबाअी मजूमदारसे आग्रह करके अुनके साथ जाती थी। बुआ राष्ट्रीय वृत्तिवाली थी। कुछ समय तक अुन्होने स्वय और अुनके कुटुम्बियोने खादीका ही प्रयोग किया और चरखा चलाकर अपने और मेरे सूतका कपडा बुनवाया, जिसके कपडे बनवाकर अुनके दो लडकोको यज्ञोपवीत सस्कारके समय पहनाये गये थे। बम्बअीके मारवाडी हाअीस्कूलके सभा-भवनमे हर महीनेकी १८ तारीखको (पूज्य महात्माजीको १८ मार्चके दिन ६ वर्षकी सजा हुअी थी) भगिनी-समाजकी ओरसे बहनोकी सभा होती थी। अुसमे मै और बुआ बार बार शरीक होती थी। वही मुझे अली भाअियो, श्री सरोजिनीदेवी नायडू, श्री कृ० प्र० खाडिलकर वगैरा नेताओके भाषण सुननेका मौका मिला।

पूज्य महात्माजीको मैने देखा नही था। सन् १९२४ मे वे जेलसे रिहा हुअे। अुस अवसर पर बम्बअीकी म्युनिसिपैलिटीने अुन्हे मानपत्र दिया। तब मै विल्सन कॉलेजमे पढती थी। कावसजी जहागीर हॉलमे यह अुत्सव हुआ अुस समय मै भी सहेलियोके साथ वहा गअी थी। ‍ रमाजीके हॉलमे प्रवेश करनेसे लेकर विदा होने तक मेरी नजर अुन टिकी रही। मै अेकटक अुन्हीको देखती रही। वे स्वय अपना भाषण लिखकर लाये थे। वही भाषण अुन्होने सभामे पढा। अग्रेजी और गुजराती दोनो भाषाओमें वे बोले। वह भाषण तो मै भूल गअी हू, लेकिन अेक वाक्य अब तक मेरे मानस-पटल पर अकित है। वह यह है 'Politics without religion is dangerous!' धर्मके अभावमे राजनीति खतरनाक चीज हो जाती है। अुनके शब्द आज भी मेरे कानोमे गूजते है और अुनके मुखका भाव आज भी मेरी आखोके सामने स्पष्ट हो अुठता है।

दूसरे दिन भगिनी-समाजकी ओरसे मारवाडी विद्यालयके सभा-भवनमे पूज्य महात्माजीका स्वागत हुआ। मै भी अुसमे हाजिर थी। वहा महात्माजीको नजदीकसे देखनेका मौका मिला। अुनका गुजराती भाषण

मैंने अेकाग्रतासे सुना। सभा विसर्जित होने पर अुन्हे थैली अर्पण की गअी और फुटकर पैसोकी भेट भी अुन्हे दी गअी। मन्त्रमुग्धकी तरह मै भी अुनके पास गअी। वे व्यासपीठ पर अुलटी पलथी मार कर वैठे थे। मेरे पास पैसे कहासे होते! लेकिन अेक आना था। वही मेरे लिअे लाख रुपयेके वरावर था। जिनकी मै मन ही मन पूजा करती थी, अुन्हे अपना सारा धन (!) अर्पित करनेकी अुत्कट अिच्छाके साथ मै अुनके सामने जाकर खडी हुअी और अपना अेक आना मैंने अुनके आगे रखा। अुनके चरण-स्पर्श करनेकी अिच्छा थी, लेकिन पैर तो पलथीमे दवे हुअे थे। फिर भी किसी प्रकारका सकोच मनमे रखे विना मैंने अपनी अुगलीसे अुनके घुटनेको छुआ और प्रणाम किया। अुन्होने चौंककर मेरी ओर देखा, मुझे प्रणाम किया और दूसरी ओर देखने लगे। अुन्हे क्या मालूम कि अुनका स्पर्श करके अेक हृदय अपूर्व गौरवसे खिल अुठा था! अुस पवित्र और पावन स्पर्शसे मेरे सारे शरीरमे विजली-सी दौड गअी और आनन्दमे मस्त होकर मै घर गअी।

*

फिर तो धीरे धीरे राजनीतिक काम शुरू हुअे। मुझे कॉलेजकी शिक्षा पूरी करनी थी। मेरी अुम्र वढती गअी और मै युवती वन गअी, अिसलिअे लोग पिताजीको मेरा विवाह कर देनेके लिअे कहने लगे। मेरी मा मुझे दस महीनेकी छोड कर मर गअी थी। लगभग १० सालकी अुम्र तक मै अपने ननसालमे पली और फिर पिताजीके पास रहने आअी थी। पिताजीकी दो शादिया और हुअी थी। मेरे पाच भाअी हुअे, लेकिन वहन अेक भी नही है! वुआ और नाना मेरे विवाहके लिअे अुत्सुक थे, लेकिन पिताजीका विचार कुछ और ही था। वे स्वय अिंटर तक पहुचकर रुक गये थे, अिसलिअे वे सोचते थे कि लडकी वी अे हो जाय तो अच्छा। फिर मेरे आचार-विचार या अभिरुचिमें अुन्हे अैसा कुछ दिखाअी नहीं देता था जो पढाअीमे वाधक हो। और, मुझे छात्र-वृत्तिया और अिनाम मिला करते थे, अिसलिअे भी अुन्होने मुझे आखिर

तक पढने दिया। लेकिन अुनके मनमे अैसी कोअी कल्पना नही थी कि मै आजन्म ब्रह्मचारिणी रहू।

पिताजीकी मदद और आशीर्वाद तथा मेरे प्रयत्न दोनोके फलस्वरूप बी अे का लक्ष्य पूरा हुआ। दुर्भाग्यसे अुसी अरसेमे अैसी घटनाअें घटी, जिनसे पारिवारिक वातावरण दूषित हो गया। अुनके कारण मेरी अनिच्छा होते हुअे भी मुझे अपने पिताजीके क्रोधका शिकार होना पडा। अुनके और मेरे बीच मतभेद हो गया और अुन्होने आज्ञा दी, "मेरी बात न माने तो मेरे घरमे मत रह।" अुस आज्ञाको शिरोधार्य करके मै थोडे दिनके लिअे अपनी मौसीके यहा चली गअी। बादमे वान्छा गाधी रोड पर बने हुअे लेडीज होस्टलमे भरती हुअी। वहा दो वर्ष तक रही। अुस बीच टयूशन करके मै पैसे कमाती थी और अेम. अे की पढाअी करती थी।

अिस होस्टलकी सचालिका श्री कृष्णाबाअी अुर्फ ताअी तुळसकर थी। वे छह साल अमेरिकामें रह कर अेम. अे. करके अपने देशको वापस लौटी थी। अूची नौकरी छोडकर अुन्होने असहयोग आन्दोलनमे भाग लिया था। अुस समय वे लोकमान्य राष्ट्रीय कन्या पाठशालाका सचालन कर रही थी। काग्रेसकी कार्यकर्त्री बहनोसे अुनका अच्छा परिचय था और पूज्य महात्माजीके साथ भी अुनकी अच्छी पहचान थी। वे 'यग अिडिया' की ग्राहक थी। अिसलिअे होस्टलमे अुनके सहवासमे मुझे अनेक प्रकारसे लाभ हुआ।

सन् १९२८-२९ मे राजनीतिक घटनाअे तेजीसे घटने लगी। साअिमन कमीशनके खिलाफ प्रदर्शन करनेमे बम्बअीके कॉलेजोके विद्यार्थियोके साथ मैने भी भाग लिया था। फिर युवक-आन्दोलन, अकाल-पीडितोको राहत पहुचानेके लिअे चन्दा और अनाज अिकट्ठा करना, खादी बेचना, बारडोलीके करबन्दी आन्दोलनके सिलसिलेमे प्रचार वगैरा प्रवृत्तियोमे मै तन-मनसे पूरी तरह डूब गअी थी।

जैसे जैसे मै सार्वजनिक सेवाके जीवनमे ओतप्रोत होने लगी, वैसे वैसे भविष्यके बारेमे मनमे विचार अुठने लगे। कअी साल पहले सत्याग्रह

आश्रमके बारेमें सुना था तभीसे पढाअी पूरी करनेके बाद वहीं जाकर रहनेका मैंने सोचा था। लेकिन यह रहस्य मैंने अपने मनमें ही रखा था, पिताजी, बुआ, सगे-सम्बन्धियो या सहेलियोंमें से किसीको भी नहीं बताया था। प्रियजन, सबकी और सहेलिया मेरे भविष्यके बारेमें सोचनेकी मुझे सलाह देते थे। अेक अग्रेजी हाअीस्कूलके, प्रिंसिपालकी जगह मिलनेका मौका आया और अुसे स्वीकार करनेकी मुझे सलाह दी गअी। लेकिन मैंने अिनकार कर दिया। विवाह करनेका तो अिरादा था ही नहीं। लेकिन मनमें दो आकर्षण थे १ समर्थ रामदास स्वामी और स्वामी विवेकानन्दकी तरह पहले तपस्या, अीश्वरकी प्राप्ति और फिर सार्वजनिक सेवा करना, २ देशकी आजादीके लिअे सीधे राजनीतिके क्षेत्रमे कूद पडना। लेकिन तपस्याके बिना राजनीति खोखली मालूम पडती थी।

स्वामी रामदासके जीवन-प्रसग याद आये। १२ वर्षकी अुम्र तक वे पढे। अुसी साल विवाहके समय ब्राह्मणोके 'सावधान' मत्र बोलते ही वहासे भाग कर सीधे नासिक पहुचे और वहा अेकान्तमे १२ वर्ष तक मत्रजाप और तपस्या की। भगवान रामचन्द्र प्रसन्न होकर अुनके सामने प्रगट हुअे और अनुग्रहपूर्वक आज्ञा दी, "अब तुम जगतके अुद्धारका काम करो।" लेकिन स्वामी रामदासने कहा, "मुझे अभी पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करनी है।" भगवानकी आज्ञा मिलने पर फिर १२ वर्ष तक अुन्होने देशमें हिमालयसे रामेश्वर तक पदयात्रा की, सारे देशकी परि-स्थिति देखी और सेवा करनेकी योजना मनमे तैयार की। अुसके बाद भगवानने फिर आज्ञा दी, "अब काम शुरु करो।" अुस आज्ञाको मानकर समर्थ रामदास स्वामी कृष्णाके किनारे पर बस गये और अनेक योग्य शिष्योका अेक प्रभावशाली सगठन अुन्होने खडा किया। जगह जगह मठोकी स्थापना करके वहा कुशल शिष्योको नियुक्त किया और श्री शिवाजी महाराजका स्वराज्य-प्राप्तिका काम शुरु हो अुससे पहले अनुकूल वातावरण पैदा किया। बादमे तो गुरु-शिष्यकी जोडीका काम खूब

तेजीसे चला! अुसका प्रभाव लगभग दो सौ साल तक सारे देशमें दिखाअी दिया।

मुझे लगता था कि प्रभावशाली सेवाकार्यके लिअे योग्यता प्राप्त करनी चाहिये और यह योग्यता तपस्यासे ही मिल सकती है। समर्थ रामदास स्वामीके कितने ही वचन मुझे कठस्थ थे, जो मेरे मनमें हमेशा घूमा करते थे

सामर्थ्य आहे चळवळीचे। जो जो करील तयाचे।
परन्तु तेथे भगवंताचे। अधिष्ठान पाहिजे।।

आन्दोलन और आन्दोलनके नेता दोनोमे शक्ति तो होती है, लेकिन सच्ची स्थायी शक्ति प्राप्त करनी हो तो वहा भगवानका अधिष्ठान होना चाहिये।

और,

अनन्य राहे समुदाव। अितर जनास अुपजे भाव।
अैसा आहे अभिप्राव। अुपायाचा।।
मुख्य हरिकथा-निरूपण। दुसरे ते राजकारण।
तिसरे ते सावधपण। सर्व विषयी।।
चौथा अत्यन्त साक्षेप। फेडावे नाना आक्षेप।
अन्याय थोर अथवा अल्प। क्षमा करीत जावे।।

'अुपाय' का अर्थ है वह कार्य जिसे करनेसे अनुयायी लोग नेताके प्रति अनन्य श्रद्धा रखे और अन्य लोगोके मनमे भी श्रद्धा और विश्वास अुत्पन्न हो। (अुसके लिअे चार जरूरी बाते बताते है) मुख्य वस्तु हरिकथा-निरूपण (अर्थात् भगवानका अधिष्ठान), दूसरी राजनीति, तीसरी हर बातमे सावधानी रखना और चौथी साक्षेप यानी जी-जानसे कोशिश करना। (दूसरोकी) अनेक प्रकारकी शकाओका समाधान करनेकी कला नेतामे होनी चाहिये। छोटे-बडे अन्यायोके लिअे क्षमा करने जितना अुदार हृदय अुसे रखना चाहिये।

अैसे नेताको ही (साथियोका) समुदाय मिलता है।

अैसे आदर्श नेताके पास जाकर तालीम लेनेकी मेरी अिच्छा थी। ववअीके राजनीतिक क्षेत्रमें सेवाकार्य करनेकी मेरे लिअे चाहिये अुतनी गुजाअिश थी। वम्वअी राज्य (अुस समय प्रान्त) और ववअी शहरकी युवक-परिषद समितिकी मैं सदस्या चुनी गअी थी। श्री नरीमान हमारे अध्यक्ष थे। श्री वालासाहव खेर अुपाध्यक्ष थे-तथा श्री मेहरअली, श्री वाटलीवाला वगैरा युवक सहयोगी कार्यकर्ता थे। सवमे भरपूर अुत्साह था। फिर साम्यवादी युवक कार्यकर्ताओसे भी मेरा परिचय हुआ। श्री डागे, श्री निमकर, श्री शौकत अुस्मानी, श्री स्प्रैट वगैरासे पहचान हुअी। मै मराठी और अग्रेजीमे भाषण देती थी। आन्दोलनमे स्त्रियोकी वहुत कमी होनेके कारण जो अिनी-गिनी वहने अुसमे शामिल होती थी, अुनका मूल्य वहुत आका जाता था। लेकिन मुझे सस्ती लोकप्रियता नही चाहिये थी। मैंने देखा कि युवक-युवतियोमे अुत्साह तो वहुत है, लेकिन सयम नही है, चिन्तनशीलता नही है। तालीमके महत्त्व और आवश्यकताको कोअी स्वीकार नही करते। कॉलेज पर धरना देने जाते तव ज्यादातर कार्यकर्ता अिस वातकी अपेक्षा रखते कि समय समय पर चाय-मिठाअी वगैरा अुन्हे मिलती रहे। अेक भी सभा खाने-पीनेके आखिरी कार्यक्रमके विना पूरी नही होती थी। देशको कगाल वनानेके लिअे अग्रेज सरकारको गाली देनेवाले लोग खुद जनताके पैसोको खाने-पीने और मौज-शौक करनेमे अुडाना चाहे यह मुझे अनुचित मालूम होता था। अैसे कार्यक्रमोमे मै शामिल नही होती थी।

ववअी म्युनिसिपैलिटीके चुनावके समय कअी वहने काग्रेसके समर्थनमे चुनावके लिअे खडी हुअी थी। श्री अवन्तिकावाअी गोखले[1] के लिअे

---

१ वम्वअीकी यह महाराष्ट्री महिला वर्षो तक काग्रेसकी कार्यकर्त्री थी। पूज्य महात्माजीकी 'आत्मकथा' में भी अुनका नाम आता है। मराठीमे पूज्य महात्माजीका चरित्र सवसे पहले अुन्होंने लिखकर छपवाया था। अुस पुस्तककी प्रस्तावना लोकमान्य तिलकने लिखी थी। भारत महिला समाजकी स्थापना श्री अवन्तिकावाअीने की और जीवनपर्यन्त

प्रचार करनेका काम मुझे सौंपा गया था। सुबहसे दोपहर तक मैंने काम किया। दोपहरकी छुट्टीमे श्री अवन्तिकाबाओी मुझे और दूसरी स्वय-सेविकाओको खानेके लिअे बुलाने आओी। अुस समय मुझे मालूम हुआ कि अपने खर्च पर प्रचारको और सहायकोको खिलाना-पिलाना अुम्मीदवारोका फर्ज माना जाता है। लेकिन मुझे यह पसन्द नही आया। अपना घर हो, खाने-पीनेकी सुविधा हो, तो फिर सेवाका बदला क्यो लिया जाय? मैं तो होस्टलमे जाकर खा आओी। मेरा आदर्श निरपेक्ष सेवाका आदर्श था।

मुझे लगा कि अिन युवक-युवतियोको योग्य तालीम न मिली तो अिनमें से अधिकाश आन्दोलनमे टिकेंगे नही, और जो टिकेगा अुसे नैतिक बल नही मिलेगा। कमसे कम मैं तो तालीम लिये बिना नही रहूगी। सैनिक बननेके लिअे कवायद और दूसरे अनेक सस्कार ग्रहण करने पडते है। तब क्या सत्याग्रहीके लिअे योग्य तालीम जरूरी नही है?

कुछ लोग यह मानते थे कि सेवा करते करते तालीम मिल जाती है। यह मत मुझे स्वीकार नही था। गुरु बिना तालीम कैसी? भारतकी आजादीके लिअे सत्याग्रहकी पद्धतिसे ही आन्दोलन करना हो, तो सत्याग्रह आन्दोलनके नेता ही योग्य गुरु हो सकते थे।

मुझे ओीश्वरके अधिष्ठानका महत्त्व समझमे आता था, लेकिन अुनके लिअे श्री अरविन्दबाबू जैसे योगी और तत्त्वज्ञानीके प्रति मुझे आकर्षण नही हुआ। वे अेकान्तमे रहते थे, लोगोमे घुलते-मिलते नही थे। युवावस्थामे पराक्रमका आकर्षण मुख्य रहता है। श्री अरविन्दबाबूके व्यक्तित्वका यह पहलू अुस वक्त जनताकी दृष्टिसे ओझल था।

अुसका सचालन किया। सत्याग्रहके सिलसिलेमे अुन्होने जेल भी भोगी थी। युवावस्थामे अुन्होने अेक साल विलायतमे बिताया था। काफी अरसे तक बम्बओीके साप्ताहिक 'हिन्द महिला' की सम्पादिका थी। जहा तक मुझे याद आता है वे तीन साल तक बम्बओी म्युनिसिपैलिटीकी सदस्या रही।

समर्थ रामदास स्वामीने 'दासबोध' मे लिखा है

शिष्यास न लविती साधन। न करविती अिंद्रिय-दमन।
अैसे गुरु आडक्याचे तीन। मिळाले तरी टाकावे।।

जो अपने शिष्योसे साधना नही कराते, जो अुनसे अिंद्रिय-दमन नही कराते, अैसे गुरु टकेके तीन मिले तो भी अुनका त्याग करना चाहिये।

अैसे निकम्मे गुरुओके लिअे अुनके मनमे तिरस्कार था। समर्थ रामदास स्वामीके अिस आदर्शसे मिलते-जुलते अेक ही गुरु मेरी आखके सामने थे और वे थे पूज्य महात्मा गाधी।

बारडोलीका आन्दोलन चल रहा था, अुस समय विचित्र रीतिसे बारडोली जानेका मुझे मौका मिला। श्री ताअी तुळसकरके छात्रावासमें श्री कमलाबाअी साअिलस नामकी अेक अीसाअी बहन थी। अुनके साथ मेरी मित्रता हुअी। ये बहन बबअीकी सेवासदन सस्थामे शिक्षिका थी। राष्ट्रीय वृत्तिकी थी। अुनके मारफत अेक गुजराती परिवारमे मुझे टचूशन मिली थी। अिस कुटुम्बमे श्री मणिबहन कापडिया नामकी अेक प्रौढ प्रेमल बहन थी। (कुछ साल बाद अिमी परिवारके मकानके अूपरके हिस्सेमे श्री किशोरलालभाअीके गुरु श्री नाथजी रहने लगे।) अिन मणिबहनके साथ बारडोली जानेका मुझे मौका मिला। श्री कमलाबहन साअिलस भी साथ थी। बारडोलीमे सरदार पटेलसे मुलाकात हुअी, बातचीत हुअी। फिर मेरे आग्रहके वश होकर मणिबहन और कमलाबहन अहमदाबाद-साबरमती तक मेरे साथ गअी।

हम साबरमती सुबह पहुची। रिमझिम रिमझिम पानी बरस रहा था। वर्षोसे मनमे स्वप्नकी तरह बसे हुअे आश्रमके अब प्रत्यक्ष दर्शन होनेवाले थे। और मेरे जीवनके आदर्श पुरुपसे भेट भी होनेवाली थी। अुनके साथ बातचीत करनेका मौका मिलनेवाला था, अिसलिअे हृदय हर्षसे अुछल रहा था। आश्रममे श्री गगाबहन झवेरी नामकी अेक महिला थी, जिनसे मणिबहनका अच्छा प्रेम-सबध था। गगाबहनसे मिलकर हमने प्रात कर्म पूरे किये। मालूम हुआ कि बापूजी सुबहकी सैरको गये है।

मै दर्शन करनेको बहुत अुतावली हो रही थी। मैने पूछा, "हम अुनके पीछे ही क्यो न चले?" अुन सज्जन बहनोने मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और हमारा छोटासा जुलूस चला। हम थोडी ही दूर गये होगे कि सामनेसे पूज्य महात्माजी लौटते हुअे दिखाअी दिये। अुन्होने काला कम्बल ओढ रखा था। अुनके साथ अेक बहन खुली छतरी लेकर चल रही थी। गगावहनने कहा, "वह बहन जयप्रकाशबाबूकी पत्नी प्रभावतीदेवी है।" अुनके कधे पर हाथ रखकर महात्माजी चल रहे थे। मै अधीर और बावली हो गअी। साथकी बहनोको छोडकर आगे दौड गअी। लेकिन थोडासा अन्तर रह गया तब कुछ खयाल हुआ और सकोचसे खडी रह गअी। सामनेसे महात्माजी मदहास्य करते आ रहे थे और पीछे बहने हस रही थी। "कैसे रुक गअी? आगे दौडो।" शायद गगा-बहनने यह कहा होगा। पूज्य महात्माजी पास आये तब मैने दौडकर अुनके चरण-कमलो पर सिर रखा! अुस सुखद स्पर्शसे कृतज्ञताका अनुभव हुआ। फिर खडे होकर मैने हाथ जोडे और आसुओसे भीगी आखे अुनके मुख-मडल पर टिका कर मनमें कहा "अजि म्या ब्रह्म पाहिले।" —आज मैने ब्रह्मका साक्षात्कार किया, —नही, अुसके साथ अद्वैत भावका अनुभव किया!!

बहने पास आअी। गगावहन हसते हसते कुछ अिस तरह बोली, "कैसी पागल लडकी है!" पूज्य महात्माजीने मुझसे हालचाल पूछे। मैने बारडोलीके और सरदारके कुशल-समाचार सुनाये। हम अग्रेजीमें बातचीत कर रहे थे। आश्रम पहुचनेसे पहले मैने अुनसे विशेष बातचीत करनेके लिअे समय माग लिया। महात्माजीने कहा, "शामको घूमने जाते समय मुझसे मिलना।" महात्माजीके साथ बात करनेका पहली बार सौभाग्य मिला, अिससे प्रसन्न होती हुअी मै बहनोके साथ निवास पर गअी।

दोपहर तक मैने सारा आश्रम देख लिया। वहाके जीवनके बारेमें भी गगावहनसे जान लिया। फिर दोपहरको हम गुजरात विद्यापीठ देखने गयी। आचार्य कालेलकरसे मेरी पहली भेट अुसी समय हुअी। मैने अुनके

बारेमें सुन तो रखा था, लेकिन अुनके दर्शन करनेका अवसर नही आया था। काकासाहब जैसे विद्वान पुरुषके साथ बातचीत करनेमे मुझे सकोच हुआ, लेकिन काकासाहब तो अैसे बोलते थे मानो किसी समान वयवाले मित्रके साथ बात करते हो। बातचीत मराठीमे शुरू हुअी, जिसलिअे मेरा सकोच दूर हो गया और साबरमती आनेका अपना हेतु मैंने अुन्हे बता दिया। तालीम लेनेके लिअे आश्रममे भरती होनेकी मेरी जिच्छाका अुन्होने स्वागत किया। फिर हम सस्थाको देखकर आश्रममें वापस आअी।

शामकी सैरके समय पूज्य महात्माजीसे मिलनेके लिअे हम निकली तो देखा कि लोगोका अेक खासा अच्छा दल अुनके चारो ओर अिकट्ठा हो गया था। अुसमे कुछ लडकिया भी थी। मै परेशानीमे पडी कि अिस हालतमें बातचीत कैसे हो सकेगी। अेकके बाद अेक व्यक्ति अपनी बारी पूरी करके वापस लौट रहा था। कुछ समय बाद मेरी बारी आअी। बहुत सकोचके साथ सक्षेपमे मैंने अपने जीवनका परिचय देकर महात्माजीको अपना ध्येय बताया और आश्रममे प्रवेश करनेकी अिजाजत मागी।

लेकिन पूज्य महात्माजीने मुझे प्रोत्साहन नही दिया। तटस्थ भावसे अुत्तर दिया।

वे कहने लगे, "यहा शरीर-श्रम करना पडता है। सफाअी करना, रसोअी बनाना, पीसना, कातना आदि काम करने पडते हैं।"

मैंने कहा, "मुझे मालूम है। मुझे शरीर-श्रमकी आदत है। मै अपने घरमें भी ये सब काम करती थी।"

"सुबह चार बजे अुठना पडता है।"

"अुसमे कोअी दिक्कत नही आयेगी।"

"पाखाना-सफाअी करनी पडती है।"

मैंने कहा, "मुझे मालूम है। यहाके पाखाने मैंने देख लिये है। मुझे घृणा नही आयेगी।"

फिर भी महात्माजी ज्यादा मुसीबते बताते ही गये। मैं भी हर परिस्थितिमे सतोषपूर्वक रहनेकी अपनी तैयारी बताती ही गअी।

अन्तमे अुन्होने पूछा, "तुम अवन्तिकाबाअी गोखलेको जानती हो?"

"जी हा।"

"अुनसे मिलकर आश्रम-जीवनके बारेमे पूछ लेना।"

मैने कहा, "आप कहते है तो पूछ लूगी, लेकिन मुझे अुसकी जरूरत मालूम नही होती। मैने तो सत्याग्रहकी तालीम पानेके लिअे अिस आश्रममे भरती होनेका निश्चय कर लिया है।"

मेरी दृढताको देखकर अुनकी कडी आवाज कुछ नरम पडी। कहने लगे, "आश्रममे प्रवेश मिलनेमे तुम्हे कठिनाअी नही होगी, लेकिन पूरी तरह विचार करनेके बाद कदम बढाना ठीक होगा।"

अिस आश्वासनसे मुझे कुछ राहत मिली। मैने कहा, "मै तो जल्दीसे जल्दी आना चाहती हू, लेकिन मेरी अैसी अिच्छा है कि मै यहा आअू अुस समय आप भी यहा रहे। परन्तु मैने सुना है कि आन्तर-राष्ट्रीय धर्म-परिषदके अधिवेशनमे भाग लेनेके लिअे आप थोडे ही दिनमे यूरोप जानेवाले है।"

"अुसका विचार जरूर चल रहा है।"

"आप यूरोप जाय तो वापस आनेमे कुछ महीने तो जरूर लगेगे?"

अुस समय यात्रा जहाजसे होती थी। आजकी तरह हवाअी जहाजका नही हुआ था।)

"अैसा जरूर हो सकता है। लेकिन मै यहा न होअू तो भी क्या? और लोग तो यहा रहेगे ही। तुम आकर रह सकती हो।"

"नही, यह नही हो सकता। मै तो आपके आनेके बाद ही यहा आअूगी। थोडे महीने बाद मेरी परीक्षा है। परीक्षा देकर मैं आ जाअूगी।"

"जैसी तुम्हारी अिच्छा। तुम जब भी आओगी, आश्रमके द्वार तुम्हारे लिअे खुले ही होगे।" (Whenever you come, the doors of the Ashram will be open to you)

अिसके बाद बारडोलीके आन्दोलनके बारेमे कुछ प्रश्नोत्तर हुअे और हम अलग हुअे।

मै शामकी प्रार्थनामे हाजिर थी। श्री पडितजीको भी पहली ही वार मैने देखा। मुझे प्रार्थना तो अच्छी लगी, लेकिन मुझ पर अैसी छाप पडी कि भजन और धुन गाते समय पडितजी तल्लीन नही हो पाये।

रातको वम्वअी वापस लौटी। दो दिनमे तीन महापुरुषोके दर्शन हुअे अुसके आनन्दमे मन मग्न हो रहा था।

*

मै आश्रममें आकर रहने लगी अुसके वहुत समय वाद पूज्य महात्माजी समय समय पर प्रार्थनाके वक्त, व्यक्तिगत वातचीतमे या पत्रोमें मेरी तारीफ करने लगे। फिर अेक दिन वातचीतमे मैने अुन्हे ताना मारा, "महात्माजी, यहाकी ज्यादातर वहने कहा करती है कि हमे वापूजी यहा वुला लाये। कोअी अपने पतिके साथ, कोअी भाअीके साथ, कोअी पिताके साथ यहा आअी। लेकिन केवल मै ही अैसी हू, जो स्वय ही कुत्तेके वच्चेकी तरह आपके पीछे दौडी चली आअी हू। लेकिन आपने कैसा व्यवहार किया? पहली ही भेटमे मेरे प्रति अविश्वास दिखाया और मुझे आश्रम-जीवनकी मुसीवते ही वताने लगे! मेरे अुत्साह पर ठडा पानी डालने लगे। लेकिन अव तो विश्वास हुआ न?"

पूज्य महात्माजीने हसते-हसते कहा, "तेरी वात सच्ची है। मुझे पहले तो विश्वास ही नही हुआ। मुझे लगा कि यह पढी-लिखी ववअीकी लडकी है। अग्रेजी वघारती है, आश्रममे आनेकी वात करती है, लेकिन आयेगी नही, आयेगी भी तो अिसे आश्रम-जीवन अच्छा नही लगेगा, यह आश्रममे टिकेगी नही। लेकिन तू सच्ची निकली। मै अपनी हार स्वीकार करता हू।"

*

वम्वअी आनेके वाद अध्ययन, अध्यापन और रोजका कार्यक्रम शुरू हुआ। सार्वजनिक सेवाका काम तो मौका आने पर चलता ही था। ववअीसे करीव ४०-५० मील दूर समुद्रके किनारे सासवने नामका अेक गांव है। वहा मेरी अेक सहेली कु० कृष्णाकुमारी धुमटकर (छोटेमे 'किसन')

के पिताका मकान और खेतीवाडी है। किसनके साथ मैं दो तीन वार वहा गअी थी। अुस गावमे वैश्य-विद्याश्रम नामक राष्ट्रीय शिक्षाकी अेक सस्था थी। सस्थामे चरखे चलते थे और सारे शिक्षक तथा विद्यार्थी खादी ही पहनते थे। खास प्रसग पर राष्ट्रीय नेता वहा आ जाते थे। पूज्य महात्माजी भी वहा अेक वार आ चुके थे। वही श्री गगाधरराव देशपाडे, श्री जमनालालजी बजाज, श्री किशोरलाल मशरूवाला वगैरासे मेरा परिचय हुआ था और अुनके साथ बातचीत करनेका सौभाग्य भी मिला था। सार्वजनिक जीवनमे शुद्ध आचरणवाले सज्जनो तथा अुदार-हृदय व्यक्तियोसे जैसे जैसे मेरा परिचय होता गया वैसे वैसे अुसमे मेरा रस भी बढता गया। वैश्य-विद्याश्रमके सचालक श्री ढवण और अन्य कार्यकर्ता स्व० श्री नाना काणे और श्री शास्त्रीजी वगैरासे भी परिचय हुआ। बादमे मै महाराष्ट्रमे सेवा करने लगी तब यह परिचय और भी दृढ होता गया।

अप्रैल १९२९ मे परीक्षा देनी थी। अुससे दो महीने पहिले मैंने पूज्य महात्माजीको पत्र लिखनेका सोचा। वे यूरोप नही गये। लेकिन बार-डोली आदोलनके बाद भावी आन्दोलनके चिह्न दिखाअी देने लगे थे। पास जल्दी पहुचनेके लिअे मेरा दिल भी अुछल रहा था। श्री ताअीने ९ पत्र लिखकर याद दिलानेकी मुझे सलाह दी। मुझे यह सलाह ठीक लगी और मैंने पूज्य महात्माजीको पहला पत्र लिखा। अत्यन्त भक्तिभावसे रगीन कागज पर सुन्दर अक्षर बनाकर पत्र लिखा। अुसमें अपनी मुलाकातका वर्णन किया, अुनके आश्वासनका स्मरण कराया और लिखा, "अप्रैलमे परीक्षा पूरी होने पर वहा आनेका मेरा विचार है। लेकिन आप वहा लबे अरसे तक रहेगे अैसी आशा तो रखती ही हू।"

जिस दिन दोपहरको अुनके अुत्तरका कार्ड (अुनका भी पहला पत्र) मुझे मिला, अुस दिन मेरे आनदका पार न रहा। अुसे बार बार पढ कर दौडती हुअी मै ताअीके पास गअी और बोली, "ताअी, ताअी, देखिये तो सही! महात्माजीके हाथका लिखा हुआ अुत्तर मुझे मिला है।"

यह कहकर वह कार्ड मैंने अुन्हे दिया। देनेसे पहले हर्षोन्मादमे मैंने अुसको (पत्रको) चूम लिया।

ताअी हसने लगी। मुझे छातीसे लगाकर कहने लगी, "प्रेमावहन, तुम कैसी पागल हो!"

भावनाओका वेग कम होनेके वाद मैंने विचार किया। महात्माजी सफरमें ही फसे हुअे मालूम हुअे। लेकिन आन्ध्र जाते वक्त ववअी होकर जानेवाले थे। मुझे लगा कि अुस वक्त मै अुनसे मिलकर वात करू।

मणिभवनमे वे ठहरे तव मैंने अुनसे मुलाकात की। अुसमे निश्चय किया कि आन्ध्रसे वापस लौटते समय वे ववअी आये, तव अुनके साथ ही सावरमती चली जाअू। मालूम हुआ कि यह मअीमे ही हो सकेगा।

मै खुश हुअी। अव मेरे सगे-सवधी और प्रियजनोको मेरा आश्रम जानेका निर्णय मालूम हो गया था। युवक-परिषदके कार्यकर्ताओको भी अिसका पता चला था। अिस सिलसिलेमे अलग अलग मत मेरे पास आने लगे। मेरे हाअीस्कूलके शिक्षक श्री धुरधर अुस वक्त ववअीके मराठी पत्र 'नवाकाळ' मे सह-सपादक थे। हमारा परिचय वढ गया था और हम वार-वार मिलकर आदर्शोकी चर्चा और विचारोका आदान-प्रदान करते थे। अुन्होने मेरे निर्णयका स्वागत किया और मुझे प्रोत्साहन दिया, मदद करनेकी तैयारी भी वताअी। युवक-परिपदके कार्यकर्ताओ और सहयोगी वधुओको मेरा यह निश्चय अच्छा नही लगा। आश्रम और जगलमे अुन्हे कोअी खास फर्क नही मालूम होता था। अुन लोगोकी मान्यता यह थी कि ववअीमे रहकर ही सेवा, पुरुपार्थ और जीवनका विकास होगा। मेरे पिताजीका क्रोध शात नही हुआ था, अिसलिअे मै अुनके पास गअी ही नही। दूसरे सगे-सवधियो और सहेलियोकी राये अलग अलग मिली

"अिस जीवनमे कूद पडनेसे पहले दीर्घ विचारकी जरूरत है। देशभक्तिका जोश तो तात्कालिक होता हे। भविष्यका क्या? शरीर

स्वस्थ और मजबूत है तब तक शक्ति हमारी होती है। शक्ति समाप्त होने पर कौन मदद करेगा?"

"देशभक्तिके रास्तेमे पैसा नही मिलता। धन न हो तो कोओी भाव नही पूछता। सावधान रहना। अपनोको छोडकर जानेसे धोबीके कुत्ते जैसी हालत होगी—न घरका न घाटका!"

"पहले धन कमाओ, फिर देशभक्ति करो। धनवान देशभक्तोका ही दुनिया मान करती है, दरिद्रोका नही।"

"तू विचार कर। तू स्त्री है, पुरुष नही। पुरुष या जवान लडका चाहे जो कर सकता है। लडका देरसे दुनियामे प्रवेश करे तो भी अुसका कुछ नही बिगडता। लेकिन लडकीकी स्थिति भिन्न है। वह अधिक समय तक सही-सलामत नही रह सकती।"

"लडकीकी पूंजी अुसका सतीत्व है। तू तो दूसरे प्रदेशमे, दूसरे लोगोमे, दूसरी भाषा बोलनेवालोके बीच रहने जा रही हे। कलको कोओी आफत आ पडे तो स्वजन पास नही होंगे। स्त्रीका सतीत्व चला जाय तो अुसकी सारी जिंदगी बरबाद हो जाती है। अिसका पूरी तरह विचार कर।"

"महात्माजीका सहारा भी स्थायी रूपसे मिलनेवाला नही है। आज बाहर है, कल जेल चले जायेंगे। फिर तेरा क्या होगा? वहाके सब लोग क्या अुन्हीके जैसे होंगे? कौन तेरा भार अुठायेगा? और मान ले कि वे जेल नही गये। लेकिन बूढे आदमीकी जिंदगीका क्या भरोसा? अुनका अवसान हो जाय तो तू क्या करेगी?"

"ब्रह्मचर्यका पालन सरल नही है। अनुभवियोसे पूछ ले। जिन्होने विवाह किया है वे पागल थोडे ही है। आज देशभक्तिके अुत्साहमे तुझे दूसरा कुछ सूझता नही है। लेकिन यह जोश अुतरनेके बाद बडी अुमरमे तू शादी करना चाहे तो किस माका लडका तुझसे शादी करनेको राजी होगा? —हमारी जातिका तो राजी नही ही होगा! फिर क्या तू   की तरह मुसलमानसे शादी करेगी? फिर तो धर्म और जातिसे बाहर रहना पडेगा! अुससे क्या लाभ होगा?" वगैरा वगैरा।

ये सब बाते मैं सन् १९२९ के सालकी कह रही हू। हितैषियोंने अपनी मर्यादाके अनुसार कअी शकायें अुपस्थित की। शकाओका अत ही नही है। अुनका निराकरण भी कैसे हो? अेक जवान लडकी अेक अनोखा प्रयोग करनेका निश्चय कर रही थी। भविष्य अज्ञात था। अपनी शक्ति पर अुसे विश्वास नही था। फिर दूसरोके सामने दलील कैसे करे? फिर भी बचपनसे भगवान पर मेरी अटल श्रद्धा थी। मेरा विश्वास था कि सत्यके मार्गमें कोअी डर नही है।

सत्य सकल्पाचा दाता भगवान। सर्व करी पूर्ण मनोरथ ।।

सत तुकारामका यह वचन मेरे लिअे दीपस्तम्भकी तरह था। सत्य सकल्पकी प्रेरणा अीश्वर ही देता है और अपनी कृपासे सब मनोरथ पूरे करता है। अिस सत्यमें मेरा शत-प्रतिशत विश्वास था। मेरी जैसी श्रद्धा थी कि अब तक मेरा जीवन जिस प्रकार बनता गया और ध्येयको पानेके लिअे जो जो अनुकूलतायें मुझे मिलती गअी, वह सब अीश्वरकी अिच्छाके अनुसार ही हुआ।

जेथे जातो तेथे तू माझा सागाती।
चालविसी हाती धरूनिया ।।

सत तुकाराम भगवानको लक्ष्य करके कहते हैं, "मैं जहा जहा जाता हू वहा तू ही मेरा साथी होता है। मेरा हाथ पकडकर मुझे चलाता है।" मुझे भी वैसा ही अनुभव हुआ था। मैंने सोचा कि अपने जीवनके विकासके लिअे और देशका ऋण चुकानेके लिअे मुझे सत्याग्रही सैनिक बनना है। साधारण सैनिक जब युद्धके लिअे जाता है, तब "मेरा क्या होगा? मैं मर जाअूगा? या घायल हो जाअूगा? अपग होकर जीअूगा तो मेरा क्या होगा? मेरे बाल-बच्चोका क्या होगा?" अैसा विचार नही करता। 'स्वधर्मे निधन श्रेय 'को मानता है। मुझे भी वैसा ही करना है। जो होना होगा वह होगा। भगवानका यह आश्वासन है कि 'न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गति तात गच्छति।' अिस प्रयोगमे

हम वरवाद हो जाय तो भी जीवन अुज्ज्वल हो गया कहा जायगा। जीवित रहे तो जीवनके विकासका लाभ मिलेगा ही।

मैंने अपनी तैयारी की। बुआ, मौसी और किसनकी मा (जिनके निरपेक्ष प्रेमके कारण हम अुन्हे 'भारतमाता' कहते थे) का आशीर्वाद लिया तथा स्नेहियो और सहेलियोसे विदा ली। २५ मअी, १९२९ की रातको मै पूज्य महात्माजीके साथ बबअीसे अहमदावादके लिअे रवाना हुअी, यद्यपि मै स्त्रियोके डिब्बेमे बैठी थी। महात्माजीके डिब्बेमे बहुत भीड होनेकी वजहसे अुनकी आज्ञाके मुताबिक मै अलग बैठी थी। २६ को सुवह अहमदावाद स्टेशन पर मिले। फिर अुनके साथ ही मोटरमें सत्याग्रह आश्रम पहुची।

हृदयकुजमे बैठकर पूज्य महात्माजी गरम पेय पीने लगे। मुझे आज्ञा दी, "अगर अेक सप्ताहके अदर तुम्हे गुजराती बोलना आ जाय तो ठीक है, नही तो यहासे निकाल बाहर करूगा।" बात अग्रेजीमे की।

कोशिश करके गुजरातीका थोडा परिचय तो मैंने प्राप्त कर लिया था, लेकिन बोलना नही आता था। मुझे हृदयकुजमे ही अेक कमरा गया। अुसमे श्री वसुमती बहन पडित नामकी अेक बहन रहती थी। कन अुस समय वे बाहर गअी हुअी थी। मुझे अेक खाट भी मिली। मैंने देखा कि पूज्य महात्माजी बाहर आगनमे खाट डालकर आकाशके नीचे खुलेमे सोते है। मैंने भी अपनी खाट अुनके साथ थोडी दूरी पर बिछा ली और तबसे मै बाहर ही सोने लगी। रोज सुबह अुठते ही महात्माजीका दर्शन सबसे पहले होता था।

पहली रातको ही सोनेसे पहले अुन्होने मुझसे पूछताछ की। फिर मैंने पूछा, "मुझे यहा क्या काम करना है? दिनमे क्या क्या काम करू?"

अुन्होने प्रश्न किया, "तुमको चित्रकला आती है?"

मैंने कहा, "थोडी थोडी आती है। पाठशालामे सीखी थी और बादमे स्वय कोशिश करके अभ्याससे जो प्राप्त की अुतनी ही आती है।"

"तो फिर रोज सुवह वाल-मदिरमे जाकर अेक घटे तक वच्चोंको चित्रकला सिखाती रहो।"

"दूसरा कुछ?"

"रसोअीमे अेक घटा देना।"

"तीसरा?"

"रोज अेक घटा कातना।"

अिस तरह अुन्होने मुझे रोज तीन घटेका काम दिया, लेकिन मेरे लिअे समयकी यह मर्यादा टूट गअी। सेवाकार्यका समय वढता गया। अेक दिन मैंने खुद होकर पाखाना-सफाअीमे भाग लिया। महात्माजीको मालूम हुआ तो खुश होकर अुन्होने मुझे शावाशी दी।

मेरे वहा जानेके वाद पूज्य महात्माजी अेकाध हफ्ते ही आश्रममे रहे होंगे। फिर सफर पर चले गये। लेकिन जानेसे पहले अेक रात नौ वजनेसे पहले मुझे अपनी खाटके पास विठाकर मेरे घरकी वहुतसी वाते पूछने लगे। मेरे जीवनका ज्यादा परिचय पा लेनेकी अुनकी अिच्छा थी।

घरकी वाते करनेमे मुझे थोडा सकोच तो जरूर हुआ। अुस वक्त तो हमारे वीचमे अन्तर मालूम होता था। मै अभी नअी ही थी। अिसलिअे सक्षेपमे वाते की। लेकिन जव जीवनके दृष्टिकोण और ध्येयके वारेमे वाते चली, तो मुझे रस आ गया और मैं अुन्हे अपने आदर्शके वारेमे विस्तारसे वताने लगी। 'भावी सत्याग्रहके सग्राममे भाग लेनेके लिअे मेरा हृदय तडप रहा है। मुझे सैनिक वनना है। अुसके लिअे तालीम लेनी है।' अैसी अैसी वाते मैंने की।

गभीर वनकर पूज्य महात्माजी मेरी वात सुन रहे थे। अुन्होने मुझे कहने तो दिया, लेकिन फिर वे आश्रम-जीवनके वारेमे वात करने लगे। मै अधीर हो गअी। मैंने कहा, "महात्माजी, यहाके काम करनेमे मेरी ना नही है। वह तो मै करती ही हू। लेकिन अुनका सत्याग्रहसे क्या सवध है, यह मेरी समझमे नही आता। मुझे सत्याग्रहके सस्कार चाहिये,

जव कि आप दूसरी ही वात् करते है। आप मुझे कहा ले जा रहे है? (Where are you leading me to?)"

"मै तुम्हे सत्याग्रहके रास्ते पर ले जा रहा हू। (I am leading you to the path of Satyagraha!)" वे वोले, "अिसी मार्ग पर सत्याग्रह है, देशभक्ति है, सेवा है।"

मैंने कहा, "But I want to do something tremendous! (लेकिन मुझे तो कोअी प्रचड कार्य करना है!)"

अुन्होने विनोद किया, "The only tremendous thing that you can do now is to go to sleep (अभी तो जो प्रचड कार्य तुम कर सकती हो वह सिर्फ सो जानेका है।)"

*

आश्रमसे आकर हृदयकुजमे रहने पर भी पूज्य महात्माजीका सहवास दिन-रात नही मिलता था। दिनमें दोनो ही अलग अलग जगह काममे लगे रहते थे। खानेके समय दोनो वार मैं अुनके सामने ही वैठती थी। शामको घूमने जाते तव लडकियोंके साथ मैं भी अुनके साथ जाती थी। प्रार्थनामे दोनो समय शरीक होती थी और रातको अुनके समीप सोनेको मिलता तव अधिकतर रोज ही अुनके साथ कुछ न कुछ वातचीत होती थी।

पूज्य महात्माजीने कहा था कि, "यहा आनेके वाद पहलेका पढा हुआ सव कुछ भूल जाना चाहिये और यहा नअी शिक्षा और नया जीवन प्राप्त करना चाहिये।" अुनके आदेशका पूरी तरह पालन करते हुअे जीवनका विकास करनेकी मैं जी-जानसे कोशिश करने लगी। अुनके पास सारा दिन वितानेको मिले, अैसी अिच्छा तो कभी मनमे भी नही अुठी थी। मेरे काम और मेरी तपस्या या साधनाके द्वारा अुन्हे सतोष करानेकी लगन मुझे लगी थी। मेरे वारेमें अुनका जो अविश्वास था वह निकल जाय और आदर्श जीवनके लिअे मेरी योग्यता सिद्ध हो जाय, तो मै अुनकी कृपाकी पात्र वन जाअूगी, अैसी मेरी श्रद्धा थी। वे जैसे

अध्यात्म-वीर थे, वैसे ही संग्राम-वीर भी थे। मेरे आदर्श मुझे अुनमें मूर्तिमत दिखाअी देते थे। अिसलिअे वे जो मार्ग वताये अुस पर चलकर अपने आदर्शों तक पहुचनेकी मेरी आकाक्षा थी।

मेरे आश्रम पहुचनेके थोडे दिन वाद वे वाहर गये। जाते समय मुझसे कह गये थे कि "मुझे पत्र लिखना।" मैंने विचार किया कि अुसके लिअे मुझे गुजरातीका ज्यादा अभ्यास करना चाहिये। वहनोंके साथ मै टूटी-फूटी गुजरातीमें वात करने लगी थी। लेकिन अुससे क्या वनता? आठ दिनोंमे भूल किये वगैर गुजरातीमे वोलना मुझे कैसे आ सकता था? फिर हिन्दीभाषी लोग भी आश्रममे थे। मै तो भाषा-रसिक थी। आश्रममे भारतके लगभग सभी प्रातोंके सेवक अिकट्ठे हुअे थे। अिसलिअे कअी भाषाओंका परिचय प्राप्त कर लेनेका मौका अनायास हाथ लग गया। लेकिन सेवाके काममे ज्यादा समय देना पडता था, अिसलिअे भाषाका ज्ञान प्राप्त करनेके लिअे समय नही मिलता था। पढना भी नहीं हो पाता था, तव भाषाओंका अभ्यास तो कहासे होता? मुश्किलसे गुजराती, हिन्दी और अुर्दूका परिचय हुआ।

पूज्य महात्माजी सफर पर गये अुसके थोडे ही दिन वाद अेक रात मैंने स्वप्न देखा। मैने देखा कि पूज्य महात्माजी आसन पर पलथी मारकर वैठे है। अुनकी गोदमे मै छोटी वच्ची वनकर लेटी हू। अुनके वक्षस्थलसे शुभ्र, सुन्दर दूधका प्रवाह वह रहा है और वह सीधा मेरे मुहमे गिर रहा है। वह मधुर दूध मै पी रही हू। पूज्य महात्माजी कह रहे है, "पी, पी और पी।" दूधसे मै धाप गअी, पेटमे जगह नही रही, तो भी दूधका प्रवाह निकल ही रहा है और पूज्य महात्माजी भी ज्यादा पीनेके लिअे आग्रह कर रहे है। आखिर अुस प्रवाहने मुझे सिरसे पैर तक प्लावित कर दिया, तो भी प्रवाह चालू रहा। मैं घवरा कर नींदसे जाग अुठी।

अिस स्वप्नसे मनमे कुतूहल जागा। पूज्य महात्माजीको आश्रमसे जो पहला पत्र लिखा अुसमे मैने अिस स्वप्नके विषयमे विस्तारसे लिख भेजा।

गुजराती लिखना अच्छी तरह नही आता था, अिसलिअे जहा तक मुझे याद है मैने श्री गगावहन झवेरीकी मदद ली। स्वप्नका अर्थ पूछा और दूसरी वाते लिखकर पत्र समाप्त किया।

पूज्य महात्माजीका अुत्तर आया। छोटासा था। अुनके सारे पत्र छपनेसे पहले नकल करानेको दिये गये थे, तव कअी पत्र खो गये। अुनमे से यह भी अेक था। लेकिन अुस पत्रकी कुछ पक्तिया याद है, जो यहा दे रही हू।

चि० प्रेमावहन,

तुम्हारा पत्र मिला। स्वप्न सात्त्विक और राजस भी होते है। तुम्हारा स्वप्न सात्त्विक कहलायेगा। अुसका अर्थ यह है कि तुम अपने आपको मेरे पास सुरक्षित समझती हो।

वादके वाक्य याद नही है। मुझे पत्र अच्छा लगा। लेकिन अुसमे मेरे लिअे 'वहन' सवोधन था, जो मुझे जरा भी अच्छा नही लगा।

सफरसे लौटनेके वाद पू० महात्माजी रोजकी तरह अेक दिन घूमने निकले। लडकियोकी टोली अुन्हे घेरकर चल रही थी। मै पीछे थी। अचानक महात्माजीने 'रमा रमा' की आवाज लगाअी। अपनी धुनमे मुझे लगा कि मेरा ही नाम लेकर अुन्होने पुकारा है। अिसलिअे मै झटसे आगे जाकर पूछने लगी, "मुझे कैसे वुलाया?"

वे वोले, "मैने तुम्हे नही वुलाया। मै रमाको वुला रहा था।"

मै शरमा गअी। "मुझे लगा कि आपने मेरा ही नाम लिया।" अैसा कहकर खिसकने ही वाली थी कि वे वोले, "तुम्हे वुलाअू तो मै 'प्रेमावहन' न कहूं?"

मुझे मौका मिल गया। नाराजी जाहिर करते हुअे मैने कहा, "मै कितनी छोटी हू? आप मुझे वहन कहकर क्यो वुलाते है? पत्रमे भी आपने अिसी तरह मुझे सवोधित किया। वह मुझे जरा भी पसद नही आया।"

पूज्य महात्माजीने विनोद किया "मेरी अिच्छा हो तो मै तुम्हे प्रेमा कहकर वुलाअू, प्रेमली कहू या प्रेमी भी कहू!"

यह विनोद मुझे अच्छा लगा। वातचीत तो अभी अंग्रेजीमे ही होती थी — अिसलिअे 'तुम' और 'तू' का भेद मालूम नही होता था। मै पत्र तो गुजरातीमे लिखनेकी कोशिश करती थी, लेकिन अभी पू० महात्माजीके साथ गुजरातीमे वातचीत करनेकी हिम्मत नही होती थी।

पूज्य महात्माजी अुत्तर प्रदेशके दौरे पर गये तव अुन्होने मुझे जो पत्र लिखा (९–९–'२९), अुसमे बहनके विना ही सम्बोधन किया था। अुससे मै खुश तो हुअी, लेकिन अुसमें सम्मानसूचक तुमका प्रयोग किया था। वह मुझे खटका! अिसलिअे मैने फिर अुनसे झगडा किया। मेरी वह हठ भी अुन्होने मजूर की।

आषाढमे मेरी वर्षगाठ आअी, तव सुवह जल्दी नहा-धोकर मै पूज्य महात्माजीके दर्शनोके लिअे गअी। अुस समय वे आश्रममे ही थे और मै अुनके पास पहुची तव वे हृदय-कुजके वरामदेमे खडे खडे कुछ देख रहे थे। मैने झुककर प्रणाम किया तो जरा आश्चर्यसे अुन्होने पूछा, "आज क्या है?"

मैने कहा, "मेरी वर्षगाठ है, अिसलिअे प्रणाम किया!"

अुन्होने पूछा, "कौनसा साल लगा?"

मैने कहा, "चौवीसवा!" फिर मै चली गअी।

अुसके वाद हर वर्षगाठ पर अुनका आशीर्वाद लेनेका रिवाज मैने आखिर तक चलाया। वाहर होती तो पत्र लिखकर प्रणाम भेजती। आशीर्वाद तो मिलते ही थे। अुनके पास होती तो प्रत्यक्ष प्रणाम करनेका मौका मिलता। फिर पीठ पर जोरका धप्प मिलता। वही अुनका आशीर्वाद होता।

हृदय-कुजमे पारिजातका अेक वृक्ष था। वरसातमे रोज सुवह झाडके नीचे फूलोका गलीचा विछ जाता था। मेरे मनमे आया, 'अेक वार अिन फूलोका हार वनाकर महात्माको पहनाना चाहिये।' अिसलिअे अेक दिन सुवह जल्दी अुठकर मैने हार वनाया और अुसे टोकरीमे पत्तोके नीचे छिपाकर महात्माजीके पास गअी। वे मगन-कुटीरमे लिखने वैठे थे।

दरवाजेके पास जाकर खडी रही तो अुन्होने देखा और पूछा, "कैसे आअी?"

मैने कहा, "मैने पारिजातके फूलोका हार बनाया है। आपको पहनानेकी अिच्छा है।"

"आज क्या है?"

कुछ न कुछ जवाव देना चाहिये, अिसलिअे मैने कहा, "पवित्र दिन।"

"देखू तो हार कहा है?"

मैने पत्तोके नीचेसे टोकरी निकालकर सामने रखी।

"सुन्दर है। अच्छा, अैसा कर। मुझे हार पहना दे अुसके बाद वह तुझे वापस दूगा। तू अुसके दो टुकडे करना और आश्रममे जो भाअी (नाम बताये) बीमार है अुनके पास जाकर दोनोको अेक टुकडा देना और अुनके समाचार मुझे बताना।"

मै खुश हुअी। अुन्हे हार पहनाकर अुनकी अनुपम शोभा मैने देखी। हार वापस मिला तो अुनकी आज्ञाके अनुसार मैने सब कुछ कर दिया। भक्तिप्रेमकी परिणति सेवामे होनी चाहिये, यह पाठ महात्माजीने मुझे सिखाया। वे काममे लगे होगे यह सोचकर बीमारोके समाचार मैने तुरत अुनके पास नही पहुचाये। रातको कहने गअी तब डाट मिली। "सेवा और राजनीतिके कार्य सब समान महत्त्वके है। कहा हुआ काम तुरन्त करना चाहिये।" अैसा अुपदेश मिला।

मेरे दिन आनदमे गुजर रहे थे। रोज शामको लडकियो और पू० महात्माजीके साथ घूमने जाती तब बडा आनन्द आता। बारी बारीसे लडकियोके कधे पर पूज्य महात्माजी हाथ रखते थे। लडकिया मुझे चिढानेकी कोशिश करती, "प्रेमाबहन, बापूजी हमारे कधे पर हाथ रखते है। आपके कधे पर नही रखते।"

मैने पूछा, "क्यो न रखेगे? मै तुम्हारी तरह जबरन् बीचमे घुसनेवाली नही हू।"

"नही, आपके कधे पर रखेगे ही नही। आश्रमका नियम है कि जिमकी अुमर सोलह वर्षसे अूपर हो अुसके कधे पर वापूजी हाथ न रखे।"

"यह नियम क्या वापूजीने वनाया है?"

"नही, आश्रमके मत्री छगनलालभाअीने वनाया है।"

मुझे यह वात सच्ची मालूम नही हुअी। मैने पूज्य महात्माजीसे पूछा, "ये लडकिया कहती है कि जिसकी अुमर १६ सालसे अूपर हो अुसके कधे पर आप हाथ नही रखते और यह नियम छगनलालभाअीने वनाया है। यह वात सच है?"

पूज्य महात्माजीने अुत्तर दिया, "हा, वात सच हे।" फिर वोले, "तुझे कधे पर मेरा हाथ रखवाना हो तो छगनलालभाअीकी अिजाजत ले आ।"

मेरे अभिमानको धक्का लगा। गुस्सेसे अपना सिर हिलाकर मैने कहा, "आपके हाथकी अैसी मुझे क्या गरज है जो मै छगनलालभाअीकी अिजाजत लेने जाअू?"

"तुझे हाथ न रखवाना हो तो दूसरी वात है।" महात्माजीने विरक्त भावसे जवाव दिया।

लेकिन भगवान देनेवाला हो वहा कौन रोक सकता है?

पूज्य महात्माजीने खुराकके वहुतसे प्रयोग किये थे। अुनमे से कच्चे आहारका प्रयोग अुस समय चल रहा था। तीन महीने तक गाडी चलती रही और अुन्हे अपना प्रयोग मफल होता हुआ दिखाअी दिया। अिमलिअे स्वभावके अनुसार अुन्होने आश्रमवासियोमे कच्चे आहारका प्रचार किया। लोगोने थोडे अरसे तक तो चलाया, फिर छोड दिया। अुन सव वातोमे मै यहा नही जाती, यद्यपि वह भी अेक वडा मजेदार प्रकरण है। अन्तमे पूज्य महात्माजी अकेले रह गये और अुन्हे भी आवके दस्त होने लगे। पूज्य महात्माजीके स्नानगृहमे ही कमोड रहता था। रोज दो वार शौचके लिअे वे वही जाते थे। पेचिशके शिकार होने पर ज्यादा

वार जाना पडता था। जहा तक मुझे याद है पहले ही दिनकी यह घटना है। दिन भर काममे लगी रहनेके कारण अिस वीमारीके वारेमे मुझे विलकुल मालूम नही था। वरसातके दिन होनेकी वजहसे हृदय-कुजमे ही सोते थे। वरामदेके अेक ओर पूज्य महात्माजीका कमरा था, जिसके तीन ओर ही दीवारे थी। वरामदेकी ओर वह खुला था। अुस कमरेमे पूज्य महात्माजी और पूज्य वा खाट डालकर सो गये। गगावहन झवेरी, वसुमतीवहन और मै वरामदेमे खाट डालकर सो गये। महात्माजीको पेचिश हो गअी थी, अिसलिअे कमोड हृदय-कुजमे ही रखना चाहिये था, लेकिन मालूम नही यह वात क्यो किसीको नही सूझी? आधी रातको पूज्य महात्माजीकी खडाअूकी आवाजसे मै जागी। लालटेन हाथमे लेकर वे ।हर जानेके लिअे निकले थे। मैने वसुमतीवहनसे शब्द सुने, "वापूजी, साथ चलू?" पूज्य महात्माजीने मना किया। फिर मैने भी पूछा, "मै आअू?" "नही, नही," वे फिर बोले और चलने लगे। अुनकी खडाअूकी आवाज अैसी आती थी, मानो अुनके पैर लडखडा रहे हो। वादमे मुझे लगा कि हम साथ जाती तो वे नाराज नही होते। लेकिन वे गये। हम फिर सो गये। लेकिन कुछ ही मिनट वाद मै फिर जागी। देखा तो चारो ओर अधेरा ही अधेरा था। मै सोच रही थी पूज्य महात्माजी वापस आ गये होगे क्या? अितनेमे ही वसुमतीवहन मेरे पास आकर कहने लगी "प्रेमावहन, वापूजी अभी तक वापस नही आये।" मै तुरत अुछलकर वरामदेकी सीढियो पर कूद पडी और गुसलखानेकी तरफ दौडी। दो वाडे पार करके जाना पडता था। वाहर भी अधेरा ही था। आकाश वादलोसे घिरा हुआ था, अिसलिअे घोर अधकार फैला था। हलकी वरसात भी होने लगी। मै स्नानगृहके दरवाजेके सामने थोडी दूर खडी होकर देखने लगी। दरवाजेकी सन्धिमे से अुजाला दिखाअी दिया, लेकिन किसी प्रकारकी हलचल नही मालूम होती थी। मै सोचने लगी कि अन्दर महात्माजी होशमे तो होगे? कही वेहोश तो नही हो गये? दरवाजा खटखटाकर पूछू या नही? अैसा सोचते सोचते थोडी देर खडी

रही होअूगी कि अन्दरसे पानीकी आवाज सुनाअी दी। मुझे भी शांति हुअी और मै दरवाजेके पास जाकर खडी हो गअी। थोडी देरमे दरवाजा खुला और हाथमे लालटेन लिये हुअे पूज्य महात्माजी मुझे दिखाअी दिये। "मेरा सहारा लीजिये," अैसा कहनेकी मेरी हिम्मत नही हुअी। मैंने अितना ही कहा, "मुझे लालटेन दे दीजिये।" पूज्य महात्माजीने लालटेन दी कि अेकदम अुनका शरीर मेरे शरीर पर आ गिरा! मै चौंकी, फिर खयाल आया कि मेरे कधे पर सहारेके लिअे हाथ रखते समय शरीरमे बिलकुल ताकत न होनेकी वजहसे वह अपग होकर मेरे अूपर आ पडा। मेरे अेक हाथमे लालटेन थी। दूसरे हाथसे मैंने कमरके पाससे पकडा और अुनके शरीरको सीधा रखा। मेरे कधे पर रखा हुआ अुनका हाथ तो वर्फ जैसा ठडा लग रहा था। हम चलने लगे, लेकिन पूज्य महात्माजीसे किसी भी तरह पैर अुठाया नही जाता था। अुनका सारा शरीर काप रहा था। नाकसे सास और मुहसे "हा हा" शब्द निकल रहे थे।

"महात्माजी, आप बिलकुल कमजोर हो गये है।"

वे धीरेसे बोले, "हा, मुझे कल्पना ही नही थी कि कच्चे आहारका अैसा परिणाम होगा।"

"आपसे तो बिलकुल नही चला जाता!"

"चला जायगा," अैसा कहकर वे पैर अुठाने लगे। लेकिन शरीरमे मनके जितनी ताकत नही थी।

जवानीमे मेरे शरीरमे पठानकी-सी शक्ति थी। मैंने महात्माजीको पूछा, "मै आपको दोनो हाथोमे अुठा कर ले चलू?"

पूज्य महात्माजी जल्दीसे बोले, "नही नही, मै चलूगा।"

लेकिन तो भी आगे चल नही सके। मैंने पूछा, "चौकीदारको बुलाअू?" अिसके लिअे भी अुन्होने मना कर दिया। मै अधेरेमे देखने लगी। कोअी नजर आ जाय तो! लेकिन कोअी दिखाअी नही दिया। जैसे तैसे करके पूज्य महात्माजी करीब अेक मिनटमे अेक कदमकी गतिसे चलने लगे।

हम अेक वाडा पार करके दूसरे वाडे तक पहुचे तब वसुमतीबहन खडी दिखाअी दी। अुन्हे मददके लिअे बुलाने पर पूज्य महात्माजीको दूसरी ओर भी मदद मिली और हम तीनो बरामदेकी सीढियो तक आ पहुचे। सीढी अेक फुटसे अूची थी। पूज्य महात्माजी अुतना अूचा पैर नही अुठा सके। तब मैंने अुनकी अिजाजतके बिना ही अुन्हे दोनो हाथोसे अुठाकर अूपर ले लिया और खाट पर सुला दिया।

दूसरे दिन अिस घटनाका सबको पता चला। लडकिया मुझसे बातें पूछनेके लिअे मेरे पास आकर अिकट्ठी हुअी। मैंने कहा, "लो, अब क्या हुआ? बापूजीके हाथकी अधिकारिणी तुम सब कल रातको कहा थी? और नियम बनानेवाले छगनलालभाअी कहा थे? बोलो।"

पूज्य महात्माजी थोडे दिन बिस्तरमें ही रहे। फिर थोडा-थोडा घूमने-फिरने लगे, तब अेक दिन अुन्होने अेक हाथमे लकडी ली और दूसरा मेरे कधे पर रखकर चलने लगे। लडकिया बडबडाअी, "बापूजी, प्रेमाबहनके कधे पर हाथ क्यो रखते है? यह तो नियमका भग हुआ!"

लेकिन पूज्य महात्माजीने कहा, "देखती नही हो? मै बीमार हू और मुझे सहारा चाहिये। यहा नियम क्या हो सकता है?"

फिर अच्छे होने पर भी मेरे कधे पर हाथ रखकर वे घूमने लगे। मुझे तो मजा आया! मौनवारको कोअी भी लडकी अुनके साथ घूमने जानेको तैयार नही होती थी। लेकिन मै तो रोजका नियम छोडती नही थी और पूज्य महात्माजीके मौनमे भी अुनका पवित्र और प्रिय सहवास पाकर शुभ सस्कारोका लाभ अुठाती। कारण, फूलोकी सुगध जैसे वातावरणको सुगधित कर देती है वैसे ही सतोका अन्त करण भी शुद्ध होनेसे सन्त भी अपने आसपास आनन्द और पवित्रता फैलाते है। अकेली मुझे ही मौनवारके दिन अपनी अनुगामिनी होते देखकर वे मुझे 'The only faithful' (अेकमात्र वफादार) कहने लगे।

अुन दिनो वातावरण सत्याग्रहके भावी आदोलनकी हवासे भर गया था। आश्रममे देशके बडे बडे नेता आते थे। बाते चलती थी।

अुत्साहका प्रचड प्रवाह वहता था। कोअी महान रोमाचकारी घटना समीप आ रही थी। अुसके अुपारगीत कानमे सुनाअी दे रहे थे। अिसलिअे मुझे नया चेतन मिलने लगा था। अेक दिन शामको घूमते समय पूज्य महात्माजीका हाथ मेरे कधे पर था। अुसे सहलाते हुअे गौरवपूर्ण धन्यताके भावसे मैंने कहा, "जिस हाथने अग्रेजी साम्राज्यका सिहासन हिला दिया वह हाथ मेरे कधे पर है, यह कैसी हृदयको अुत्फुल्ल कर देनेवाली वात है।" और मैंने हर्षोन्मादमे अुनके कोमल, पवित्र हाथको चूम लिया!!

पूज्य महात्माजी हसे। "हम कितने महान है!" अैसा दरवारी रोव दिखाकर, छाती फुलाकर और सिर अूचा करके 'कदम, कदम' वढाते हुअे पूज्य महात्माजी चलने लगे! अुनके हाथकी महानताके सम्वन्धमे यह नअी कल्पना आसपासकी लडकियोको वडी पसन्द आ गअी।

*

पहाडकी गोदमे निर्भय होकर अुछलते-कूदते जल-प्रपातकी तरह मेरा जीवन आश्रममें सुख और आनन्दमे वह रहा था। महात्माजी दाडी-कूच पर निकले अुस वक्त तक मुझ पर किसी प्रकारकी जिम्मेदारी नही थी। पढना, पढाना, कातना, वुनाअीका काम सीखना, रसोअीघरमे और जहा जहा जरूरत हो वहा वहा काम करना — अितना ही मेरा कार्यक्रम था। अिस तरह दिनके आठ घटे काममे वीतते, फिर भी कष्ट महसूस नही होता था। सव काम खेल जैसे लगते थे। दिन वीतते गये वैसे वैसे पूज्य महात्माजीकी व्यक्तिगत सेवा करनेका भी सौभाग्य मिला। अुनका विस्तर विछाना, पैरोमे घी मलना, वाहरसे आये तव अुनके पैर धोना वगैरा सेवाये मैं करने लगी। और वादमें तो?

नित सेवा नित कीर्तन ओच्छव, नीरखवा नन्दकुमार रे,
भूतळ भक्ति पदारथ मोटु, ब्रह्मलोकमा नाही रे।[1]

---

१ नित्य सेवा, नित्य कीर्तन-अुत्सव तथा नित्य नन्दकुमारके दर्शनका सौभाग्य ही हरिके भक्त मागते है। अिस पृथ्वीतल पर भक्ति नामका महान पदार्थ मनुष्यको प्राप्त होता है, जो ब्रह्मलोकमें प्राप्त नहीं होता।

विश्वाकाशमे मांगल्यकी ही अनुभूति होती थी। महात्माजीका सहवास तो अेक अद्‌भुत अमृतरसका पान था। लेकिन जब वे यात्रा पर जाते तब भी :

ज्यां ज्यां नजर मारी ठरे यादी भरी त्यां आपनी।[१]

मेरी भावना अैसी होनेके कारण शारीरिक वियोगमे भी महात्माजीके निकट सान्निध्यका मैं मनमे अनुभव करती थी। अुनके भव्य व्यक्तित्वके अनेक अंग-अुपांग देखनेको मिलते थे। अुससे बहुत सीखनेको मिलता। मेरा जीवन भी अुन्नत होनेका प्रयत्न कर रहा था।

आश्रममे कविवर श्री रवीन्द्रनाथ आ चुके थे। सर्वश्री राजाजी, प० मोतीलालजी, जवाहरलालजी, डॉ० पट्टाभि, कोंडा वेंकटप्पय्या, सरदार वल्लभभाअी — सारे लोकनेता और लोक-सेवक आ चुके थे। देश-विदेशके लोकसेवक भी आश्रममे आ जाते थे। सारी दुनिया देखनेको मिलती थी। पुस्तकें पढकर ज्ञान प्राप्त करनेकी जरूरत महसूस ही नही होती थी, क्योंकि आश्रममे देशका अितिहास घडा जा रहा था।

देशके जीवनका विशाल कदम्ब फूलने लगा था। सूर्योदयसे पहले आकाशमे चारों ओर जैसे अूषाके सुनहरी रंगकी शोभा फैलती है, वैसे ही न मालूम कहांसे जीवनमे नव-चेतन चमकने लगा था। मैंने बबअीकी अपनी सहेलियों और स्नेहियोंको लिखा "यह आश्रम जगतका मध्यबिन्दु है। अुसका विस्तार अनन्त-सा लगता है। यहां सत्यका साक्षात्कार होता है। न कष्ट है, न दुःख है और न तपस्या है। मोहनकी मुरलीका मधुर रस पीकर मस्त ही होना है। विश्वका सार्वभौम और सार्वकालिक नियम जो सत्य या अहिंसा है वह प्रेम ही है। अुसीमे सबको विलीन होना है। दूर रहकर आश्रमकी सच्ची कल्पना हो ही नही सकती। यहां आकर ही अनुभव करना चाहिये।"

---

१ जहां जहां मेरी नजर ठहरती है, वहां वहां आपका ही स्मरण भरा होता है।

अच्छा हुआ, मैं घरवार और अिष्टमित्रोंको छोडकर समय पर आश्रममे आ गअी। अपने भाग्यकी परीक्षा करते हुअे सत जनाबाअीकी तरह मैं भी भगवानको धन्यवाद देने लगी

माझ्या मनी जे जे होते। ते ते दिधले अनते।।

मेरे मनमे जो जो था वह सव भगवानने पूरा किया।

आश्रम, प्रेमा कटक

डा सासवड (जि० पूना)

३०–८–'५९
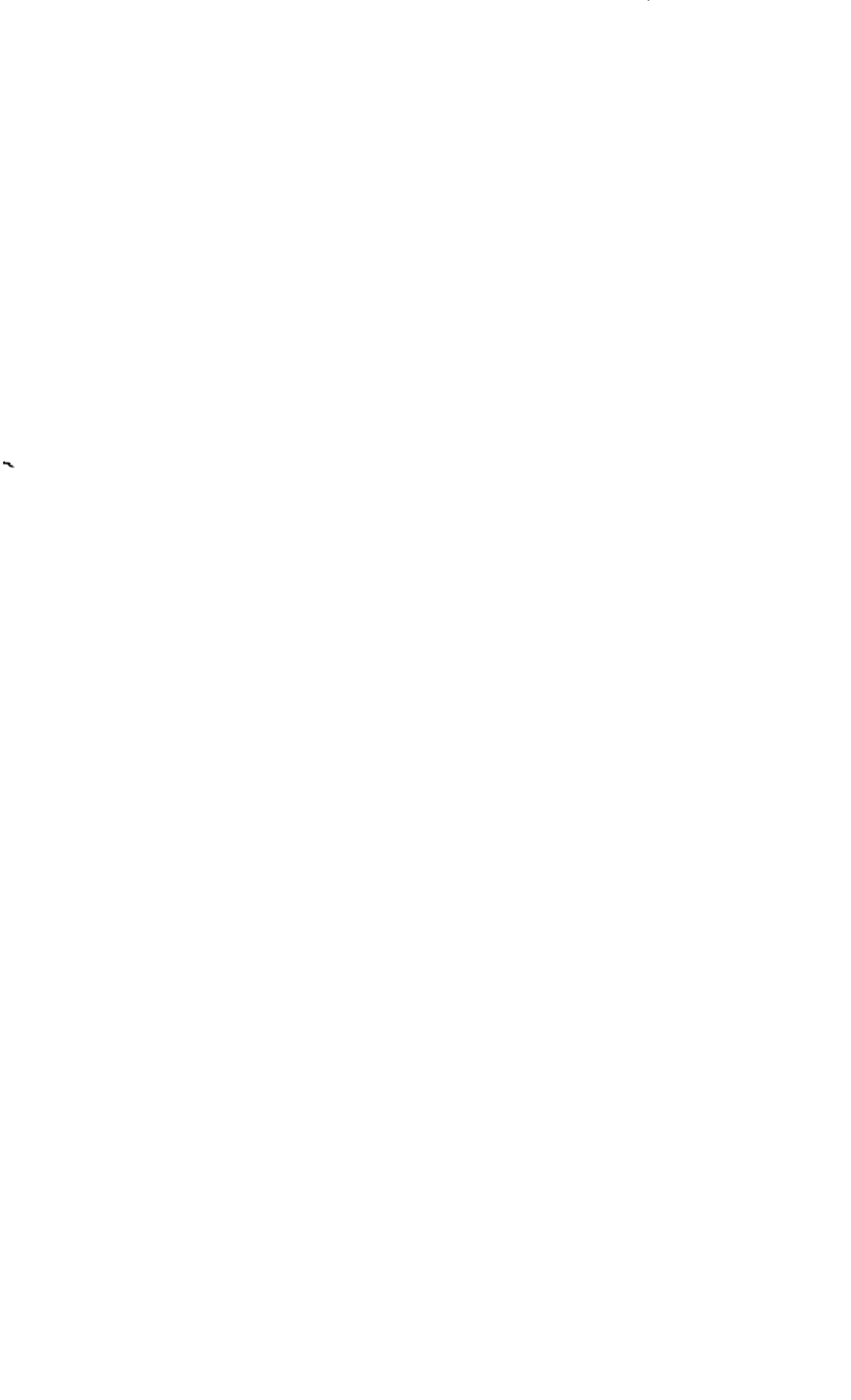
बापूके पत्र–५

कुमारी प्रेमाबहन कंटकके नाम

[ता० २८–२–'२९ से १६–१–'४८ तक]

१*

[वम्वअीमें अेम अे की टर्म्स भर रही थी, तव वारडोली आन्दोलनके समय सन् १९२८ में मै सावरमती जाकर महात्माजीसे मिल आअी थी। पढाअी पूरी होनेके वाद सत्याग्रह आश्रममे भर्ती होनेकी अपनी अिच्छा मैंने वताअी थी और अिसके लिअे अुनकी अिजाजत मागी थी। "जव आओगी तव आश्रमके द्वार तुम्हारे लिअे खुले ही होगे।" अैसा आश्वासन पूज्य महात्माजीने दिया था। १९२९ की फरवरीमे मैंने अुन्हे पत्रमे याद दिलाते हुअे लिखा कि "अव परीक्षा पूरी होनेके वाद मैं मअीमे वहा आना चाहती हू।" अुसका यह अुत्तर है। महात्माजीके आध्रसे वापस लौटते वक्त २५ मअी, १९२९ के दिन वम्वअीमें अुनके साथ होकर दूसरे दिन सुवह मै आश्रम पहुची।]

२८-२-'२९

प्रिय वहन,

तुम्हारा स्पष्टतासे लिखा हुआ पत्र मिला। मुझे तुम्हारी अच्छी तरह याद है। तुम जव चाहो तभी आ सकती हो। यहा तुम्हारा खर्च निकालने जितनी रकम प्राप्त करनेमे तुम्हे कोअी दिक्कत नही होगी।

---

* मूल पत्र अंग्रेजीमे हे, जो नीचे दिया गया है

28-2-'29

Dear friend,

I have your clearly written letter I remember you well You are free to come whenever you like There is no difficulty about your earning your way here

I leave tomorrow morning and return end of March only to leave again for Andhra Desha I do not know

कल मैं बाहर जा रहा हूं और मार्चके आखिरमें वापस लौटूंगा। आनेके तुरन्त बाद आश्रम जाअूगा। लम्बे अरसे तक आश्रममें कब रह सकूंगा, यह नहीं कह सकता।

तुम्हारा
मो० क० गांधी

श्रीमती प्रेमाबाअी कंटक
पी अेल लेडीज़ होस्टल
वाच्छा गांधी रोड, गामदेवी
बम्बअी – ७

२

[आदर्श सत्याग्रही बननेकी तमन्ना मैंने पत्रमें बताअी थी। अुसीका यह जवाब है।]

मौनवार,
९–९–'२९

चि० प्रेमा,

तुम्हारा दुःख मैं समझता हूं। तुम्हारे प्रेमको अुससे भी ज्यादा समझता हूं। तुम्हारी कर्तव्य-परायणता मुझे बहुत अच्छी लगी है। जिस रास्ते पर तुम आज चल रही हो अुसी रास्तेमें आत्मशुद्धि है, शान्ति है और देशसेवा है, अिस बारेमें कभी शंका मत रखना।

अगर आश्रमसे कुछ मिला हो तो अुसे न छोडनेका निश्चय करके स्वयं अपनी, आश्रमकी और मेरी शोभा बढाना।

बापूके आशीर्वाद

---

when I shall be able to stay at the ashram for any length of time

Yours
M. K. Gandhi

Shrimati Premabai Kantak
P. L. Ladies Hostel
Wachha Gandhi Road, Gamdevi
Bombay – 7

३

आगरा,
१९-९-'२९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। विश्वासके वश होकर 'तुम' का मैने 'तू' किया है। मुझे अुत्तर लम्बा लिखा यह अच्छा ही किया। काममें लगा हुआ पिता अेक ही लकीर लिखे, तो भी बच्चे सतोष कर लेते है, लेकिन वे तो अपना हृदय पूरा अुडेलेंगे ही।

यह बात बिलकुल सच है कि मेरे जालमे जो भी कोअी आ जाय अुसे फसा लेनेकी ही मेरी अिच्छा रहती है। किसीके जालमे फस कर हमारा सत्यानाश हो सकता है। लेकिन मेरे जालमें फसे अेक भी व्यक्तिका सत्यानाश हुआ हो अैसा मै नही जानता। अिसलिअे मै अपना धधा चालू रखता हू। बबअी जानेके कि रायेकी माग तूने ठीक की है और मुझे वह पसन्द आअी है। मैने छगनभाअी जोशी[1]को लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

४

शाहजानपुर,
११-११-'२९

चि० प्रेमा,

मैने बबअी अेक पत्र लिखा था। वह पहुचा नही मालूम होता। तू अुससे पहले ही रवाना हो गअी अैसा मालूम होता है।

बबअीमे वजन बढे और आश्रममे घटे अैसा यदि होता ही रहे, तो आखिरमे आश्रमसे अरुचि होनेवाली ही है।

---

१ अुस समय श्री छगनलालभाअी जोशी सत्याग्रह आश्रमके मत्री थे।

आश्रमकी सुगन्ध बबओीमे फैलाना अुचित था या अनुचित, यह तो अनुभव ही बता सकेगा। अभी तो आश्रमके दोष ही नजरके सामने तैरते रहते है। और मुझे तो वही अच्छा लगता है। हम अपनेमे दोष न देखे और गुण ही देखा करे, तव हमारी अवनतिका आरभ हुआ समझना चाहिये।

तैयारियो[1]के बारेमे वहा आने पर बात करेगे।

बापूके आशीर्वाद

५

२०-१२-'२९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिल गया। लेकिन मैने पत्रमे बाल-मदिरके वर्णनकी और वहाकी स्थितिके चित्रकी आशा रखी थी। अब भी रखू क्या?

बापूके आशीर्वाद

६

[१२ मार्च, १९३० के दिन सत्याग्रह आश्रमसे निकलकर पदयात्रा करते हुअे मै कराडी पहुचूगा। और वहा सबसे पहले मै नमक-सत्याग्रह करूगा, अुसके बाद देशमे लोग अुसका अनुकरण करे — अैसा आदेश पूज्य महात्माजीने दिया था। सभी जगह वातावरण गरम होने लगा था। अंग्रेज सरकारके लिअे विदारक परिस्थिति खडी होगी, अैसे लक्षण दिखाअी देने लगे थे। सरकार ११ मार्चकी रातको ही पूज्य महात्माजीको गिरफ्तार कर लेगी, अैसी अफवाह भी अुस समय फैली थी। ११ ता० को आश्रमकी साय-प्रार्थना हुअी तभीसे लोगोकी अपार भीड जमा होने लगी थी। सारी रात लोगोकी भीडको शान्त करनेमे और अिस चिन्तामे ही

---

१ देशमे सत्याग्रह आन्दोलन शुरू होनेवाला था। अुसकी तैयारियोके बारेमे।

बीती कि पूज्य महात्माजी अगर गिरफ्तार हो गये, तो दूसरे दिन सुबहका रोमांचकारी और अैतिहासिक दृश्य देखना कैसे संभव होगा। अेक-दो घंटे ही सोनेको मिला होगा। तीन बजे प्रातःकर्मसे निबट कर मैं पूज्य महात्माजीके पास दौडी गअी। वे अपनी खाट पर बैठ कर दातुन कर रहे थे। वे गिरफ्तार नहीं हुअे और अब कूच होगी ही, अिसके आनन्दमें डूब कर मैं अुनके पास गअी और मैंने अपना सिर अुनकी पीठ पर रख कर कहा, "महात्माजी, आप पकडे नहीं गये अिसलिअे अब कितना आनन्द आयेगा!"

वे हंसे। "पागल!" अितना ही कहा।

प्रार्थनाकी घंटी बजी तो सवा चार बजे सब प्रार्थना-भूमिकी ओर चले। अुस दिन प्रार्थनामें गानेके लिअे पंडितजीको अेक भजन सुझानेका मेरा विचार था। लेकिन अपने मुहल्लेका रास्ता पार करके प्रार्थना-भूमिकी तरफ आते हुअे पंडितजीको लोगोंने रोक लिया। वे रास्तेमें ही धुन गवाने लगे। अिस तरफके हम सब लोग प्रार्थना-भूमि पर अिकट्ठे हुअे। कअी नेता और बडे समाज-सेवक भी हाजिर थे। चींटीको भी जगह न मिले अितनी भीड अिकट्ठी हुअी थी। अंधेरा तो था ही। मैं पूज्य महात्माजीसे थोडी ही दूर बैठी थी। प्रार्थना पंडितजीके बिना शुरू हुअी। लेकिन श्लोक पूरे होनेके बाद पंडितजी आ पहुंचे। अंधेरेमें चारों ओर गम्भीर शान्ति थी और सब लोग भजनकी राह देख रहे थे। पंडितजी पूज्य महात्माजीके दाहिनी ओर बैठे थे, तम्बूरेके तार मिला रहे थे, तब मैंने अधीर होकर धीरेसे पुकारा, "पंडितजी, पंडितजी!"

"क्या?" पंडितजीने पूछा।

"जानकीनाथ सहाय करे जब — यह गीत सुबह गाया जा सकता है?"

पंडितजीने जवाब दिया, "हां।"

मैंने आग्रहपूर्वक कहा, "तो फिर अभी यही गीत गाअिये।"

वे बोले, "लेकिन अभी तो 'वैष्णव-जन' गीत गाना है न?"

मन खिन्न हुआ, लेकिन जानकीनाथने सहायता की। हम मराठीमें बात कर रहे थे, फिर भी पूज्य महात्माजी सब समझ गये और बीचमें

पडकर अुन्होने खुद ही पडितजीसे कहा, "पडितजी, 'वैष्णव-जन' गीत तो कूचके समय गाया जायगा। अभी प्रेमा कह रही है वही भजन गाअिये।"

मुझे खुशी हुअी। पडितजीने भी किसी प्राणवान आतरिक भावनासे भरपूर होकर श्रवण-गम्य और हृदय-गम्य भजन गाकर वातावरणमे श्रद्धाका सिचन किया। राग भी हमेशासे अलग ही था!

जब जानकीनाथ सहाय करे तब कौन बिगाड करे नर तेरो ॥ध्रु०॥

*

कूच पर जानेसे पहले पूज्य महात्माजी बीमारोको देखने गये। दो महीनेसे मुहल्लेमे छोटे बच्चे शीतलासे पीडित थे। तीन बच्चे भगवानके घर चले गये थे। लेकिन पूज्य महात्माजीके मार्गदर्शनमे किये गये अुपचारसे रोगका अन्त हो गया था। अच्छे हो रहे बालकोको देखने पूज्य महात्माजी गये। मुझे अेक कल्पना सूझी।

प० जवाहरलालजी अुस साल पहली बार राष्ट्रपति हुअे थे। अुन्होने राष्ट्रीय झडेके बिल्ले बनाकर सब सैनिकोको दिये थे। मेरे हाथमे भी अेक बिल्ला आ गया। पूज्य महात्माजी दर्जीसे सिलाये हुअे कपडे पहनते ही नही थे। अिसलिअे अुन्हे बिल्ला देनेकी बात किसे सूझती? लेकिन मुझे लगा कि सेनापतिकी छाती पर भी बिल्ला होना चाहिये। अिसलिअे वह बिल्ला लेकर मै दौडती हुअी अुनसे मिलने गअी।

वे आश्रमके मुहल्लेसे छात्रावासकी तरफ आ रहे थे। आनन्दीके कधे पर अुनका हाथ रखा हुआ था। दो-तीन आदमी पासमे थे, शायद नारणदासभाअी भी होगे। मै सीधी महात्माजीके पास गअी और मैने कहा, "मै आपको बिल्ला देने आअी हू।"

वे बोले, "बिल्ला लेकर मै क्या करूगा?"

मैने कहा, "राष्ट्रपतिने सबको दिये है, सबने अपनी अपनी छाती पर लगा लिये है। मै आपकी छाती पर लगाना चाहती हू। ओढनेकी धोती पर ही लगाया जाय तो भी क्या बुरा है?"

अुन्होने मजूर किया। मैने बिल्ला लगा दिया। अुस समय पूज्य महात्माजीके मुखचन्द्र पर कोअी अपूर्व तेज झलक रहा था! चाहे अहिसक ही क्यो न हो, लेकिन अेक महान सग्राम-वीरकी तरह वे अेक

अैतिहासिक युद्ध करनेके लिअे निकले थे। भारत-माताकी आजादीके लिअे वलिदानकी यज्ञवेदी प्रदीप्त हुअी थी। सैनिक हुंकार कर रहे थे। मेरी भावनाअें भी अुद्दीप्त हो गअी। जरा भी विवेक रखे विना प्रेमवश होकर मैंने अपने अुन प्रियदर्शी नेताको अपने दोनों हाथोंमें वाथ लिया और अैसे अवतारी पुरुषके समयमें मुझे जन्म दिया अिसके लिअे मैंने मनमें भगवानको धन्यवाद दिया!

"पागल!" हसते हसते पूज्य महात्माजीने मुझे दूसरी वार वही अुपाधि दी।

नीचेके ६, ७, ८ और ९ नंवरके पत्र दांडी-कूचके समय अलग अलग, जगहसे लिखे गये हैं।]

१३-३-'३०

चि० प्रेमा,

तू पागल तो है ही, लेकिन तेरा पागलपन मुझे प्यारा लगता है। तेरी आशासे अधिक अनन्यतासे तू काम कर रही है और अीश्वर तेरा शरीर पूर्ण स्वस्थ रख रहा है। अधीर मत होना। आवाजको हलकी करना। धीरे धीरे वोलनेसे गलेकी गिल्टियोंको नुकसान नहीं होगा।

कुसुम[1]से कहना कि अुसकी जीभके वारेमें अभी थोड़ा और अुपचार वाकी है, वह डॉक्टरकी अिच्छा हो तव करे।

मुझे पत्र लिखना। ज्यादा लिखनेका मुझे समय नहीं है।

वापू

---

१ श्री कुसुमवहन हरिलालभाअी देसाअी। अेक आश्रमवासी।

७

रविवार,
वुआ,
२३–३–'३०

चि० प्रेमा,

तूने तो अब मुझे पत्र न लिखनेका व्रत ले लिया है अैसा मालूम होता है। तू काममे डूबी हुअी है, यह मै जानता हू। अिसीलिअे मुझे पत्र चाहिये। काम अिस हद तक न करना कि तू बीमार पड जाय। गलेकी आवाज कम करके गलेकी सभाल करना।

बापूके आशीर्वाद

८

२–४–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पूर्ण पत्र मिला है। अुसमे मेरे पत्रकी पहुच नही है। लेकिन मै मान लेता हू कि वह तुझे मिल गया है।

मुझे पेंजीका फूल[1] मिला तो नही, लेकिन मिला जैसा ही मै समझता हू। प्रेमसे फूल लगानेमे अुनका देना भी शामिल है। फूलको भौतिक रूपमें देना तो कृत्रिमता है।

---

१ पूज्य महात्माजी सत्याग्रह आश्रममे हृदय-कुजके आगनमे जहा सोते थे, अुसके आसपास मैंने फूलोके पौधे लगाये थे। वे दाडी-कूचमें गये अुसके बाद पेंजीके फूल खिले। अुनमे से अेक फूल मैंने अुन्हे यात्रामें भेजा था।

बच्चोंको तू मारती है क्या? मीराबहन[1]की मीठी शिकायत है।
तू अपनी तबीयतका ध्यान रखती होगी।

बापूके आशीर्वाद

९

१०-४-'३०

चि० प्रेमा,

शराब-बन्दी और विदेशी कपडेके बहिष्कारके मेरे मतके बारेमे तेरे क्या विचार है?

तेरे पत्र तो मिले ही है। मुझे लिखती ही रहना। धुरन्धर[2] अच्छा आदमी मालूम होता है। कमलादेवी[3] भी मुझे बहुत पसन्द आओ है। अुनकी लडकीको हवा अनुकूल आयी तो रहेगी, अैसा कहती है। तू अुन्हे रखनेकी कोशिश करना।

बापूके आशीर्वाद

---

१ मिस स्लेड। अिनके पिता अिंग्लैण्डकी नौसेनाके बडे अधिकारी थे। बापूजीकी पुस्तके पढनेसे अुनके प्रति आकर्षित होकर वे हिन्दुस्तानमे आओ और अुन्होने अपने जीवनमे भारी परिवर्तन कर डाला। बापूजीने अुनका नाम मीराबहन रखा। बापूजीके अवसानके बाद अुन्होने थोडे समय तक अु० प्रदेश और काश्मीरमे खेती तथा पशु-सुधारका काम किया। कुछ समय पहले वे स्वदेश लौट गओ है।

२ श्री धुरन्धर बबओके 'नवा काल' दैनिकके सह-सम्पादक थे। मेरे पुराने अध्यापक (हाओस्कूलमे) और बादमे स्नेही मित्र। दाडी-कूचमे शामिल हुओ थे। पूज्य महात्माजीने अुन्हे दाडी पहुचनेसे पहले सत्याग्रहियोकी टुकडीमे भर्ती कर लिया था।

३ श्री कमलाबहन साअिलस (शादीके बाद राव)। अेक ओसाओ बहन और मेरी मित्र थी। बबओकी सेवासदन सस्थामे शिक्षिका थी। दाडी-कूचके समय अपनी लडकीके साथ अेक मुकाम पर पूज्य महात्माजीसे मिलने गओ थी। वहासे मुझे मिलनेके लिअे आश्रममे आओ थी।

१०

[जहा तक मुझे याद है ता० १०–४–'३० का पत्र लिखनेके वाद पूज्य महात्माजी गिरफ्तार हो गये। जेल जानेके वाद पत्र-व्यवहार वद हो गया। शुरूमे तो आश्रमसे भेजी हुअी पहली डाक अुन्हे मिली ही नही। फिर भी अुनके पास श्री मीरावहनका अग्रेजी पत्र पहुचनेका समाचार मिलने पर मैंने भी अेक पत्र अग्रेजीमे लिखा था। और सोचा था कि वह अुन्हे जल्दी मिलेगा। लेकिन वादमे मालूम हुआ कि वह भी पूज्य महात्माजीको नही दिया गया। वादमे तो हर हफ्ते पूज्य महात्माजीके पत्र आने लगे।]

यरवडा,
मौनवार,
१२–५–'३०

चि० प्रेमा,

तूने तो पत्र लिखना ही वन्द कर दिया था। लेकिन मैं समझा था कि मेरा समय वचानेके लिअे तू नही लिखती और तेरे पास भी समय नही होगा। लेकिन तेरे समाचार तो मैं प्राप्त कर ही लेता था। तेरा सयम मुझे वहुत पसन्द आया। मुझे तुझसे अैसी आशा नही थी। अव तो हर हफ्ते मुझे पत्र लिखना ही।

मेरे समाचार नारणदासके पत्रसे मिल जायगे।

कुसुमने आश्रमसे जाते समय मेरी चीजे किसे सौंपी थी? मेरे जेल जाने पर मुझे भेजनेकी पुस्तके तुझे सौंपी थी? अुनमे रामायण, कुरान वगैरा पुस्तके थी। अिस वारेमे पता लगाना और पुस्तके आसानीसे मिल जाय तो भेज देना। मुझे जल्दी नही है।

वहा कौन कौन है और क्या करते है, मुझे लिखना। तेरा खास काम क्या है? मेरे वारेमें किसीको चिन्ता करनी ही नही चाहिये।

वापूके आशीर्वाद

पुस्तकालय कौन सभालता है?

११

[अिस पत्रमें तारीख नही है। लेकिन यह पत्र १२–५–'३० और २३–६–'३० के बीचका होना चाहिये। आगे १३–७–'३० के पत्रमे पूज्य महात्माजीने 'अंग्रेजी पत्र तो गया ही' लिखा है। अिसलिअे जाहिर है कि जेलवालोने वह पत्र अुन्हे दिया नही था।]

य० म०
मौनवार

चि० प्रेमा,

सत्ताधारियोंने तेरा ही पत्र रोका है, अैसा मालूम होता है। वह सारा निर्दोष होगा, लेकिन क्या हो सकता है? अगर सारे पत्र मिल जाय तो जेलका अर्थ निरर्थक हो जाय न? दुबारा लिखना।

बापूके आशीर्वाद

१२

य० म०
२३–६–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिल गया। तेरे पत्रोंकी मुझे जरूरत न हो, तो केवल सभ्यताके लिअे तो मैं नही मागूगा।

धुरन्धर और कमला मुझे बहुत अच्छे लगे। दूसरी बहनसे तो मिलना हो तब सही।

तू कच्चा शाक खाना मत छोड़ना। कच्चे करेले जरूर खाये जा सकते हैं। मैंने तो खाये है। कोमल करेले लेकर अुनको किस लेना, अुसमे नीबू निचोडना, लेकिन कभी शाक बिलकुल न मिले तो अुसके बिना भी चला लेना चाहिये। अुसके बदले किशमिश लेना चाहिये। बना हुआ शरीर

विगाडना नही चाहिये। भूख ज्यादा लगती हो तो दही-दूधकी मात्रा भले वढा दी जाय। पैसेका खयाल मत करना। अन्तमे क्या निर्णय किया यह लिखना।

किसी वातका जवाव देना रह गया हो तो फिर पूछ लेना।

वापूके आशीर्वाद

१३

[अखवारके सवाददाताके रूपमे श्री धुरन्धर दाडी-कूचमें शामिल हुअे थे। वादमे पूज्य महात्माजीने अुन्हे सैनिकके रूपमे सत्याग्रही-दलमें दाखिल किया था। मैंने अिसका कारण पूछा था, जिसका अुत्तर यह है।]

यरवडा मदिर,
६–७–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा १ जुलाअीका पत्र मुझे दिया गया है। खुराकमे फल मिलते है, यह अच्छा हुआ।

धुरन्धरको मैंने अिसलिअे लिया कि अनुभवसे मैंने नियम-पालनमें अुसे दृढ पाया। अुसका खरापन मुझे अच्छा लगा। यह वात अखवारमे नही छापी जा सकती।

फूलो और पेडोके साथ मेरी ओरसे वात करना। अुनके भाअी-वहन यहा भी है। अिसलिअे सन्तोष मानें न?

कुल मिलाकर तेरे दो ही पत्र मुझे मिले है। अग्रेजी पत्र तो नही ही मिला।

वापूके आशीर्वाद

१४

यरवडा मदिर,
१३-७-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। निर्मला[1]के पत्रमे अुसकी हिन्दीकी सुन्दर छाया है, तेरे पत्रमे मराठीकी। जैसे 'वेत रहित कर्यो।'[2] भाषामे होनेवाली अैसी वृद्धि मुझे अच्छी लगती हे। कुछ अरसे वाद तो मै मराठी अच्छी तरह समझ लेनेकी आशा रखता हू। प्रयत्न तो रोज चलता ही है।

अग्रेजी पत्र तो गया ही।

कृष्ण नायर[3]के वारेमे समाचार आये हैं।

तेरे गुजराती अक्षर अुत्तरोत्तर सुवर रहे है।

भावना कभी वार कष्टप्रद सिद्ध होती है। लेकिन भावनाहीन मनुष्य पशुतुल्य है। भावनाको सही दिशामे ले जाना हमारा परम कर्तव्य है।

कच्चे करेले खाकर तो देखने ही चाहिये।

वापूके आशीर्वाद

---

१ स्व० महादेवभाअीकी छोटी वहन, जो अुस समय आश्रमके विद्यालयमे पढती थी।

२ अर्थ है 'अिरादा मुलतवी रखा।'

३ सत्याग्रह आश्रमके कार्यकर्ता। दाडी-कूचके वाद दिल्ली गये थे। वहा अुन्होने आन्दोलनमे भाग लिया था। आजकल लोकसभाके सदस्य है।

१५

यरवडा मंदिर,
१९-७-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा विनोदी और समाचारोंसे भरा हुआ पत्र मिला। अैसे लिखती ही रहना। यहां बीमार न पडनेकी आशा तो रखता हूं। मुझे कुछ हो गया होगा, यह मान कर अैन मौके पर मेरी मददमें रहनेवाली प्रेमा और वसुमतीको कहांसे लाअूंगा? मेरा वजन घटनेकी बात गलत समझना। मेरी तबीयत अच्छी ही मानी जायगी।

बापूके आशीर्वाद

१६

यरवडा मंदिर,
२८-७-'३०

चि० प्रेमा,

तुझे लिखनेमें मुझे कष्ट नहीं होता। तेरा निदान ठीक है। हिन्दुस्तानके प्रश्नोंको सुलझानेमें मुझे जितना रस आता है, अुससे भी ज्यादा आश्रमके और अुनमें भी बहनोंके प्रश्न सुलझानेमें आता है। क्योंकि अुनमें बड़े प्रश्नोंको सुलझानेकी चाबी छिपी रहती है। जैसा पिंडमें है वैसा ब्रह्माण्डमें है। ब्रह्माण्डको जानने जायें तो भूल करेंगे, परन्तु पिण्ड तो हमारे हाथमें है।

बालवर्ग ठीक चलता मालूम होता है।

शीला अब ठीक हो गअी होगी।

मैंने जान-बूझकर करेले खा देखनेकी सलाह दी है।

भावना सीधे मार्ग पर जा सकती है। अुसे सीधे मार्ग पर ले जाना परम अर्थ है। पुरुषार्थ शब्द अेकांगी है। और कोअी तटस्थ शब्द जबान पर आता है?

धुरन्धर 'अनासक्तियोग'का अनुवाद जरूर करें।

बापूके आशीर्वाद

१७

यरवडा मदिर,
२-८-'३०

चि० प्रेमा,

निर्दोप नीद लेनेके लिअे जाग्रत अवस्थामे हमारे आचार-विचार निर्दोप होने चाहिये। निद्रावस्था जाग्रत अवस्थाकी स्थितिको जाचनेका दर्पण है। भावनाको गलत मार्गसे रोकनेकी शक्ति हम सबमे होती ही है। यह अुत्कृष्ट प्रयत्न है। अिस प्रयत्नमे हारके लिअे स्थान ही नही है।

कृष्णकुमारी कमलाबहनसे किस बातमे अलग दिखाअी देती है?

यहा बादल तो पिछले डेढ महीनेसे रहते है, लेकिन बरसात बहुत कम होती है। पर अहमदाबादके सामान्य पैमानेसे बहुत कम नही होती।

अैसा सकेत है कि मुझे कैदियोको पत्र नही लिखना चाहिये। कृष्ण नायरको मेरे आशीर्वादके साथ यह लिख देना। अुससे मुझे बडी बडी आशाअे है।

बापूके आशीर्वाद

१८

[१९२९ की श्रावणी पूर्णिमाके दिन अपने हाथके सूतकी राखी बनाकर और अपनी मुट्ठीमे छिपा कर मै पूज्य महात्माजीके पास गअी। शामकी प्रार्थनासे पहले वे हृदय-कुजके आगनमे लडकियोसे पैर साफ करा रहे थे। मैने धीरेसे पूछा, "महात्माजी, मै राखी लाअी हू। आपकी कलाअी पर बाध दू?" अुन्होने पूछा, "कहा है राखी?" मैने मुट्ठी खोल कर बताअी। "बहुत सुन्दर है। ले, बाध दे!" अैसा कह कर अुन्होने अपना दाहिना हाथ आगे किया। मैने सहर्ष राखी बाध कर प्रणाम किया। लडकियोने शोर मचाया, "राखी तो बहन बाधती है। प्रेमाबहनसे कैसे बधा

ली ? " पूज्य महात्माजीने पूछा, "क्यो ? पुत्री नही बाध सकती ?" वह राखी पूज्य महात्माजीने दशहरे तक हाथमे बधी रहने दी। लडकिया बादमें मुझसे कहने लगी, "बापूको राखिया भेटमे मिलती है, लेकिन अुन्हे वे मेज पर ही रख देते है, हाथमे नही बाधते। फिर तुम्हारी ही राखी कैसे बाध ली ?" मैं क्या जवाब देती ? लेकिन अुसके बादसे मैं हर साल अुन्हे राखी देती थी। पास होती तो खुद अपने हाथसे बाध देती थी। दूर होती तो डाकसे भेजती थी। अुनके अवसान तक यह क्रम चला। गोलमेज परिषदके लिअे वे विलायत गये तब भी अुनके हाथमे मैंने राखी बाध दी थी। स्टीमर पर खीची गअी अुनकी फोटोमें वह दिखाअी देती है।

पूज्य महात्माजीको मैंने लिखा था, "अिस साल श्रावणी पूर्णिमाके दिन आप पास नही है। जेलमे है। राखी तो भेजूगी, लेकिन आपके हाथमे कौन बाधेगा ?"]

यरवडा मदिर,
८-८-'३०

चि० प्रेमा,

पिछले वर्षका रक्षा-बधन याद है। सबका आश्चर्य भी याद है। तू बध गअी यह याद रखनेकी जरूरत नही है, क्योकि वह बन्धन चालू है। अिस बार तेरे अधिकारका अुपयोग काकासाहब करेगे। लेकिन अैसा करते हुअे यदि वे भी बध गये तो ? लेकिन जो कभीके बध चुके हो अुन्हे क्या डर ? अिसलिअे कठिनाअी जैसी कोअी बात नही है, जो बाधे अुसका तो ठीक, लेकिन जो बधवाये अुसका क्या हाल हो ?

पुस्तकालयकी सावधानी तू रखती है, यह मुझे अच्छा लगता है।

शीलाकी तबीयत अच्छी हो जानी चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

यरवडा मंदिर,
१८-८-'३०

चि० प्रेमा,

तू अधीर मत होना। मनको जीतना सरल नही है। लेकिन प्रयत्नसे वह जीता जा सकता है, असी अटल श्रद्धा रखनी चाहिये।

करेलोका शरीर पर कैसा असर हुआ? अुनका रस निकाल देनेकी कोअी जरूरत नही होती। अुन्हे बाटकर या किस कर ज्योका त्यो नीबू और नमकके साथ लिया जा सकता है।

प्रार्थनाकी आवश्यकताके बारेमे सारे जगतका अनुभव है। अुस पर विश्वास रखें तो मन लगता है।

बहुत जल्दी है।

बापूके आशीर्वाद

२०

यरवडा मंदिर,
२२-८-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। श्रावणी पूर्णिमाके दिन तेरी राखी काका[1]ने बाधी थी और तेरी ओरसे प्रणाम भी किया था।

पंडितजी[2]का धैर्य और अुनका त्याग तूने लिखा वैसा ही है। अुन्होने सहनशक्ति भी बहुत अूचे दरजेकी दिखाअी है।

अबसे आगे न तो तू दस बजे तक जागना, न दूसरेको जगाना। नौ बजे हमे बिस्तर पर लेट ही जाना चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री काकासाहब कालेलकर। अुस समय पूज्य महात्माजीके साथ ही जेलमे थे।

२ स्व० पं० नारायण मोरेश्वर खरे। संगीत-शास्त्री, आश्रमवासी।

२१

यरवडा मदिर,
२९-८-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे कागजके पुरजे देखकर कोओी हसे नही, न रोष करे। मुझे यही शोभा देता है। अैसे पुरजे काममे लाने पर भी जो समय मिलता है अुसमे जितनी शोभा मै अुडेल सकता हू अुतनी अुडेलना चाहता हू।

तेरे शरीरमे रोग है, अैसी शकासे तू भयभीत क्यो होती है? रोग हो तो भी क्या और वह रोग भारी हो तो भी क्या? 'देह जावो अथवा राहो पाडुरगी दृढ भावो।'[1] आश्रममे हमने कमसे कम अितना तो सीखा ही है। थोडे अुपवास कर डाल तो तेरा शरीर स्वच्छ हो जायगा। 'क्यूने बाथ', कटिस्नान और विशेष रूपसे अिन्द्रिय-घर्षण-स्नान (फिक्शन सिट्ज) आवश्यक है। तुझे अिनकी जानकारी न हो तो कान्ता या राधासे पूछना। वे जानती मालूम होती है। क्यूनेकी पुस्तकसे अिनके विषयमें पढ भी लेना। स्त्रियोको कुछ रोग होता है तब मासिक धर्मके बारेमें हमेशा जाननेकी जरूरत होती है। मासिक धर्म तुझे ठीक आता है? नियमसे होता है? तकलीफ होती है? डॉक्टरकी सलाह लेनेकी जरूरत हो तो लेना।

---

१ 'देह जावो अथवा राहो' यह अुक्ति महाराष्ट्रके सतकवि श्री नामदेवकी है। मेरे शरीरमे रोग प्रवेश करे, तो सेवा करनेके बदले मुझे सेवा लेनी पडेगी, मै अपग हो जाअूगी, अिस कल्पनासे मै बेचैन हो गअी थी। शरीरमें कष्ट बढने लगा अुसका कारण बादमें मालूम हुआ। शाकके रूपमे कच्चे करेले सतत खानेसे मुझे पीलिया हो गया।

अरविन्दबाबू[1]की पुस्तक मैंने नही पढी है। मेरा वाचन कितना कम है, यह तो मै ही जानता हू। मेरा धधा ही मुख्यत कुदरतकी पुस्तक पढनेका रहा है। और अुसका वाचन पूरा हो ही नही सकता।

नीद तो पूरी लेनी ही चाहिये। ९ से ४ का नियम पालना चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

२२

यरवडा मदिर,
६–९–'३०

चि० प्रेमा,

तूने अब स्वास्थ्यकी चिन्ता छोड दी होगी। जमनादास[2] ने क्यो सबको मिलनेसे अिनकार कर दिया? ज्यादा समाचार मिले हो तो लिखना।

आश्रमके पुस्तकालयमे हर भाषाकी कितनी पुस्तके है, अिसका किसीने हिसाब लगाया है? पुस्तकालयके लिअे कितना समय देना पडता है? चोरोका अुपद्रव कैसा है? बरसात अब तो नही होती होगी। यहा बहुत थोडी हुअी है। आज ठीक पानी बरस रहा है। जरूरत भी बहुत थी।

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री अरविन्द घोष (१८७२–१९५०)। आधुनिक भारतके महान योगी। बगभग आन्दोलनमे प्रमुख भाग लिया। १९०८ मे मुजफ्फरपुर बम केसमे पकडे गये। निर्दोष छूटनेके बाद वे अध्यात्म-मार्गकी ओर झुके। १९१० से पाडिचेरी जाकर रहे। १९५० मे अुनका अवसान हुआ तब तक वही रहे।

२ पूज्य महात्माजीके भतीजे। स्व० मगनलालभाअी गाधीके छोटे भाअी। अुस समय राजकोट जेलमे थे।

२३

११–९–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अब तबीयत अच्छी हो गअी होगी। रातके नियमका पालन करना ही चाहिये। दिनका कोअी काम कम कर देना चाहिये या अभी पढना वगैरा छोड देना चाहिये। पूरी नीद लेने पर अुत्साह बढेगा। अिससे वही काम थोडे समयमे हो सकेगा। लेकिन वैसा हो या न हो, ९ से ४ तक शान्ति रखना चाहिये और सोना ही चाहिये। अिस पर तुरन्त अमल करना। तू बहस न करे तो अच्छा हो। बहस करने जैसी बातोमे खूब करना, अिसमे नही।

कमलाबहन लडी[1]से मित्रता की या नही?

अध्यापक लिमये[2]ने 'अनासक्तियोग' का अनुवाद किया है और वह छपेगा, यह घुरन्धरको बताना।

'भीक' (डर) मराठी, 'बीक' गुजराती।

बापूके आशीर्वाद

२४

२०–९–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा लम्बा पत्र मिला।

तबीयत ठीक रहे तो मेरे लिअे सूचना देनेकी जरूरत नही है।

पश्चिमकी अुन दो बहनोंके सम्पर्कमे तू आती है या नही? न आती हो तो आना।

---

१ अेक अमेरिकन बहन आश्रममे आअी थी। नाम कमलाबहन लडी – **Miss Betty Lundy**। अेक भारतीय भाअीके साथ विवाह करनेवाली थी।

२ अध्यापक लिमये। पूनाके तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठकी तरफसे जो महाविद्यालय पूनामे राष्ट्रीय शिक्षणका कार्य कर रहा था अुसके आचार्य।

अभी तो तेरी सारी जिन्दगी अीश्वरने मुझे सौंप दी है अैसा मालूम होता है।[1] अैसा ही अन्त तक चलेगा।

सुशीला[2] कहाकी है? वह मुझे अग्रेजीमे शुभेच्छाअे भेजती है? नाम तो गुजराती या मराठी जैसा है। तामिल तो नही है। तामिल हो तो माफ किया जा सकता है, नही तो शुभेच्छाअे मातृभापामे भेजे।

बापूके आशीर्वाद

०

२५

[दाडी-कूचसे पहलेकी बात है। पूज्य महात्माजी रातको खाट पर सोते तब मैं अुनकी तीन चादरे अुन्हे ओढाती थी। लेकिन तीनो लगभग अेकसी दिखाअी देती थी, अिसलिअे कभी कभी मैं अुनका क्रम भूल जाती थी।]

यरवडा मदिर,
२८–९–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। ओढानेमे तू क्रम भूलती थी यह कैसे याद न रहे? रोज वहीकी वही भूल सहन करनेवाला पिता कितना अच्छा होना चाहिये?

'आश्रम-भजनावलि'मे ८४ वे[3] भजनकी तीसरी पक्ति यो है 'कमल स्याने मोट वाधी।' अिसका अर्थ तू समझती हो तो तू, अथवा वालजीभाअी[4]

---

१ पूज्य महात्माजीकी वर्षगाठके निमित्त अपनी सारी जिन्दगी मैंने अुन्हे अर्पित की थी।

२ श्री सुशीलावहन पै। मेरी सहेली और अुस समय राजकोटकी वनिता विश्राम सस्थाकी सचालिका।

३ 'कोअी वन्दो कोअी निन्दो' वाला भजन। १९५६ के सस्करणमे अिसका नवर ७९ है।

४ अध्यापक श्री वालजी गोविन्दजी देसाअी। अेक आश्रमवासी। अुन्होने पूज्य वापूजीकी कुछ मूल गुजराती पुस्तकोका अग्रेजीमे अनुवाद किया है। आजकल पूनामे रहते है।

अथवा तोतारामजी[1] अथवा जो भी कोअी जानता हो अुससे समझ कर तू भेजना, अथवा जो जानता हो वह भेजे।

कमलाके साथ मित्रता की, यह अच्छा किया। अुसे परेशानी न हो। अुस ग्रोलिगर[2] नामकी वहनके साथ भी मित्रता कर ली? न की हो तो करना। आश्रमके नियमोंके बारेमें अुसके मनमें कुछ प्रश्न हैं। तेरे साथ चर्चा करे तो अुन पर चर्चा करना और अुसे सन्तोष दिलाना।

अब तबीयत कैसी है?

बापूके आशीर्वाद

२६

[दाडी-कूचके समय पूज्य महात्माजी अपनी खडाअू आश्रममे रख गये थे। मैंने अुनकी माग की थी। अुसका अुत्तर शुरूमें है।

आश्रममे दिन-रात सेवाकार्यमे ही बीतते हैं, वाचन-चिन्तनके लिअे समय नही मिलता, अैसी शिकायत मैंने की थी। अिस बारेमें पत्रके पिछले भागमे कर्तव्य-कर्म पर प्रवचन किया है।]

यरवडा मदिर,
२–१०–'३०

चि० प्रेमा,

खड़ाअू चाहिये तो जरूर रखना। लेकिन अिन लकडीके टुकडोका तू क्या करेगी? अुनसे तेरा कद दो अिंच बढे तो भले ही अुनका सग्रह कर। मैं तो अिसे मूर्तिपूजा कहकर अिसकी निन्दा करता हूं। अपने पिताजीका चित्र मैं रखता था। दक्षिण अफ्रीकामे अपने दफ्तरमें, बैठकमें

---

१ वृद्ध तोतारामजी आश्रमकी खेतीवाडीका काम करते थे। वे कबीरपन्थी भक्त थे। अुन्होंने बहुत वर्ष फिजीमें खेती करनेमे बिताये थे। फिर अपनी पत्नी गगादेवीके साथ सत्याग्रह आश्रममें आकर रहे।

२ अेक स्विस बहन। कदकी छोटी लेकिन पुरुष-वेशमें रहती थी। स्त्रियोंके अधिकारोंके बारेमें विशेष मत रखती थी। थोडे दिन आश्रममें रहकर वापस चली गअी।

और सोनेके कमरेमे मैंने अुनके चित्र रखे थे। मैं सोनेकी जजीर पहनता था तव अुसमे लॉकेट भी रहता था। अुसमे पिताजी और वडे भाओीका चित्र रहता था। अव ये सव छोड दिये है। अिसका यह अर्थ नही है कि मैं अुनको कम पूजता हू। आज वे मेरे हृदयमे अधिक अकित हैं। अुनके गुणोका स्मरण करके मैं अुनका अनुकरण करनेका प्रयत्न करता हू, और अैसी भक्ति असख्य देवोकी कर सकता हू। लेकिन अुनके चित्र सग्रह करने लगू तो मेरे पास जगह भी न रहे। और अुनकी खडाअू वगैरा रखने लगू तो नअी जमीन लेकर अुसका मालिक वनना पडे। अिसलिअे अनुभवीकी तुझे यह सलाह हे कि मेरे जितने कदम सही दिशामे पडते हो अुन कदमो पर तू चल। यह खडाअू रखनेसे हजार गुना अूचा काम हे और अुसे देखकर कोअी नकल करे तो अच्छा है। लेकिन तेरे पास खडाअू देखकर अुसका कोअी अन्धा अनुकरण करने लगे, तो वह खड्डेमे ही गिरेगा न? अितना समझ ले और फिर 'यथेच्छसि तथा कुरु'।

जो कर्तव्य-कर्मको समझता है और अुस पर आचरण करता है, अुसकी तृष्णा तो मिटती ही है। जिसकी तृष्णा नही मिटी अुसे कर्तव्य-कर्मका भान ही नही है। तृष्णाका पर्वत तो अितना अूचा है कि अुसे कोअी पार कर ही नही सकता। अुसे धराशायी किये सिवा अन्य कोअी अुपाय नही है। तृष्णा छोडना अर्थात् कर्तव्यका भान होना। मुझे मालूम हो कि मुझे काशी जाना हे, वहा जानेका मार्ग भी मुझे मालूम हो, तो फिर मुझे कौनसी तृष्णा अुस मार्गसे — कर्तव्यसे — हटा सकती है? मेरी तृष्णा ही काशीके मार्ग पर जानेकी हो और वह पूरी हो जाय, तो फिर वाकी क्या वचा? सहज-प्राप्त सेवा तेरे पास है। अुसे अेकनिष्ठासे तू करती रहे, तो अुसमे तुझे पूर्ण सतोष मिलना चाहिये। अुसके सिलसिलेमे जो साथ मिले, जो पढनेको मिले वह ग्राह्य है, अुसके सिवा दूसरी चीजका विचार भी नही होना चाहिये। यही मेरी दृष्टिमे 'योग कर्मसु कौशलम्' है। यही समत्व और समाधि है।

लेकिन यह सव तुझे व्यर्थ लगे और तेरी आत्मा वाचन आदि चाहे, तो अुसे खुशीसे तृप्त करना। कामका वोझ हलका करना और आराम

लेना। यह कैसे हो यह तो नारणदास¹से मिलकर ही तू विचार कर सकती है। नारणदास दीर्घदर्शी है, धैर्यवान है और साधु-चरित है। वह तेरी मदद जरूर करेगा। दूसरी सान्त्वना तो क्या दू ? मेरे जैसे कुछ दिशा-सूचन ही कर सकते है। वैसे तेरी और हमारी सबकी शान्तिका सच्चा आधार तो अपने खुदके अूपर ही है।

सुशीलाके बारेमे समझा। अब तो वह मराठीमे सदेश भेजे। अुसे मेरा आशीर्वाद।

पडितजीका सगीत सुननेके बाद तेरे जैसी लडकीको दूसरा अच्छा न लगे यह मै समझता हू। लेकिन तू स्वय भजन क्यो न गवाये ? हिम्मत हो तो माग करना। तू कहे तो मै लिखू। तुझे गाना आता तो है। लगभग रोज रातको तू गाती थी, यह मै भूला नही हू। तेरे गलेकी गिल्टिया कैसी है ? डॉ० हरिभाअीको दिखायी थी न ?

बापूके आशीर्वाद

२७

यरवडा मदिर,
१२-१०-'३०

चि० प्रेमा,

दोनो अर्थ अच्छे है। नाथजी²का अधिक अधिकृत हो सकता है। तू शान्त हो गअी है यह सद्भाग्य है।

---

१ श्री नारणदासभाअी गाधी। पू० महात्माजीके तीसरे भतीजे। दाडी-कूचके लिअे रवाना होनेसे पहले अुन्हे सत्याग्रह आश्रमका मत्री नियुक्त करके पूज्य महात्माजीने आश्रमसे सदाके लिअे विदा ली थी। सन् १९३४ से नारणदासभाअी राजकोटमे रहते है। वहा महान तपस्या करके रचनात्मक कामका अुन्होने खूब विस्तार किया है।

२ श्री केदारनाथजी। स्व० श्री किशोरलाल मशरूवालाके गुरु। श्री नाथजीका पूरा नाम है श्री केदारनाथ कुलकर्णी। सन् १९०५ से १९१० के बीच वे क्रान्तिकारी दलमे काम करते थे। फिर आध्यात्मिक विकासके लिअे हिमालय चले गये और वहा घोर तपस्या की। वहासे नअी दृष्टि

सरोजिनी देवी[1] के हृदयमे प्रवेश करना। अुसे सहानुभूति और प्रेमकी जरूरत है। अैसे कामोके लिअे थोडी फुरसत निकालना। अभी तो वडी जिम्मेदारीके काम करने बाकी हैं।

अव तेरी तवीयतकी चिंता दूर हो गअी क्या? शरीर विलकुल चगा लगता है? खुराक क्या लेती है?

बापूके आशीर्वाद

२८

[मैं वीचमे बम्बअी हो आअी थी।]

यरवडा मन्दिर,
१८-१०-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। ववअीका अनुभव लिखना। गला[2] डॉक्टरको नही दिखाती यह ठीक नही है। रोगको शुरू होते ही दवा देना चाहिये। समय पर लगाया हुआ अेक टाका आगेके नौ टाकोको बचाता है, यह कहावत विलकुल सच्ची है।

लेकर वापस आये। पूज्य महात्माजीके प्रति अुन्हे आकर्षण हुआ। भारतमें आध्यात्मिक योग्यता रखनेवाले चरित्रवान गुरुओमे अुनकी गणना है। वे महाराष्ट्री है, फिर भी अुनके भक्तोमे गुजराती लोग ज्यादा है। थोडे महीने पहिले शारीरिक व्याधिके कारण आअी हुअी अपमृत्युसे वे बच गये। आज अुनकी आयु ७८ वर्षकी है। ववअीमे रहते है।

१ अुत्तर प्रदेशके काग्रेस कार्यकर्ता श्री सीतलासहायजीकी पत्नी। अपने पति और दो लडकियो (जिनमे अेक छोटी शीला थी) के साथ वे सत्याग्रह आश्रममे रहती थी (१९२९-३०), लेकिन अुन्हे वहा अच्छा नही लगता था। अुनके पति काकोरी केससे छूटकर आश्रय लेनेके लिअे आश्रममे आये थे।

२ मेरे गलेकी गिल्टिया बढ गअी थी। अुसका असर मेरी आवाज पर होता था।

मूर्तिपूजाके मैं दो अर्थ करता हूं, अेकमें मनुष्य मूर्तिका ध्यान करते हुअे गुणोंमें लीन होता है। यह अच्छी पूजा है। दूसरेमें गुणोंका विचार न करके वह मूर्तिको ही मूल वस्तु मानता है। यह बुतपरस्ती नुकसान करती है।

बापूके आशीर्वाद

२९

य० म०
२६-१०-'३०

चि० प्रेमा,

नासिकसे लिखा हुआ पत्र मिला। धुरन्धरके अनुवादके बारेमें मैंने जो लिखा था वह याद है न? अनुवाद कर दिया तो भले कर दिया, लेकिन लिमयेके अनुवादके बाद अुसे छपवाना या नहीं, यह विचारनेकी बात है। आराम करनेसे तबीयत अच्छी है, यह बताता है कि तू कामका बोझ सिर पर अुठाये फिरती है। काम करने पर भी अुसका बोझ न लगे यह अनासक्तिका गुण है।

बापूके आशीर्वाद

३०

[सन् १९२९ के चौमासेमें पूज्य महात्माजीने आश्रममें सबसे कच्चे आहारका प्रयोग कराया था। अुसमें मैं भी थी। मैंने तो आठ ही दिन करनेकी अिजाजत ले ली थी। लेकिन तीन दिन बाद ही अुलटिया वगैरा हुआी और बादके चार दिन मुझे लगभग अुपवास ही करना पडा। फिर मैंने पूज्य महात्माजीसे अिजाजत लेकर कच्चा आहार छोड दिया। लेकिन अुन्होंने मुझे हमेशाकी खुराकमें खाखरा, कच्चा शाक और दही या दूध —ये तीन चीजें खानेकी सलाह दी। वे मैंने श्रद्धापूर्वक खाअीं। चौमासेकी शुरुआतमें करेलोंके सिवा कोअी शाक ही नहीं मिलता था, अिसलिअे अुस बीच मैंने अुबाला हुआ शाक खानेकी अिजाजत मांगी। पूज्य महात्माजी समझाने लगे कि करेले कच्चे ही खाये जा सकते हैं। अुसकी तफसील

अुनके पिछले अेक पत्रमे आ ही चुकी है। (देखिये पत्र १२, १४, १६, १९) मैंने वैसा ही किया। रोज दोनो समय कच्चे करेले खानेसे धीरे धीरे मुझे पीलिया हो गया और सारा शरीर पीला पड गया। यह जाननेके बाद अिस पत्रमे ७ दिनका अुपवास करनेका आदेश मिला, जो मैंने कुछ दलीलोके बाद कर डाला। अुसके बाद मैंने कभी भी कच्चे करेले नही खाये।]

यरवडा मन्दिर,
३-११-'३०

चि० प्रेमा,

तुझे पीलियेके चिह्न हो, खट्टी डकारे आती हो, तो मेरा विश्वास है कि तुझे कमसे कम सात दिनका अुपवास करना चाहिये। अिस बीच सोडा या नमक डालकर कमसे कम चार सेर पानी रोज पीना चाहिये। फिर हरे मेवेके रससे अुपवास तोडना चाहिये। और आखिरमे जरूर छाछ-चावल लेना। अुपवासके दिनोमे अेनिमा लेना ही चाहिये और कटिस्नान करना चाहिये। सात दिनके अुपवासमे खाट तो नही पकडनी पडेगी। थोडा-बहुत काम भी किया जा सकता है। अुपवाससे नुकसान तो होगा ही नही।

बापूके आशीर्वाद

३१

य० मंदिर,
१५-११-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। डॉक्टरसे मिली यह तो अच्छा ही किया। लेकिन मैं अपने अुपचार पर ही कायम हूं। डॉक्टरका अिलाज बादमे भले ही करना। लेकिन कमसे कम सात दिनका अुपवास तो कर ही डालना। अुपवासका हमे भय तो होना ही नही चाहिये। सात दिनके अुपवासमे तेरे ज्यादातर काम तू कर सकेगी। जिन्दगीमें जब पहली बार मैंने लम्बा अुपवास किया था अुस समय अेक दिनका भी आराम नही लिया

था और कोअी दिक्कत भी नही हुअी थी। वह अुपवास सात दिनका था। शरीरमें अुस समय थोडी-वहुत चर्वी थी। जिसके पास चर्वीका सग्रह नही होता अुसे ही अुपवासमे विस्तर पर पडे रहना पडता है। दो दिन वाद तो तुझे पहलेसे ज्यादा शक्ति मालूम होगी। दो दिन झूठी भूख लगेगी जरूर, फिर तो भूख भी नही लगती। और अन्तमे खून शुद्ध होता है तव भूख लगती है। अुस वीच अेनिमा लेकर मल तो साफ करना ही चाहिये। अेनिमा लेनेके वाद अर्ध-सर्वागासन करनेसे पानी अूपरकी अतडियो तक पहुचता है। लेकिन अिस आसनकी जानकारी न हो तो अैसा न करना। अुपवासके दिनोमे पानीमे सोडा और नमक डालकर खूव पीना चाहिये। हर आठ औंस पानीमें पाच ग्रेन नमक, दस ग्रेन सोडा मिलाकर अैसे आठ प्याले तक आसानीसे पीये जा सकते है। धूपमे वैठना। तू विना सकोच अितना करे, अैसा मैं चाहता हू। डॉक्टरसे कहना हो तो कहना। शायद वे भी यह अिलाज पसन्द करे। अव तो वहुतसे डॉक्टर अुपवासका चमत्कार जानने लगे है।

बापूके आशीर्वाद

३२

[सत्याग्रहकी लडाअीमें कूद पडनेकी आकाक्षा रख कर ही मैं सत्याग्रह आश्रममे तालीमके लिअे गअी थी। जव नमकके सत्याग्रहकी तैयारिया शुरू हुअी, आश्रममें नवचेतन आया और महात्माजीने कूचके लिअे साथियोके नामकी माग की, तव मैंने अुनसे पूछा, "क्या वहनोको अिस लडाअीमे भाग लेनेकी अिजाजत नही मिल सकती?" तव महात्माजीने कहा, "क्यो नही? भाअियोकी तरह वहनोकी वारी भी आयेगी ही!" मैंने अुत्कठासे कहा, "तो मेरा भी नाम लिखियेगा। मुझे आना है।" महात्माजीने हसते हसते कहा, "तुझे तो मैं झडाधारी वनाअूगा।"

कराडीमे कानून भग करनेके वाद विदेशी कपडे और शरावकी दुकानो पर धरना देनेके लिअे पूज्य महात्माजीने वहनोका आह्वान किया। आश्रमकी वहुतसी वहनें तैयार हुअी। मै भी जाना चाहती थी। हमारी अेक टोली पूज्य महात्माजीसे मिलने नवसारी पहुची। अुस समय वे

वहा ठहरे हुअे थे। महात्माजीने आश्रमकी वहुतसी वहनोको सत्याग्रही सैनिक वननेकी सम्मति दी। वहा गअी हुअी सव वहनोको अिजाजत मिली, लेकिन मुझे अुन्होने मना कर दिया। आश्रममे रहकर वही सेवा-कार्य करनेका आदेश दिया। मुझे दु ख तो हुआ, लेकिन अुनकी आज्ञाके अनुसार मै वापस आकर काममे अेकाग्र हो गअी। अुस समय आश्रमके मत्री श्री नारणदासभाअी गाधी थे। आश्रमका रसोअीघर, भडार, पुस्तकालय, छात्रालय, विद्यालय, मेहमानोकी व्यवस्था, सफाअी — लगभग सभी कामोकी व्यवस्था मेरे सिर पर आ पडी। वहुतसी वहने जेल गअी, लेकिन वाहरके समाजसे जेल जानेवाले मा-वापोके वच्चो, पतियोकी पत्नियो वगैरा 'निर्वासितो' से आश्रम भर गया। नये आते, पुराने जाते। अैसा चलता था। आश्रममे लगभग १५०–२०० आदमी तो रहते ही थे। मेरी आयुकी मर्यादाके अनुसार काम कुछ अधिक हो जाता था। फिर भी महात्माजीके आदेशको वेदवाक्य मानकर मै प्रयत्नपूर्वक काम करती थी। वादमे जेल जाकर आनेवाली वहने और परिचित भाअी सव आकर मुझे अुत्तेजित करने लगे (विनोदमे ही) "क्यो? आप कैसे सत्याग्रहमे नही कूदती? आपको तो सवसे आगे रहना चाहिये था।" मुझे वुरा तो लगता ही था, लेकिन मै नरम जवाव दिया करती थी। अेक दिन अहमदावादसे श्री मोहनलालभाअी भट्ट आये और वातो ही वातोमे मुझसे पूछने लगे, "क्या तुम यहा आश्रमकी दीवारोको सभालनेके लिअे वैठी हो?" अिससे मुझे वहुत ही वुरा लगा और मैने महात्माजीको पत्रमे लिखा कि, "आपकी आज्ञा मानकर मै यहा सेवाकार्य करती रहती हू। लेकिन लोगोको अगर अैसा लगे कि मुझे जेल जाना अच्छा नही लगता, डर या आरामकी अिच्छासे मै यहा वैठी हू, तो मुझे वह अपमानजनक लगेगा।" मेरी भावनाको समझकर पूज्य महात्माजीने मुझे समझानेके लिअे दलीले दी।

पूज्य महात्माजीने सुवहका १४ दिनका गीतापाठ ७ दिनमे पूरा करनेकी मुझे सलाह दी, तव मैने अुसका विरोध किया। आश्रममे सुवह चार वजे अुठकर १५–२० मिनटमे प्रार्थना-भूमि पर हाजिरी देनी पडती थी। यह ज्यादातर लोगोको पसन्द नही था। शामकी प्रार्थनामें लगभग

सभी लोग अिकट्ठे होते थे। सुबह खास तौर पर बरसात या जाडेमें जल्दी अुठनेकी किसीकी तैयारी नही होती थी। मै शुरू शुरूमे आश्रम पहुची तभीसे यह सब देखा करती थी। पूज्य महात्माजी आश्रममे होते तब थोडे-बहुत लोग (खास तौर पर पुरुष ही) सुबहकी प्रार्थनामे शामिल होते थे। वे बाहर जाते तब अुतने भी नही आते थे। बरसातकी अेक सुबह हृदय-कुजके बरामदेमे प्रार्थना हुअी, तब श्री बालकोबाजी, श्री सूर्यभानजी और मै तीन ही हाजिर थे। दाडी-कूचसे कुछ दिन पहले अनुशासन कुछ कडा हुआ तब सुबहकी प्रार्थनामे सभी लोग शामिल होने लगे। बादमे भी यह अनुशासन चला। गीतापाठके कारण सुबहकी प्रार्थनामें ज्यादा समय देना पडता था। अब गीतापाठ दुगना करनेसे अुससे भी ज्यादा समय देना पडता। छोटे बच्चोको भी प्रार्थनामे हाजिर होना पडता था। अुनके लिअे अलग देरसे प्रार्थना करनेकी मेरी सूचनाको पूज्य महात्माजीने मजूर नही किया। लेकिन खास तौर पर अिन बालकोको ही ध्यानमे रखकर मैंने ७ दिनके गीतापाठके विरुद्ध झगडा किया था।

पूज्य महात्माजीने अेक और सूचना भी दी थी कि गीतापाठमे ज्यादा समय देना पडता हो तो भजन गाना छोड दिया जाय। अुसका भी मैंने विरोध किया। मेरी दलील यह थी कि, "अगर रद करना ही पडे तो श्लोक रद किये जाय। क्योकि प्रतिदिन वे ही श्लोक बोलनेसे श्लोक 'बासी' हो जाते है। भजन रोज नया गाया जाता है, अिसलिअे अुसमे रस आता है।"

पहले मुझे आदोलनमे झडाधारी बनानेका आश्वासन पूज्य महात्मा-जीने दिया था, लेकिन बहनोका आह्वान किया तब मुझे आदोलनमें प्रवेश करनेसे मना कर दिया और आश्रममे ही रहनेका आदेश दिया। मैंने अिसका कारण पूछा था।]

यरवडा मन्दिर,
२४–११–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा ब्यौरेवार पत्र मिला। खुश हुआ। जो निर्णय मै करता हू अुनके सभी कारण मुझे हमेशा याद नही रहते। तू सच्ची सैनिक सिद्ध

हुअी है। वहा रहनेसे सिपाहीगिरी नही होती, अैसा यदि तू मानती हो तो यह भूल है। लडाअीमे सब आगे ही रहे अैसा नही होता। बहुतसे सिपाही अतिरिक्त रखे जाते हैं। फिर, केन्द्रस्थान पर बहुत जिम्मेदार आदमियोंकी जरूरत होती है। खतरेका डर छोडना जरूरी होता है। वह आ पडे तब अुसे अुठा लेना जरूरी होता है। लेकिन बिना कारण जो अुसकी ओर दौडता है वह सिपाही नही किन्तु मूर्ख है। नारणदासको मै सच्चा सिपाही मानता हू। किसको मालूम तुम्हारे भागमे किस प्रकारके खतरे होंगे। सच्ची सिपाहीगिरी अीश्वर जैसे रखे वैसे रहनेमे है। अिसमे अनासक्ति है। अिसे व्यावहारिक भाषामे कहे तो अिसका अर्थ यह हुआ कि जिस सेनापतिके अधीन हम विचारपूर्वक स्वेच्छासे गये हो, वह जैसा कहे वैसा हम करे। यह पाठ तूने पचा लिया है।

धर्मकुमारके बारेमे पखीडेके पत्रमे शिकायत है — गदेपनकी। धीरू अिसे जानता मालूम होता है। जाच करना।

गीता-पारायणके बारेमे तेरी राय समझा। काकासाहबके साथ तू जी भर कर लडना। लेकिन अैसा लगता है कि तेरे विरोधके मूलमे तो प्रार्थनाके प्रति ही तेरी अरुचि या अश्रद्धा है। तेरा बस चले तो तू धुनसे ही प्रार्थना समाप्त कर दे। मेरी सलाह है कि तू प्रार्थनाकी सारी विधि पर श्रद्धा रख। हो सके तो अर्थ पर ध्यान रख। वैसा न कर सके तो वे शब्द सस्कारी है, अुन्हे सुननेमे भी लाभ है, अैसी श्रद्धा रखकर विनयपूर्वक सुन। अिसका अर्थ यह मत समझना कि मै, तुझे सात दिनके पारायणकी तरफ ले जाना चाहता हू। जिस प्रार्थनाके पीछे कुछ लोगोकी अनन्य श्रद्धासे की हुअी १५ वर्षकी तपश्चर्या है, अुसमे कुछ तो (सार) है ही, यह बात तेरे गले अुतारनेके लिअे यह लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

२

३३

यरवडा मन्दिर,
३०-११-'३०
रातको

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र पढकर वहुत खुश हुआ। आज तो तेरा अुपवास छूटनेको दो दिन हो गये हैं। यह पत्र तेरे हाथमे पहुचेगा तव तक तो अुपवासको तू भूल गअी होगी और नये जीवनका आनन्द ले रही होगी। अैसा अनुभव न हो तो अुपवासको मै अधूरा मानूगा। परिणाम मुझे विस्तारपूर्वक तूने लिखा होगा। तेरा अनुभव दूसरोके लिअे मददगार होना चाहिये। अुपवास छोडनेके वाद किन वातोकी सावधानी रखनी चाहिये यह तो तू जानती है। अुपवासके वाद वहुत भूख लगती है, परन्तु अुस प्रमाणमें पेट कभी नही भरना चाहिये। दूध-दही धीरे धीरे वढाते जाना चाहिये। अट-शट चीजे नही खानी चाहिये। रसवाले फल तो खाने ही चाहिये। अुसमे कजूसी मत करना। शरीर नीरोग हो जाना चाहिये। अुपवासके दिनोमें काम ठीक तरहसे हो सका, अिसमे मुझे आश्चर्य नही होता। वहुतोको अैसा करते हुअे मैंने देखा है। मेरा अपना अनुभव तो मेरे पास है ही। जिसके शरीरमे वहुत रोग होता है अुसे तो अुपवासके दिनोमे ज्यादा शक्ति मालूम होती है। तेज तो ज्यादा वढता ही है।

वच्चोका हिसाव ठीक भेजा। कृष्णविजय सवसे तेज मालूम होता है। दूधीवहन[1] की अनुपस्थितिमे अुनके वर्ग ले सके अैसा कोअी नही है? यह तो मै समझता हू कि अभी अिस वारेमे कुछ कहा नही जा सकता। वहुतसी वहने वाहर हो तव क्या हो? फिर भी किसीको यह काम सौपा जा सकता हो, तो अुसे कहनेमे सकोच न रखना।

धुरन्धर छूट गया होगा। अुससे कहना कि अुसके साथका सवाद मुझे याद है। अुसकी डायरी भी याद है। मुझे पत्र लिखे। अनुभव भी वताये। भविष्यका कार्यक्रम भी लिखे।

---

१ श्री वालजीभाअी देसाअीकी पत्नी।

तेरे विरुद्ध मथुरी[1] की शिकायत है। तू बच्चोको मारती है। लकडी भी काममें लेती हे। अैसा हो तो यह आदत दूर करना। बच्चोको हरगिज नही मारना चाहिये। क्रॉसबीने 'टॉल्स्टॉय शिक्षकके रूपमे' नामक पुस्तक लिखी हे। बहुत करके हमारे सग्रहमे है। देख लेना। अब तो यह बात सिद्ध हो चुकी है कि मारनेसे बच्चे सुधरते नही। यह मै जानता हू कि जिसे मारकर पढानेकी आदत पड गअी हो, अुसे अपनी आदत छोडना मुश्किल लगता है। लेकिन यह तो बदूकधारी सिपाहीके अनुभव जैसा हुआ। वह तो यही मानेगा कि गोलीके बिना दुनियामे काम चल ही नही सकता। चलता है यह सिद्ध करनेका काम हमारा है। अिसी तरह बच्चोके बारेमे समझना चाहिये। अभी अिससे ज्यादा नही लिखूगा। तेरा अुत्तर आने पर जरूरत मालूम होगी तो ज्यादा बहसमे पडूगा।

मै आशा करता हू कि अुपवासके दिनोमे तूने खूब नीद ली होगी। और अब तू नियमपूर्वक जल्दी सोती होगी। नीद पूरी लेनी ही चाहिये। खानेकी अपेक्षा नीदकी मनुष्यको ज्यादा जरूरत होती है। खानेका अुपवास फायदा करता है। लेकिन नीदका अुपवास शरीरको घिस डालता है। अुससे सिर घूमता है और मनुष्य अस्वस्थ हो जाता हे। अिसलिअे नीदके बारेमे लापरवाह न रहना। रातको ९ बजेसे सुबह ४ बजे तक गहरी नीद ली जाय, तो मै शिकायत नही करूगा।

मेरे प्रयोगके बारेमे मीराके पत्रमे लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री मथुरीबहन खरे। विद्यालय और बाल-मदिरके लडके-लडकियोके नाम बहुत बार आते है। अुनका हर बार परिचय देना मुश्किल हो जाता है। कृष्णकुमार, चदन, कट्टू (हरि), विमला, धर्मकुमार, धीरु, बाबला (बाबू), मानसिह ये सब बाल-मदिरके बच्चे थे। मथुरी, रामभाअू, आनदी, दुर्गा, शान्ता, मगला, पुष्पा, दयावती, ज्ञानदेवी, शारदा, मणि, निर्मला, सत्यदेवी, वनमाला, कनु, अिन्दु वगैरा विद्यालयके छात्र और बालिकाये थी। मैत्री (दुर्गाकी बडी बहन) आन्दोलनमे शामिल थी।

३४

यरवडा मन्दिर,
५-१२-'३०

चि० प्रेमा,

तेरे अुपवासके लिअे और अुस बीच तूने जो अुत्साह दिखाया अुसके लिअे वधाअी चाहिये? खुराकके बारेमे तो लिख ही चुका हू। अभी कच्चा शाक न लेना। दाल तो बिलकुल न लेना। दूध, दही, खाखरा, अुबाला हुआ शाक या फल, पपीता, मोसबी वगैरा मिले तो शाककी जरूरत नही रहती। दवाकी जरूरत मुझे तो नही लगती। फिर जिस दवाकी बनावटके बारेमे मालूम न हो, अुसे न लेनेकी हमेशा मेरी वृत्ति रही है। अुपवाससे दवाका सारा काम हो जाना चाहिये। सूर्यस्नान जारी रखनेकी जरूरत है तो सही। नीद पूरी लेना।

बच्चोकी पढाअीका कुछ न कुछ अिन्तजाम जरूर करना।

धुरन्धरका पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा। अुसका सारा काम मुझे बहुत निश्चित और साफ मालूम हुआ है।

सुशीलाको वर्षगाठके अुपलक्ष्यमे मेरे आशीर्वाद पहुचाना।

राजकोट जाने पर तू जमनादास[1] से मिली होगी। मनु[2] से मिली थी? पुरुषोत्तम[3] की तबीयत कैसी है?

जमनादासकी पाठशालामे कुछ होता है? राजकोटमे कुछ आन्दोलन देखनेमे आया? अिन सब खबरोकी आशा तुझसे रखता हू।

---

१ श्री जमनादासभाअी गाधी, पूज्य महात्माजीके भतीजे। राजकोटमें राष्ट्रीय पाठशाला चलाते थे। राजकोटमे मेरी सहेली सुशीला पै रहती थी। अुससे मिलनेके लिअे सालमें अेक बार ४ दिनकी छुट्टी लेकर मैं जाती थी।

२ पूज्य महात्माजीके बडे लडके श्री हरिलालभाअीकी लडकी।

३ श्री नारणदासभाअीका लडका।

धर्मकुमारकी बुरी आदतोकी तरफ बराबर ध्यान देना। दुर्गाको समझाना। दुर्गा ध्यान दे तो बहुत काम कर सकती है।

बापूके आशीर्वाद

'भजनावलि' मे १३९ वे भजनकी दूसरी पक्तिमे 'निजनामग्राही' प्रयोग है। अिसका अर्थ नारणदाससे या कोअी गुजराती समझता हो अुससे समझकर भेजना। तू ही समझती हो तो तू लिखना।

३५

१४-१२-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। बच्चोकी सजाके बारेमे भी समझा। तेरी दलील पुरानी है। यह 'दूषित चक्र' है। तुझे मार पडी अिससे तू सुधरी, अिसलिअे दूसरोको सुधारनेके लिअे तू अुन्हे मारती है। बच्चे भी बडे होने पर यही सीखेंगे। बिलकुल अिसी दलीलसे लोग हिंसाको मानते हैं। अिस झूठे अनुभवके अुस पार जाना हमारा काम है। अुसके लिअे धीरज चाहिये, यह मैं स्वीकार करता हू। यह धीरज पैदा करने और अुसे बढानेके लिअे हम अिकट्ठे हुअे हैं। बच्चोको पढाना या अनुशासन सिखाना ही हमारा ध्येय नही है। अुन्हे चरित्रवान बनाना हमारा ध्येय है और अुसीके लिअे पढाअी, अनुशासन वगैरा है। अुन्हे चरित्रवान बनानेमे अनुशासन टूटे, पढाअी बिगडे तो भले ही टूटे और बिगडे। लेकिन तेरी दलीलको मैं समझता हू। यह भी समझता हू कि तेरे मारनेमे द्वेष नही है। फिर भी तेरे मारनेमे रोष और अधीरता तो है ही। मैं अेक सुझाव तेरे सामने रखता हू। तू बच्चोकी सभा कर। जो बच्चे कहे कि 'हम शैतानी करे या आज्ञा भग करे तो हमे मारिये और अिस तरहसे मारिये,' अुन्हे मारना और वे कहे अुसी तरह मारना। जो मना करे अुन्हे मत मारना। अैसा करते करते तू देखेगी कि अुन्हे मारनेकी जरूरत नही पडेगी। अिस विषयकी चर्चा मेरे साथ करती रहना। अधीर बनकर या निराश होकर अिसे छोड मत देना। तेरी बुद्धि मेरी

वातको स्वीकार न करे तव तक तू अपने ही मार्गसे चलना। मैं जानता हू कि तू सत्यकी पुजारी है, अिसलिअे अन्तमे तुझे सत्य जरूर मिलेगा।

तेरी खुराक ठीक मालूम होती है।

राजकोटका वर्णन तूने नही भेजा।

वापूके आशीर्वाद

३६

[वच्चे समझ सके अैसी भाषामे प्रार्थनाका महत्त्व समझानेकी पूज्य महात्माजीसे मैंने विनती की थी। अुसके अुत्तरमे यह पत्र है।]

यरवडा मन्दिर,
२२–१२–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा हकीकतोसे भरा पत्र मिला। 'निजनामग्राही' के दोनो अर्थ ठीक हैं। नारणदासका अर्थ गुजराती भाषाके लिअे शायद ज्यादा अनुकूल हो। लेकिन तेरा अर्थ विलकुल न चले अैसा नही है।

तू ही वच्ची है यह कल्पना करके मै प्रार्थना-सम्वन्धी प्रश्नका अुत्तर दे रहा हू। जैसे हमारे जन्मदाता माता-पिता है, वैसे ही अुनके भी है। अिस तरह अेक अेक सीढी अूचे चढते जाय तो जिस जन्मदाताकी कल्पना हम कर सकते है वह अीश्वर है। अुसका दूसरा नाम सरजनहार भी अिसीलिअे पडा है। और जैसे हमारे माता-पिता वहुत वार हमारे वताये विना ही हमारी अिच्छाको समझ जाते हैं, वैसे ही अीश्वरके वारेमे भी समझे। और अगर माता-पितामें अितना जाननेकी शक्ति होती है, तो सव जीवोके सरजनहारमे तो हमारा अन्तर जाननेकी वहुत अधिक शक्ति होनी चाहिये। अिससे अीश्वरको हम अन्तर्यामीके रूपमे भी पहचानते हैं। अुसे देख सकनेकी जरूरत नही है। अपने वहुतसे सवधियोको हमने देखा नही है, किसीके माता-पिता वचपनमे परदेश गये हो या मर गये हो, तो भी वे है या थे अैसा हम दूसरो पर श्रद्धा रखकर मानते है, वैसे ही हमारे सामने अीश्वरके वारेमे सतोका प्रमाण है। अुस पर विश्वास रखकर हमे मानना चाहिये कि अन्तर्यामी

अीश्वर जरूर है। और अगर वह है तो फिर अुसका भजन करने, अुसकी प्रार्थना करनेकी वात तो सरलतासे समझमे आ जायगी। अगर हम समझदार हो तो सुवह अुठकर और रातको सोते समय माता-पिताको साष्टाग नमस्कार करते है, वैसे ही अीश्वरको भी करना चाहिये। और जैसे हम माता-पिताको अपनी अिच्छा वताते है, वैसे ही अीश्वरको भी वतानी चाहिये। आजके लिअे अितना काफी है न? अिसमे कुछ सार मालूम न हो तो लिखनेमे सकोच मत करना।

वापूके आशीर्वाद

३७

२८-१२-'३०

चि० प्रेमा,

मुझे वचन[1]मे तुझे वाधना नही है। तू मुझे विश्वास दिलाती है अितना काफी है। चिल्ला चिल्ला कर गला मत विगाड लेना। अुस पर अुपवासका कुछ असर हुआ क्या? वच्चे मुझे जो पत्र लिखते है अुन्हे कोअी देख सके तो अच्छा हो — अक्षर और भाषा दोनोकी दृष्टिसे।

वापूके आशीर्वाद

३८

१-१-'३१

चि० प्रेमा,

अिस हफ्तेकी डाकमे अिस वार भी देर हो गअी है। अिस वीचमे मैंने तो पत्र लिखने शुरू कर ही दिये है।

फुरसत होती है तो मन लडके-लडकियोका विचार करता है। तेअीस दिसम्वरका दिन सवसे छोटा क्यो होता है, यह वच्चे नही जानते होगे। यह समझाते हुअे भूगोल तथा खगोलका कुछ ज्ञान सहज ही कराया जा सकता है। यह तू नही करेगी? छोटे दिनके वारेमे समझाते हुअे लम्वे और वरावरके दिनके वारेमे (भी) समझा देना। अुसीके साथ

१ वच्चोको न मारनेका वचन।

ॠतुओके परिवर्तनकी बात भी। क्रिस्मस क्या है, यह भी समझा देना। अैसी प्रस्तुत बातोमे दोनोको रस आना चाहिये। अिसी तरह अकोकी देशी पद्धति और जबानी हिसाबकी बात है। यह भी बच्चोको खेल खेलमे सिखाया जा सकता है। अैसा सोचते हुअे सहज ही वनस्पति-शास्त्र याद आता है। मै तो अिसमे ठोट ही रहा। तुझे शायद कुछ आता भी होगा। न आता हो तो तू आसानीसे सामान्य ज्ञान प्राप्त करके बालकोको दे सकती है और मुझे डाकसे भेज सकती है। सीखती जा और बालकोको सिखाती जा। तेरे दिमाग पर अिसका बोझ नही लगना चाहिये। बच्चोका और मेरा तो काम बन जाय, अगर अैसा कुछ हो सके तो।

बच्चोको जो देना चाहिये वह हम नही देते, अैसा लगा करता है। सरल प्रयत्नसे जो दिया जा सके वह तो दे। नारणदासके साथ मिलकर अिस पर विचार करना।

बापूके आशीर्वाद

३९

['आश्रम-भजनावलि' मे सूरदासका यह भजन है 'मो सम कौन कुटिल खल कामी।' अुसके विरुद्ध मैने यह दलील की थी.

"स्वामी विवेकानन्दका मत है कि प्रत्येक व्यक्ति अव्यक्त रूपमे आत्मा ही होता है। अिसलिअे भीतरकी छिपी महानताको प्रत्येक पहचाने और अुसीका चिन्तन करे। मै पापी हू, मै पतित हू, अैसा विचार करनेसे साधक पतित ही होगा। . यह ठीक हो तो सत बहुत बार क्यो अपनेको धिक्कारते है?" भाअी धुरन्धरका मत भी अैसा ही था। Culture और Education के बीचका भेद भी मैने पूछा था।]

५-१-'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे विचारसे विवेकानन्द[1] का और धुरन्धरका कहना अेकपक्षी है। जो जैसा बोले वैसा हृदयमें लगना चाहिये। सूरदास,

---

१ स्वामी विवेकानन्द (१८६२-१९०२)। श्री रामकृष्ण परमहसके शिष्य।

तुलसीदास वगैरा भक्तोने शठ, कामी आदि शब्दोसे अपना परिचय कराया है। वह औपचारिक भाषा नही थी, अन्तरके अुद्‌गार थे। सच बात यह है कि हमारे अदर दोनो भावनाये भरी है। जाग्रत अवस्थामे हम ब्रह्मरूप लगते है। मूर्च्छित स्थितिमे अुस दयालुके सामने हम दीन जैसे है। जो अपनेको दीन न समझता हो, लेकिन पूर्ण ब्रह्म समझता हो, वह भले ही अीश्वरकी करुणाकी याचना करनेवाले भजन न गाये। अैसे मनुष्य करोडोमें अेकके हिसाबसे भी नही मिलेगे। अपनी अल्पताका दर्शन करना महान बननेका आरम्भ है। अलग पडा हुआ समुद्र-बिन्दु अपनेको समुद्र कह कर सूख जायगा। परन्तु अपनी बिन्दुताको स्वीकार करे तो वह समुद्रकी ओर प्रयाण करेगा और अुसमे लीन होकर समुद्र बन जायगा।

कल्चरका अर्थ है सस्कारिता। अेज्युकेशनका अर्थ है साहित्य-ज्ञान। साहित्य-ज्ञान साधन है। सस्कारिता साध्य वस्तु है। साहित्य-ज्ञानके बिना भी सस्कारिता आती है। जैसे कोअी बालक शुद्ध सस्कारी घरमे पलकर बडा हो, तो अुसमे सस्कार अपने-आप अुत्पन्न होगे। आजकी शिक्षा और सस्कारिताके बीच अिस देशमे तो कोअी मेल नही है। अिस शिक्षाके बावजूद शिक्षितोमे अभी तक सस्कारिता रही है। अिससे मालूम होता है कि हमारी सस्कारिताकी जडे बहुत गहरी पहुची हुअी है।

प्रसन्नबहन[1] को आशिष और बधाअी। वह पतिको भी अिस ओर आकर्षित करे।

वजनमे तू नारणदासके साथ अुलटी होड करती मालूम होती है। ठीक है। तू अभी बढ सकती है। नारणदास घट सकता है।

'गीताबोध' का भाषातर धुरन्धर कर रहा है, यह मुझे अच्छा लगता है।

बापूके आशीर्वाद

---

१ प्रसन्नबहन अुस समय आश्रममे सस्कार लेनेके लिअे आकर रही थी।

[“गीतामें कौनसा श्लोक आपको सबसे प्रिय है?” अिस प्रश्नका अुत्तर।

अुस समय फ्रांसके विश्व-विख्यात तत्त्वज्ञानी श्री रोमा रोला बहुत बीमार थे। अुनकी बीमारीकी खबर मिलने पर आश्रममें अुनके लिअे प्रार्थना की गअी थी।]

यरवडा मन्दिर,
११–१–'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे सबसे प्रिय श्लोकके बारेमें अेक बार तो मैं कह सका था। 'मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय' अित्यादि। आज निश्चित रूपसे नहीं कह सकता। जिस समय जैसी मनोवृत्ति होती है अुसीके अनुसार श्लोक प्रिय लगता है। अिस प्रयत्नमें अब रस नहीं आता। सारी गीता मुझे तो प्रिय लगती है। वही माता है। किसी बच्चेसे कोअी यह प्रश्न पूछे कि माताका कौनसा अंग अुसे अच्छा लगता है, तो अुस प्रश्नमें कोअी तथ्य नहीं होता। अैसा ही मेरे बारेमें भी समझना।

यहां सरदी दो-तीन दिन पडी। अब वैसी नहीं लगती। शायद चारों तरफ दीवार है अिसलिअे। हम दोनों सोते तो आकाशके नीचे ही हैं।

काशीनाथ[1] ने आश्रम छोड दिया, अिसलिअे क्या वे हिन्दी नहीं सिखा सकते?

धर्मकुमारकी खांसीका अिलाज तुरन्त होना चाहिये। अिसी तरह नयनका। कमलाबहनकी मुझे याद है। अुसे मेरा आशीर्वाद भेजना। धीरूके बारेमें समझा।

---

१ श्री काशीनाथ त्रिवेदी। कअी साल तक सत्याग्रह आश्रममें थे और 'हिन्दी नवजीवन' का काम करते थे। पूज्य बापूजीकी कुछ पुस्तकोंका हिन्दीमें अनुवाद किया है। आजकल मध्यप्रदेशमें रचनात्मक काम करते हैं।

रोलाके लिअे प्रार्थना करना ठीक था। मेरे साथके सबधका विचार न किया जाय तो भी अुनकी स्वच्छता बहुत आकर्षक लगती है।

तेरे गलेमे अभी भी कुछ खराबी है, अुसे दूर करनेकी कोशिश करना। सरोजिनीदेवीकी गाडी कैसी चलती है? शीला अब बीमार तो नही रहती न?

बापूके आशीर्वाद

४१

[श्री जमनालालजी बजाजके पुत्र कमलनयनने पूज्य महात्माजीसे मराठीमे ही पत्र लिखनेका आग्रह किया था। महात्माजीने तीन चार पक्तियोका पत्र लिखा, जो आश्रमकी डाकमे आया था। अुनकी मराठी मुझे बहुत ही मजेदार लगी, अिसलिअे मैंने भी अुनसे आग्रह किया कि "मुझे भी आप मराठीमे अेक पत्र लिखिये।"

"आपके Hero (जीवन-वीर) कौन थे?" अिस प्रश्नका अुत्तर।

कालो वा कारण राज्ञो राजा वा काल-कारणम्।
अिति ते सशयो माऽभूत् राजा कालस्य कारणम्॥

अिस श्लोकके अर्थके बारेमे मैंने अुनके विचार पूछे थे। नअी भाषामे क्रान्ति और जीवन-वीर! (पुरानी भाषामे काल और राजा)।]

य० मदिर,
१७-१-'३१

चि० प्रेमा,

मेरी हिम्मत कैसी है! अथवा भारतकी भापाओ पर मेरा प्रेम कितना है! चाहे जितनी अशुद्ध हो, फिर भी मराठी तो मानी ही जायगी न? लेकिन तुझे मराठीमे पत्र लिखनेमे अभी देर है।

तूने काफी जिम्मेदारी अुठाअी है। दुर्गा[1] के बारेमे निराश मत होना। अगर तू सिचन करती ही रहेगी, तो वही दुर्गा पढनेमें रस लेगी।

वनस्पतिके बारेमे घरेलू ज्ञान तो तू तोतारामजीसे भी प्राप्त कर सकती है। आश्रममे होनेवाले पेड-पौधोकी पहचान और वे कैसे

१ अेक नेपाली लडकी जो विद्यालयमे पढती थी।

अुगते हैं, अुनकी अुमर कितनी है, वे कब फल देते हैं—यह ज्ञान तो बच्चोको होना ही चाहिये न? मुझे तो नही है।

सक्रान्तिके दिन यहा आधी छुट्टी न होती तो मुझे कुछ भी पता न चलता। तेरा तिलगुड मिला। अुसने फिरसे स्मरणको ताजा किया। हमारी सक्राति तो अिन दिनो रोज ही होती है, अैसा कहा जायगा।

नारणदासकी सम्मतिसे मेरे पत्रमे से जो हिस्से भेजने हो भेज सकती है।[1]

Hero यानी पूज्य, देवता। राजनीतिमे वह स्थान गोखलेका है। सामान्य रूपमे मेरे समग्र जीवन पर जो लोग असर डाल सके है वे हैं टॉल्स्टॉय[2], रस्किन[3], थोरो[4] और रायचदभाअी[5]। थोरोको शायद छोड देना ही अधिक अुपयुक्त होगा।

---

१ महात्माजीके अलग अलग पत्रोमे अनेक नये नये विचार आते थे। अुन्हे अुद्धृत करके स्नेहियोको भेजनेका अुल्लेख है।

२ काअुन्ट लियो टॉल्स्टॉय (१८२८–१९१०)। प्रसिद्ध रूसी साहित्यकार और तत्त्वचितक। अुनकी 'अीश्वरका राज्य तुम्हारे हृदयमे है' नामक पुस्तकने पूज्य बापूजीको बहुत प्रभावित किया था।

३ जॉन रस्किन (१८१९–१९००)। प्रसिद्ध अग्रेज साहित्यकार और तत्त्वचितक। अुनकी 'अन्टु दिस लास्ट' पुस्तकने पूज्य बापूजी पर जादूका-सा असर किया था। अिस पुस्तकका सार पूज्य बापूजीने स्वय गुजरातीमे दिया है, जो 'सर्वोदय' नामसे प्रकाशित हुआ है।

४ हैनरी डेविड थोरो (१८१७–१८६२)। अमेरिकन लेखक और तत्त्वचिन्तक। अुनके लेखोका पू० बापूजी पर असर हुआ था। थोरोके लेखोमे सत्याग्रहके बीज दिखाअी देते हैं। पू० बापूजीने थोरोकी 'ड्यूटी ऑफ सिविल डिसओबीडियन्स' (कानूनका विरोध करनेका कर्तव्य) पुस्तकका 'अिन्डियन ओपीनियन' में अनुवाद दिया था।

५ श्रीमद् राजचन्द्र (१८६७–१९०१)। कवि और ज्ञानी। अुनके प्राणवान ससर्गसे पूज्य बापूजीके जीवन पर गहरी छाप पड़ी। आध्यात्मिक कठिनाअी पैदा होने पर पूज्य बापूजी अुनसे सलाह लेते थे।

दुनियामे होनेवाली क्रान्तियोका कारण महापुरुष दिखाअी देते है। वास्तवमे देखे तो अुनका कारण लोग खुद ही होते है। क्रान्ति अकस्मात नही होती। लेकिन जैसे ग्रह नियमित रूपसे घूमते है वैसे ही क्रांतिके बारेमे भी है। बात अितनी ही है कि हम अुन नियमो और कारणोको जानते नही, अिसलिअे अुसे अकस्मात हुअी मानते है।

बापूके आशीर्वाद

४२

[यरवडासे छूटनेके बाद या छूटनेकी गडबडीमे यह पुर्जा लिखा हुआ मालूम होता है।]

२–२–'३१

चि० प्रेमा,

यह तुझे लिखनेके खातिर ही लिखा है। तेरे पत्रका अेक ही पन्ना मेरे सामने है। दूसरे कही अिधर अुधर हो गये मालूम होते हैं। मिल जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

४३

[पूज्य महात्माजी छूटकर साबरमती आये। स्वराज्य न मिले तब तक आश्रममे न आनेकी अुनकी प्रतिज्ञा थी। वे रास्तेमे घूमने निकले थे। वहा आश्रमवासियोकी टोली अुनसे मिलने गअी। "आन्दोलनमे विजय मिली है, अब स्वराज्य हाथमे आया ही समझो" — अैसी भावना चारो ओर फैल गअी थी। सब जेलवासी छूटकर आनन्द और गर्वसे भरे लौटे थे। मै दुःखी थी, क्योकि आन्दोलनमे मैंने तो कुछ भी त्याग नही किया था और न कोअी कष्ट अुठाये थे। मुझे पूज्य महात्माजीको मुह दिखानेमे सकोच होता था। लेकिन अुनके विचार अलग थे। मुझे दिलासा देनेके लिअे कराची कांग्रेसमें अपने साथ ले जानेका अुन्होने अिरादा किया और मत्री नारणदासभाअीने अुस योजनाको स्वीकार किया। कराचीमे मैं महात्माजीके साथ ही थी। बबअीसे दिल्ली होकर हम कराची गये थे। मेरी

अेक सहेली किसन भी, जिसने ववअीमे वहुत काम किया था, पूज्य महात्माजीकी अिजाजतसे मेरे साथ ही काग्रेस-नगरमे रहती थी। वहासे मै वापस सत्याग्रह आश्रममे लौटी तव अुनकी आज्ञानुसार मैंने अुन्हे पत्र लिखा, जिसमे अुनके साथ की हुअी यात्रामे मैने क्या क्या देखा और क्या क्या सीखा, अिसका विस्तारसे वर्णन किया था। अुसका यह अुत्तर है।]

नैनीताल
१८-५-'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मुझे वहुत पसन्द आया। मै देखता हू कि तूने अिस यात्रामें सुन्दर निरीक्षण किया। किसन भी अपने अनुभव भेजे अैसी मेरी अिच्छा है। अग्रेजी या मराठीमे लिखे।

लक्ष्मी[1] पर खूब ध्यान देना। अुसका विवाह किसी सवर्णके साथ करनेका विचार है। अुसे अुस घरमे शोभना चाहिये। अुसे रसोअी आनी चाहिये। घर चलाना आना चाहिये। हिसाव रखना जानना चाहिये। थोडी सस्कृत जाने तो वहुत अच्छा। सस्कृत न जाने तो भी प्रार्थनाके श्लोकोका और गीताका अुच्चारण तो अुसे शुद्ध जानना ही चाहिये।

अितना ज्ञान सब लडकियोको प्राप्त होना चाहिये। लडकियोकी पढाअीको हम न भूले यह आवश्यक है। मुझे विस्तारसे लिखना। लक्ष्मीके वारेमे तेरा अनुभव वताना।

वापूके आशीर्वाद

४४

३१-५-'३१

चि० प्रेमा,

लक्ष्मी और पद्मा[2] वीमार क्यो रहती हैं? मालूम होता है वे दवा वगैराके वारेमे लापरवाह रहती हैं। पद्माको वुखार रहा करे तो अुसका

---

१ अेक हरिजन कन्या। पूज्य वापूजीने अुसे अपनी पुत्रीके रूपमें स्वीकार किया था।

२ अुत्तर प्रदेशके काग्रेसी कार्यकर्ता श्री सीतलासहायकी पुत्री।

शरीर विगडेगा। अुसकी खास जिम्मेदारी किस पर रहती है? हर वच्चेको अैसा लगना चाहिये कि आश्रममे वह अनाथ वच्चा नही है। कृष्णकुमारीकी तवीयत कैसी है? औरोके वारेमे भी मुझे लिखना।

वापूके आशीर्वाद

४५

वारडोली,
४–६–'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मै भी सोमवारको रवाना होनेवाला हू। अिसलिअे मगलवारको ही हम दोनो ववअी पहुचेगे। लेकिन मै कुछ जल्दी पहुचूगा। मगलवारको फुरसत हो तव कुछ देरके लिअे मिल जाना। अुस समय वात करनेका मौका मिला तो निश्चय कर दूगा।

तेरा पत्र समाचारोसे अच्छा भरा हुआ है। गगावहन[1]मे अुमग और अुत्साह तो वहुत है। तू अुनके साथ खूव चर्चा करना और अुन्हे मदद भी देना। अुनका प्रेम अपार है, सेवाकी अिच्छा तीव्र है।

वापूके आशीर्वाद

---

१ श्री गगावहन वैद्य मुझसे ६ साल पहले सत्याग्रह आश्रममे आकर रही थी। आर्थिक स्थिति वहुत अच्छी होते हुअे भी ववअीकी आरामकी जिन्दगी छोडकर आश्रमवासी वनी। अुनकी भाषा कच्छी थी। अुमर ५० वर्षसे अूपर होने पर भी पढने और सेवा करनेका अुत्साह अुनमे वहुत अधिक था। १९३३ मे हम जेलमे साथ थी तव मुझसे सस्कृत ग्रथ पढने वैठती थी। अिस पर मुझे वहुत आश्चर्य हुआ था। यूनानी चिकित्सा और सिलाअी अच्छी जानती थी।

अुन्होने आश्रममे स्त्रियोका अच्छा सगठन किया था। १९३४ के वाद खेडा जिलेके वोचासण गावमे रहने लगी। अव भी वही रहकर खूव सेवा करती है।

वोरसदके लाठी चार्जके मौके पर गगावहनने हसते हसते लाठिया खाअी थी।

[सन् १९३१ में सरकारसे समझौता हुआ तब जेल गये हुओ सभी आश्रमवासी भाओी-वहन जेलसे मुक्त होकर वापस आये। जो आश्रमके पुराने रहनेवाले थे वे आश्रममें ही रहने लगे। लेकिन वादमे कठिनाअिया पैदा हुअी। अुनके जेल जानेके वाद ज्यादातर कामोकी जिम्मेदारी मेरे सिर पर आ गअी थी। वापस आनेवालोको क्या काम दिया जाय? आन्दोलन फिरसे शुरू हो तो अुसमें शामिल होनेके लिअे वे सव प्रतिज्ञाबद्ध थे। अिसलिअे थोडे दिनोके लिअे कामकाज अुनके हाथमें सौपना मुश्किल हो गया। फिर दाडी-कूचसे पहलेकी आश्रमकी परिस्थिति अनेक तरहसे वदल गअी थी। अनुशासनमें कठोरता आ गअी थी। सव काम यत्रवद्ध चलते थे।

सत्याग्रह आश्रममे दो तरहके लोग रहते थे। वर्षोसे आश्रममे रहे हुअे कार्यकर्ताओके कुटुम्वी-जन, और शिक्षण-सस्कारके लिअे कभी कभी आकर अेक नियत समय तक रहनेवाले स्त्री-पुरुष तथा बच्चे। दूसरे प्रकारके लोगोकी सख्या हमेशा वहुत ज्यादा रहती थी। अिन लोगोको आश्रमके नियमो और अनुशासन दोनोका पालन करना पडता था, जब कि परिवारवालोको अनेक कारणोसे सुविधाअें मिलती थी। अनेक सुविधाये तो शारीरिक दुर्वलता या मर्यादाओके कारण मिलती थी। लेकिन अिस भेदभावसे कअी वार कठिनाअिया खडी होती थी।

सत्याग्रह आन्दोलनके कारण सभी भाअी और ज्यादातर नअी-पुरानी वहने आश्रम छोड कर चली गअी। तव मेरे जैसी नअी और नौजवान लडकी पर लगभग मारे ही कामोकी जिम्मेदारी आ पडी। अीश्वरकी कृपासे मेरा शरीर पूर्ण सशक्त और तन्दुरुस्ती भी अच्छी थी, अिसलिअे काम करनेमे मुझे कभी शारीरिक शक्तिकी कमी नही लगी, यद्यपि नीद वहुत कम मिलती थी। दाडी-कूचके वाद कअी हफ्तो तक रातको मैं केवल तीन घटे सोअी। वादमे पाच घटे तक नीद मिलने लगी। ध्येयनिष्ठा तथा पूज्य महात्माजीके प्रति अनन्य श्रद्धा तथा मत्री श्री नारणदासभाअीके वात्सल्य (अुन्हे मैं 'काका' कहती थी)—अिन सवके कारण मुझे थकान नही लगती थी। लेकिन मुझमें दोष तो थे ही। मैं

स्वय बारीकीसे सब नियमोका पालन कर सकती थी, अिसलिअे मुझे लगता था कि सभी वैसा कर सकते है और अुन्हे वैसा करना ही चाहिये, वैसा न करनेवाले या तो आलसी है अथवा स्वार्थी होने चाहिये। भले हर व्यक्ति अपनी शक्तिके मुताबिक काम करे, लेकिन अुसे कम या ज्यादा काम तो करना ही चाहिये। वैसा न करनेवालेके प्रति मेरी असहिष्णुता प्रगट होती। कभी कभी मै क्रोध भी कर बैठती थी। जो बुजुर्ग थे अुनके प्रति मुझे अमुक मर्यादाका पालन करना चाहिये था। लेकिन अुस मर्यादाका मुझसे अुल्लघन हो जाता था, अिसलिअे वे लोग चिढ जाते थे। कडे अनुशासनसे व्यवस्थामे सुसम्बद्धता तो आअी थी, लेकिन कुछ स्त्री-पुरुषोके मन दुखी हुअे थे। अिसलिअे पूज्य महात्माजीके पास शिकायते जाने लगी।

महात्माजी मुझे अहिंसा, क्षमा और अुदारताके पाठ सिखाने लगे। अुनकी शिक्षा मेरी बुद्धिको तो ठीक लगती थी, लेकिन अुस पर अमल करनेमे मै सफल न होती थी। मेरे स्वभावके दोषोने गहरी जडे जमा ली थी। वे जल्दी नही निकल सकते थे। मुझे विचार आया कि, "मै सत्याग्रही सैनिककी तालीम लेने आअी थी, अुसके बजाय पूज्य महात्माजीने मुझ पर आश्रमके सचालनकी जिम्मेदारी डाल दी (भले ही नारणदास काकाकी छत्रछायामे)। यह काम मेरी शक्तिसे बाहर है। यहा केवल सगठनकी बात नही है, अहिंसा द्वारा सगठन करनेकी जरूरत है। बडी अुमरके व्यक्ति, जिन्होने वर्षो तक तपस्या की है, जिनमे वात्सल्य और प्रेम है और जो अपना नैतिक प्रभाव सब पर डाल सकते है, अैसे ही व्यक्ति अिस कामके अधिकारी है। अत मेरे लिअे यह काम छोड देना ही ठीक होगा।"

बादमे बडी गगाबहनने जब मत्रीजीसे यह माग की कि, "आश्रमके सचालनकी सारी जिम्मेदारी पहलेकी तरह मुझे सोपी जाय और प्रेमाबहन मेरे हाथके नीचे काम करे," तो मैने खुशीसे अुसे स्वीकार कर लिया और गगाबहनकी बात स्वीकार करनेकी नारणदास काकासे प्रार्थना की। लेकिन नारणदास काकाने मेरा प्रस्ताव स्वीकार नही किया। अुन्होने कहा कि, "ये लोग प्रतिज्ञा-बद्ध है। आन्दोलन शुरू होगा तो सब चले

जायगे। फिर मैं क्या करूगा? व्यवस्था-तंत्र क्या अिस तरह थोडे थोडे दिनोंमें वदला जा सकता है?" मेरे मन पर अैसी छाप है कि जेल जानेसे पहले पूज्य महात्माजीने जब वहनोंका आवाहन किया, तव गगावहनं अुन्नाहने तुरन्त आन्दोलनमे कूद पडी — सायमे आश्रमकी लगभग सारी कार्यकर्त्री वहनोको ले गअी। यह वात नारणदास काकाको पसन्द नही थी। आश्रमकी भीतरी व्यवस्थाकी देखरेखके लिये किसी प्रौढ अनुभवी महिलाकी जरूरत थी। लेकिन अुस समय किसीको यह विचार ही नही आया। यह वात अुनको जरूर खटकी होगी।

अिन वीच मुझसे अेक वडी भूल हो गअी। जवान लडकियोंमे भी दो दल हो गये थे। अेक छात्रालयकी लडकियोका और दूसरा कुटुम्बियोवाले भागकी, शिक्षक-निवासकी लडकियोका। छात्रालयकी अेक लडकीको (जो लगभग १६ वर्षकी होगी) फिट आते थे। अुस लडकीको शिक्षक-निवासकी वडी अुमरकी अेक लडकी (मैत्री) ने कुछ व्यंगमे कहा। साधारणत मैं छोटी छोटी वातोमे नही अुतरती थी, समझानेकी कोशिश करती थी। लेकिन पुराने बुजुर्ग आश्रमवासी जेलमुक्त होकर वापस आये, अुसके वाद वातावरणमे जो क्षोभ अुत्पन्न हुआ था अुसका असर मुझ पर भी पडा था। लडकीके व्यंगके शब्द भी कडवे थे। वह लडकी रोती हुअी मेरे पास आअी। मैं अुसे लेकर मैत्रीके पास गअी। पूछताछमे खेद प्रगट करनेके वजाय मैत्रीने अुद्धत जवाव दिये। अिसलिअे क्रोधमे मेरे मुहसे ये शब्द निकल गये "फिर अैसे व्यंगके शब्द तेरे मुहसे निकलेगे तो मुह पर चप्पल दे मारूगी।" अिससे गरम तेलमे पानी पड गया! फिर तो महात्माजीका वीचमे पडना अनिवार्य हो गया। मैंने गुस्सेमे यह कहकर न्यायकी माग की कि काममे मदद देकर अुसे सरल वनानेके वजाय विरोधी लोग वातावरणको दूषित करते है और मुझे क्रोधवश होनेको मजबूर करते है।

पूज्य महात्माजी अुस समय वोरसदमे थे। वहा नारणदास काकाके साथ मैं और विरोधियोके प्रतिनिधि महात्माजीसे मिलने गये। रातको लगभग २ घटे तक वाते हुअी। अुन्होने मुझ पर आरोप लगाये। मैंने अेक घटे तक वोल कर अुनका खडन किया। अपने दोष तो मैंने स्वीकार किये, लेकिन प्रतिनिधियोसे यह दलील की कि, "मै अपनी जिम्मेदारी

छोडनेको तैयार हू। या तो आप मुझे वैसा करनेकी अिजाजत दीजिये या वुजुर्गोको समझाअिये कि वे वातावरणको स्वच्छ रखने तथा अैसी परि-स्थिति पैदा करनेका प्रयत्न करे, जिससे मेरे क्रोधका कारण न रहे।" पूज्य महात्माजीसे भी मैने कहा, "आप दूरसे मुझे रास्ता दिखाते रहते है। अेक ओर आश्रमकी सुव्यवस्थाके लिअे आग्रह रखते है, दूसरी ओर प्रेमसे सव कुछ करनेकी शिक्षा देते है। जरा विचार तो कीजिये। आप स्वय अितनी आध्यात्मिक और नैतिक शक्ति रखनेवाले महात्मा है। अितने वर्षोमे आप अिन लोगोको नियमपूर्वक प्रार्थनामे शरीक होने जितने सस्कार भी नही दे सके, तो मै २५ वर्षकी अनगढ लडकी अिन सव पर अपना प्रभाव कैसे डाल सकती हू?" पूज्य महात्माजीने हसकर कुछ अिस तरह कहा, "मै तो वापू ठहरा न!" लेकिन मुझे सलाह दी कि, "तेरे मुहसे अपशब्द निकले यह ठीक नही है। मैत्रीमे तुझे माफी मागनी चाहिये।" अुस समय तो मैने जोशमे विलकुल अिनकार कर दिया! पूज्य महात्माजीको अन्य वातोके लिअे विरोधियोको खास कुछ समझानेकी जरूरत नही थी, क्योकि अधिकतर जवाव तो मैने ही दे दिये थे। और गलतफहमी हुअी हो तो अुसे दूर करने जितना स्पष्टीकरण कर दिया था।

दूसरे दिन हम आश्रम लौट आये। लेकिन कुछ लोग वही रह गये। वादमे मालूम हुआ कि मेरे वाह्य आचारके अूपर सदेह करके कुछ अैसी अैसी वाते महात्माजीसे कही गअी कि अुन्हे सावरमती आकर अिस मामलेमे गहरा अुतरना पडा। वादमे तो सारी वाते निराधार सिद्ध हुअी। लेकिन अुसके वाद अेक दिन हृदय-कुजके वरामदेमे सव छोटे-वडे आश्रम-वासियो, वच्चो और मेहमानोके वीच पूज्य महात्माजीने अिस तूफानका स्पष्ट और विस्तारमे अुल्लेख करके लम्वा प्रवचन किया। अुससे मुझे वडा आघात पहुचा! शरम भी आअी!! पूज्य महात्माजी वाहर जानेके लिअे निकले तव हमेशाकी तरह मै अुनके पैर छूने नही गअी और तवसे कअी दिनो तक मै अुनसे वोली भी नही। न मिलने जाती, न पत्र लिखती! अपनी राजकोट और ववअीकी सहेलियोको मैने अिस वस्तु-स्थितिमे परिचित कराया। अिसलिअे १९३१ के अगस्तमे जव पूज्य महा-त्माजी ववअी गये, तव श्री धुरन्धर और किसन दोनो अुनसे मिलने

गये। अुन्होने महात्माजीसे कहा "प्रेमा पर आपने अन्याय किया है। हम अुसे वापस बुलानेवाले है।" (देखिये पत्र ६–८–'३१ से ६–९–'३१)

मेरे मौनके कारण पूज्य महात्माजीको चिन्ता हुअी। अुन दिनो गोलमेज परिपदके लिअे विलायत जानेकी धूमधाम मची हुअी थी। मेरे पत्र न आनेसे वे वेचैन थे। मुझसे मिलना भी चाहते थे। आखिर विलायत जानेकी तारीख आगे वढ गअी, और जहा तक मुझे याद आता है ता० ६–९–'३१ और २४–९–'३१ के वीच अेक दिन शामको वे आश्रममें आये। प्रार्थनासे पहले मुझे सूचना मिली कि, "वापूजी तुमसे मिलना चाहते हैं।" अिसलिअे प्रार्थनाके वाद मैं प्रार्थना-भूमि पर ही अुनकी राह देखती रही। वे आये। मुझे खूब मनाया, फुसलाया, समझाया, तव मैं वोलने लगी। आज भी अुनका प्रेम याद आता है और मैं सोचती हू कि मैंने अुन्हे कितना सताया था! लेकिन मेरे मनमे तो वे माता-पितासे भी अधिक थे। अिसलिअे प्रेमके साथ अुन्हे कभी कभी मेरा रोप भी पीना पडता था! यह रोप पहली वारका था। अिसके वाद भी दो वार मैं अुनसे नाराज हुअी थी।

विलायत जानेसे पहले अेक दिन दोपहरको पूज्य महात्माजी दूसरी वार मुझसे मिलने आये। हम दोनो वाडजकी तरफ घूमने गये। अुनका अुपदेश थोडी देर सुननेके वाद मैंने अपनी प्रार्थना अुन्हे सुनाअी

"महात्माजी, मुझे सचमुच लगता है कि मैं अिस जिम्मेदारीके लिअे विलकुल अयोग्य हू। मैं अुमरमें छोटी हू। माताका वात्सल्य मुझमे नही है। असहिष्णुता है, जल्दवाजी है, क्रोध है। अिन दोपोंके रहते हुअे यदि मैं जिम्मेदारी अुठाअूगी, तो अुससे मेरा विकास तो नही होगा, परन्तु दूसरोको तकलीफ जरूर होगी। अिसके सिवा आश्रमका वातावरण शान्त और पवित्र रहनेके वदले विगड जायगा। अिसलिअे यह जिम्मेदारी आप मुझसे ले लीजिये और दूसरे किसी योग्य व्यक्तिको सौंप दीजिये। मैं आश्रम छोडनेवाली नही हू। मुझे यही रहना है। लेकिन मैं सामान्य छात्राके रूपमे रहकर ही काम करूगी।"

पूज्य महात्माजीने कहा, "मैं तुझसे यह काम वापस नहीं लेना चाहता। तुझसे मैं भिक्षा मागता हू कि तू ही यह जिम्मेदारी सभालती रह।"

अब मुझे अुलटा आघात पहुचा! मेरे जैसी अेक क्षुद्र लडकीके सामने पूज्य महात्माजी जैसे महापुरुष अितने नम्र हो जाय कि "भिक्षा मागने" की भाषा बोले, यह मुझसे सहन नही हुआ। अन्दर ही अन्दर हृदयमे तीव्र सन्ताप हुआ और मैंने अपनेको सैकडो वार धिक्कारा!।

*

पूज्य महात्माजीने गोलमेज परिषदमे जानेका निश्चय किया था। अुसके लिअे कांग्रेसकी शर्ते पूरी हो अिस हेतुसे अग्रेज सरकारका हृदय वदलनेके लिअे पूज्य महात्माजी महाप्रयास कर रहे थे, और अुसी सम्बन्धमे दिल्ली-शिमलाकी तरफ अुनकी दौड-धूप भी चल रही थी। लेकिन शिमलाकी सरकारका हृदय-परिवर्तन नही हुआ, अुसके हाथसे जवरन् कुछ छीननेमे कांग्रेस अुस समय सफल हुअी, अितना ही कहा जा सकता है। सरकारकी अंतिम सम्मतिका पत्र वाअिसरॉयके गृहमंत्री श्री अिमर्सनके हस्ताक्षरोसे २७ अगस्त, १९३१ के दिन मिला। अुसके वाद पूज्य महात्माजी विलायत रवाना होनेके लिअे सीधे ववअी गये, अैसा मेरा खयाल है। मुझे अंदर ही अंदर संताप होता था कि अिस देशव्यापी चिन्तामे पूज्य महात्माजीको आश्रमकी भी चिन्ता करनी पडती है, जिसमे मै भी अेक निमित्त वन गअी हू। लेकिन कोअी अुपाय नही था। मै शान्त हो गअी, फिर भी मैंने अुन्हे पत्र नही लिखा। अिसके पीछे मेरी दृष्टि यह थी कि सरकार अुन्हे कसौटी पर कस ही रही है, अुनका चित्त व्यग्र होगा, अैसी स्थितिमे मेरे पत्रोंके लिअे अुन्हे अवकाश कहा होगा? लेकिन महात्माजीसे नही रहा गया। ता० २४-९-'३१ को मुझे पत्र लिखकर अुन्होंने मेरे पत्रकी माग की ही! वादमे मै पत्र लिखने लगी तव अुन्हे संतोष हुआ।

श्रावणी पूर्णिमाके दिन मेरी राखी वधवाकर मेरी और सारे देशकी प्रार्थनाके साथ पूज्य महात्माजी विलायत गये। हमारे वीच फिरसे पहलेकी ही तरह पत्रव्यवहार शुरू हुआ। ता० २१-१०-'३१ और ८-११-'३१ के पत्र विदेशसे आये हुअे है। महात्माजी वापस आये तव मै ववअीमे अुनसे मिलने गअी। ४ जनवरी, १९३२ को पूज्य महात्माजी फिर गिरफ्तार हुअे।]

वोरसद,
२२-६-'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। ब्यौरा अच्छा दिया है। मुझसे मिल गअी होती तो अच्छा होता। किसनका पत्र समझमे आता है। अच्छा हे, अैसा अुसे लिखना।

गगावहनका लडकियोको जी भरकर सिखानेका लोभ सच्चा और अच्छा है। अुसका पोषण करनेमे जो मदद दी जा सके वह सब देनेकी मेरी अिच्छा हे। तू भी देना।

पडितजीकी तेरे विरुद्ध कअी शिकायते है। अुनके पास जाकर सब शिकायते सुनना और विनयपूर्वक अुनका अुत्तर देना। पडितजी जैसे सच्चे और शुद्ध आश्रमवासियोका मिलना कठिन है। अुन्हे तू जीत लेना। तेरे विरुद्ध शिकायत क्यो होनी चाहिये? तेरा स्वभाव तेज है, अुद्धत हे, मिलनसार नही है। यह ठीक है। अिन दोषोको मै बडा नही मानता। लेकिन अुनसे कठिनाअिया जरूर पैदा होती है। अिसलिअे ये दोष भी भीतरसे निकाल देना। पडितजीके साथ तुरन्त सारी वातोकी सफाअी कर डालना।

वापूके आशीर्वाद

२४ ता० तक डाक यहा भेजना। २५-२६ को ववअी। २७ को वहुत सभव है वारडोली। लेकिन निश्चित नही है।

४७

वोरसद,
६-७-'३१

चि० प्रेमा,

तेरे दो पत्र मिले। कडवे घूट मै न पिलाअू तो और कौन पिलायेगा? अिन्हे पीनेमें ही स्वास्थ्यकी रक्षा है। शरीरके स्वास्थ्यकी अपेक्षा मनका स्वास्थ्य अधिक जरूरी है। स्त्रियोके वारेमे नारणदासने जिस नियमकी सूचना दी हे वह वहुत पुराना है। अुसका पालन आज तक

नही हुआ, अुसका कारण हमारी या कहो कि मेरी शिथिलता है। आज भी वह नियम समझनेके बाद पूरी तरह अुसका पालन हो सकेगा या नहीं, अिस बारेमे मुझे सन्देह है। अिस बारेमे ज्यादा लिखनेका मेरा विचार है। आज फुरसत मिलेगी तो आज, या जब मिलेगी तब लिखूगा।

किसनको पत्र तो जल्दी ही लिखना चाहिये था, लेकिन आज ही पुर्जा लिख सका। अुसे जल्दी मिल गया तो शायद बबअीमे मुझसे मिलने आयेगी।

मेहमानोके बारेमे तूने जो लिखा वह मुझे अच्छा लगा।

बापूके आशीर्वाद

४८

शिमला,
२०–७–'३१

चि० प्रेमा,

किसनसे मिला था। यह तो अुसने लिखा ही होगा। मुझे अैसा लगा कि अुसे ज्यादा सेवा करनी चाहिये।

तेरा पत्र मिला था।

तू अब भी बच्चोको मारती है? रमाबहनकी शिकायत थी। पडितजीको सतोष दिया? गगाबहनके साथ तू घुलमिल गअी है? वे दुखी मालूम होती हैं।

बापूके आशीर्वाद

४९

बारडोली,
२६–७–'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी कौनसी वर्षगाठ है, यह तूने नहीं लिखा। मै स्वीकार करता हू कि मुझे यह जानना चाहिये। लेकिन अैसी बातोमे मै मूर्ख हू। तू दीर्घायु हो अैसा कहनेके बदले मै यह कहूगा जल्दी निर्विकार,

निर्दोप होकर आदर्श सेविका वन जा। तेरा जो प्रयत्न चल रहा है वह सफल हो।

तेरे पत्रमे तूने दोनो रग भरे है। अुसमे खरापन है। वह मुझे अच्छा लगता हे। लेकिन अुसमे रोप है और अभिमान भी है। लेकिन मैं अिसका पृथक्करण नही करता। अितना चाहता हू। अगर तू अपनी डायरीमे न लिखती हो तो अवसे लिखना। रोज किस पर गुस्सा किया, फिर वह वालक हो या वडा, किसे मारा, किसे गाली दी — अितना मेरे लिअे लिखे तो भी काफी है। वाकी तो तू जाने और नारणदास जाने। मै तेरे काममे हस्तक्षेप नही करना चाहता। यह मेरे क्षेत्रसे वाहर हे। मुझे सव वातोका पता भी नही चल सकता। मुझसे अिन्साफ नही हो सकता। मेरे पास वैसा करनेका साधन भी नही है। मै तो माता-पिता वन गया हू, अिसलिअे अेकपक्षी वात ही कह सकता हू। अिसके सिवा, सत्याग्रही न्याय नही मागेगा। न्यायका अर्थ है जैसेको तैसा। सत्याग्रहका अर्थ है 'शठ प्रत्यपि सत्य', हिंसाके सामने अहिसा, क्रोधके सामने अक्रोध, अप्रेमके सामने प्रेम। अिसमे न्याय तौलनेका स्थान ही कहा है?

वापूके आशीर्वाद

वोरसद मगलवारको पहुच रहा हू।

५०

[यह पत्र ववअीसे लिखा था।]

६–८–'३१

चि० प्रेमा,

तू मुझे लिखेगी ही नही, यह कैसे चलेगा? तुझसे मैने लम्वे पत्रकी आशा रखी थी। अव जरूर लिखना। धुरन्धर और किसनके साथ आज लगभग अेक घटे तक तेरी ही वात करनी पडी। यह कितनी शरमकी वात है?

मैत्रीसे तू गले मिली, यह वात पढ कर मै खुश हुआ। लेकिन पूरे वर्णनके विना मुझे सन्तोप नही होगा।

वापूके आशीर्वाद

५१

१२–८–'३१

चि० प्रेमा,

तू पत्र नहीं ही लिखेगी? मेरे प्रेमको तू समझी ही नही। पुत्रीसे भी ज्यादा मान कर मैंने तुझे आश्रममे रखा है। कही मुझे शनिवारको जाना ही पडे,[1] तो मेरे पास तेरा कोअी पत्र ही न होगा?

बापूके आशीर्वाद

५२

[यह पत्र १२–८–'३१ और ६–९–'३१ के बीचका है।]

चि० प्रेमा,

तू मुझे लिखना बन्द कर दे तो भी मुझे तो पत्र लिखना ही पडेगा। लेकिन तू लिखती नही, यह अच्छा नही करती। लिखनेका हुक्म दू तो मानेगी?

मौनवार

बापूके आशीर्वाद

५३

६–९–'३१

चि० प्रेमा,

तूने अभी तक पत्र नही लिखा। अब तो अगर हवाअी डाकसे पत्र भेजा हो तो ही हम विलायत पहुचे तब वह मिल सकता है, या १९ तारीखको मिलेगा।

तू मुझे चिन्तामे डाल रही है।

बापूके आशीर्वाद

---

१ शनिवारको विलायतके लिअे रवाना होना पडे।

५४

२४–९–'३१

चि० प्रेमा,

तू अव शान्त है, यह तो नारणदासने लिखा है। लेकिन मुझे पत्र लिखना तूने अभी तक शुरू नही किया, यह दु खकी वात है। तेरी चिन्ता मुझे विलकुल न रहे, अैसा तू कर सकती है। ज्यादा अभी नहीं लिखूगा।

वापूके आशीर्वाद

५५

[मैंने लिखा था कि गोलमेज परिषदकी चर्चामें समझौतेके खातिर भी हमे अपनी अेक भी चीज नही छोडनी चाहिये।]

२१–१०–'३१

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र अव आने लगे है। लम्वे अुत्तर देनेकी अिच्छा वहुत है, लेकिन समय नही है। अिसलिअे पहुचसे ही सन्तोष करना।

तू क्यो डरती है? क्या अेक भी अैसी चीज, जो जरूर होनी चाहिये, मै छोड सकता हू?

वापूके आशीर्वाद

५६

[यह पत्र विलायतसे लिखा गया है।]

रविवार,
८–११–'३१

चि० प्रेमा,

तू परिषदके वारेमे व्यर्थ चिन्ता करती है। अखवारो परसे कोअी अनुमान मत लगाना। मै देशकी लाज नही खोअूगा, यह विश्वास रखना। काम लेनेकी मेरी पद्धति भिन्न होनी ही चाहिये। अिसलिअे दूसरोंके

साथ तुलना नही की जा सकती। भेद कहा है, यह तो मै पहुचू और वता सकू तभी मालूम होगा। अिसलिअे अच्छा यह होगा कि यहा क्या हो रहा हे, अिसका विचार करनेमे तू अपने मनको लगाये ही नही। मेरी वात समझमे आती है न ?

और कुछ लिखनेका समय नही है। अितनेसे ही सतोप करना।

वापूके आगीर्वाद

५७

[पूज्य महात्माजी भारत वापस आये और पकडे गये। अुसके वाद यरवडा मन्दिरसे आया हुआ यह पहला पत्र है।

मैने 'चमत्कार' के वारेमे महात्माजीके विचार पूछे थे।

'Keep thine eye single' वाअिवलके अिस वाक्यका अर्थ भी पूछा था।]

यरवडा मदिर,
२२-१-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। जेलकी वहनोसे मिली यह ठीक किया।

चमत्कार जैसी कोअी चीज अिस जगतमे नही है, अथवा सव चमत्कार ही हे। पृथ्वी अधरमे लटक रही है और आत्मा शरीरमे हे, यह जानते हुअे भी (हम) अुसे देख नही सकते, यह वडा चमत्कार हे। अिनके सामने दूसरे कहे जानेवाले चमत्कार तो जादूगरके आमके पेडकी तरह-तुच्छ लगते हैं।

'तेरी आख अेक रखना' का अर्थ हे . टेढा न देखना, अर्थात् दृष्टि निर्मल रखना, अुसके द्वारा कुदृष्टि न डालना। अिसके सिवा अिस वाक्यका दूसरा अर्थ है ही नही।

सरोजिनीदेवीका किस्सा दु खद है। लेकिन हम अनासक्तिपूर्वक अुनके साथ व्यवहार करेगे तो अुनकी गाडी सीधी चलने लगेगी। वहा या प्रयागमे, यह अलग वात है।

वापूके आगीर्वाद

[विलायतकी यात्रामे रोम वगैरा स्थानो पर जिन जिन कलाओंका दर्शन किया, अुनके बारेमे वर्णन करनेके, लिअे मैंने लिखा था।

आश्रमका ध्येय क्या है? आश्रममे जीवनके बारेमे जो विषमता दिखाअी देती थी, अुसके अुदाहरण देकर राय पूछी थी।

आपके साथ जेलमे रहने पर भी सरदार चाय क्यो पीते है? यह प्रश्न पूछा था।]

यरवडा मदिर,
२५–१–'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू चाहती है वह सब दे सकूगा या नही, यह मै नही जानता।

धुरन्धरके दरबारमे पहुच जानेका मुझे पता नही था।

रोममे चित्रकला देखकर खूब आनन्द लिया, लेकिन दो घटेमें देखकर क्या राय दू? मेरी शक्ति ही कितनी है? अनुभव कितना है? मुझे अुसमे से कुछ बहुत पसन्द आया। वहा २–३ महीने रहनेको मिले तो चित्र और मूर्तिया रोज देखू और धीरे धीरे अुनका अध्ययन करू। क्रॉसस्तभ पर चढे हुअे अीसाकी मूर्ति देखी। अुसने मुझे सबसे ज्यादा आकर्षित किया, यह तो मै लिख ही चुका हू।

लेकिन वहाकी कला भारतसे अधिक अूची हो अैसा मुझे बिलकुल नही लगा। दोनो भिन्न रीतिसे विकसित हुअी है। भारतकी कलामें कल्पनामात्र है। यूरोपकी कलामे कुदरतका अनुकरण है। अिससे पश्चिमकी कलाको समझना शायद सरल हो। लेकिन समझनेके बाद वह हमें पृथ्वी पर चिपकाये रखती है। और भारतकी कला जैसे जैसे समझमे आती है वैसे वैसे वह हमे अूचाअी पर ले जाती है। यह सब तेरे लिअे ही लिखा है। अिन विचारोंकी मेरे लिअे कोअी कीमत नही है। हो सकता है कि भारतके बारेमें मेरा छिपा पक्षपात यह लिखवाता हो, या मेरा अज्ञान मुझे कल्पनाके घोडे पर चढाता हो। लेकिन अैसे घोडे पर चढनेवाला अन्तमे

तो गिरेगा ही न? अैसा होते हुअे भी अगर अिसमे से तुझे कुछ मिले तो ले लेना। असी चीजसे तू आगे बढ गअी हो तो अिसे फेंक देना। अपनेसे कम जाननेवाले बालकोके समक्ष माता-पिता जैसी अुन्हे आती हो वैसी रामायण-महाभारतकी बाते कह सकते हैं और अपने बच्चोकी गरज पूरी कर सकते है। अैसा ही मेरे बारेमे भी समझना।

अिससे तू अितना तो देख ही सकेगी कि मै कलामे रस लेनेवाला जरूर हू। लेकिन अैसे तो अनेक रसोका मैंने त्याग किया है, मुझे करना पडा है। सत्यकी खोजमे जो रस मिले अुन्हे पेट भर कर मैंने पिया है, और अब भी नये रस पीनेको तैयार हू। सत्यके पुजारीको प्रवृत्तिया सहज ही प्राप्त होती हैं। अिसलिअे वह स्वभावत गीताके तीसरे अध्यायका अनुसरण करनेवाला होता है। मै मानता हू कि तीसरा अध्याय पढनेसे पहले ही मैं कर्मयोग साधने लग गया था। लेकिन यह तो मै विषयातर करने लगा।

आश्रमके बारेमे अच्छा प्रश्न पूछा है। आश्रममे अुद्योग प्रधान है, क्योकि मनुष्यका धर्म शरीर-श्रम करना है। जो अैसा नही करता वह चोरीका अन्न खाता है। फिर आश्रमका श्रम जितना अपने लिअे है अुतना ही परमार्थके लिअे है। चरखेको केन्द्रबिन्दु बनाया है, क्योकि भारतके करोडो लोगोके लिअे सामान्य सहायक धन्धेके रूपमे खेतीके बाद अिसीकी कल्पना की जा सकती है। अुसमे धर्म और अर्थ दोनोकी भलीभाति रक्षा होती है।

आश्रमका अस्तित्व केवल देशसेवाके लिअे ही नही है, बल्कि देश-सेवाके द्वारा जगत-सेवा करनेके लिअे है और जगत-सेवाके द्वारा मोक्ष प्राप्त करनेके लिअे, अीश्वरका दर्शन करनेके लिअे है।

आश्रममें हर कोअी भरती नही हो सकता। आश्रम अपगालय नही है, अनाथालय भी नही है। वह सेवको और सेविकाओके लिअे, साधकोके लिअे है। अिसलिअे जो शरीरसे काम न कर सके अुनके लिअे आश्रम नही है। फिर भी जो सेवाभावसे ओतप्रोत हो वे शरीरसे अपग हो, तो भी अुन्हे जरूर आश्रममे लिया जा सकता है। अैसे थोडे ही लोग लिये जा सकते है। लेकिन जो आश्रममे आश्रमवासीके रूपमे भरती हुअे हो, वे भरती

होनेके वाद अगर अपग हो जाय तो अुन्हे निकाला नही जा सकता। वाह्य दृष्टिसे देखने पर आश्रमके वहुतसे कार्योमे विरोधाभास दिखाअी दे सकता है, लेकिन अतर-दृष्टिमे जाचने पर विरोधका आभास अुड जायगा। अितनेसे जो समझमे न आये वह फिर पूछ लेना। और कोअी शकाये हो तो वे भी विना किसी सकोचके पूछना।

विलायतमे फोटो खिचवानेके लिअे मै कभी कभी ही खडा हुआ था। अुसमे व्रतभग नही हुआ अैसा मै मानता हू।

मेरे सहवासमें रहे हुअे सव लोग मेरे जैसे ही होने चाहिये अैसा विलकुल नही है, यह अिष्ट भी नही है। यह तो नकल करने जैसा हुआ। मुझमे जो कुछ अच्छा हो अुसमे से भी जितना पचे अुतना ही ग्रहण करनेमे लाभ है। वाकी सरदार चाय पीते है, अुन्हे कौन रोक सकता है? और चाय अुनके लिअे औषधिका काम करती हो तो? मेरे साथ रहनेवाले यानी मेरे साथी मासाहारी भी है। अुनका क्या हो?

जिसे चाय अनुकूल न आती हो अथवा जिसने चाय न पीनेके वारेमे अुसकी अुत्पत्तिसे सम्वन्धित वातोका विचार किया है वही चाय नही पियेगा। वा मेरे साथ रहते हुअे भी चाय पीती है, कॉफी भी लेती है। अुसे मै प्रेमपूर्वक चाय-कॉफी वनाकर पिला भी सकता हू। यह कैसे? तेरे प्रश्नमे केवल विनोद है यह मै जानता हू। लेकिन अैसा होते हुअे भी हम लोगोमे अैसी वातोके वारेमे कुछ भ्रम है और थोडी असहिष्णुता है, जिन्हे हमे निकाल देना चाहिये। तुझमे यह दोष है, यह मै नही जानता। लेकिन अिस वारेमे मेरे विचार तू जान ले यह अच्छा है। और तो वहुत कुछ अिस वारेके दूसरे पत्रोमे है। वे तुझे पढनेको मिले तो पढना और अुन पर विचार करना।

वापूके आशीर्वाद

३०-१-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। पुस्तकोकी जो पेटी मै लाया हू, वह वहा पहुच गअी? विद्यापीठमे कोअी रहता है? पुस्तकोकी देखभाल होती है या सब बरबाद होती जा रही है? मासिक पत्र भी बहुतसे तो सभाल कर रखने जैसे होते है। बात यह है कि पुस्तके सभालनेके लिअे पूरा समय देनेवाला अेक आदमी होना चाहिये और अुसके मातहत दो आदमी होने चाहिये। वरना हमे पुस्तकालयको अितना बडा होने ही नही देना चाहिये। यह काम विद्यापीठका ही माना जायगा। हमारा यह विषय नही है। नही है, अिसीलिअे तो विद्यापीठ खोला। वरना आश्रमको ही विद्यापीठ बना डालते। आश्रमका यह क्षेत्र ही नही है। आश्रमका काम मुख्यत आन्तरिक है। विद्यापीठका मुख्यत बाह्य है, होना चाहिये। दोनोके अुद्देश्य अेक ही है, लेकिन दोनोकी प्रवृत्तिया अलग है। अिसलिअे आश्रममे तो जरूरी पुस्तके ही रखे, बाकी जिनकी जरूरत पडे वे विद्यापीठसे पढनेके लिअे ले आये। यह तो अब फिरसे स्थिर होकर बैठे तबकी बात है। अभी तो सब कुछ बाढमे बहा जा रहा है, और यह अच्छा ही है। बाढके अन्तमे भरपूर और काच जैसा साफ-स्वच्छ पानी ही रहता है न?

नागपचमीका अुत्सव मुझे याद है। जो अुत्तर मैने अुस समय दिया था अुसमे आज कोअी परिवर्तन नही हुआ है। सिर फूटे अिसे मैने पटाखे छूटनेकी अुपमा दी है न? और जो आत्माके गुण जानता है, वह तो अुसे अक्षरश मान सकता है। अगर आत्मा मरती नही, तो फिर अुसके घर या कपडे भले ही फटा करे, सडा करे, जला करे, अुससे क्या बिगडता है? फिर, आत्मा तो सदा ही पूर्ण है, अिसलिअे अुसे नये घरबारकी कमी नही है। समझे तो अुसे अिनकी जरूरत ही नही है। लेकिन यह सब अपने लिअे है। अिसलिअे जहा अपने सिर फूटे वहा पटाखे ही फूटते है यह समझना। लेकिन आत्माके लिअे अपना क्या और पराया क्या? अैसा सवाल नही पूछना चाहिये। शरीर है तब तक थोडे-बहुत

अशमे अपना और पराया है, अैसा मान कर ही चलना पडेगा। स्वय जैसे जैसे मरते जाते है वैसे वैसे अपने और परायेका भेद टूटता जाता है। पराया मानकर दूसरोको मारते जाते हैं वैसे वैसे यह भेद वढता जाता है। यह वात जैसे जैसे समझमे आती जायगी वैसे वैसे नौजवानोकी तरह वच्चे भी ठिकाने आते जायगे। अिसमे धीरजकी जरूरत है। अिस वारेमे वच्चोका पत्र देखना।

वापूके आशीर्वाद

६०

यरवडा मदिर,
५-२-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। सरदारने सचमुच चाय छोड दी है। सुवहकी तो छोड ही दी थी, यह मैं जानता था। फिर दस वजे पीते थे। अव वह भी छोड दी है। यह मुझे छोडनेके वाद मालूम हुआ। मैंने अेक शव्द भी नहीं कहा। अपनी अिच्छासे ही अुन्होंने छोडी है।

वच्चोको विलायतके खिलौने भेजे हैं अैसा लिखनेका मेरा अिरादा नही था। अैसा पढा जाता हो तो लिखनेमे मुझसे भूल हुअी। लिखनेका आशय तो यह था कि खिलौने मैं लाया हू। अव तो दिये जाय तव सही। मीरावहनने सभाल कर रखे थे। अुसे शायद याद हो कि वे कहा है।

पुस्तकोकी पेटीके वारेमे या तो मीराको या प्यारेलालको मालूम होगा। विना खुली पेटीके वजनकी जाच करनेसे ही पता चल जायगा कि अुसमे पुस्तके हैं या और कुछ? शायद महादेवको मालूम हो।

विरोधाभासकी वात अैसी है। मेरे या आश्रमके जीवनमे जहा विरोधका आभास है वहा मेल वताया जा सकता है। सरदीमें ओढनेवाले और गरमीमें खुला शरीर रखनेवाले मनुष्यके जीवनमे विरोधका आभासमात्र है। वह अेक ही नियमके वशीभूत होकर कपडे पहनता या ओढता है। अैसे विरोधके आभासोमे से वहुतोका मेल वैठाया जा सकता है।

दूसरे विरोध तो विरोध है ही। अुनका कारण आश्रमकी या मेरी कमजोरी है। ये विरोध दोप ही माने जायगे, और अुन्हे दूर करनेका प्रयत्न होना चाहिये। कौनसे विरोध वास्तवमे विरोध होनेके कारण दोप है और कौनसे आभासमात्र है, यह तो लिखने वैठे तभी पता चल सकता है। तुझे जो विरोध मालूम हुअे हो अुनके वारेमे पूछना हो तो पूछना।

द्वेपके कारणके विना कोअी मनुष्य द्वेप नही करता। अिसलिअे हमारे सामने कोअी द्वेषका कारण अुपस्थित करे, तो भी द्वेष न करते हुअे अुससे प्रेम करना, अुस पर दया करना, अुसकी सेवा करना ही अहिसा है। प्रेमीके प्रति किये जानेवाले प्रेममे अहिसा नही है, वह तो व्यवहार है। अहिसाको दान कहेगे। प्रेमके वदले प्रेम करना यह फर्ज अदा करनेके वरावर है।

वापूके आशीर्वाद

६१

[पूज्य महात्माजी विलायतसे वापस लौटे कि तुरन्त ही पकड लिये गये, अिसलिअे अुनके साथका सामान सत्याग्रह आश्रममें भेजा गया। अुस सामानके वारेमे अुनके साथ मुझे थोडा पत्रव्यवहार करना पडा। अुसका अुल्लेख पूज्य महात्माजीके शुरूके कुछ पत्रोमे है।

आश्रमके ग्रथालयकी वहुतसी पुस्तकें (श्री काकासाहव पसन्द करे वे सव) विद्यापीठ भेजनेकी सूचना पूज्य महात्माजीने दी थी। मैंने यह कहकर अिसका विरोध किया था कि अिससे आश्रमको नुकसान होगा।

मैंने महात्माजीको लिखा था कि किसीके वारेमे आपके विचार वन जाते है तव अुसके विरुद्ध कुछ भी सुनना आपको अच्छा नही लगता। "आश्रममें आकर आपका परिचय होनेसे पहले 'यग अिडिया' साप्ताहिक सतत पढकर मेरे मनमे आपके वारेमे जो छाप पडी थी, व्यक्तिगत परिचय होनेके वाद अुससे कुछ अलग छाप पडी। 'यग अिडिया' का लेखक वहुत ही अूचा लगता था। प्रत्यक्ष व्यक्तिमें मानवकी मर्यादा दिखाअी देती है।" अैसा ही कुछ मैंने लिखा था।]

१३-२-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे पत्र देरसे मिले तब अुनके अूपरकी छाप देखकर मुझे तारीख लिखनी चाहिये।

किसनको कितनी सजा हुअी? अुसे कहा रखा गया है?

पेटिया तू जरूर खोल सकती है। अुनमे पुस्तके हो तब तो (ग्रन्थालयमे) अुनकी व्यवस्था होनी चाहिये, और दूसरा कोअी सामान हो तो अुसे लिखकर यथास्थान रखना चाहिये। अुस सामानका क्या करना यह समझमे न आवे तो अुसकी सूची बनाकर भेजना, जिससे मै बता सकू कि क्या करना है। पुस्तकोमें दूसरोकी हो तो भी कोअी हर्ज नही है। अुनके नाम पुस्तकोमे हो तब तो वे सरलतासे अलग रखी जा सकती है। अगर नाम न हो तो अुन पर आश्रमकी मुहर लगा दी जाय। अिसके बावजूद कोअी अुनके मालिक होगे तो वे अुन्हे ले जायगे। हमे तो जो पुस्तकें हमारे कब्जेमे हो अुन्हे यथासभव सभाल कर रखनेकी व्यवस्था कर देनी चाहिये।

आश्रमका पढाअीके साथ कोअी सबध ही नही है, यह मेरे किस वाक्य परसे तूने समझ लिया? मेरे मनमे जो विचार है वह यह है अक्षरज्ञान — बाहरी पढाअी — का आश्रममे गौण स्थान है। अिसलिअे वह विद्यापीठ नही हो सका। लेकिन बाहरी शिक्षाकी अुपयोगिता, आवश्यकता तो है ही, अिसीलिअे विद्यापीठ खडा हुआ। दोनो अेक-दूसरेके पूरक है। अिस तरह क्षेत्रोकी मर्यादा होनेके कारण आश्रमके पुस्तक-सग्रहकी भी मर्यादा होनी चाहिये। विद्यापीठकी कोअी मर्यादा हो ही नही सकती। अुसकी मर्यादा आन्तरिक प्रयोगोके बारेमे जरूर है। आश्रमका नाम बडा हो गया है, अुसके बारेमें कभी अतिशयोक्तिकी हद तक पहुचनेवाली मान्यताअें बन गअी है, अिसलिअे वहा अनेक प्रकारकी और अनेक भाषाओकी पुस्तकें आती है। अुन सबको सभाल कर रखनेकी जगह विद्यापीठ ही हो सकती है। फिर भी आश्रममें जो पढाअी हम करते है अुससे सबधित पुस्तके जरूर होनी चाहिये। ये पुस्तकें कौनसी हो यह तो तू और अन्य लोग सरलतासे तय कर सकते है। कोअी परेशानी खडी हो तो मुझसे पूछा जा सकता है। लेकिन मेरी दृष्टिमें तो

परेशानीका सवाल ही नही है। अितने वर्षोके आश्रमके अस्तित्वके बाद हम तुरन्त कह सकते है कि सामान्य रूपसे हमे किन पुस्तकोकी जरूरत होती है। अुसके बाद अगर नअी जरूरत महसूस हो तो हम विद्यापीठके भण्डारका आश्रय ले सकते है। दोनो सस्थाअे अलग है, यह मानना ही नही चाहिये। दोनोके क्षेत्र अलग है, लेकिन दोनोमे समानता भी बहुत है और अधिक समानता होती जायगी।

अभी अिसमे कुछ और समझाना बाकी हो तो मुझसे फिर पूछना।

किसीके बारेमे मेरे विचार बन जाने पर भी अुसके विरुद्ध मै कुछ नही सुनू या देखू, अैसा जान-बूझकर तो मै नही ही करता। सुनता हमेशा हू, लेकिन अुससे विचार हमेशा नही बदलते। अवलोकनके बाद बने हुअे विचार झट बदल जाय अिसे मै दोष मानता हू। कभी बदलें ही नही, यह हठ माना जायगा। अिसलिअे यह भी दोष है। विचारोके बदलनेके लिअे सबल कारण चाहिये। बहुत बार तो मुझे प्रत्यक्ष प्रमाणकी जरूरत पडती है। अिस स्वभावकी मै रक्षा करता हू। और वैसा करनेसे मै बहुतसे भयोसे बच गया हू और दूसरोके साथ मेरा सहवास निर्मल रह सका है।

अिसलिअे तुझे जो पूछना हो बेधडक होकर पूछना। अैसा समय फिर नही मिलनेवाला है।

तेरा पृथक्करण सही है। 'यग अिडिया' का लेखक अेक व्यक्ति है, आश्रममे सबके परिचयमे आनेवाला व्यक्ति दूसरा है। 'य अि' मे तो मै पाडव बन कर बैठ सकता हू। लेकिन आश्रममे जैसा हू वैसा दिखे बिना कैसे रह सकता हू? अुस पर मै सत्यका पुजारी हू, अत जान-बूझकर दोष छिपानेका तो प्रयत्न भी मुझसे नही हो सकेगा। अिसलिअे मुझमे रहे हुअे कौरव जहा तहासे निकल ही पडते है। मेरे भीतर देवासुर-सग्राम चलता ही रहता है, यह तो तूने कहा ही है न? लेकिन अैसा दीखता है कि कौरवोकी हार हुआ करती है। लेकिन अिस बारेमे अभी कुछ निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता। यह तो सोलन[१] के कथनानुसार मृत्युके

१ अेक प्राचीन ग्रीक तत्त्वज्ञानी। अुनकी सूक्तिया प्रसिद्ध है। वे कहते थे, "किसी भी मनुष्यके बारेमे अुसकी मृत्युसे पहले कोअी निश्चित मत न बनाओ।"

बाद ही कहा जा सकता है। मैंने करोडोकी कीमत रखनेवालोको क्षणभरमें कौडीकी कीमतवाले बनते देखा है। अिसलिअे मुझे किसी तरहका घमड नही है। घमड है भी किस कामका?

पत्र फिरसे नही पढता हू, यह ध्यानमे रखना।

बापूके आशीर्वाद

६२

[आश्रममे ही तरह तरहकी खास छूटे लेनेवालोके अुदाहरण मैंने दिये थे।

हरियोमल आश्रममें आये हुअे भीम जैसे अेक सिंधी कार्यकर्ता थे। वे खेतीका काम करते थे।

आश्रममे विद्वान लोग नही आते। आश्रमकी प्रार्थना हिन्दू धर्मके अनुसार सस्कृतमें बोली जाती है, जब कि दूसरे धर्मवाले भी आश्रममें रहते हैं, अैसा मैंने लिखा था।]

य० म०
१९–२–'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अच्छा है। नि सकोच होकर लिखा यह ठीक ही किया।

तूने जो आलोचना की है अुसका यह अुत्तर है। मुझे सबधित व्यक्तियोका अुत्तर सुनना चाहिये। बादमें ही मैं अुन व्यक्तियोके बारेमें कह सकता हू। लेकिन सामान्य रूपसे कह सकता हू कि जिन जिनको छूट दी गअी है अुनके लिअे 'प्रिविलेज' का खयाल नही रहा है, बल्कि आवश्यकताका रहा है। मुझ पर अैसी छाप पडी है कि जो लोग सुविधाअे लेते है वे आलस्यकी वजहसे नही लेते, परन्तु अिसलिअे लेते हैं कि अुनके शरीरको सुविधाओंकी जरूरत है या यो कहो कि अुनके स्वभावके कारण वे जरूरी हैं। हम किसीके काजी नही बन सकते। अुनके प्रयत्नोका हमें पता (भी) न हो। अिसका यह अर्थ नही है कि अुनमें अपूर्णता नही

है। अपूर्णता न हो तो वे आश्रममें आवे ही क्यो ? वे ढोगी नही है। मैं जो कुछ करता हू अुसे दूसरोको भी करना ही चाहिये या सव अुसे कर सकते है, यह माननेमें ही महादोष है। जो वोझा हरियोमल अुठाता है वह मै अुठाने जाअू, तो अुसी क्षण मेरा राम वोल जाय। और हरियोमल अगर मेरी निर्वलतासे द्वेप करे, तो यह गलत ही कहा जायगा।

वहुतोने यह आरोप लगाया है कि लोग मुझे धोखा देते है। कोअी भी धोखा नही देता अैसा नही है, लेकिन अधिकतर लोग मुझे धोखा नही देते। मैंने अनुभव किया है कि वहुतेरे लोग मेरे सामने जैसा व्यवहार रख सकते है वैसा मेरे पीछे नही रख सकते। अिस वजहसे कुछ लोग मेरा त्याग भी करते है। अैसा वहुत होता है, अिसीलिअे मुझ पर आकर्षण-शक्तिका आरोपण किया जाता है।

लेकिन अितनेसे तुझे या दूसरोको सन्तोप होनेकी सभावना कम है। यह मैने वचावके लिअे लिखा भी नही है। मेरी मनोदशा वताअी है। लेकिन सच वात यह है और मैंने वर्पोसे अुसे माना है। आश्रमकी त्रुटिया मेरी त्रुटियोका प्रतिविव है। मैंने अनेक लोगोसे कहा है कि मेरी पहचान मुझसे मिलनेसे नही होती। मिलने पर मैं अच्छा भी दिखाअी दू। जो वस्तु मुझमे न हो अुसका भी लोग मुझ पर आरोपण कर दे, क्योकि मै सत्यका पुजारी हू। अिसलिअे वह पूजा दूसरोको क्षण-भर प्रभावित भी कर दे। मुझे पहचाननेके लिअे मेरी गैरहाजिरीमें आश्रमको देखना चाहिये। अुसमे दिखाअी देनेवाले सारे दोप मेरे दोपोके प्रतिविम्व है, अैसा माननेमे जरा भी भूल नही होगी, मेरे प्रति अन्याय नही होगा। जो समुदाय आश्रममे अिकट्ठा हुआ है अुसे मै खीच लाया हू, अैसा ही कहा जायगा। और आश्रममे रहकर भी वे दोपोको दूर न कर मके हो, या अपने दोपोको अुन्होने वढा लिया हो, तो अुसमे अुनका दोप नही, मेरा दोष है। अुसमे मेरी साधनाकी कमी है। अिन कमियोको मै जानता नही या देखता नही, अैसा भी नही है। सिर्फ अितना ही कह सकता हू कि जो कमिया है वे प्रयत्न करनेके वावजूद है। और क्योकि मै प्रयत्नशील हू, अिसलिअे कुल मिलाकर आश्रमका पतन नही हुआ अैसा मेरा विश्वास है। मुझे खुदको अिससे आश्वासन मिलता है

कि तीन जगह आश्रम वनाये और तीनो स्थानो पर अुनके तात्कालिक हेतु सफल हुअे दिखाअी दिये है। लेकिन अिस आश्वासनसे भी मैं अपनेको या दूसरोको धोखा नही देता। मुझे तो वहुत दूर जाना है। मार्गमें घाटिया और पहाड खडे है। फिर भी यात्रा तो करनी ही है। और सत्यकी शोधमे असफलताके लिअे अवकाश ही नही है, अिस ज्ञानसे मैं निश्चिन्त रहता हू।

विद्वान समाजको आश्रम आकर्पित नही कर सका, यह विलकुल सच हे। क्योंकि मैं अपनेको विद्वान नही मानता। अिसके सिवा जो मुट्ठीभर विद्वान आश्रमके प्रति खिचे है, वे विद्वत्ताका पोपण करनेके लिअे नही, वल्कि दूसरा ही कुछ लेने और अुसका पोषण करनेके लिअे अिकट्ठे हुअे है। वे सत्य-शोधक है। और सत्यकी खोज तो अपढ कर सकता है, वच्चा कर सकता है, स्त्री कर सकती है, पुरुप कर सकता है। अक्षरज्ञान कभी कभी हिरण्मय पात्रका काम करता है और सत्यका मुह ढक देता है। यह कहकर मैं अक्षरज्ञानकी निन्दा नही करता, लेकिन अुसे अुसके अुचित स्थान पर रखता हू। अनेक साधनोमे यह भी अेक साधन है।

आश्रममें मुख्यत सस्कृत प्रार्थना पसन्द की गअी है, क्योंकि अुसमें मुख्य रूपसे हिन्दू समुदाय ही आया है। दूसरी प्रार्थनाओसे द्रोह नही है। कभी कभी हम करते भी है न? अगर वहुतसे हिन्दुओके वजाय वहुतसे मुसलमान आ जाय, तो कुरान शरीफ रोज पढा जायगा और अुसमे मैं भी भाग लूगा।

अितनेसे तुझे कुछ अुत्तर मिलता है? सतोप होता है? अुत्तर न मिले, सतोप न हो, तो वार वार पूछना। मैं नही थकूगा। तुझे सतोप देना चाहता हू। तू थकना मत।

वापूके आशीर्वाद

६३

[१९ ता० का पत्र मुझे वहुत अच्छा लगा। अिसलिअे अिस तरहके प्रेरणादायक विचारोसे भरे हुअे पत्र लिखते रहिये, अैसी मैने पूज्य महात्माजीसे प्रार्थना की थी।

दाडी-कूचसे कुछ महीने पहलेकी वात है। हृदय-कुजके वाडेके अेक दरवाजेसे मीरावहनके निवास-स्थानके सामने होकर अेक रास्ता जाता था। लोगोके आने-जानेसे तकलीफ होती है यह शिकायत पूज्य महात्माजीसे करके मीरावहनने वह दरवाजा वन्द करवा दिया। हृदय-कुजमे रहनेवाली सारी वहनो, वच्चो, पूज्य वा आदि सवको अिससे दिक्कत होने लगी। दूसरे रास्तेसे लम्वा चक्कर काटकर जाना पडता था। श्री मणिलाल गाधी (महात्माजीके दूसरे पुत्र) अुस समय वहा थे। अुन्हे भी यह वात पसद नही आअी। वे चिढे। लेकिन पूज्य महात्माजीसे कहनेकी किसीकी हिम्मत नही हुअी। सवकी कठिनाअी देखकर मैने अुनके सामने यह वात की। तव महात्माजीने मीरावहनके कामका समर्थन किया और मेरे लिअे वहुत कडवी भाषा वरती। अुससे मुझे आश्चर्य और दु ख भी हुआ। मैने भी अिसके विरुद्ध दलील की। दूसरे दिन प्रात कालकी प्रार्थनासे पहले पूज्य महात्माजीने अुलाहनावाला अेक पत्र लिखकर मुझे दिया। (अुस दिन मौनवार रहा होगा) वह पत्र फाअिलमे से खो गया है। लेकिन "मैने तुझे अुदार समझा था। तू अैसी कृपण क्यो?" अैसी भाषामे कलकी मेरी दलीलके लिअे मुझे डाटा गया था। अिस वातका पता चलने पर थोडे दिन वाद मीरावहनने वह दरवाजा खुलवा दिया।

अिस वारके पत्रमे मैने अुन्हे अिस घटनाकी याद दिलाअी थी और लिखा था कि, "महात्मा भी अैसे वचन कैसे वोल सकते है? जिसके लिअे आप अपने मनमे अनुकूल विचार रखते है अुसके खिलाफ़ शिकायत सुननेकी आपकी तैयारी नही होती, अिसका यह अुदाहरण है!"]

२५-२-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

तू मुझसे हृदयको हिलानेवाले सूत्ररूप वचन मागती है। अगर मेरे पास तिजोरी होती तो अुसे खोलकर अुसमें से हर हफ्ते तुझे भेजता जाता। लेकिन मेरे पास अैसा कुछ नही है। जो वचन निकलते है वे अपने आप निकलते है। और अिस तरह निकलें वे ही वचन सच्चे, क्योंकि ये जीवित वचन कहे जायगे। दूसरे तो कृत्रिम होगे। अच्छे लगने पर भी अुनका असर स्थायी नही होता, अैसा मुझे लगता है। मुझसे कृत्रिम कुछ हो ही नही सकता। विलायतमें पढते समय मैंने दो वार अैसा प्रयत्न किया और दोनो वार असफल रहा। अुसके वाद अैसा प्रयत्न किया ही नही।

और जैसा मेरे वचनोंके वारेमें वैसा ही मेरे वारेमें जो अनुभव तू अुद्धृत करती है अुनके वारेमें भी समझना। मीरावहनके वारेमें हमारी वात हुअी थी, यह मुझे याद है। अुस समय मुझे जैसा सूझा वैसा अुत्तर मैंने दिया होगा। तेरे अूपर अिसकी अच्छी छाप नही पडी यह मैं समझ सकता हू। अितनी मेरी अहिंसामें कमी है। मैंने अुस समय कहा तो होगा वही जो मुझे लगा होगा, लेकिन अुसमें डक (कडवाहट) तूने देखा होगा। 'सत्य ब्रूयात् प्रिय ब्रूयात्' यह व्यावहारिक वचन नही, परन्तु सिद्धान्त है। 'प्रियम्' का अर्थ है अहिंसक। मैंने तुझे जो वात आवेशमें कही होगी वही अगर मैं नम्रतासे कहता, तो जो कडवा असर रह गया वह न रहता। अहिंसक सत्यके वारेमें अैसा हो सकता है कि वोलते समय वह कठोर लगे, परन्तु परिणाममें वह अमृतमय लगना ही चाहिये। यह अहिंसाकी अनिवार्य कसौटी है। यह जो मैं लिखता हू वह मुझसे सबध रखनेवाले कडवे अनुभवोंके आधार पर है। मीरावहनके वारेमें मैंने अुसके पक्षमें तो तुझसे वहुत जोर देकर कहा होगा। लेकिन अुसे मैंने जितना रुलाया है अुतना किसी और भाअी या वहनको नहीं रुलाया। और अिसमें कारण मेरी कठोरता, अधीरता और मोह थे मीरावहनका त्याग मैं अवर्णनीय मानता हू और अिसलिअे अुसे मैं पूर्ण देखना चाहता हू। अुसमें जरा भी कमी दिखाअी देती है तो मोहके

कारण मुझमे अधीरता आ जाती है, और अिस वजहसे मैं अुसे कुछ खीझ कर कहता हू। परिणाम अश्रुधाराके रूपमे आता है। अिन अनुभवोसे मै अपने अदर भरी हुअी हिंसाको पहचान सका और अिसलिअे अपने पिछले सस्मरणोको याद करके खुदको सुधारनेका प्रयत्न कर रहा हू। अिसलिअे तेरे पत्र मुझे अच्छे लगते है। अुत्तरमे तुझे कुछ दे सकगा या नही, यह मैं नही जानता। लेकिन मै स्वय तो ले ही रहा हू। अिस वातका — अपनी कठोरताका — विशेष भान मुझे विलायतमे हुआ। मेरी सेवाके लिअे मुख्यत तो मीरा ही थी। वहा भी अुसे रुलानेमे मैने कोअी कसर नही छोडी। लेकिन अुससे मै सीख गया। किसी भी मामलेमे अीश्वरने मेरी मूर्छाको लम्वे समय तक टिकने ही नही दिया। राजनीतिमे भी मैने जव जव भूल की तव तव अीश्वरने मुझे तुरन्त सुधारा है। तेरे पत्र अिस जागृतिमे सहायक ही है।

लेकिन अव तू मेरे पिछले पत्रको ज्यादा समझ सकेगी। अपूर्णमे से पूर्णकी आशा कैसे रखी जा सकती है? अधेने अधोका सघ अेकत्रित किया है। लेकिन अधा अपने अधेपनको जानता है। अुसका अिलाज भी जानता है। अिसलिअे अधोको साथ रखते हुअे भी वह विश्वास रखता है कि अुन्हे कुअेमे नही गिरायेगा, न स्वय गिरेगा। वह साथमे लकडी लेकर चलता है। लकडीके सहारेमे आगेका रास्ता वह मालूम करता जाता हे और कदम अुठाता है। अिससे कुल मिलाकर आज तक तो सव कुशल ही रहा है। लकडीके अुपयोगके वावजूद कभी जरा भी रास्ता भूला है तो तुरन्त अुसे मालूम हो गया है और वह वापस लौट आया है। साथियोको भी अुसने लौटाया हे। मेरा अधापन वना रहेगा तव तक तेरे जैसी प्रेमल स्वभाववालीको आलोचना करनेके कारण मिलते ही रहेगे। अधापन चला जायगा तव आलोचनाके कारण सर्वथा असभव हो जायेगे। अिस वीच हम सव अधे सत्यार्थी होनेके कारण हाथीको जैसा देखे वैसा अुसका वर्णन करे। हम सवके वर्णन भिन्न होगे, फिर भी अुतने अशमे विलकुल सच्चे ही होगे। और आखिरमे तो हम सवने हाथीका ही स्पर्श किया होगा। जव हमारी आख खुलेगी तव सव साथ साथ नाचेगे और पुकार अुठेगे 'हम कैसे अधे है! यह तो वही

हाथी है जिसके बारेमें हमने गीतामे पढा था। हमारी आख पहले खुली होती तो कितना अच्छा होता!' लेकिन देरसे खुले तो भी अुनको चिन्ता क्या है? अीश्वरके यहा समयका नाप ही नही है, या भिन्न प्रकारका नाप है। अिसलिअे ज्ञानमे अज्ञान लुप्त हो जायगा।

अब तो तू अिसमें से जो जो दोष तूने मुझमें देखे होगे अुन सबका अुत्तर पा लेगी न? अिसका यह अर्थ नही है कि अब तू अपनी समस्याये मेरे सामने रखे ही नही। तू रखती रहना और मैं अुत्तर देता रहूगा।

सुशीला और किसनको मेरे आशीर्वाद भेजना। और धुरन्धरको लिख सकती हो तो अुसे भी। जमनादासकी तबीयत कैसी थी? अुसकी शालाका क्या हुआ?

बापूके आशीर्वाद

६४

[आश्रममें सब नियमोका पालन मैं चुस्तीसे करती थी। अुसमें सूत्रयज्ञ विशेष था। अेक दिन ८–१० तार बाकी रहे होंगे कि काममे लग गअी और अुन्हे पूरा करना भूल गअी। जब अिसका भान हुआ तो मुझे बहुत दुःख हुआ और मैंने तीन दिनका अुपवास किया। यह महात्मा-जीको लिखकर मैंने बताया था।]

यरवडा मन्दिर,
७–३–'३२

चि० प्रेमा,

मैं मानता हू कि तू यज्ञ पूरा करना भूल गअी अिसमें रामने तेरा घमड ही अुतारा है। अिस भूलको जितनी बडी तू समझती है अुतनी बडी मैं नही समझता। तू बडी मानती है यह बिलकुल ठीक है। रामने घमड अुतारा अैसा अिसलिअे कहता हू कि भूलके पुतले हम अगर किसी काममे अेक भी भूल न करे, तो हमारे भीतर गर्वका (वह कितना ही सूक्ष्म हो) आ जाना सभव है। जैसा नारदजीके प्रति रामचद्र या

शिव (?) ने किया, वैसा रामने तेरे प्रति किया मालूम होता है। अिससे दो लाभ हैं गर्व अुतर गया और अब भूल नही होगी।

तेरे पत्रमे जो शब्दचित्र हैं अुन पर आज लिखनेकी कोअी बात नही रह जाती। तू कठोर है अैसा मैंने बिलकुल नही माना है। तेरी आलोचनाये मेरे लिअे तो कामकी ही हैं। सबमे गुण-दोष भरे हैं। तू अगर गुण कम देखती हो तो अधिक देखनेकी आदत डालना।

मेरे पत्रसे नारणदासको सोचमे बिलकुल नही पडना चाहिये था। नारणदास यज्ञ तो करता ही है। दूसरे शारीरिक कामके लिअे मैंने अुसके पास समय ही नहीं रहने दिया। अिसमे वह क्या करे? अिसमे भी मेरी रचना-शक्तिका अधूरापन है। आश्रम शुरू किया तभी सुव्यवस्था कर सका होता तो आज जो कुछ लोगोको केवल देखरेख वगैरामे ही लगे रहना पडता है वह न होता। जो चल पडा सो चल पडा। मै मानता हू कि अब भी परिवर्तन हो सकता है। लेकिन वह मुझे सूझता नही है और मेरे बजाय अैसी कोअी स्त्री या पुरुष अभी तक हमे मिला नही है, जो अैसे मामलोमे आश्रमके नियमोका अनुसरण करते हुअे अधिक विचार करके अुन पर अमल करा सके। न मिले तब तक जो कुछ चलता है अुसे सहन करे। — बहुत अपूर्ण है यह ध्यानमे रखे, क्योकि मै तो मानता ही हू कि आश्रममे सबके लिअे अपने हिस्से आया शारीरिक काम कर सकना और सुव्यवस्थाकी रक्षा होना शक्य है। यह विश्वास रखकर हम चलेंगे तो किसी दिन अिसकी कुंजी हाथ लग जायगी।

बापूके आशीर्वाद

६५

[मैंने लिखा था मै देखती हू कि आप बाहर हो या जेलमे, आप अूचे ही अुठते रहते है। पहलेकी अपेक्षा महान होते जाते है। अिससे मुझे आनन्द होता है। अैसा न होता या आप अूचे न अुठकर जैसे थे वैसे ही रहते, तो भी आपके प्रति मेरा Admiration (प्रेम) घट जाता। ता० २५–२–'३२ के पत्रको पढकर मेरे मनमे जो विचार आये वे अूपरके शब्दोमे मैंने प्रकट किये।

सकर-विवाह तथा विवाह-विच्छेदके बारेमें मैंने अुनकी राय पूछी थी। फिर सह-शिक्षणके बारेमे। आश्रमके विद्यालयमे निश्चित किया हुआ शिक्षण-क्रम लिख भेजा था।

अुस समय जापानने चीन पर हमला किया था। अिसलिअे मेरे मनमें असहाय (अुस समयके) चीनके लिअे अितनी हमदर्दी और जापानियोके प्रति अितना क्रोध था कि स्थान-दर्शन करनेके लिअे आश्रममे जब दो जापानी श्री नारणदास काकासे मिलने आये, तो मैंने प्रश्नोकी झडी लगाकर अुन्हे डाटते हुअे जोरदार शब्दोमे कहा "जापानकी हार और चीनकी विजय" होनी ही चाहिये। यह बात पूज्य महात्माजीको मैंने पत्रमे लिखी थी।]

यरवडा मन्दिर,
१३-३-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अभी मुझे बायें हाथसे ही लिखना पडेगा। अिसलिअे बहुत लम्बे पत्र नही लिखे जा सकते। बाया हाथ दायेंकी गतिसे नही चल सकता। महादेव[1] की मदद अब जरूर मिल सकती है, लेकिन जेलके लिअे यह नया प्रयोग होगा। देखता हू कि मैं कहा तक लिखा सकूगा। केवल प्रेमके पत्र लिखवानेमें सफलता मिलती है या नही यह देखना है। कामकी ही बाते तो लिखाअूगा।

तेरे पत्रोसे मैं जरा भी तग नही हुआ था।

हम सबको या तो नित्य बढना होगा या घटना होगा। स्थिर तो कुछ है ही नही।

मैं अपने अूपर दोष ले लेता हू, अिसमें झूठी नम्रता या अतिशयोक्ति बिलकुल ही नही है। अिसका अर्थ यह नही है कि बाकी लोग दोषमुक्त हो जाते है। लेकिन जो मुख्य व्यक्ति है वह जैसे अच्छेका यश ले लेता है वैसे ही अुसे बुरेके अपयशका स्वामी भी बनना ही चाहिये।

सकर-विवाहकी आवश्यकताको अेक हद तक मैं स्वीकार करता हू।

---

१ स्व० श्री महादेव हरिभाअी देसाअी (१८९२-१९४२)। पूज्य बापूजीके मत्री। अुस समय पूज्य महात्माजीके साथ ही यरवडा जेलमें थे।

अगर पुरुषको विवाह-विच्छेदका अधिकार हो तो स्त्रीको भी होना चाहिये। लेकिन सामान्यत मै अिस प्रथाका विरोधी हू। प्रेमकी गाठ अविभाज्य होनी चाहिये।

स्त्री-पुरुषकी शिक्षा अलग भी हो सकती है और साथ भी हो सकती है। यह विषय पर आधारित है। वकालत दोनो साथ सीख सकते है। अिस वारेमे सारे देशके लिअे या सव परिस्थितियोके लिअे मै अेक नियम नही वता सकता। यह विषय सरल नही है। कही भी कोअी निश्चित परिणाम नही वता सके है। सारा प्रश्न ही आज प्रयोगका विषय है।

सौदर्यकी स्तुति होनी ही चाहिये। लेकिन वह मूक ही अच्छी है। और 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा' का सिद्धान्त यहा भी सत्य है। आकाशका सौदर्य जिसे हर्षित न वनाये अुसे कुछ भी अच्छा नही लगेगा, अैसा कहा जा सकता है। लेकिन जो हर्षसे पागल होकर नक्षत्र-मडल तक पहुचनेकी सीढी तैयार करने लगे वे मोहमे पडे हुअे हैं।

शिक्षण-क्रम अच्छा लगा। अुसमे कोअी परिवर्तन या सवर्धन मुझे अभी नही सूझ रहा है।

जापान-चीनके मामलेमे हमारी सहानुभूति चीनकी तरफ होगी ही। लेकिन सच्ची स्थिति तो किसी वालकके पत्रमे मैने वताअी है वही लगती है।

जमनादासके वारेमे तूने लिखा वही ठीक है। वह मन ही मन घुटता रहता है। अुसका दर्द ताड सके तव काम चले।

वापूके आशीर्वाद

६६

[श्री नारणदास काकाने दाडी-कूचमे शरीक हुअे सैनिकोमे से तीनकी माग (आश्रमके काममे सहायता देनेके लिअे) पूज्य महात्माजीसे की थी। अुसे अुन्होने मजूर कर लिया। अुन तीनमे से अेक श्री पडित खरे थे। वहुत समयसे पूज्य महात्माजी मुझ पर जोर डालकर कहते थे कि मुझे पडितजीसे स्वरज्ञान प्राप्त करना चाहिये। अिसलिअे रोज आधे घटेका समय निकालकर मैं सगीत सीखने लगी। दो महीने वाद गलेकी गिल्टियोका ऑपरेशन हुआ और सगीतका वर्ग हमेशाके लिअे वद हो गया।

आश्रममें आनेसे पहले ववअीमें ही मेरी गलेकी गिल्टिया वढ गयी थी। अुसका असर मेरी आवाज पर हुआ। अुन्हे कटवा डालनेके लिअे पूज्य महात्माजी आग्रहपूर्वक कहते थे। लेकिन मुझे कुछ स्नेहियोकी सलाह मिली थी कि गिल्टिया कटवानेसे ज्यादा नुकसान होता है, दवा और परहेजसे गिल्टिया वैठ जायगी। अिसलिअे वही अुपाय मैं आजमा रही थी।

मेरी सहेली सुशीला पूज्य महात्माजीके सपर्कमे आवे अैसा मेरा प्रयत्न था। पूज्य महात्माजीसे मिलने मैं जव जव यरवडा गअी तव तव सुशीलाको भी साथ ले गअी थी। अुसे भी मुलाकातकी अिजाजत जेल-अधिकारियोकी ओरसे मिले (वह आश्रमवासी नही थी अिसलिअे), अैसी सूचना करनेकी पूज्य महात्माजीसे मैंने विनती की थी।

दाडी-कूचसे पहले आश्रममें चेचकसे वच्चे वीमार पडते थे। पूज्य महात्माजीको टीके लगवाना पसन्द नही था, अिसलिअे आश्रममें किसी भी माता-पिताने अपने वच्चोको टीके नही लगवाये थे। वीमारी शुरू हुअी तव पूज्य महात्माजीने अुपचारके वारेमें मार्गदर्शन किया। अिससे वहुतसे वच्चे वच गये, लेकिन तीन वच्चे अेकके वाद अेक फट फट गुजर गये। रातको हृदय-कुजके आगनमें मैं और पूज्य महात्माजी खाट डालकर सोते थे। अिसलिअे हर रोज पूज्य महात्माजी रातको वारह वजे अुठकर लालटेन जलाते और लिखने वैठते, यह मैं देखती थी। पहली वार मैं जागी और पूछा तव अुन्होने मुझसे कहा, "मुझे लिखना है अिसलिअे मैं जगा हू। तू सो जा।" दूसरी वार भी अैसा ही हुआ। लेकिन शका होने पर भी मैं सो गअी। लेकिन तीसरी वार जव मेघजीका अवसान दोपहरको हुआ और पूज्य महात्माजी अुस रातको भी अुठकर लिखने वैठे, तो मुझसे रहा नही गया। मैं अुठकर अुनके पास गअी और वोली, "यह क्या है महात्माजी? जिस दिन किसी वालककी मृत्यु होती है, अुस रात आप सोते नही और लिखने क्यो वैठते हैं?"

"मैं क्या करू?" वे वोले, "मुझे नींद नही आती। मुग्ध सुकुमार कलियोकी तरह ये वालक कुम्हला जाते है। अिनकी मृत्युके लिअे मैं जिम्मेदार हू, अैसा मुझे लगता है। वालकोके चेचकका टीका न लगवानेकी सलाह मैंने अुनके माता-पिताको दी, जिसे अुन्होने माना। परन्तु वालक

तो चल बसे। मुझे लगा करता है कि यह कहीं मेरे अज्ञान और हठका तो परिणाम नहीं हो। अिससे हृदयमें गहरी वेदना होती है।"

"वाह वाह, ये शब्द महात्माके ही मुहसे निकलते है?" मैंने जरा कटाक्षमें कहा। "आप यथासभव सारे योग्य अुपाय कर चुके है। डॉक्टरोने भी अुनके बारेमें प्रमाणपत्र दिया है। परन्तु मृत्यु किसी तरह टलती ही नही, तो अुसका कोअी क्या करे? अिसके सिवा आपके जैसे महात्माको यह 'माया' कहासे लग गअी? आपका मन अितना नीचे कैसे गिरा?"

"तेरा कहना ठीक है" महात्माजी बोले, "मेरी कमजोरी तो अिसमें है ही।" और नीचा सिर करके वे लिखने लगे। लेकिन अेकाध मिनटमें फिर सिर अूचा करके कहने लगे, "मनुष्य भले ही अनासक्त और जाग्रत हो, फिर भी अुसमें कोमलता नही होनी चाहिये अैसा थोडे ही है?"]

य० म०
२१–३–'३२

चि० प्रेमा,

बाये हाथसे लिखनेका आग्रह रखता हू, अिसलिअे लिखनेका काम अपने आप कम हो जाता है। क्योंकि अभी लिखनेकी आदत गअी नही है। विलायतसे जो पत्र वगैरा लाया हू अुनका हमें अुपयोग करना है। अुनसे बुद्धिभ्रम होना सभव हो तो सभाल कर रख देना। बादमें काम आयेंगे। लॉकेटवाली चीजका किस्सा मैं भूल गया हू। जिनकी अैतिहासिक कीमत नहीं थी, अैसी चीजे साथ नही आअी। अिसलिअे अभी तो सब चीजे बहुत यत्नसे सभाल कर रख देना। जिसका अुपयोग करने जैसा लगे अुसका करना।

यज्ञके बारेमें अभिमान=आग्रह आवश्यक है, मैं कैसी हू, मेरा यज्ञ टूट ही नहीं सकता, यह अभिमान=गर्व त्याज्य है।

अगर मैं अैसा दावा करू कि माया मुझे बाध ही नहीं सकती, तब तो मेघजीके बारेमें जवाब देनेकी जरूरत होगी न? मायाके पाशमें से छूटनेका प्रयत्न करते हुअे भी हम कोमलता और सेवाभाव न छोडें। कोअी मर जायगा तो क्या होगा, यह विचार मूर्खताका है, मायाका

नही। मरना सबको है, यह अेक बार जान लेनेके बाद अुसका विचार क्या करना? और फिर हम तो नटवरके हाथमे स्वेच्छासे कठपुतली बने है, फिर यह झझट किसलिअे? अुसे नचाना होगा वैसे नचायेगा। मूल बात तो नाचनेकी ही है न? जिसे सदा ही नाचनेको मिले, अुसे दूसरा क्या चाहिये?

तेरा सगीत आगे बढ रहा है यह बहुत अच्छा है। गिल्टिया कटवाना जरूरी हो तो कटवा डालना।

आश्रमसे बाहरवालोके बारेमें अभी फैसला नही हुआ है।[1] सुशीलाका नाम शामिल किया है।

अपने दोषोकी चर्चा करवाकर तू प्रशसा करवाना चाहती है क्या? मुझे तेरे दोष बताने ही नही है। कअी बार मै बता नही चुका हू? अुनमें कितना सुधार किया यह बता। फिर अिस प्रश्नका अधिक विचार करेगे।

अीश्वरके भक्तो वगैरामे अेक हद तक ही समता होती है। पूर्ण समता जिसमे प्रकट हो वह परमेश्वर है। लेकिन परमेश्वर तो अेक ही है। अिसलिअे पूर्णतम मनुष्यमें भी अधूरी समता ही होती है। अिसीलिअे मतोकी भिन्नता और विरोध होते है। अिसमें दुःख माननेकी जरूरत नही है। जगत = विषमताओका परिणाम। हमारा धर्म समताकी मात्राको प्रतिदिन बढाते रहना है। अैसा करते करते विषमता बुरी लगनेके बजाय सह्य और कुछ अशमें सुन्दर भी लगेगी।

हिन्दुस्तानमें सब कुछ अन्य देशोकी अपेक्षा अच्छा ही है, अैसा मान लेनेका कोअी कारण नही है। फिर अुत्थान-पतन तो विश्वका नियम है। कुल मिलाकर हिन्दुस्तानमे बहुत कुछ अच्छा है। अिसीलिअे हिन्दुस्तान विजित देश हुआ, विजेता नही। अिसके गर्भमें यह मान्यता है कि गुलामकी अपेक्षा अत्याचारीकी स्थिति ज्यादा बुरी है।

हमारे यहा खगोलकी और अप्टन सिकलेर[2] की कौनसी पुस्तके है?

बापूके आशीर्वाद

---

१ मुलाकातके बारेमे।

२ अमरीकी अुपन्यासकार।

६७

[पूज्य महात्माजीके बाये हाथसे लिखे हुअे पत्र आने लगे। अिसलिअे मुझे लगा कि मुझे लम्बे लम्बे पत्र लिखनेसे अुनका दाहिना हाथ थक गया होगा।]

यo मo
२८-३-'३२

चिo प्रेमा,

तू चाहे जो सवाल पूछना। अैसा मौका शायद फिर कभी न आये। तू नही जानती कि मै अेक लकीरमे ही जवाब दे सकता हू और पन्ने भी भर सकता हू। ज्यादा नही लिख सकूगा तो थोडेमे ही पूरा कर दूगा। फिर भी अुत्तर अधूरे नही होगे।

मेरे दाहिने हाथ पर तेरी जीभका असर हुआ यह तो अैसा माननेके बराबर हुआ कि कौआ डाली पर बैठा और डाली टूटी अिसलिअे कौअेके भारसे डाली टूटी।

मुझे स्वप्न आते जरूर है, लेकिन शायद ही कभी अुन पर मेरा ध्यान जाता है। जो स्वप्न आते है अुन्हे मै कोअी महत्त्व नही देता।

हमारे पुस्तकालयमे कारलाअिल[1] और रस्किनकी पुस्तकोका पूरा सेट होना चाहिये। अगर हो तो अुसकी सूची भेजना।

हमारे पास सब पुस्तकोकी सूचिया कितनी है? अगर अेकसे ज्यादा हो तो अेक मुझे भेज देना।

बडी बहनोके बारेमे मैने तुझे कभी लिखा नही। अिस बार जीमे आया कि लिखू। बहने किसी भी सामाजिक हेतुसे आपसमे मिलती मालूम नही होती। अिसका अर्थ यह है कि सघ टूट गया है। अिस बारेमें लक्ष्मीबहन और दुर्गाको मैंने लिखा तो है। लेकिन मेरा कुछ असर होता दीखता नही है। साथ मिलकर काम करनेकी जिम्मेदारी लेनेकी शक्ति बहनोमे आनी चाहिये। तुझमे हिम्मत और आत्म-विश्वास हो, तो अिस

१ टॉमस कारलाअिल (१७९५-१८८१)। अग्रेजी भाषाके प्रसिद्ध लेखक।

कामको तू हाथमे लेना। अगर हाथमें ले तो हार कभी माननी ही नही है, अिस निश्चयके साथ ही हाथमें लेना। हमारे पास सारी अनुकूलतायें हो तो ही हम काम करे, यह करना नही कहलायेगा। वढअी चाहे जैसी लकडीके टुकडेमे से आकार गढ लेता है, शिल्पी चाहे जिस पत्थरमे से मूर्ति गढ लेता है, वैसे ही चाहे जैसे मनुष्योके साथ रहना और अुनसे काम लेना हमे आ जाय, तभी हमारी मनुष्यताकी कीमत मानी जायगी। मुझे तो लगता है कि हमे यही अिस दुनियामे सीखना है, और अिसके लिअे हमारे भीतर सागरकी अुदारता होनी चाहिये। किसीसे मिलते ही अुसके दोप देखकर हम डरने लगे, तव तो काम विगडेगा ही। दोप तो है ही — हमारे भीतर भी है और सामनेवालेमें भी है। अिसके वावजूद भी मिलना है अैसा निश्चय हो तो ही काम वनता है। मैं जानता हू कि यह काम वहुत कठिन है। मेरा तो वर्षोंसे यह धन्धा ही रहा है। लेकिन मैं सफल हुआ हू अैसा नही कह सकता। थोडीसी सफलता मिली मालूम होती है, अिसलिअे दूसरोको रास्ता दिखानेकी हिम्मत या धृष्टता मैं करता हू।

अव तुझे जो ठीक लगे वही करना। यह पत्र वहनोके सामने रखना हो तो तू रख सकती है।

वापूके आशीर्वाद

६८

य० म०
३–४–'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

अिन्दु सुन्दर प्रश्न पूछ रहा है। तलवार, कटार वगैराके प्रयोग हम आश्रममें कैसे करे? अिस वारेमें नारणदासके पत्रमें लिखा है। अिसलिअे यहा अिस सवंधमे नहीं लिख रहा हू। तू स्वय यह सीख रही है, अिसलिअे तेरे सामने यह सवाल खडा हुआ या नही, यह जाननेके लिअे ही यहा लिखा है।

तू आश्रमको जो प्रमाणपत्र देती है वह मैं नही दूगा। सच्चा हो तो यह प्रमाणपत्र मुझे अच्छा जरूर लगेगा। जिस बातको वह हाथमे लेता है अुसके पीछे पागल हो जाता है, अैसी छाप तुझ पर पडी होगी। वह ठीक नही है। आश्रमके व्रतो तक भी हम कहा पहुच सके है? आश्रममे हम हिन्दी, अुर्दू, तामिल, तेलगू और सस्कृत सीखनेवाले थे। अिस दिशामे बडा ही शिथिल प्रयत्न हुआ है। चमडेकी कलामे हम कहा कुशल बने है? बारीकसे बारीक सूत हम कहा कातते है? अैसी तो दूसरी बहुतसी बाते बता सकता हू। मेरी शकाके समर्थनके लिअे अितना काफी है। लाठी वगैराके पीछे सब पड सकते है — यह तो मिठाअीके पीछे सब पडते है, अैसा कहनेके बराबर हुआ। ससारमे अैसी चीजे जरूर है, जिनके पीछे पडनेमे कोअी परिश्रम नही होता। हम पशु-परिवारके भी है, अिसलिअे यह गुण हममें स्वाभाविक है। अुसे पैदा नही करना पडता। अुसे बढाना अुचित है या नही यह प्रश्न है। पशुजातिके सभी गुण त्याज्य हो, अैसी बात तो नही है।

अभी रसोडेमें कितने लोग खाते है? डबल रोटी अभी भी बनती है क्या? बनती हो तो कौन बनाता है? अच्छी बनती हो तो कोअी आये अुसके साथ अेक या दो भेजना।

लक्ष्मीसे कोअी मिले तो अुससे कहे कि अुसके अेक भी पत्रका अुत्तर न दिया हो अैसा मैं नही जानता। अिसलिअे वह मुझे पत्र लिखे।

दीक्षितके[1] ज्योतिषशास्त्रका गुजराती अनुवाद हुआ है। वह मेरे पास है। बॉलकी पुस्तक यहा मिल जायगी, अिसलिअे नही मगा रहा हू। अप्टन सिंकलेरकी भेजी हुअी पुस्तके आश्रमकी ही है। अुन्हे दर्ज कर लेना और अुनमे से 'बोस्टन' और 'ब्रास टैक्स' भेजना। बाकी पुस्तकोकी सूची भेजना।

अुपनिषद् मुझे अच्छे लगते है। अुनका अर्थ लिखने जितनी योग्यता मैं अपनेमें नही मानता हू।

मेरी विनोदी प्रकृतिको तुझे पहचानना चाहिये। प्रशसा करानेके लिअे तू दोषोके विषयमे पूछती है, अैसा विनोदमें ही पूछा जा सकता है।

---

१ खगोल-विद्या पर मराठी पुस्तकोके लेखक।

अिसमें अितना तो सत्य है ही कि अगर प्रेमीजनसे हम अपने दोष निकलवायें, तो अुसका परिणाम प्रशसा सुननेमें आता है। क्योंकि प्रेम दोष पर परदा डालता है, या दोषको गुणके रूपमें देखता है। प्रसगानुसार दोष बताना प्रेमका स्वभाव है और वह भी सपूर्णता देखनेके लिअे ही। तुझे धुरन्धरके सामने 'हिस्टेरिकल' कहा था, अुसमें भी तेरी प्रशसा थी यह क्या किसनने कहा? क्योंकि वह प्रसग अैसा था कि अगर तुझे 'हिस्टेरिकल' न मानता तो तू ज्यादा दोषी ठहरती। तू 'हिस्टेरिकल' तो है ही। तू पागल जैसी हो जाती है, अिसका क्या अर्थ है? जो भावनाओंसे अभिभूत हो जाता है वह 'हिस्टेरिकल' है। यह समझमें आता है न?

मुझ पर हमेशा ही यह छाप पडी है कि जापानकी नीति शोचनीय है। रूसके विरुद्ध अुसकी जीत जरूर होनी चाहिये थी, लेकिन अुससे यह साबित नही होता कि जापानकी नीति अनुकरणीय है। लेकिन अभी तो हम अपनी नीतिको सभाले तो भी काफी होगा। जापानको सभालने-वाला तो करोडो आखोवाला सदा जागता सत्पुरुष बैठा है।

बापूके आशीर्वाद

६९

[छात्रालयके चौकमें मैं हमेशा आकाशके नीचे खाट बिछाकर सोती थी। अेक रात जबरदस्त आधी आअी। चारो ओर वातावरणमें धूल भर गअी। अूपरसे खपरैल गिरने लगे। लडकिया चिल्लाअी, "प्रेमाबहन! हट जाओ। खपरैल गिरेगा।" लेकिन मैं नही अुठी। तीसरी मजिलसे अेक बडा खपरैल मेरी तरफ नीचेको तेजीसे गिरता मैंने देखा। छाती पर आ पडता तो मेरा राम बोल जाता, यह जानते हुअे भी मैं नही अुठी। खपरैल मेरे पास ही बिस्तर पर आ पडा और अुसके टुकडे टुकडे हो गये। फिर तो मैं अुठकर अदर भागी। यह घटना मैंने पत्रमें लिख भेजी थी।]

य० म०
८-४-'३२

चि० प्रेमा,

धुरन्धर यहा है तो बहुत करके कभी मिलेंगे ही। तू [अेक] पत्थरसे बहुतसे पक्षी मारनेका लोभ रखे, अिसके बजाय अेक चोटसे बहुतसे बेर गिरानेका लोभ क्यो न रखे? पक्षी मारनेका लोभ तेरे लिअे तो त्याज्य होना चाहिये।

खपरैलकी चोटसे अच्छी बची। अिसका यही अर्थ लगाये कि तेरे हाथसे अभी वहुत बडी सेवा होनी बाकी है।

बहनोके बारेमे मुसीबतमे पडनेका कोअी कारण नही है। बहनें तुझसे यह सेवा लेना चाहे और तुझे आत्म-विश्वास हो तो करना, वरना यह बात अुठी ही नही अैसा समझकर भूल जाना। तुझे आत्म-विश्वास सिखानेके लिअे नही, लेकिन तेरी नम्रताके लिअे, गलतफहमी न होने देनेके लिअे, कठिन प्रसग सामने आने पर अुनसे निबट सकनेके लिअे (मैने लिखा है)। बहुत बार हम मानभग, गलतफहमी वगैराके डरसे जिम्मेदारी लेनेमे हिचकिचाते है। अिस सकोचको तू पार कर सके तो जिम्मेदारी लेना। यह तो तू मानती ही है कि सब बहनें बहुत भली है। अुनके विचार लिख सके, दफ्तर सभाल सके अैसे व्यक्तिकी मददकी अुन्हे जरूरत है। अपढ मामे पढी-लिखी लडकीसे ज्यादा समझ और व्यवहार-बुद्धि हो सकती है। लेकिन अिस बुद्धिका अुपयोग वह निरक्षरताके कारण नही कर सकती। अिस कमीकी पूर्ति लडकीके द्वारा वह कर सकती है। यह कमी तू पूरी करे अैसी मेरी अिच्छा है। गगाबहन थी तब मडल बहुत काम करता था, अैसा मै नही मानता। लेकिन किसी न किसी बहानेसे गगाबहन सब बहनोको अिकट्ठी कर लेती थी। अुन्हे अैसा लोभ था और अुन्होने अिसका बीज बोया था। यहा भी वे वैसा ही कर रही है। अुस बीजका वृक्ष देखनेकी मै आशा रखता हू। सामाजिक काम तो बहनें करती ही है, लेकिन वह व्यक्तिगत रूपमे करती है। मेरी अिच्छा है कि किसी सामाजिक सेवाके लिअे बहनें सामूहिक रूपमे जिम्मेदारी ले। अैसा करनेसे सघशक्ति पैदा होती है। अैसी शक्ति

पैदा हो तब व्यक्ति भले आते और जाते रहे, परन्तु सघ चलता ही रहता है। यह शक्ति अीश्वरने केवल मनुष्यको ही दी है। अिस देशमें स्त्रियोने यह शक्ति विकसित नही की। अिसमे दोष पुरुषोका है। अभी हमे अिस विवादमे नही पडना है। अगर हम यह मानें कि यह शक्ति स्त्रियोमें वढनी ही चाहिये तो अुसे वढानेके लिअे हमे प्रयत्न करना चाहिये। फिर चाहे आरभ अिस सघको मेरा पत्र मिलने जितना और अुसका अुत्तर देने जितना ही हो। धीरे धीरे (भले बहुत धीरे हो) अुसमे वृद्धि की जाय। मेरी वात तू अच्छी तरह समझ गअी हो, वह तेरे गले अुतरी हो, दूसरी वहनोको भी यह ठीक लगती हो, अिसमे रस लेनेके लिअे वे तैयार हो, तो ही यह चीज हाथमें ली जाय। लेकिन अिसमे कठिनाअिया दिखाअी दे या कोअी महत्त्व न दिखाअी दे, तो अिसे छोड दिया जाय।

मुझे पुस्तकोकी सूची मत भेजना। अप्टन सिंकलेरकी पुस्तके मैंने मगाअी हैं। अुनके सिवा दूसरी कोअी पुस्तके नही मगानी है।

अेक धर्मसे दूसरे धर्ममे लोगोको लेनेकी प्रथा मुझे तो विलकुल पसन्द नही है। दो अलग धर्मोके स्त्री-पुरुषोमे विवाह होना असम्भव या अयोग्य ही [है, अैसा] मैं नही मानता।

हिन्दू धर्मके मूल होते हुअे भी भिन्न तत्त्व मुझे गोरक्षा और वर्णाश्रम लगते हैं। किसी भी राष्ट्रको अुन्नतिके रास्ते पर जाना हो तो अुसे सत्य और अहिंसाका आश्रय लेना चाहिये।

मुझे लगता है कि तेरे सव प्रश्नोके अुत्तर अिसमें पूरे आ जाते हैं।

वापूके आशीर्वाद

विद्यापीठकी तरफसे प्रकाशित गुजराती शब्दकोशके द्वितीय सस्करणकी मेरी प्रति वहा होनी चाहिये। वह भेज देना।

७०

यरवडा मन्दिर,
१८-४-'३२

चि० प्रेमा,

तू सचमुच लिखनेकी मन स्थितिमें नही थी। पत्र तो लगभग हमेशा जितना ही लवा है, लेकिन वेसिर-पैरका है। जव खानेकी जरूरत न हो तव खाना नही चाहिये, घूमनेकी जरूरत न हो तव घूमना नहीं चाहिये, वैसे ही लिखनेकी जरूरत न हो तव लिखना नही चाहिये। अथवा थक गअी हू अिसलिअे नही लिखती, अितना लिखकर खतम कर देना चाहिये।

दिनका अत होने पर आनन्दके वदले मनमे चिढ होती है, यह अच्छा लक्षण नही है। यह अनासक्ति तो नही ही है। मेरी सलाह है, मेरा आग्रह है कि तू अपनी जजाल कम कर। अिससे तुझे या आश्रमको कोअी नुकसान नही होनेवाला है। प्रफुल्ल चित्तसे किया हुआ काम वढता है और फलदायी सिद्ध होता है।

हर हफ्ते यहाके साथियोसे मिलता हू। अुनमे धुरन्धरको वुलाया था। अुसकी तवीयत अच्छी है। वजन घटा है, क्योंकि क वर्गकी ही खुराक लेता है। अगर वीचमे अुससे कोअी मिला न हो तो तू मिल सकेगी।

लेजिमके सवधमे अुठनेवाले प्रश्नो पर तूने जो लिखा है वह विना विचारे लिखा है, अैसा मानता हू। 'आर्ट फॉर आर्ट्स सेक' का विचार मनुष्यको कहा ले जाता है, यह तू नही जानती। अिसके नाम पर पश्चिमके जवान लडके-लडकी विलकुल नरकमे अुतर रहे है। पत्र लिखते समय शायद कलाकी परिभाषा ही तेरे ध्यानमें नही थी। लेकिन तेरे पत्रमे सव कुछ विना ठिकानेका लिखा जायगा अैसा तूने ही मुझे चेताया है। अिसलिअे मै ज्यादा लम्वा नही लिखूगा।

तू अपने आपको हिस्टेरिकल न समझे यह सभव है। यह हो सकता है कि किसन भी यह न देख सके। फिर यह भी सभव है कि

हिस्टेरिकलका पूरा अर्थ भी तुम दोनो न समझी हो। असका अर्थ समझनेके लिअे तूने शब्दकोश कभी नही खोला होगा। अैसा नही है कि हमारे अेम अे, बी अे पास लोग अग्रेजी जानते ही हो। फिर अैसे खास शब्दोके अर्थ तो बहुत कम लोग ही जानते है। हिस्टेरिकलका तू सुन्दर नमूना है। यह दोष ही है, अैसा माननेकी जरूरत नही है। लेकिन आखिर तो हिस्टीरियाको मिटा डालनेकी आवश्यकता रहती ही है। लेकिन मै तुझे असके विवेचनमें नही अुतारूगा। तू हिस्टेरिकल नही है अैसा खुशीसे मानती रह। तू असे सच्चा ही सिद्ध करना चाहती है, असलिअे मै निश्चिन्त हू। 'नहि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गति तात गच्छति।'

तेरा वाक्य यह था कि आश्रममें जिस चीजके पीछे हम पडते है अुसे छोडते नही, यह आश्रमकी खूबी है। असे मै प्रमाणपत्र मानता हू। भले आज आश्रम असके योग्य नही है। लेकिन अन्तमें हम असके योग्य होगे, अैसा आग्रह तो रखेंगे ही। हम जो कर नही सके अुसका मुझे दुःख नही है। मुझे अुसका भान है, असलिअे मै जाग्रत हू। जो कुछ सोचा था अुसे सीखनेका समय नही है, यह तो स्पष्ट रूपसे मेरी कमी है। मेरी व्यवस्था-शक्ति कम है, शिक्षक-शक्ति कम है और समयके प्रमाणका भी ज्ञान मुझे कम है। अैसा होते हुअे भी अगर परिस्थितिवश मै ज्यादा समय तक बाहर नही रहा होता, तो अधिकतर क्रमको किसी तरह मैंने पूरा कर लिया होता। मेरा अैसा अनुभव है। लेकिन बीती हुअी बातोको असीलिअे याद करते है कि अब भी कुछ सुधारा जा सकता हो तो सुधार लें। जो मै नही कर सका अुसका तुम सब विचार करके और योजना बनाकर जितना कर सको करो। क्या क्या करना था, क्या क्या करना बाकी है, अुसमे से क्या क्या करना सभव है, असकी समय निकाल कर जाच करो। हो सके वह करो। अैसा लगे कि कुछ भी नही हो सकता तो फिर अपरिहार्यको भूल जाओ। अुसकी चिन्ता नही करनी चाहिये।

शून्यवत् होनेका अर्थ है 'मै करता हू' की वृत्तिको छोडना। असमें निराशावादके लिअे स्थान ही नही है।

महादेवने और मैंने अेक सप्ताहमें दुगना काम किया, अैसा कहा जायगा। सरदार[1]को अिस वार अभी कातनेकी धुन नही लगी है। अुपवास[2] तो हम तीनोंने किये।

वापूके आशीर्वाद

७१

य० म०
२२-४-'३२

चि० प्रेमा,

धुरन्धरके वारेमे मैं लिख चुका हू। अुसने अन्नत्याग नही किया है।

मुझे लगता है कि आनन्दी[3]को जवरदस्ती घूमने नही ले जाना चाहिये। अुसमे अुत्साह न हो तो वह घूम नही सकती। अुसे प्राणायाम सिखा दे और थोडी 'पैसिव अेक्सरसाअिज' कराये तो अभी काफी होगा। पै० अे० तू जानती है?

धर्म-परिवर्तनके वारेमे मैं यह नही कहना चाहता कि कभी परिवर्तन हो ही नही सकता। हमे दूसरेको अपना धर्म वदलनेके लिअे निमत्रण नही देना चाहिये। मेरा धर्म सच्चा है और दूसरे सव धर्म झूठे है, अिस तरहकी जो मान्यता अिन निमत्रणोंके पीछे रहती है अुसे मैं दोपपूर्ण मानता हू। लेकिन जहा वलात्कारसे या गलतफहमीसे किसीने अपना धर्म छोडा हो, वहा अुस मनुष्यको अपनी गलती सुधारनेमे यानी अपने असली धर्ममे जानेमे दिक्कत नही होनी चाहिये। अितना ही नही, अुसे प्रोत्साहन भी मिलना चाहिये। अिसे धर्म-परिवर्तन नही कहा जा सकता। मुझे अपना धर्म झूठा लगे तो मुझे अुसका त्याग करना चाहिये। दूसरे धर्ममे जो कुछ अच्छा लगे अुसे मैं अपने धर्ममे ले सकता हू — लेना चाहिये। मेरा धर्म अपूर्ण लगे तो अुसे पूर्ण वनाना मेरा फर्ज है। अुसमे दोप दिखाअी दे तो अुन्हे दूर करना भी फर्ज है।

---

१. सरदार वल्लभभाअी पटेल।

२ राष्ट्रीय सप्ताहमे ६ और १३ अप्रैलके दिन।

३ श्री लक्ष्मीदास आसरकी पुत्री।

मीराबहनको मै ओीसाओी मानता हू। अब तो वह भी अपनेको ओीसाओी मानती है। ओीसाओी होने पर भी गीताको वह आदरसे पढे अिसमे मुझे विरोध नही दीखता। हमारी प्रार्थना दूसरे धर्मके लोग भी आदरसे गाते है।

स्वराज्य मिलने पर क्या करूगा, यह मै सचमुच ही नही जानता। अुस समय भी ओीश्वर मुझे रास्ता दिखायेगा, जैसे आज दिखाता है। श्रद्धालु पहलेसे ही व्यवस्था नही करते। पहलेसे व्यवस्था करे वह श्रद्धा नही है, अथवा है तो कमजोर श्रद्धा है।

ज्ञान, अुपासना और कर्म ओीश्वर-प्राप्तिके तीन अलग मार्ग नही है, बल्कि ये तीनो मिलकर अेक मार्ग है। अुसके तीन भाग सुविधाके लिअे कर दिये गये है। पानी हाअिड्रोजन और ऑक्सीजनका बना है, लेकिन पानी न तो हाअिड्रोजन है और न ऑक्सीजन। वैसे ही न तो ज्ञान अकेला प्राप्तिमार्ग है और न अकेली भक्ति। लगभग अैसा कहा जा सकता है कि प्राप्तिमार्ग तीनोका मिला हुआ रासायनिक प्रयोग है। अिस अुपमामे दोष है, फिर भी मै जो कहना चाहता हू अुसे समझानेके लिअे यह काफी है।

द्रौपदीकी लाज रखी यह पानीकी शराब बनाने जैसा चमत्कार नही है।[1] सकटके समय ओीश्वर अपने भक्तोकी मदद करता है, यह विश्वास अुपयोगी है, अैसे अुदाहरण सग्रह करने योग्य है। लेकिन अगर कोओी अैसी सहायताकी शर्त लगाकर ओीश्वरकी भक्ति करे तो वह निरर्थक है।

जबरदस्ती लोगोके शरीर मजबूत बनानेकी पद्धति मुझे पसन्द नही है। अिसमे जबरदस्तीकी जरूरत ही नही होती। शरीरको दुर्बल रखना किसीको कभी अच्छा नही लगता। यह शिक्षाका विषय है।

जरूरतें कम करनेका आदर्श लोगोके सामने रखा जा सकता है। फिर अुसके परिणामस्वरूप जो होना होगा वह होगा। अिसमें समझौता कहा आता है? समझौता करने न करनेकी जरूरत रहती ही नही है।

---

१ बाअिबलमें अेक प्रसग अैसा दिया गया है कि किसी भोजके समय लोगोको पिलानेके लिअे शराब नही थी, अुस समय प्रभु ओीसा मसीहने पानीकी शराब बना दी थी।

जो गरीव भूखो मरते है अुनकी जरूरतें वढनी ही चाहिये। लेकिन यह कोअी नअी वात नही है। आज भी यह कोशिश चल रही है।

वापूके आशीर्वाद

७२

[मेरे जिस पत्रका यह अुत्तर है अुसमे अुन दिनो मुझे अेक प्रकारकी जो मानसिक थकावट लगती थी अुसका वर्णन मैंने किया था। देशकी परिस्थितिके वारेमे मुझे अन्दर ही अन्दर असन्तोष हो रहा था। जो तेज और अुत्साह सन् १९३० के आन्दोलनमे दिखाअी दिया था, वह अिस समय लुप्त हो गया था। सरकार अुग्रतासे अपनी दमन-नीति चला रही थी। मै स्वय हाथ-पैर वाधकर आश्रममे वैठी थी। वहा भी मुझे असन्तोष था। पूज्य महात्माजीका वियोग भी खटकता था।]

य० म०
१-५-'३२

चि० प्रेमा,

अगर तुझ पर कामका वोझा ज्यादा पडता हो तो वह कम नही हो सकता, यह वात मेरे गले नही अुतर सकती। अिस विचारमे मोह और दुर्वलता है। तेरी चिढका कारण तू ही है, कामका वोझ नही है, अिसे मै मान सकता हू। यही हो तो तू धीरे धीरे अनुभवसे समझ जायगी, क्योकि तू ज्यादा दिन तक अपने आपको धोखा नही दे सकती। अिस वारेमे मै तुझे सताना नही चाहता। अपनी नाजुक प्रकृतिको सख्त वनाना।

हमारी पुस्तकोमे कुछ अुर्दूकी पुस्तकें है। अुनमें से कुछ सभवत अिमाम साहव[1] के यहा होगी। वहा भी देखना। तू न पहचान सके तो परसराम जरूर पहचानेगा। अुनमें 'सीरत अुन्नवी' हो तो भेज देना। वह

१ अिमाम अब्दुल कादिर वावजीर। दक्षिण अफ्रीकासे पूज्य वापूजीके साथी वने थे। वापूजीने अुन्हे अपना सहोदर कहा है। सत्याग्रह आश्रमके अुपाध्यक्ष थे।

मौलाना शिवलीकी लिखी हुअी है। अेक और पुस्तक डॉ० मुहम्मदअलीका लिखा हुआ नवीका जीवन है। वह भी भेजना। 'सीरत' के दो भाग है।

वहा चारो तरफ मजदूर है, यही सच्चा जीवन है। आश्रमकी यही कल्पना है। हा, मजदूर सत्यार्थी होने चाहिये। तू सत्यार्थी नही है? दूसरे भाअी-वहन सत्यार्थी नही है? मै मानता हू कि सभी यथाशक्ति सत्यार्थी है।

तू पूछती है कि 'मै कव आअूगा।' अगर अपनी आखोको काममें ले, तो तू मुझे देखे विना न रहे। मेरी आत्मा तो वही वसती है। शरीर भले ही यहा रहे या राखमे मिल जाय। यह भी विलकुल संभव है कि शरीर वहा हो तव भी मै वहा न होअू। अिस सत्यको तू देख और अुस मायाको भूल जा।

असन्तोप तो होना ही चाहिये। लेकिन वह असन्तोप अपने वारेमें होना चाहिये। अव तो मै पूर्ण हो गया, जिस दिन मै अैसा मान वैठू अुसी दिनसे मेरा पतन हुआ समझना चाहिये। अिसलिअे मुझे अपने वारेमे असन्तोप जरूर होना चाहिये। अिस असन्तोपका यह अर्थ कभी नही कि मुझे अपने कर्तव्योमे परिवर्तनकी अिच्छा करते रहना चाहिये।

लेकिन यह सव दलीलोसे नही समझाया जा सकता। समय अपना काम करेगा ही। आज जहा घोर अन्धकार लगता है वहा कल अुजाला भी दिखाअी देगा। मुझे तो अैसी स्थितिको पहुचानेवाला भजन 'प्रेमल ज्योति'[१] ही दीखता है। गुजरातीमें भी अुसका ठीक अर्थ अुतरा है। अग्रेजी[२] भजन तो अलौकिक है ही।

अैसा सुना है कि धुरन्धर ठीक है। तेरा वजन कितना है? दूध-दही कुल मिलाकर कितना लेती है?

हमारे पुस्तकालयमें कुल मिलाकर कितनी पुस्तकें होगी?

वापू

---

१ 'आश्रम-भजनावलि' (१९५६) का गुजराती भजन १३७। श्री नरसिंहरावभाअी द्वारा किया हुआ भावानुवाद।

२ 'Lead, Kindly Light'—आश्रम-भजनावलि (१९५६), भजन १८०।

य० म०
७-५-'३२

चि० प्रेमा,

आध्यात्मिक लेखा-जोखा निकालनेकी आदत पड जाय तो झूठा सकोच दूर हो जाता है और हम जैसे होते हैं अुसी रूपमें दुनियाके सामने दिखाअी देने लगते हैं। स्पष्ट है कि यह वात सच्चे मनुष्यो पर ही लागू होती है। झूठे मनुष्य अपना लेखा-जोखा वहुत अर्से तक निकाल ही नही सकते। अुनके लिअे यह असभव है।

नारणदासके वारेमे तूने जो लिखा है वह सव मैं मानता हू। अुसे शक्तिसे ज्यादा काम हाथमे लेना ही नही चाहिये। किसीको भी नही लेना चाहिये। लेकिन सामान्यत मनुष्य अपनेको धोखा देता है। वह अपने प्रति वहुत अुदार रहता है और अपने किये हुअे थोडेसे कामको भी शक्तिसे वाहरका मान वैठता है। अिसलिअे सामान्यत कोअी ज्यादा काम करता है तो अुसे रोकनेकी अिच्छा नही होती। लेकिन नारणदासका पन्थ न्यारा ही है। वह हमेशा वहुत काम ले लेता है। लेकिन समय पर काम करनेकी आदत होनेके कारण शायद अनजान आदमी अुसका काम न देख सके। अैसा है अिसीलिअे नारणदास नया वोझ न अुठाये यही ठीक है। मैंने अुसे लिखा है। तू ध्यान रखना।

आध्यात्मिक लेखा-जोखा निकालनेके वारेमे मैंने जो लिखा है, अुससे कोअी जडवत् नही वनेंगे। अगर आश्रममे रहकर अेक भी आदमी जडवत् वने, तो मैं हमारी कार्य-पद्धतिमे दोष मानूगा। यह मैं जानता हू कि हमारी कार्य-पद्धति पूर्ण नही है। लेकिन आश्रममे रहनेवाला कोअी जड नही वना है और कितने ही जड जैसे आदमी चेतन वने हैं। अिससे मैं अनुमान लगाता हू कि हमारी कार्य-पद्धति ज्यादा नही तो कमसे कम ५१ प्रतिशत तो कुशल होनी ही चाहिये। आश्रममे विविध प्रवृत्तियोके सचालक विशारद नही हैं। अिसमे किसीका दोप नही हे। लेकिन या तो आश्रमने नअी प्रवृत्ति हाथमे ली है या पुरानीको नअी दृष्टिसे चलानेका अुसने सकल्प किया है। अिसलिअे विशारदोको आश्रममे तैयार करनेकी जिम्मे-

दारी हम पर आअी है, जिससे समयका, द्रव्यका कुछ अनुचित लगनेवाला व्यय हुआ है। और अैसा करनेके वावजूद आश्रम वहुत वार शोभित नही हो सका। लेकिन आश्रम शोभाके लिअे नही, सेवाके लिअे है। सेवा करते हुअे अुसकी शोभा वढे तो अच्छा लगे। लेकिन निन्दा हो तो भी अुसे सेवा तो करनी ही चाहिये। अिसका सार यह निकला कि जैसे जैसे हम कुशल होते जायगे वैसे वैसे हमारे कार्यका मापदण्ड वढता जायगा और फिर भी अुसका भार हमे कम लगेगा। अिसका ताजा अुदाहरण यह है। वाये हाथसे चक्र घुमानेके पहले दिन मेरे सिर्फ १३ तार निकले। समय ज्यादा लगा। थकान ज्यादा मालूम हुअी। धीरे धीरे कुशलता वढी। अिसलिअे थोडे समयमे दो सौसे भी ज्यादा तार निकलने लगे और थकान पहलेसे कम लगी। अव मगन-चरखा अपनाया है। कल २४ तार ही निकाले और समय वहुत लगा। आज थोडे समयमे ५६ तार निकाले। थकान थोडी लगी। जो वात अेक व्यक्ति और अुसके छोटेसे कामके वारेमें सच है, वही सस्था और अुसके महान कार्योके वारेमें भी सच है। 'योग कर्मसु कौशलम्।' कर्म अर्थात् सेवाकार्य, यज्ञ। हमारी सारी मुसीवतोकी जड हमारी अकुशलतामे है। कुशलता आ जाय तो जो काम हमे अभी कष्टदायी लगता है वही आनन्ददायी लगने लगे। मेरा दृढ मत है कि सुव्यवस्थित सात्त्विक तत्रमे कभी कामका वोझ मालूम ही नही होना चाहिये।

तू अिसी वस्तुको सिद्ध करनेके लिअे आश्रममें आअी है। यह तुझे कोअी सिखानेवाला नही है। सवको स्वय ही वायुमें से यह वस्तु ग्रहण कर लेनी है। तेरे जैसी जो ग्रहण नही कर सके वह आश्रममें आखिर तक नही टिक सकती। जिसे कोअी महत्त्वाकाक्षा न हो वह निभ जाय, यह अलग वात है। आश्रम वास्तवमें स्वतत्र सस्था है। अुसमें जो भी निश्चय करे अुसके लिअे जितना अूचा चढना हो अुतना अूचा चढनेका अवकाश है। अुसे कोअी यह चीज दे नही सकता। तुझे अपने अनुकूल वातावरण खुद पैदा करना है। अपनी सहेलीको तू खीच सकती है। लेकिन सच वात तो यह है कि यह स्वार्थीपन कहा जायगा। तेरे लिअे तो वहा जो लोग है वे ही तेरे सखा और सखी है। तुझमें जो गुण

हो वे अुनमे अुडेल। अुनमे हो वे गुण तू ले। अगर तू यह मानती हो कि अेक दोके सिवा और किसीके पास तेरे लिअे लेने जैसा कुछ है ही नही, तो तू मोहकूपमे पडी हुअी है। मुझे लगता है कि जगतमे अैसा कोअी भी नही है, जिससे हम कुछ भी न ले सके।

रामकृष्ण[1]के वारेमे तूने जो लिखा है, अुसके सत्य होनेकी पूरी सभावना है। मै अपनेको किसी भी तरह सिद्ध नही मानता। अिसलिअे भूले भी मुझसे हुआ ही करती होगी। लेकिन मेरी भूले निर्दोप होनेके कारण आज तक हानिकर सिद्ध नही हुअी है। अिसलिअे मै निश्चिन्त होकर रास्ता तय कर रहा हू और साथियोको भी साथमे शामिल कर रहा हू।

पैसिव व्यायाम दुर्वल आदमीसे अुसका सहायक करवाता है जैसे मालिश या अर्ध-शीर्षासन, अर्ध-सर्वासन, सिर्फ पैर या हाथ धीरे धीरे अूचे करना। अिसमे वीमार पडा रहता है और मानसिक सहयोग देता है। तू समझी?

प्रार्थना पर वहुत वार हमले हुअे है। लेकिन वह १६ वर्षसे टिकी हुअी है। अिसमे कितना समय जाता है? कितना वचाया जा सकता है? जो प्रार्थनाकी आवश्यकताको मानता है, वह अुससे द्वेष नही करेगा। दोष सभीमे देखे जा सकते है। लेकिन यह प्रार्थना कुल मिलाकर ठीक मालूम हुअी है। मुझे वता कि तू क्या परिवर्तन करना चाहती है?

वापूके आशीर्वाद

७४

१७-५-'३२

चि० प्रेमा,

११-५-'३२

तेरे वजन और खुराकके वारेमें अिसलिअे पूछा कि मुझे तेरे स्वास्थ्यके वारेमे शका हुअी। ज्यादासे ज्यादा वजन कितना था? सागमे टमाटर

---

१ श्री रामकृष्ण परमहस (१८३६-१८८६)। वगालके सुप्रसिद्ध भक्त और ज्ञानी। स्वामी विवेकानन्दके गुरु।

या भाजी विलकुल नही पैदा होते? सलादकी भाजी वोनी थी अुसका क्या हुआ? सलाद या मेथी तू खुद ही अेक छोटी क्यारीमे वो सकती है। वह थोडे ही दिनमे अुग आती है। कोअी न कोअी हरे पत्ते तो होने ही चाहिये। कच्चे वहुत थोडे खाये जाते है, अिसलिअे वोनेमें सुविधा रहती है। टमाटर वारहो महीने क्यो नही होते, यह मैं नही जानता। पूछकर मालूम करना।

घुरन्वरसे मैं तुरन्त मिला। और अव भी अुसके हाल मालूम करता रहता हू। क्योकि कूचमें अुसका अच्छा परिचय हुआ था। फिर तेरे खातिर भी अुसके जीवनमे रस लेता हू, क्योकि तेरे जीवनमे लेता हू। यह व्यक्तिगत प्रेम-विशेषका अुदाहरण नही है, वल्कि अहिंसाका है। अगर किसी खास व्यक्तिके लिअे ही प्रेम हो और दूसरेके प्रति द्वेष, या दूसरेके प्रति प्रेम हो ही न सके, तो वह प्रेम-विशेष है। मुझमें अैसा प्रेम-विशेष नही है, अैसा मैं मानता हू। तेरे लिअे मैं जो करता हू वह तेरी जरूरतको समझकर, तू मुझसे आशा रखती है अिसलिअे और मेरी अपनी गरजसे भी करता हू। क्योकि मैं तुझसे वहुत आशा रखता हू। अिसमें तू व्यवहार-वुद्धि देखे तो मैं अुसका अिनकार नहीं करूगा। मैं अिसे अहिंसक स्वभाव मानता हू।

अुर्दू पुस्तकोकी वात तू भूली नही होगी।

आश्रमसे सव अेक ही समय पर जानेको तैयार हुअे हो, तो मैं अुसे ठीक नही मानता। लेकिन अव आश्रमको चलते अितने वर्ष हो गये हैं कि मैं अुसकी चर्चा नही करूगा। दुखडा भी नही रोजूगा। कही कुछ गलत हो रहा है यह समझकर जव मौका आता है तव अुसे सुधारनेका प्रयत्न करता हू, जिसे आसानीसे रोका जा सके अुसे रोकता हू। आश्रम विलकुल खाली हो जाता हो और तू आनन्दसे रुक सकती हो, तो रुक जाना और काम करनेवाले वापस आ जाय तव जाना। लेकिन ठीक तो वही होगा जो तू और नारणदास सोचे। मुझे यहा वैठे वैठे क्या मालूम पडे?

१२-५-'३२

अिसके साथ साप्ताहिक 'हिन्दू' से निकाला हुआ मॉन्टेसरी[1]का लेख भी है। वह महादेवको अच्छा लगा अिसलिअे अुसकी कतरन कटवा ली। देख लेना। कुछ ग्रहण करने जैसा हो तो करना, नही तो फेक देना।

सुशीलाको आनेकी अिजाजत मिल गयी है। अिसलिअे तू आनेवाली हो तब अुसे आना हो तो ला सकती है।

तेरे किसी भी प्रश्नका अुत्तर मैंने जान-बूझकर नही खाया है। क्या प्रश्न था यह मुझे अब भी याद नही आ रहा है। फिरसे पूछेगी तो अुत्तर दूगा।

आश्रममे दी जानेवाली शिक्षाका प्रश्न पुराना है। मै यह मानता हू कि छात्रावासोके साथ अुसकी तुलना नही हो सकती। नारणदास पर सारा भार है। वह अपनी अिच्छाके अनुसार व्यवहार कर सकता है। निर्णय करनेमे तू मदद कर सकती है। मै खुद अेक नियम लागू करना चाहूगा। बच्चोके गले तुम्हारी बाते अुतरनी चाहिये। वे जितना मजबूर होकर करेंगे वह निरर्थक ही जायगा और बलात्कारकी परपरा कायम हो जायगी। छुट्टी न रखनेकी बात बच्चोको पसन्द होनी चाहिये।

आश्रमकी पाठशालामे तूने जो जो किया अुसका काजी मै नही बनूगा। वहा बैठा होता तो जरूर छानबीन करता, लेकिन यहा बैठे बैठे कुछ नही कहूगा। तू आत्म-निरीक्षण करनेवाली है। अिसलिअे जहा दोष होगा वहा आखिर तू अुसे सुधार ही लेगी।

मैने तुझे ब्रह्मज्ञान सिखाना चाहा या क्या चाहा, यह तो दैव ही जाने। लेकिन अुसे तू जानती है अैसा कहकर ही तूने अपना अज्ञान प्रगट किया है और फिर जो दलीले दी है वे तेरा अज्ञान सिद्ध करती है। बुद्धिसे जो ब्रह्मको जानता है वह ब्रह्मको जानता ही नही। ब्रह्मज्ञान हृदयमे होता है। ब्रह्मज्ञानमे प्रवृत्तिमात्रका त्याग होता ही नही। बाहरसे तो ज्ञानी-अज्ञानी दोनो अेकसे होते है, लेकिन दोनोकी प्रवृत्तिके हेतु अुत्तर दक्षिण जैसे होते है। रामनाम ब्रह्मज्ञानका विरोधी नही है। वे दोनो अेक हो सकते है। जो ब्रह्मज्ञानी रामनामसे

---

१ मेरिया मॉन्टेसरी (१८७१-१९५२)। यूरोपकी सुप्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री। बालशिक्षामें अिन्होने नअी दृष्टि दी।

दूर भागता है, वह अज्ञान-कूपमें पड़ा हुआ है और धोखा खा रहा है। जो मनुष्य होठसे रामनाम बोलता है, वह होठोंको सुखाता है और समयका खून करता है। ब्रह्मज्ञान और मेरी शारीरिक अुपस्थितिका अच्छा लगना — ये दो विरोधी वस्तुअें ही हो अैसा जरूरी नही है। लेकिन मेरी अनुपस्थिति यदि कर्तव्य-परायणताको कम करे, तो वह ब्रह्मज्ञान नही परन्तु मोह है। मुझे ब्रह्मज्ञान है, यह कहनेवालेको बहुत सम्भव है ब्रह्मज्ञान न हो। यह मूक ज्ञान है — स्वयप्रकाश है। सूर्यको अपने प्रकाशका प्रमाण अपने मुहसे बोलकर नही देना पडता। प्रकाश है अैसा हम देख सकते हैं। यही बात ब्रह्मज्ञानके बारेमें है।

मैं अिस राज्यको मानता था तब मुझे अैसा लगता था कि अिस राज्यसे अिस देशको आखिरमें लाभ ही होगा। अुसके हेतु शुभ हैं। लेकिन अिस प्रश्नमे ज्यादा गहरा नही अुतरा जा सकता।

अमेरिकाके स्त्री-पुरुष-व्यवहारके बारेमें जो साहित्य छपता है वह मुझे पसन्द नही है। अिस बारेमें मैं लिखना जरूर चाहता हूँ। बच्चे प्रश्न पूछें तब अुन्हे सीधा जवाब देना चाहिये। सिनेमाके बारेमें मैं नही जानता। नाटकके लिअे स्थान है। अीश्वर-प्राप्तिके लिअे मुझे तो अनासक्ति ही पसन्द आती है। अुसमे सब कुछ आ जाता है।

बापू

७५

१९-५-'३२

चि० प्रेमा,

यद्यपि अगले सप्ताह तेरे मिलने आनेकी सम्भावना है, फिर भी पत्रका अुत्तर दे देना ही ठीक है। अिसके सिवा, कलकी घटना बताती है कि मेरा मिलना हमेशा अनिश्चित ही माना जाना चाहिये।

बाली बहुत अच्छी निकली। अैसा लगता है कि अिसका यश आश्रम नही ले सकता। मालूम होता है वह अैसी बनकर ही आयी है।

आश्रममे पली हुअी लडकिया अितनी दुर्बल देखनेमे आती है यह अेक पहेली ही है। मै अुसे सुलझा नही सका हू। मेरे पास अुसके लिअे अनुमान है। लेकिन जब तक मै अुसके लिअे अच्छा आधार न बता सकू, तब तक अुसकी चर्चाको मै निरर्थक मानता हू। हमसे हो सके अुतनी खोज हम करे। लेकिन यह याद रखना चाहिये कि ये लडकिया बाहर जाकर अच्छी ही हो जाती है, अैसा नियम नही है।

नारणदासका ध्यान रखनेका अर्थ है जब शक्तिसे ज्यादा बोझा वह अुठाये तब अुसे सावधान करना और मुझे भी सावधान कर देना। मेरे वचनोमे मैने कही भी व्यामिश्रता नही देखी। अगर हो तो वह अनजाने और भाषा पर मेरे बहुत कम अधिकारके कारण हुअी होगी। मेरे वचन छोटे होनेके कारण अुनमे अध्याहार तो होते ही है, लेकिन जैसे भूमितिमें होते है वैसे ही।

जो लडकिया अग्रेजी सीखना चाहती है, अुन्होने अगर हिन्दी और सस्कृत पर ध्यान दिया हो और गुजराती अच्छी कर ली हो तो वे जरूर सीखे। सिखानेकी सुविधा पर तो अिसका आधार है ही। लेकिन वह सुविधा हमारे पास होनी चाहिये।

पैसिव व्यायामका मेरा अर्थ तू शायद नही समझी। मनुष्य स्वय करे वह पैसिव नही कहलाता। यह व्यायाम बीमारके लिअे है। मै बीमार होअू, मेरी आतोको व्यायाम देना हो और कोअी अुनकी मालिश करे, अथवा मेरे पैरोको कमरसे समकोण बनने जितना अूचा करे, फिर सीधा करे और अैसा करता रहे और मुझे अुन्हे अूचा-नीचा करनेकी जरूरत न रहे, तो वह पैसिव व्यायाम कहलायेगा। तू अिसी तरह समझी है अैसा नही लगता।

मौन प्रार्थनामे दोनो हेतु थे। मनको आराम देनेका तो था ही। लेकिन अुसके बिना मनको अन्तर्मुख करना भी कठिन था। हर कामको समय पर बदलनेके लिअे अवकाश है, अैसा हमे लगना चाहिये। हममे अधीरता, अशान्ति नही होनी चाहिये। अिसीमे से तटस्थता आती है।

मेरे अन्दर अेकाग्रता होनी ही चाहिये। लेकिन मुझे सतोष दे सके अुतनी नही है। अुसके लिअे मै प्रयत्नशील हू, लेकिन अधीर नही हू।

वच्चोको सारी प्रार्थनामें रस न आता हो, तो अुनके लिअे कोअी अलग प्रार्थना रखी जा सकती है, जैसा प्रभुदासने किया था। वच्चे श्रद्धा और शान्तिसे वैठ सके तो अुसे मैं अच्छा मानूगा।

१६ वर्षोसे यही प्रार्थना होती रही है, यह स्तुति नही है। यह वस्तुस्थिति है। अितने वर्षोसे सव लोग प्रार्थनामें आये हैं यह कहनेका हेतु नही है। वहुतसी असुविधाओ और आलोचनाओके वीच आश्रम अिसी प्रार्थनासे चिपका रहा है और अुसमें से वहुतोने शातिका अनुभव किया है। वहुत सवल कारणोके विना अुसका त्याग या अुसमें परिवर्तन नही किया जा सकता, अितना ही कहनेका हेतु था। वहनोकी प्रार्थना शामको ठीक नही रहेगी। शामका समय वाचन वगैरामें भी दिया जाता है।

तूने अपने विपयमे जो लिखा वह ठीक है। तेरी वुद्धि और तेरे हृदयको सच्चा लगे वैसा ही तुझे करना है। मुझे अधीरता नही है। मैं तो जो मुझे अुचित लगता है वह कह देता हू। अुस चीजको मैं जवरदस्ती तेरे गले नही अुतार सकता। मैं मित्रकी ही गरज पूरी कर सकता हू। वडेसे वडा दावा मेरे लम्वे अनुभवोका हो सकता है। लेकिन अुनमे से अेकका भी प्रतिविम्व तेरे हृदय पर न पडे, तो मेरे हजारो अनुभव तेरे लिअे निरर्थक हैं। आश्रमके वारेमें मेरा अेक दावा है। वह आनेवालेको पख देता है, फिर वह चाहे जहा अुड सकता है। वह स्वेच्छासे रहे तो रह सकता है, न रहे तो भी आश्रमने अपने अेक धर्मका पालन किया। अैसा ही हुआ है, यह वहुतोके वारेमे सिद्ध किया जा सकता है। स्त्रियोके वारेमें अधिक किया जा सकता है। अैसी लडकिया आश्रममे आ चुकी है, जिनमें जरा भी अुमग, अुत्साह नही था। आज वे अपनेको स्वतत्र मानती हैं, और हैं। अैसी लडकिया गुलवदन, अुमिया, विद्यावती, रुवी अित्यादि हैं। व्यक्तिप्रेम मात्रका मैं अिनकार नही करता। वह विश्वप्रेमका, प्रभुप्रेमका विरोधी नही होना चाहिये। वाके प्रति मुझे आज जो प्रेम है वह प्रभुप्रेममें समाया हुआ है। मैं विपयी था तव वह प्रभुके प्रेमका विरोधी था, अिसलिअे त्याज्य था।

तेरा वजन घटा अिसकी मुझे चिन्ता नही है, अगर दूसरी तरह तेरा शरीर ठीक हो। सुशीला आ सकती है।

वापू

७६

यरवडा मन्दिर,
२९-५-'३२

चि० प्रेमा,

अिस वार तेरा पत्र नही आया, फिर भी मै लिख रहा हू। क्योकि यह पत्र आश्रममे पहुचेगा तव तक तू भी पहुच चुकी होगी। और सभवत मेरे पत्रकी आशा रखेगी।

तुम सव आ गअी यह ठीक हुआ। वाते तो करनेके लिअे हो ही क्या सकती थी? और थोडे समयमे हो भी क्या सकती थी? सुशीलाको मैंने जान-वूझकर खास समय नही दिया। क्योकि हो सके अितना समय तुझे, अम्तुलको और शारदाको देना था। सुशीलाको कोअी खास वात तो शायद पूछनी ही नही थी?

लडके और लडकिया मुझे जो पत्र लिखते है, अुनमे अूटपटाग सवाल पूछते है, और मुझे डर है कि वे भी सिर्फ पूछनेके लिअे ही पूछते है। अुन्हे अेक वार अच्छी तरह समझाना। पत्र लिखनेकी कला भी कुछ अश तक सीखनी जरूरी है।

तेरी यात्राके अनुभव लिखेगी, अैसी आशा रखता हू।

धुरन्धरसे तू मिली थी? और किसीसे मिली?

वजन तो वढाया ही होगा?

वापू

७७

यरवडा मन्दिर,
३-६-'३२

चि० प्रेमा,

आज तो तुझे लिखनेके लिअे ही यह छोटासा पत्र लिख रहा हू। अुर्दू पुस्तके भेजना मत भूलना। अव मुलाकात होनी वन्द हो जाय तो वुकपोस्ट रजिस्ट्रीसे भेजना।

वापू

[पू० महात्माजीसे मिलने यरवडा गअी अुसके वाद सिंहगढ वगैरा कअी स्थान मैं देख आअी थी। यात्राका सारा वर्णन मैंने पत्रमें महात्माजीको लिखा था। श्री हरि नारायण आपटे मराठी भाषाके सबसे पुराने और वडे अुपन्यासकार हो गये हैं। अुनका वंगला सिंहगढ पर था।

'मुखी' यानी यरवडा जेलके अुस समयके सुपरिन्टेन्डेन्ट मेजर भंडारी। अुनके वरतावके वारेमें दो शब्द मैंने लिखे थे।

हमारी गौड सारस्वत ब्राह्मण जातिमें अमुक मर्यादामें मत्स्याहारके लिअे स्थान है। मैं सत्याग्रह आश्रममें गअी अुससे डेढ वर्ष पहले ही मैंने मत्स्याहार छोड दिया था। लेकिन मेरा वजन आश्रममें घटने लगा, अिसका कारण अहमदावादके हमारी जातिके अेक डॉक्टरने यह वताया था कि, "पीढियोंका आहार तुमने छोड दिया अिससे वजन घट रहा है।" यह मुझे सही नही लगा। महात्माजीने अिस आहारकी सिफारिश की, फिर भी मैंने आहार आश्रमका ही रखा। वजन घटनेका सही कारण कामका वोझा और नींदकी कमी थी। जेल जानेके वाद वजन वढा।]

य० म०
१२-६-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मुझे जरा भी लंवा नही लगा। क्योंकि मेरी अिच्छाके मुताविक तूने वर्णन किया है। सिंहगढ पर मैं तीन वार गया हूं। अेक वार तो लोकमान्य[1] थे तव। अिसलिअे हम मिले भी खूव प्रेमसे थे। अुनका घर मैंने देखा था। कुछ चीजें तूने जरूर नअी लिखी है। हरि नारायण आपटेसे मैं मिला था। अुनके अुपन्यास पढनेकी अिच्छा तो वहुत है, लेकिन अव अिस अुमरमें नयी चीज हाथमें लेनेकी हिम्मत नही होती। अुर्दू, अर्थशास्त्र, आकाश-दर्शन, चरखा और पत्रव्यवहार अितनी चीजें मुश्किलसे निवटा पाता हूं। वीचमें कुछ न कुछ फुटकर तो पढनेका होता ही है।

---

१ स्व० लोकमान्य वाल गंगाधर तिलक।

'मुखी' के वारेमे तूने लिखा वह ठीक है। मै सव देख-समझ सका था। लेकिन यह वात सहन करने योग्य है। मनुष्यके नाते वे वुरे नही हैं। लेकिन अधिकार वुरी चीज है। फिर यह अधिकार भी कहा ? अिसलिअे हमें हिसाव यो लगाना चाहिये कितना अच्छा है कि कुपरिस्थितियोमे भी थोडी-वहुत मनुष्यता अुनमे कायम रही है ? और किसे मालूम कि हम अैसी जगह होते तो हम कितने नीचे गिरे होते ? तुझे हुअे अैसे अनुभव तो होते ही रहेगे। अैसे ही अनुभवोसे सहन-शक्ति, अुदारता, धैर्य तथा विवेककी शिक्षा मिलती है। सव कुछ अनुकूल हो तव तो सभी लोग अच्छा कहलाने जैसा वरताव कर सकते हैं।

'अव सतोष हुआ न ?'—मेरे अैसा कहनेके पीछे कोअी अर्थ नही था। सहज अुद्‌गार निकला था। सुशीलाको कुछ न लगा होगा, लेकिन मुझे तो लगा। अुसे आने दिया तो थोडी-वहुत वात तो करनी ही चाहिये थी, लेकिन समय नही था। अिसलिअे जमनादासके वारेमें पूछ कर ही सतोष कर लिया। अुसे मेरे आशीर्वाद।

स्त्री-पुरुषके वारेमे कुछ लिखनेकी अिच्छा तो थी, लेकिन तू अिस विषयमे खास प्रश्न भेजे तो ज्यादा अच्छा हो। अग्रेजीकी पढाअी वन्द नही करनी है। नये वच्चोको अमुक विपय सीखनेसे पहले अग्रेजी न सिखाये अितनी ही वात है। नारणदासके पत्रमें ज्यादा लिखा है।

तेरा शरीर तावे जैसा होना चाहिये। अगर मछलीका प्रतिवध न मानती हो और अैसा लगता हो कि अुसीसे तेरा शरीर अच्छा रह सकता है, तो वाहर जाकर खा सकती है। अिमामसाहव अैसा ही करते थे। अिस विषय पर ज्यादा चर्चा करनी हो तो करना।

वापू

[पत्रमे मैंने लिखा था कि श्री शकराचार्य और रामानुजाचार्य दोनो स्वतत्र भारतमें पैदा हुअे थे, अिसलिअे वे अध्यात्ममें भी अूचे चढ सके होंगे। वादके सत अिस्लामने भारतको जीता और गुलाम वना लिया अुसके वाद पैदा हुअे, अिसलिअे वे सगुण मूर्तिके पुजारी हुअे। पहलेके आचार्योंकी तरह ब्रह्मवादी नही हुअे।

मै पूज्य महात्माजीसे सत्याग्रहकी दीक्षा लेने सत्याग्रह आश्रममे गअी, तव अुनसे आध्यात्मिक क्षेत्रमें भी मार्गदर्शन लेनेका मेरा अिरादा था। वश-परम्परासे मुझे सगुण-अुपासनाके सस्कार मिले थे। मेरे नन-सालमें और पिताजीके यहा सगुण-अुपासना ही होती थी, यद्यपि पिताजी वेदान्तके अभ्यासी थे। वे रोज अुपनिषद् पढते थे। और कभी कभी मेरे साथ चर्चा भी करते थे। मेरा झुकाव भक्तिमार्गकी तरफ था, यद्यपि योग (ध्यानयोग) मे भी मुझे रस था। मै कॉलेजमे गअी तवसे अन्त तक सस्कृतका अध्ययन चालू रखा था। अिससे वेदान्तका अध्ययन खूब हुआ। वादरायण सूत्रोका और अुन पर दक्षिणके तीन महान आचार्योंके भाष्योका अध्ययन करना पडा था। श्री पाठक शास्त्री जैसे प्रवुद्ध अध्यापक हमे पढाते थे। मुझ पर निर्गुणका रग चढने लगा। फिर अद्वैत सिद्धान्तके मडन पर स्वामी विवेकानन्दके व्याख्यान पढनेके वाद मै अुनके प्रभावमे आ गअी। अुसके वाद मै आश्रममे पहुची। वहा तो निराकारकी प्रार्थना होती थी। हिन्दुओंके साथ गैर-हिन्दू भी प्रार्थनामे शामिल होते थे। सर्वधर्म-समभावका वातावरण था। अिसका यह नतीजा हुआ कि अुपासनाकी मेरी सारी मानसिक रचना ही डावाडोल हो गअी।

प्रार्थनाके वारेमे पूज्य महात्माजीसे मै रुवरु प्रश्न भी पूछती थी। "प्रार्थनाके समय आख वद करके वैठे तव मनमें भगवानका ध्यान धरे या नही?" पूज्य महात्माजी कहते थे, "नही, मूर्तिका ध्यान नही करना चाहिये। हम जो श्लोक या भजन गाते है अुसके अर्थ पर अेकाग्र होना चाहिये।" मैंने पूछा, "तव सुवहकी प्रार्थनामे सगुण देवी-देवताओंके वर्णनवाले श्लोक क्यो रखे है?" तव पूज्य महात्माजीने अेक वार सुवहके

प्रवचनोमे अिन श्लोकोका अर्थ अपने ढगसे करके वताया। मुझे अुससे सतोप नही हुआ। अुनके जेल जानेके वाद पत्रव्यवहारमे भी यह चर्चा चालू रही। लेकिन मुझे स्वीकार करना चाहिये कि पूज्य महात्माजीका अध्यात्म-विपयक अधिष्ठान — आधार — क्या था, अुसका ठीक ज्ञान मुझे वर्षो तक नही हुआ। अितना मैने समझ लिया कि अुन पर भारतकी पूर्व-परम्पराके सस्कार गहरे होने पर भी वे किसी अेक पथ या विचारके शुद्ध अनुयायी नही थे। अुन्होने अपना मार्ग खुद ही ढूढ लिया था। अुस मार्गकी स्थूल रुपरेखा आज मुझे थोडी-वहुत समझमे आती है।

वेदान्तियोने ब्रह्मका सत्-चित्-आनन्दके रूपमे वर्णन किया है। पूज्य महात्माजीने केवल सत्को सत्य स्वरूपमे स्वीकार किया। चित् अर्थात् ज्ञान! वह तो "ददामि वुद्धियोगम्" अिस आश्वासनके अनुसार अीश्वरकी कृपासे मिलेगा असा वे मानते थे। और 'आनन्द' के लिअे अुन्होने अनासक्तिकी योजना की। अिससे मन क्लेशरहित हुआ। यह था अुनका ज्ञानमार्ग।

भक्तिमार्गमे अुन्होने 'अहिंसा' पर जोर दिया। सत्य ही अीश्वर है और अुसकी प्राप्ति 'अहिंसा' के जरियेसे ही होती है। यह था अुनका सूत्र।

अुनका पूरा रस कर्मयोगमे था और हाथमे लिये हुअे विविध कार्य-क्रमोमे अेकाग्र होना ही अुनका ध्यानयोग था। 'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धि विन्दति मानव।' मोक्ष पानेकी कुजी अुनकी दृष्टिमें यही थी।

मै नही मानती कि पूज्य महात्माजीने साम्प्रदायिक अर्थमे सगुण-अुपासना अपने जीवनमे कभी की होगी। अिसलिअे सगुण-अुपासनाकी शास्त्रीय मीमासा वे नही कर सकते थे। चर्चामे अपनी मर्यादाको स्वीकार करके अनुभवी भक्तोका प्रमाण देते थे। सासवड आनेके वाद महाराष्ट्रके सन्तोका साहित्य प्राप्त करके अुसका पठन, चिन्तन और मनन करनेके वाद मुझे सगुण-अुपासनाका मर्म समझमे आने लगा। प्रत्यक्ष साधना करने लगनेके वाद तो मेरा सदेह भी दूर हो गया है। वेदान्तकी परि-भापा 'सगुण' और 'निर्गुण' है, 'साकार' और 'निराकार' नही। यह वस्तु ध्यानमे रखने जैसी है।

अिस वारेमे मुझे जरा भी शका नही है कि पूज्य महात्माजीने अपने अुपासना-मार्गमे सफलता प्राप्त की थी। अखड कर्मयोगमें ध्यान-योग साधना वहुत कठिन है। लेकिन पूज्य महात्माजीने अुसमें सिद्धि प्राप्त की थी, यह तो अुनके अन्तकालके समय सिद्ध ही हो गया। सामने हत्यारा देहकी हत्या कर रहा है, गोलिया लगती है, वेदना होती है, फिर भी अीश्वरसे सवध वना हुआ है, मुहसे रामनाम निकल रहा है, मन शान्त है। यह घटना अलौकिक कही जायगी! पूज्य महात्माजीने अीश्वर-दर्शनके लिअे कभी भी अेकान्तिक साधना नही की थी। भगवान बुद्ध, शकराचार्य, समर्थ रामदास स्वामी वगैरा अवतारी पुरुषोने पहले साधना की, फिर वे सेवाकार्यमें लगे। पूज्य महात्माजीने अिससे अुलटा किया! अुन्होने सेवाको ही साधना वनाया। 'अन्ते मति सा गति' यह सिद्धान्त यदि सत्य हो, तो पूज्य महात्माजीको अन्त समयमे अीश्वर-दर्शन अवश्य हुअे होगे! मुझे तो विश्वास है।]

य० म०
१७–६–'३२

चि० प्रेमा,

मै तुझे मूर्ख ही कहूगा। प्रश्न पूछनेमे वच्चोको रस न हो फिर भी वे लिखे, यह समयका दुर्व्यय है। लिखनेके लिअे भी रसके साथ लिखें तो अुसमे कोअी अर्थ है। वच्चे माता-पिताके पत्रकी आशा न रखें, फिर भी यदि पत्र आ ही जाय, तो वे खुश जरूर होते हैं। अिसमें स्वार्थकी जरा भी गध नही होती। अिससे हिस्टीरिया तो हरगिज सिद्ध नही होता। हिस्टीरियाके वारेमें मैंने अेक पत्रमें लिखा है।

प्रार्थनामें साकार मूर्तिका मैंने निषेध नही किया। निराकारको अूचा स्थान दिया है। शायद अैसा भेद करना ठीक न हो। किसीको कुछ और किसीको कुछ अनुकूल आता है। अिसमें तुलनाके लिअे स्थान नही होता। मेरी दृष्टिसे निराकार अधिक अच्छा है। शकर और रामानुजका पृथक्करण मुझे ठीक नही लगा। परिस्थितिकी अपेक्षा अनुभवका असर ज्यादा होता है। सत्यके पुजारी पर परिस्थितिका असर नही होना चाहिये। अुसे तो परिस्थितिको भेद कर वाहर निकल जाना चाहिये। परिस्थितिके

आधार पर वनी हुअी राय वहुत वार गलत सावित होती है, अैसा हम देखते हैं। प्रसिद्ध अुदाहरण आत्मा और देहका है। अभी आत्माका देहके साथ निकट सवध है, अिसलिअे देहसे भिन्न आत्मा झटसे नही दीखती। अिस परिस्थितिको भेदकर जिसने पहला वचन 'यह नही' कहा, अुसकी शक्तिको अभी तक कोअी पहुचा ही नही है। अैसे अनेक अुदाहरण तुझे सहज ही मिल जायेगे। तुकाराम वगैरा सन्तोके वचनोका शब्दार्थ करना अुचित है ही नही। अुनका अेक वचन अभी अभी मेरे पढनेमे आया है। वह तेरे लिअे यहा दे रहा हू

केला मातीचा पशुपति। परि मातीसि काय म्हणती।।
शिवपूजा शिवासी पावे। माती मातीमाजी समावे।
केला पापाणाचा विष्णु। परी पापाण नव्हे विष्णु।।
विष्णुपूजा विष्णुसि अर्पे। पाषाण राहे पापाणरूपे।।

अिसमे से मैं यह सार निकालता हू कि अैसे साधु-सन्तोकी भाषाके पीछे जो कल्पना रही है अुसे समझना चाहिये। वे साकार भगवानका चित्र खीचते हुअे भी निराकारको भजते है। हम प्राकृत मनुष्य अैसा नही कर सकते, अिसलिअे अुनका रहस्य समझकर न चले तो हम मर जायगे।

जो अुर्दू पढ सकता हे वह अिमामसाहवके यहा जाय तो पुस्तक तुरन्त मिल जायगी। वहा मीरावहनका अुर्दू-अग्रेजी शब्दकोश है, और अग्रेजी-अुर्दूका भी साथमे भेजना। अिमामसाहवका घर कभी कभी साफ होता है? सभी खाली घरोकी हफ्ते पन्द्रह दिनमें सफाअी होनी चाहिये।

आदत न पडे तभी तक समयका हिसाव रखना मुश्किल होता है। आदत पडनेके वाद तो अुसमे जरा भी समय नही जाना चाहिये। यह सव समझकर किया जाय तभी शोभित होता है और फलता हे।

दक्षिण अफ्रीकाके वच्चोका अुदाहरण मैं यहाके वच्चोकी निन्दा करनेके लिअे नही, वल्कि अुन्हे प्रोत्साहन देनेके लिअे देता हू। यहाके वच्चे भी जरूर काम कर सकते हैं, अगर अुनसे काम लेनेवाला कोअी हो। तू है न?

कमरके दर्दके लिअे तुझे गरम पानीमे वैठना चाहिये। अुसमे पन्द्रहसे वीस मिनट वैठना। अुस वीच कमरको हाथसे मलना चाहिये। अिससे

अुसका दर्द भी वन्द हो जायगा और मासिक धर्म पर भी असर होगा। डॉक्टर क्या कहता है लिखना। अैसे दर्दको शुरू होते ही दवा देना चाहिये।

तेरा कार्यक्रम मैंने अच्छी तरह देखा। यह शक्तिसे अधिक है। अुसमे काटछाट आसानीसे हो सकती है। १२-३० से ५-४० तक अुद्योग-वर्ग चलता है, यानी पाच घटे दस मिनट हुअे। अिसमें से अेक घटा काट देनेमे जरूरी फुरसत निकाली जा सकती है। अिस समयमें अेकान्त प्राप्त करके सोना हो तो सोना चाहिये, लेटे रहना चाहिये या जिससे आराम मिले वैसा कुछ करना चाहिये। लेकिन यह समय वातोमें या दूसरे काममे नही विताना चाहिये। अिस घटेका अुसी समय अुपयोग न करना हो, तो आगे खिसकाये जा सके अैसे दूसरे कामोको खिसका कर रातका समय अिसके लिअे रख लेना चाहिये। जो अपने काममे तन्मय हो जाता है, अुसे कामका वोझ या घिसाअी नही लगती। जिसे काममें रस न हो अुसे कम काम भी ज्यादा मालूम होता है। जैसे कैदीको अेक दिन अेक वर्ष जैसा लगता है। भोगीको अेक वर्ष अेक दिन जैसा लगता है।

यूरोपका सगीत पहले सुनता था तो मैं अूव अुठता था। अव अुसमे कुछ समझमें आता है और रस भी आता है।

'यहा पढनेका लोभ रखा ही नही जा सकता' तेरा यह लिखना ठीक नही है। वहुत पढनेको न मिले यह विलकुल सही है, पढना गौण वस्तु है, यह भी विलकुल सच है। अैसा होने पर भी आश्रममें रहनेवाले वहुतेरे लोगोंने पढा है। तेरे निराशाके वचन मुझे अच्छे नही लगते। जिसमें अपूर्णता लगे अुसे पूर्ण करनेका प्रयत्न कर। लेकिन अन्तमें यदि अपूर्णता ही लगे, यानी आखिरमें जोड-वाकी करने पर दोष वढते मालूम हो, तो अुसका त्याग कर देना चाहिये। अुसीमें अपने और समाजके प्रति न्याय है।

तुझे लम्बे पत्र लिखनेके लिअे माफी मागनेकी जरूरत नही है। मैं अुनसे अूवता नही, मुझे वे अच्छे लगते है। अुनसे मैं सीखता हू, क्योंकि वे तेरे अुस समयके हृदयका दर्पण होते है।

वापू

८०

य० मन्दिर,
२३-६-'३२

चि० प्रेमा,

अुर्दू पुस्तकोंमें नदवीके नामके दो भाग है? शिवलीके वदले नदवीने अुनके वाद कुछ लिखा है। शायद किताव पर मौलाना सुलेमान नदवी लिखा हो।

मछलीके वारेमे मैंने तेरे लिअे कोअी अपवाद नही किया। कॉड लिवर ऑअिल निषिद्ध है, फिर भी मैंने अुसे आश्रममे चलने दिया है। मास-मच्छीकी मास-मच्छीके रूपमे आश्रमके लिअे मर्यादा रखी गअी है, लेकिन व्यक्तिके लिअे नही रखी जा सकती। मैंने कभी भी नही रखी। अिसीलिअे अिमामसाहव वाहर खा सकते थे। मान ले कि तेरी जगह पर नारणदास ही हो। अुसने जीवनभर मासादि नही खाया। लेकिन अुसे भयकर वीमारी हो जाय और अुसे मास खाकर जीनेकी अिच्छा हो, तो मै अुसे मास खानेसे कभी नही रोकूगा। मेरे विचार वह आज जानता है। धर्म भी वह जानता है। फिर भी मृत्युकी घडी अलग चीज है। अुस समय अुसकी अिच्छा हो जाय तो अुसमें वाधा न डालना मेरा धर्म है। अिसके विपरीत कोअी वच्चा हो और अुसके लिअे मुझे निश्चय करना हो, तो मै अुसे मरने दूगा, लेकिन मास नही खिलाअूगा। वा पर अैसी वीती थी यह तू जानती है? वहुत करके यह किस्सा 'आत्मकथा' मे है। तू न जानती हो या वहा कोअी न जानता हो तो पूछना। मै लिख भेजूगा। वह हम दोनोके लिअे — वाके और मेरे लिअे — पुण्य-प्रसग था। अव तू समझी? तुझसे मछली खानेका आग्रह मुझे नही करना है। अुसके विना मृत्यु होती हो और तू मरनेको तैयार हो, तो मै तुझे मरने देनेके लिअे तैयार हू। मछली खाकर शायद जिन्दा रहा जा सकता है, परन्तु मरनेके लिअे ही न? लेकिन यह तो जो माने और पाले अुसका धर्म है। अैसा धर्म दूधके वारेमें मै अपने ही अूपर कहा लागू करता हू? — यद्यपि मुझे प्राणिमात्रका दूध त्याग करनेका धर्म स्पष्ट

दीखता है। लेकिन अैसे धर्म दूसरोंसे पालन करानेके नहीं होते। स्वयं ही पालन करनेके होते हैं — अिति।

तेरा आजका भोजन मात्रा-सहित फिर लिखना। परिवर्तन करनेकी सूचना देनी होगी तो दूगा।

स्त्री-पुरुषके बारेमे तूने ठीक पूछा है।

जिस जिस विषयमें बच्चोको कुतूहल अुत्पन्न हो, अुसके बारेमें हमें मालूम हो तो अुन्हे बताना चाहिये, न मालूम हो तो अपना अज्ञान स्वीकार करना चाहिये। बताने जैसा न हो तो पूछनेवालेको रोके और दूसरोको भी पूछनेके लिअे मना करे। कभी भी अुनकी बातको अुडा न दे। हम सोचते हैं अुससे भी ज्यादा अैसी बाते बच्चे जानते हैं। जिस वस्तुके बारेमे वे न जानते हो अुस वस्तुका ज्ञान हम अुन्हे न करायें, तो वे गलत तरीकेसे अुसका ज्ञान प्राप्त करना सीखते हैं। अैसा होने पर भी जो बात बताने जैसी न हो, वह अूपरका खतरा अुठाकर भी हम अुन्हे न बताये। न बताने जैसा बहुत कम होता है। बीभत्स क्रियाका ज्ञान वे हमसे चाहे तो वह हम कभी न दे, फिर भले ही हमारे प्रतिबन्धके बावजूद आडे-टेढे ढगसे वे वह ज्ञान प्राप्त करे।

पक्षियोमें होनेवाली क्रियाको बच्चे देखे और अुसे जाननेकी अिच्छा बताये, तो मैं जरूर अुस अिच्छाको तृप्त करूगा और अुसमें से अुन्हे ब्रह्मचर्यका पाठ सिखाअूगा। पक्षी, पशु और मनुष्यके बीचका भेद मैं अुन्हे सिखाअूगा। जो स्त्री-पुरुष अैसा ही आचरण करते है, वे मनुष्य-देह पाकर भी पशु-पक्षी जैसे हैं। यह निन्दाकी बात नहीं है, वस्तुस्थितिकी है। पशुतामें से निकलनेके लिअे हमें मनुष्यकी देह और बुद्धि मिली है।

मासिक धर्मका सपूर्ण ज्ञान अुस अुमर तक पहुची हुअी बालिकाको कराना चाहिये। अुससे छोटी लडकी अुसे जाने और पूछे, तो अुसे भी जितना वह समझ सके अुतना हम समझा सकते हैं।

हम चाहे जैसा प्रयत्न करे तो भी बालक या बालिकायें कभी अन्त तक निर्दोष रह ही नहीं सकते। यह समझकर अुन सबको अमुक समय पर यह ज्ञान देना ही अच्छा है। यह ज्ञान पानेवाला ब्रह्मचर्यका पालन

कर ही न सके अैसा निर्बल ब्रह्मचर्य यदि हो, तो हमें अुससे कोअी सरोकार नही है। यह ज्ञान पाने पर ब्रह्मचर्य अधिक सबल होना चाहिये। मेरे अपने विषयमे तो अैसा ही हुआ है।

ज्ञान देने ओर प्राप्त करनेके अनेक भेद है। अेक मनुष्य अपने विकारोके पोषणके लिअे यह ज्ञान प्राप्त करता है, दूसरेको वह अनायास मिलता है, तीसरा विकारोको शात करनेके लिअे और दूसरोकी मदद करनेके लिअे वह ज्ञान प्राप्त करता हे।

यह ज्ञान देनेकी योग्यता जिसमे हो वही दे। तेरे भीतर यह कुलशता होनी चाहिये। तुझे आत्म-विश्वास होना चाहिये कि तेरे ज्ञान देनेसे बालिकाओमे विकार कभी पैदा न होगे। तुझे अिसका भान होना चाहिये कि विकारोके शमनके लिअे तू यह ज्ञान देती है। अगर तेरे बारेमे विकारोकी सभावना हो, तो तुझे यह देखना चाहिये कि वह ज्ञान देते समय तुझमे तो विकार पैदा नही होते।

पति-पत्नीके रूपमे स्त्री-पुरुषके सासारिक जीवनके मूलमे भोग है। हिन्दू धर्मने अुसमे से त्याग पैदा करनेका प्रयत्न किया है, या यो कहे कि सभी धर्मोने किया है।

पति यदि ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर है तो पत्नी भी वही है। पत्नी दासी नही, समान अधिकार रखनेवाली मित्र है, सहचारिणी है। दोनो अेक-दूसरेके गुरु हैं।

लडकीका हिस्सा लडकेके बराबर ही होना चाहिये।

जो दौलत दोनोमे से कोअी कमाये, अुसमे पति-पत्नी दोनोका बराबरीका हिस्सा है। पति पत्नीकी मददसे ही कमाता है, फिर चाहे पत्नी खाना ही पकाती हो। वह दासी नही, सहभागिनी है।

जिस पत्नीके प्रति पति अन्यायका व्यवहार करता हो, अुसे अुससे अलग रहनेका अधिकार है।

बच्चो पर दोनोका समान अधिकार है। बडे हो जाने पर किसीका नही। पत्नी नालायक हो तो अुसका अधिकार खतम हो जाता है, अैसा ही पतिके बारेमे है।

सार यह हे कि स्त्री-पुरुषके बीच जो भेद कुदरतने रख दिये हैं और जो निरी आखोसे देखे जा सकते है, अुनके सिवा कोअी भेद मुझे

मान्य नही है। अब अिस विपय पर तेरा अेक भी प्रश्न वाकी रह गया हो अैसा मुझे नही लगता।

नारणदासके वारेमें मुझे पूरा विश्वास है। वह कहे कि 'मुझे शाति है', तो मैं अशान्ति माननेको तैयार नही हू। मैंने अुसे खूब सावधान कर दिया है। दूर वैठकर अव मैं तग नही करूगा। नारणदासमे अनासक्त होकर काम करनेकी वहुत वडी शक्ति है। अनासक्त मनुष्य हमेशा आसक्तकी अपेक्षा वहुत ज्यादा काम करते हैं और खाली वैठे-से दिखते हैं। वे सवसे वादमें थकते हैं। सच पूछे तो अुन्हे थकान लगनी ही नही चाहिये। लेकिन यह तो आदर्श हुआ। तू वहा हाजिर है अिसलिअे तू अगर अशान्ति देख ले, नारणदास अपनेको धोखा देता है यह ताड ले, तो तेरा धर्म मुझसे अलग हो जायगा। तू तो नारणदासको सावधान कर ही सकती है। मैं भी वहा होअू और वह प्रत्यक्ष जो कहे अुनसे अलग ही देखू तो अुसे सावधान करू। तेरी चेतावनीके वावजूद भी वह तेरा विरोध करे, तो जहा तक तू अुसे सत्यवादी समझती है वहा तक तुझे अुसका कहना मानना चाहिये। वहुत वार हमारी आखे भी हमें धोखा देती है। मैं तेरे चेहरे पर खिन्नता देखू, लेकिन तू अिनकार करे, तो मुझे तेरी वात माननी ही चाहिये। मुझसे तू छिपाती है अैसा भय या शक मुझे हो तो दूसरी वात है। तव मुझे तुझसे पूछनेकी जरूरत नही रहती। सच्ची स्थिति जाननेके दूसरे साधन मुझे पैदा करने होगे। लेकिन आश्रम-जीवन तो अिस तरह चल ही नहीं सकता। सत्य तो अुसके मूलमे ही निहित है। वहा शुभ हेतुमे भी धोखा नही दिया जा सकता।

खादीके वारेमे या तो नारणदासके पत्रमें या वच्चोके पत्रमे तुझे पढनेको मिलेगा।

नारणदास तेल क्यो नही मलवाता, यह मालूम कर लेना।

'चौथी जुलाअी'[1] की राह जरूर देखना। कौनसे सालकी चौथी जुलाअी, अिसका विचार करना होगा। साल चाहे जो हो। महीनेकी

---

१ अुस समय अैसी भविष्यवाणी प्रकाशित हुअी थी कि चौथी जुलाअीके दिन पूज्य महात्माजी जेलसे छूटनेवाले है।

तारीख निश्चित हो जाय तो भी गनीमत है। और किसी महीनेकी या दूसरी किसी तारीखकी तो राह नही देखनी पडेगी? चौथी जुलाओी बीत जाय तो १९३३ की जुलाओी तक शान्त रहना।

बापू

विद्या पर ध्यान देनेकी जरूरत महसूस होती है। वह मूर्ख मालूम होती है। प्रश्न पूछना भी अुसे नही आता। तू देखना।

८१

[हिन्दू तिथिके अनुसार मैं अपनी वर्षगाठ मनाती आओी थी। अिस वर्ष वह १३ जुलाओीके दिन पडती थी। मैंने पूज्य महात्माजीको लिखा था कि, "मुझे आश्रममे आये तीन वर्ष हो गये, अिसलिअे मेरी अुमर अितनी ही माननी चाहिये। क्योंकि यहा आकर मेरा पुनर्जन्म हुआ। फिर आपको मेरे आश्रममे टिकनेके बारेमे शका थी (जब मैं पहली बार आपसे मिलने और यहा प्रवेश पानेकी अिजाजत लेनेके लिअे आओी थी), वह भी याद आता है।"

मैंने सुना था कि अेक बार किसीने पूज्य महात्माजीसे पूछा कि, "आपके हृदयमे अैसी कौनसी अुत्कट अिच्छा हे जिसकी पूर्तिके लिअे आप ओीश्वरसे प्रतिदिन भक्तिभावसे प्रार्थना करते है?" तब पूज्य महात्माजीने अुत्तर दिया था कि, "कलकत्तेमे कालीघाट पर रोज सैकडो बकरोकी धर्मके नाम पर बलि चढाओी जाती है। अुसे बन्द करानेके लिअे भगवानसे मैं सतत प्रार्थना करता हू।" पत्रमे मैंने यह किस्सा लिखकर पूछा था कि यह सच हे या नही।]

३०-६-'३२

चि० प्रेमा,

मैं मानता हू कि तू तीन वर्षकी हुओी। तू जो कहती है वह सच है। जब तुझे बम्बओीसे साथ लिया तब तेरे आश्रममे टिक सकनेके बारेमे मुझे शका थी। लेकिन तू सोचती हे अुतनी नही। क्योंकि अपने

वचन पर तू डटी रही। और जो अपने वचनका पक्का होता है, अुसके बारेमे मुझे शका नही रहती। मेरे वचनोमें ताना (सरकाज्म) रहा हो अैसा मुझे याद नही है, लेकिन तू जितनी टिकी अुतनी टिकेगी ही, अैसा मुझे विश्वास नही था। तू आअी अुन समयकी अपनी स्थिति मुझे याद है। मैं तो जरूर चाहूगा कि जैसे तूने तीन वर्ष बिता दिये वैसे ही तू सारा जीवन आश्रममे बिताये और वह निश्चित ढगसे रह कर — अनायास ही नही, बल्कि निश्चय करके, तू आश्रमकी है और आश्रम तेरा है, अैसा दृढतापूर्वक मान कर और जान कर। लेकिन असका आग्रह नही हो सकता। मैं तो केवल अैसी अिच्छा ही कर सकता हू। तुझे जब तक आश्रम सहज ही अपना न लगे तब तक तू निश्चय नही कर सकती। यह तो मैंने तुझे अपनी अिच्छा बताअी।

यह हुअी तेरे आश्रम-जन्मकी बात। अगला जन्मदिन १३ जुलाअीको है और यह पत्र तुझे ८ ता० के आसपास मिलना ही चाहिये। मेरा आशीर्वाद तो है ही। तेरी अूचीसे अूची अभिलाषाअे पूरी हो! अुस दिशामें तेरे प्रयत्न चल ही रहे हैं, अिस बारेमे मुझे शका नही है। अितनी आयु और अितना ही स्वास्थ्य भी साथमें होना चाहिये। वे भी रहेंगे, अैसा मैं मानता हू। लेकिन अिन तीनोका आधार आखिरमे तेरे या मेरे अूपर नही है। सब कुछ अुसे सौंप दिया है। वह चाहे वैसा करे। और वह जो करेगा सब अच्छा ही होगा।

१३ वी तारीखका तेरा हिसाब भेजना। अुस दिन तू क्या निश्चय करती है यह लिखना। जन्मतिथिके दिन कोअी न कोअी नया निश्चय करनेकी सूचना मैं सबको करता हू, यह तो तू जानती है न?

ज्योतिषीके कथनो पर बिलकुल विश्वास न रखना। अुनका विचार भी तू छोड दे। अुनके कथन सच्चे हो तो भी अुन्हे जाननेसे कोअी लाभ नही है। हानि स्पष्ट है।

तुम्हे वहा गरमी लगती है। पर यहा अच्छी ठडक रहती है। बरसातकी कमी है।

अुर्दू पुस्तकोमे पैगम्बरके जितने जीवन-चरित्र दिखाअी दें वे सब, 'अुस्वअे सहाबा' के दो भाग और 'खुल्फाअे राशदीन' तथा अग्रेजी-अुर्दू

और अुर्दू-अंग्रेजी शब्दकोश जल्दी भेजना। अगर ये पुस्तके डाह्याभाअीके पास वम्बअी भेजी जा सके, तो वे शनिवारको यहा ले आयेगे।

सारे मकान नियमित रूपसे किसी नियत दिन साफ होने ही चाहिये। सामानको खोलकर झाड-झटक कर यथास्थान रख देना चाहिये। अिसके लिअे समय निकालना अनिवार्य है।

जिसके अगमे — फिर वह व्यक्ति हो, समाज हो या सस्था हो — अपूर्णता लगे, अुसमे पूर्णता लानेका प्रयत्न करना हमारा धर्म है। अगर अुसमें गुणोकी अपेक्षा दोप वढ गये हो, तो अुसका त्याग — असहयोग हमारा धर्म है। यह शाश्वत सिद्धान्त है। यही मैने तुझे लिखा था। अिस वाक्यसे मैने तुझे आश्रम छोडने या और कुछ छोडनेकी सलाह नही दी। मैंने तो अमुक स्थितिमे मनुष्यमात्रका जो धर्म माना हे वही वताया हे।

वगालमे रोज दिन-दहाडे सैकडो भेड-वकरे काटकर कलकत्तेमे काली माताको चढाये जाते हैं। अुसे रोकनेकी योग्यता प्रदान करनेकी याचना मै ओीश्वरसे कर रहा हू। क्या तू यह नही जानती थी?

मनुष्य अपनेको गोपीकी अुपमा देता है, यह मै जानता हू। वह केवल भक्तिभावसे होता हो तो अुसमे मुझे कोअी वुराअी नही दिखाअी देती। ओीश्वरके आगे सव अवला ही हैं।

स्वराज्यमे लोग हिमालयकी चोटीकी और अुत्तरी ध्रुवकी खोज करनेके लिअे जरूर निकलेगे। सामान्य भौतिकशास्त्रोके ज्ञानको मै लाभदायी मानता हू।

मेरे आहारके प्रयोगोसे मुझे नुकसान नही हुआ। वे आठ वर्ष तक भी चले है और सात दिन भी चले हैं।

धुरन्धर नासिक गये।

'मोनोडायट' मे लाभ जरूर है।

वापू

६–७–'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तूने लिफाफेको सजानेकी कोशिश की और अुसे बिगाड दिया। बिना अुपयोगकी सजावटके बारेमें भी अैसा ही समझना। सरदार लिफाफे पर जो सजावट करते है वह सजावटके खातिर नही होती, लेकिन अुपयोगमे से सजावट पैदा होती है, अिसलिअे वह सुन्दर लगती है। लिखे हुअे लिफाफेका फिरसे अुपयोग करना हो, तो लिखा हुआ काट देना चाहिये। अिसके लिअे अुस स्थान पर नापकर कागजकी बिना कगूरेवाली परचिया चिपकाअी वे अच्छी लगी। लेकिन अिससे अुन्हे सतोष नही हुआ। अिसलिअे अब वहासे आनेवाले लिफाफोको वे अुलट लेते है, जिससे छोटी परचिया न चिपकानी पडे और लिफाफा नया जैसा लगे। यह ध्यानसे देखेगी तो तुझे पता चलेगा। तेरी कगूरेवारी परचिया आधी अुखड गअी थी, अिसलिअे बहुत बुरी लगती थी। अुपयोग तो अुनका कुछ था ही नही। अुसमें की हुअी मेहनत बेकार गअी तथा समय और अुतना कागज भी बिगडा। अुतना जनताका नुकसान हुआ। अिनमे से दो सबक लेना समझे बिना किसीका अनुकरण नही करना चाहिये। सजावटके लिअे की गअी सजावट सच्ची सजावट नही है। यूरोपमें जो बडे बडे गिरजे है अुनके बारेमें कहा जाता है कि अुनकी सारी सजावटके पीछे अुपयोगकी दृष्टि तो होती ही है। यह सच हो या न हो, परन्तु मैंने जो नियम बताया है अुसके बारेमे शकाको स्थान नही है।

अिस बारके तेरे पत्रमे अध्यक्षकी आलोचनाके सिवा दूसरी बहुत कम बातें है। मुझे तो लगता है कि यह आलोचना निरर्थक है। अिसलिअे अुसके औचित्यका विचार करनेकी जरूरत ही नही रहती। Judge not lest ye be judged वाक्य हृदयमें अुतारने जैसा है। अिससे मिलता हुआ गुजराती वाक्य याद नही आ रहा है। मराठीमें हो तो भेजना।

अुर्दू पुस्तकोकी सूची मुझे चाहिये। शिबलीकी पुस्तक तो मुझे भेज ही देना और खलीफाका जीवन-वृत्तान्त भी भेजना।

तू मरना स्वीकार करे, लेकिन मछली न खाये — यह मुझे तो अच्छा लगेगा। अिसका अर्थ क्या यह भी है कि तू कॉड-लिवर ऑअिल भी नही लेगी? मै क्या चाहता हू, अिसका विचार नही करना है। मैंने तो तेरी मानसिक स्थिति जाननेके लिअे यह प्रश्न पूछा है। तेरे भोजनमें दूध-दही अथवा/और घी वढाना चाहिये। कच्चे शाकके वदले कभी कभी तो पके फल होने ही चाहिये। पपीते पकते ही नही? टमाटर नही होते? पत्ताभाजी किसी भी तरहकी नही होती? तू स्वय ही थोडे टमाटर क्यो न वोये? वैसे ही लेटूस खूव तेजीसे वढते है। कच्चा पपीता अधिक नही खाया जा सकता, हमेशा भी नही खाया जा सकता। खर्चका विचार किये विना अितना परिवर्तन तू भोजनमे करना। गरम पानीमे कटिस्नान जारी रखना। जहा दर्द होता है वहा मालिश करानेकी जरूरत तो है ही। कोअी भी लडकी खुश होकर मालिश कर देगी।

विद्याकी मूढता प्रेमसे जायगी। रामभाअू[1]का मामला जरा कठिन है। लेकिन अुसका अेक ही अुपाय है। अुस पर तीन शक्तिया काम करती है। अिसलिअे अगर तीनो अेक ही दिशामे न चले तो मुसीवत है। वे तीन शक्तिया है पडितजी, लक्ष्मीवहन और तू या जिसकी अुस पर देखरेख हो वह। अिस कठिनाअीको भी पार कर जाना और मार्ग निकालना यह प्रेमका काम है। तेरे भीतर प्रेम जितना विशाल होगा अुतनी ही तेरी शक्ति अैसे वालकोको सुधारनेमे मददगार सावित होगी।

आश्रमकी वडी लडकियोके वारेमे अपने भीतर तू अुदारता पैदा करना। क्योकि वे दोषी होकर घर नही वैठती, लेकिन लाचार हो जाती है अिसलिअे। अुनकी लाचारीको तू या मै नही नाप सकते। यह नाप तो लडकिया ही निकाल सकती है। वह गलत भी हो सकता है। अुनकी दृष्टिमें गलत न हो तो अितना काफी है। वडी लडकियोमे से कुछको ले। आनन्दी[2], कुसुम[3], । ये सव क्या करे? आनन्दी कामचोर नही

---

१ स्व० श्री नारायण मोरेश्वर खरेके पुत्र।

२ श्री लक्ष्मीदासभाअी आमरकी लडकी।

३ श्री कुसुम गाधी। श्री नारणदास काकाकी मानी हुअी लडकी। श्री रतुभाअी अदाणीकी पत्नी।

है, कुसुम तो हरगिज नही है। पर दो बच्चोका भार है। बच्चोको तालीम कैसे दी जाय अिसे वह शायद ही जानती है, अितनेमें मा बन बैठी। अब अुससे कितने कामकी आशा रखी जाय? दूसरी तो जो तेरे ध्यानमें हो वे सही। अिनका न्याय हम सोना या मोती तोलनेके काटेसे नही कर सकते। और तू अनुभव होने पर देखेगी कि जैसे जैसे तुझमें अुदारता बढेगी वैसे वैसे लोगोसे काम लेनेकी तेरी शक्ति बढेगी। यह सही है या गलत यह तो दैव ही जाने, लेकिन अैसा कहा जाता है कि मै लोगोसे बहुत ज्यादा काम ले सकता हू। यह सच हो तो अुसका कारण यह है कि लोगोके बारेमें मुझे चोरीका शक ही नही होता। वे कर सकें अुतने कामसे मै सन्तोष कर लेता हू। लेकिन ज्यादा कामकी माग करू तो वे ज्यादा करेगे। कुछ लोग अैसा भी कहते है कि लोग मुझे जितना ठगते है अुतना और किसीको शायद ही ठगते होगे। यह परीक्षा सच निकले तो भी मुझे पश्चात्ताप नही होगा। मै दुनियामे किसीको धोखा नही देता, अितना प्रमाणपत्र मुझे मिले तो वह मेरे लिअे काफी है। अैसा प्रमाणपत्र कोअी मुझे न दे तो न सही, लेकिन मै तो अपने आपको देता ही हू।

मुझे असत्य सबसे बुरा लगता है।

'ज्यादासे ज्यादा लोगोका ज्यादासे ज्यादा भला'[1] और 'जिसकी लाठी अुसकी भैस'[2] के नियमको मै नही मानता। सबका भला, सर्वोदय और 'कमजोर पहले' — यह नियम मनुष्यके लिअे है। हम दो पैरवाले मनुष्य कहलाते है, लेकिन चौपायोके स्वभावको अभी तक छोड नही सके है। अुसे छोडना हमारा धर्म है।

बापू

---

१ Greatest good of the greatest number.

२ Survival of the fittest

यo मo
१७–७–'३२

चिo प्रेमा,

तेरा भाग्य ही फूटा समझू क्या? मैंने तो वर्षगाठका आशीर्वाद लौटती डाकसे भेजा था। लेकिन मेरा पत्र अवरमें ही लटक गया। कही कल न रवाना हुआ हो? लेकिन कागज पर लिखे हुअे आशीर्वादमे क्या वनेगा? हृदयका आशीर्वाद हो तो काफी समझना चाहिये। और वह तो था ही। हृदय किम ढगसे काम करता है, अिमका हमें पता भी नही चलता। लेकिन सत्य यही है, वाकी सव मिथ्या है।

कमरके दर्दका अिलाज तुरन्त करनेकी जरूरत है। अुमका मर्वध मासिक धर्मके साथ हो सकता है। तुझे ठीक समय पर होता है? आनन्दी, मणि और मगलाके वारेमे भी मुझे यह शका होती है। तू अुन लडकियोमे वात करके मालूम कर लेना। मभव हे मणिको मासिक धर्म शुरु हो गया हो। मणि आश्रममें आअी तव तीन वर्षकी थी, अैमा मुझे याद है। अिस समय अुसे सोलहवा वर्ष चलता होगा। मगला भी शायद अितने ही वर्षकी हो। सव ठीकसे जान लेना।

जो नअी वहने आअी हैं अुनमे से कोअी लिखना जानती हो, तो अुनसे मुझे लिखनेके लिअे कहना। नर्मदा[1]को अच्छी तरह पहचान लेना। अुसकी कहानी दु:खद है।

---

१ सौराष्ट्रकी अेक होशियार लडकी। वह विवाहित थी, लेकिन अुसे अुस समय विवाहित जीवन पसन्द नही था। मत्याग्रह करके जेल गअी। अुसका पति अुसे लेने आया तो अुसके साथ जानेसे अुमने अिनकार कर दिया। अेक सज्जन, परोपकारी कार्यकर्ताके प्रयत्नसे अुसका विवाह-विच्छेद हो गया। फिर वह मस्कार-ग्रहण करनेके लिअे सत्याग्रह आश्रममें आकर रही।

मेरी स्मृतिके अनुसार नर्मदाका सवध-विच्छेद करानेमे पूज्य महात्माजी भी मध्यस्थ हुअे थे।

प्रेसिडेन्ट विलसनके जीवनका मुझे परिचय नही है। जो सुना है अुसके अनुसार तो वह भला आदमी था और अुसके हेतु भी अच्छे थे।

पिछले युद्धसे लाभ हुआ अैसा नही मालूम होता। नीतिका बल कमजोर पडा है। द्वेष बढा है। लडनेकी वृत्ति कम नही हुअी है। लालच बढ गया लगता है।

किसी मनुष्य या वस्तुको ध्यानमे रखकर प्रार्थना हो सकती है। अुसका परिणाम भी आ सकता है। लेकिन अैसे अुद्देश्यके बिना की गअी प्रार्थना आत्मा और जगतके लिअे अधिक कल्याणकारी हो सकती है। प्रार्थनाका असर खुद पर होता है। अर्थात् अुससे अतरात्मा अधिक जाग्रत होती है। और जैसे जैसे जागृति बढती है वैसे वैसे अुसके प्रभावका विस्तार बढता जाता है। अूपर हृदयके बारेमे मैने जो बात लिखी वह यहा भी लागू होती है। प्रार्थना हृदयका विषय है। मुहसे बोलना वगैरा क्रियाअे हृदयको जाग्रत करनेके लिअे है। जो व्यापक शक्ति बाहर है वही भीतर भी है और अुतनी ही व्यापक है। शरीर अुसके रास्तेमें बाधक नही होता। बाधा हम पैदा करते है। प्रार्थनाके द्वारा वह बाधा दूर होती है। प्रार्थनासे अिच्छित फल प्राप्त हुआ या नही, अिसका हमें पता नही चलता। मै नर्मदाकी मुक्तिके लिअे प्रार्थना करू और वह दुखमुक्त हो जाय, तो मुझे यह नही मान लेना चाहिये कि वह मेरी प्रार्थनाका फल है। यह प्रार्थना निष्फल कभी नही जाती, लेकिन क्या फल देती है यह हमे मालूम नही होता। अिसके सिवा, हमारा सोचा हुआ फल मिले तो वह अच्छा ही है अैसा भी नही मानना चाहिये। यहा भी 'गीताबोध' का अमल करना है। प्रार्थना अनासक्त होनी चाहिये। किसीके बारेमें प्रार्थना की हो तो भी अनासक्त रहा जा सकता है। किसीकी मुक्ति हमें अिष्ट लगे अिसलिअे अुसकी प्रार्थना करे। लेकिन वह मिलती है या नही, अिस बारेमे हम निश्चिन्त रहे। विरुद्ध परिणाम आने पर यह माननेका कोअी कारण नही कि प्रार्थना निष्फल ही गअी। अिससे अधिक स्पष्टीकरण करू क्या ?

अुर्दू पुस्तकोकी सूची मैंने मागी है, यह याद रखना। अब तो यह पत्र तुझे कब मिलेगा और तेरा अुत्तर मुझे कब मिलेगा, यह निश्चित

नही है। अनिश्चिततामे निश्चितता पैदा करना और निश्चितता देखना हमारा काम है।

बापू

८४

२४–७–'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अब मै कितने पत्र लिख सकूगा, यह कहा नही जा सकता। पत्रोके अूपर तलवार झूल रही हे। यहासे पत्रोके निकलनेमे जो देर होती है वह अगर होती रहे, तो पत्र लिखनेमे मुझे कोअी सार नही दिखाअी देता। आनेवाले पत्र मुझे तो अब नियमपूर्वक दिये जाने लगे है। जानेवाले पत्रोके बारेमे अभी पत्रव्यवहार चल रहा हे। अगर मेरे पत्र बिलकुल न आवे तो समझना कि मेरी गाडी अटक गअी है। लेकिन अिससे घबराने या अुदास होनेका कोअी कारण नही है। लिखने देना या न लिखने देना सरकारके हाथमे है। कैदी अधिकारके रूपमे पत्र लिखनेकी माग नही कर सकता। अितने दिन तक लिखते रहे अिससे कोअी अधिकार नही पैदा हो जाता। और जिस चीजके बारेमे हमे कोअी अधिकार नही है वह हाथसे चली जाय, तो दुःख मानना ही नही चाहिये।

तेरी वर्षगाठके अुपलक्ष्यमे लिखा आशीर्वादका मेरा पत्र अब तो तुझे मिल ही गया। देरसे मिला अुसकी क्या चिन्ता? शायद अिससे अुसकी कीमत बढ गअी। नही मिला अिसमे अपशकुन माननेकी तो कोअी बात ही नही थी। मुझे तेरा पत्र मिले और मैं आशीर्वाद न भेजू, यह तो हो ही नही सकता। अनसोचा विघ्न खडा हो जानेके कारण न मिले या देरसे मिले, तो अिसमे अपशकुन कैसा? और सच पूछा जाय तो अनासक्तके लिअे अपशकुन जैसा कुछ होता ही नही। अिसलिअे यह कभी न मानना कि तेरा नया वर्ष अच्छा नही बीतेगा। बुरा तो तब बीते जब हम कुछ बुरा सोचे, बोले या करे। और वह तो हमारे बसकी बात है।

गलेकी गिल्टिया कटवानेकी डॉक्टरकी राय है तो कटवा डालना। पहले भी अैसी ही राय दी थी न? अिसमें देर नही लगती। कोअी खतरा हो अैसा भी नही जाना। तेरा शरीर बिलकुल रोगरहित हो जाना चाहिये। मै मानता हू कि आखिर तो अपने शरीरका पता खुद हमें ही ज्यादा होता है।

डॉक्टरोको रोगीके कहने पर बहुत कुछ आधार रखना पडता है। यही बताता है कि अगर बीमार अपने शरीरको न पहचाने, तो डॉक्टरको ठीक जवाब नही दे सकता। 'सिर दुखता है' अितना कहनेसे डॉक्टर क्या कर सकता है? सिर किस कारणसे दुखता है अिसकी जानकारी बीमारको होनी चाहिये। अैसा और कष्टोके बारेमें भी होता है, अिसे हम समझ सकते हैं। यही बात अुपचारको भी लागू होती है। अमुक अुपचारका क्या असर हुआ, यह डॉक्टर अपने आप नही जान सकता। अुसे बीमार पर आधार रखना पडता है। लेकिन सभी बीमार अुपचारके असरको नही पहचान सकते। भोजन शरीरके लिअे प्रतिदिनका अुपचार है। अुसका असर तो खानेवाला ही जान सकता है। अिसलिअे जिसने हवा, पानी और आहारके असरको पहचाना है, वह अपने शरीर पर जितना काबू रख सकता है अुतना डॉक्टर कभी नही रख सकता। अिसलिअे मुझे लगता है कि हम सबको शरीरके बारेमें सामान्य ज्ञान प्राप्त कर ही लेना चाहिये। अिसी प्रकार हवा, पानी और आहारके बारेमें भी जान लेना चाहिये। यह ज्ञान प्राप्त करने जितना साहित्य तो आश्रममें है ही। सारा साहित्य पढनेकी जरूरत नही है। अुसमे से थोडा पढ लिया हो तो काम चल जायगा। शिवाजीने अपने प्रयत्नसे अपना शरीर अुत्तम बनाया था। अपने बारेमें तो मै यह मानता ही हू कि अगर मैने अपना काम चलाने लायक ज्ञान अिस विषयमें प्राप्त न कर लिया होता, तो मै अिस दुनियासे कभीका कूच कर गया होता। मेरा दुर्बल शरीर भी मेरी सावधानीसे ही टिका हुआ है। अुसमें डॉक्टरोका बहुत ही थोडा हाथ है, अैसा मेरा विश्वास है।

[पूज्य महात्माजीने आश्रममे यह नियम बनाया था कि हर कार्यकर्ता अपना बारीक सूत आश्रमको यज्ञार्थ दे दे और अपने कपडे बुनवानेके लिअे थोडा मोटा सूत आश्रमसे मिले तो ले ले। पूज्य बाको अपनी साडियोके लिअे पूज्य महात्माजीके सूतकी जरूरत थी। बाको वह सूत मिलना ही चाहिये, यह दलील मैने पूज्य महात्माजीसे की थी। क्योकि अन्य चीजोके साथ साथ महात्माजीका सूत भी अुस समय मै सभालती थी।

'किसीका न्याय मत करो, नही तो दूसरे तुम्हारा न्याय करेगे', अिस कहावतका मैने अुस समय कुछ अैसा अर्थ किया था "दूसरे मेरी आलोचना करेगे अिस डरसे मै दूसरेकी आलोचना न करू, तो मै डरपोक सिद्ध होअूगी। मुझे डरपोक नही बनना है। चाहे सारी दुनिया मेरी आलोचना करे, लेकिन जो मुझे ठीक लगता है वह मै क्यो न कहू? मुझे दुनियासे डरनेका क्या कारण है? मै दुनियाकी परवाह नही करती।"]

३०-७-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी मूर्खताका पार ही नही दीखता। क्रोधमे आती है तब तुझे भान ही नही रहता। जिस पत्रमे क्रोधको जीतनेके व्रतके बारेमे लिखती है, अुसीमे तू क्रोध करती है, और वह भी बिना कारण। मेरे मीठे अुलाहनेका कारण ही तू नही समझी। जो कगूरेवाली परची लिफाफे पर तूने चिपकाअी थी अुसमे सजावट या कला नही थी, अैसी मेरी शिकायत थी। जो कला पर समय खर्च करता है अुसे मै अुलाहना नही देता। अिसमे तो कोअी कला ही नही थी। लिफाफे पर अिस तरह परची चिपकानेमे क्या कला हो सकती है? फिर अुसे चिपकाया भी अिस तरह कि आधी तो अुखड ही गअी। अिसलिअे तूने बिना विचारे क्रोध किया। मुझे तो अिस पर हसी ही आअी। पास होता तो अेक चपत लगाता। लेकिन तू गिरी अुसका क्या? अिसमें अितना समय गवाया। न करने जैसी दलील की और अपना शरीर

बिगाडा। क्योंकि क्रोधका शरीर पर बहुत बुरा असर होता है, यह भौतिक-शास्त्रियोंने प्रयोग करके खोज निकाला है। हमारे यहा तो अैसा माना ही जाता है। तेरा व्रत टूटा सो अलग। दुबारा अैसा क्रोध मत करना। और, मेरी आलोचना तो मीठी आलोचना थी। अुसे समझने जितनी बुद्धि भी तू खो बैठी।

मेरे पत्रोका तू भरोसा मत रखना। पता नही कब तक लिख पाअूगा। अिसलिअे न मिले तो दुखी मत होना। वहासे तो लिखती ही रहना। मुझे मिलना बद हो जायगा तो मै लिखूगा। अितनी-सी खबर भी न दी जा सके तो भी लिखा हुआ बेकार नही जायगा।

नये फूलोको मेरी ओरसे प्रणाम करना। किसी दिन अुनके बीच सोनेकी आशा रखता हू, अैसा कहकर अुन्हे आश्वासन देना।

तू बडी मानिनी है। फूलोके आसपास थोडे टमाटर और हरी भाजी बो दे, तो तुझे बारहो महीने खानेको मिलें और तेरे शरीरको लाभ हो। शरीर तेरा नही है, तुझे सौंपी हुअी अीश्वरकी वस्तु है, यह तू समझ ले, तो तू अुसकी रक्षाके लिअे समय जरूर दे। अैसे पौधोको बहुत समय नही देना पडता। वे जमीन भी बहुत थोडी रोकते है। मेरे अेक अग्रेज मित्र, जो दक्षिण अफ्रीकामे मेरे साथ रहते थे, बिना मेहनत किये थोडे ही दिनोमे कच्ची खाअी जानेवाली क्रैस नामकी हरी भाजी अुगाया करते थे।

लडकियोकी बीमारीके बारेमे तो मैने तुझे लिखा है। गहराअीमें जाकर (कारण) मालूम करना। रामभाअूके बारेमें मुझे तो डर था ही। लेकिन तुझे अुसने सब कुछ कह दिया है, अिसलिअे तू अुसे (प्रेमसे) जीतना।

तेरा वजन घट गया है, तो तुझे फल लेने ही चाहिये। थोडा ज्यादा खर्च हो तो होने देना। खर्च बचानेका लोभ करके शरीरको बिगडने देनेमें क्या लाभ है? जो खानेके बारेमे सच है वही आरामके बारेमें भी है। तुझे दोपहरको थोडा आराम आग्रह रखकर लेना ही चाहिये। अितना समय कैसे बच सकता है यह मेरे बतानेकी जरूरत नही है। अितना समय बचाना ही है, यह निश्चय कर ले तो तू बचा सकती है।

अव तेरी कठिनाअियोके वारेमें।

(१) व्यक्तिपूजाके वदले गुणपूजा करनी चाहिये। व्यक्ति वुरा भी निकल सकता है और अुसका नाश तो होता ही है। गुणका नही होता।

(२) आश्रमके सचालक-वर्गके ज्यादातर लोग अच्छे नही लगते, तो अुन्हे सहन करना सीखनेका यह सुनहरा मौका है। दोपरहित तो कोअी नही है। और हमारे जैसे ही सवको माननेकी अिच्छा रखे, तो अच्छा लगने न लगनेका सवाल ही अुड जाता है।

(३) आश्रमके तत्त्व यदि मान्य है, तो अुनके वाह्य स्वरूपके वारेमें पैदा होनेवाले मतभेदकी चिन्ता नही होनी चाहिये। हमें काम तत्त्वके साथ होना चाहिये, वाह्य स्वरूपके साथ नही।

(४) तेरे स्वभाव-दोष निकालनेके लिअे आश्रममे रहना तेरा धर्म है।

(५) तेरे ध्येय तक तू आश्रममे न पहुच सके तो दोप तेरा है। आश्रममें पूर्ण स्वतत्रता है।

(६) तेरे प्रियजनोका आकर्पण तुझे आश्रमसे वाहर किसलिअे ले जाय? अुनका प्रेम अुन्हे जरूरत पडने पर आश्रममे ले आयेगा। प्रेमको भौतिक सान्निध्यकी जरूरत नही होती। और अगर हो तो वह प्रेम क्षणिक ही माना जायगा। अेकके शुद्ध प्रेमकी कसौटी दूसरेके वियोगमें—दूसरेकी मृत्युके वाद—होती है। लेकिन यह सव तो वुद्धिवाद हुआ। तेरा हृदय जहा रहेगा वही तू रहेगी। तेरा हृदय यदि आश्रमको अपने भीतर न समा सके, तो मै क्या कर सकूगा और तू भी क्या कर सकेगी?

मेरे सूतकी साडिया तो वुन ही जानी चाहिये। मैने सूतके वारेमे अपने विचार प्रगट किये, अुससे पहलेका यह सूत है। सच पूछा जाय तो वह वाके लिअे रखा गया है। अिसलिअे अुसका त्याग तो वाको करना हैं। मुझे नही करना हे। वा वहुत मोटी साडिया पहन ही नही सकती। अिसलिअे आश्रमकी ओरसे भी अुमे सामान्य रूपसे वारीक साडिया ही मिलेगी। अिस दृष्टिसे भी मेरे सूतकी साडी वा खुशीसे पहने। अव आगेके सूतके वारेमे तो कडाअीसे नियमका पालन होना चाहिये। लेकिन

अुसमे भी मैं वा पर जवरदस्ती नही करूगा। मैं चाहता हू कि वा खुशीसे अुसका त्याग करे और अुसके हिस्सेमें जो आ जाय अुसीसे सन्तुष्ट रहे। लेकिन यह तो हुअी भविष्यकी वात। अभी तो मेरा नया सूत सारा यही है। चाहे जो हो, मेरा सूत पडा नही रहना चाहिये। किसीका भी नही पडा रहना चाहिये। वुनने जितना हो जाय कि तुरन्त अुसका ताना पड जाना चाहिये।

वुरन्धर[1] के वारेमे तो तुझे मालूम हे। लीलावती[1] कातती है, अैसा मैं मानता हू। लेकिन तूने लिखा वह तो ठीक हे ही। वहुत-सी वहने कताअी छोडकर कसीदेका काम पसन्द करेगी। यह तो जैसा खानेमे हे वैसा ही काममे हे। रोटी छोडकर पकौडीकी तरफ खानेवालेका मन दौडेगा। रोटी पर कायम रहनेमे सयम हे, त्याग है, पकौडी पर जानेमे स्वच्छदता है। अिसी तरह कताअी पर कायम रहनेमें सयम है, दूसरी वस्तुओ पर जानेमें (अनुपातमे) स्वच्छदता है।

'किसीका न्याय मत करो, नही तो दूसरे तुम्हारा न्याय करेंगे' —पर तेरी आलोचना तुझे शोभा नही देती। तू अुसका अर्थ ही नही समझी। तेरी आलोचनामे वहुत अहकार भरा हे। 'नही तो दूसरे तुम्हारा

---

१ दोनो जेलमे थे। आश्रमकी जो वहने जेल गअी थी वे जेलमें कताअीकी अपेक्षा कसीदेका काम ज्यादा पसन्द करती थी, अैसी खवर मिली थी।

लीलावतीवहन वाल-विधवा थी। दाडी-कूचसे कुछ महीने पहले आश्रममें सस्कार ग्रहण करनेके लिअे आअी थी। श्री गगावहनके साथ वे आन्दोलनमे शामिल हो गअी। अनेक वार जेल गअी। अुन्हे पढनेका वहुत शौक था। डॉक्टर वननेकी आकाक्षा थी। सन् १९३० में शुरू हुआ आन्दोलन स्थगित हो गया अुसके वाद वे काफी समय तक राजकोटमें रही और पूज्य महात्माजी सेवाग्राममे रहने लगे अुसके वाद वे महात्माजीकी अिजाजत लेकर वहा गअी। पढनेका शौक वहुत होनेसे पूज्य महात्माजीने ववअीमे अुन्हे सारी सुविधाअें दिला दी। लगनसे पढकर अुन्होने अपनी अिच्छा पूरी की। डॉक्टर वननेके वाद वे वर्षोंसे अलग अलग अस्पतालोमें काम कर रही हैं।

न्याय करेंगे' का अर्थ तो यह है कि हमें अैसे दोषमें नही पडना चाहिये जिसका दूसरे न्याय करें। जगतके सामने हम अुद्धत न बनें। 'भले दुनियाको जो कहना या करना हो सो कहे या करे' अैसा विचार या अैसा वचन हम कैसे प्रकट कर सकते हैं? दुनियाके सामने हम रक है, यानी हम सत्यमार्ग पर चलते है तब भी जगतको दड नही देते, अुसका न्याय नही करते, परन्तु जगतके दडको, न्यायको हम सहन करते है। अिसीका नाम नम्रता या अहिसा है। तूने जो लिखा वह व्यगमे या क्रोधमे लिखा गया हो, तो भी मै चाहूगा कि तू अैसा न लिखे। मुझ पर तूने जो क्रोध निकाला है अुसकी चिन्ता नही है। अुसे तो मै हसकर टाल सकता हू। लेकिन तेरा यह वचन मुझे डककी तरह चुभता है। तेरी कलमसे अैसे वाक्य नही निकलने चाहिये, अर्थात् अैसे विचार भी तेरे मनमे नही आने चाहिये। जो विचार आया अुसे मेरे सामने रख दिया, यह ठीक हुआ। मेरे सामने रखा अिसलिअे तो मै अुसे सुधार सकता हू। यह अश अिसलिअे नही लिखा कि तू मुझसे अपने विचार छिपाये। मै तो पागल, अुद्धत या नम्र जैसी भी तू है वैसी ही तुझे देखना चाहता हू। लेकिन मेरी तो माग यह है कि अुपरोक्त विचार भी तू अपने हृदयमे न आने दे।

लडकिया जोरसे मालिश न कर सकती हो तो अुन्हे सिखाना चाहिये। मालिशमे शरीर-बलकी नही, युक्तिकी जरूरत है।

अब तू जो साहित्य पढ रही है अुसके बारेमे। तूने लिखी वैसी मान्यता अेक समय थी, आज नही है। मेल्थूस[1] की लिखी कुछ बाते लोग समझे नही और कुछ बाते गलत है। जो नियम मनुष्येतर प्राणियो पर लागू होता है, वह मनुष्य पर नही होता। मनुष्येतर प्राणी दूसरे जीवोको मारते हैं और अुन्हे खाकर जीते हैं। मनुष्य अिस स्थितिमे से निकलनेका प्रयत्न करता है। अिसीमे अुसकी अहिसा है। शरीर है तब तक वह पूर्ण अहिसा सिद्ध नही कर सकता, लेकिन भावनाके रूपमे अहिसाका पोषण

---

१ टॉमस रॉबर्ट मेल्थूस (१७६६–१८३४)। अेक अग्रेज अर्थशास्त्री, दुनियामे खुराककी अपेक्षा आबादीकी वृद्धि ज्यादा तेजीसे हो रही है, अिस बारेमे अुसका निबन्ध प्रसिद्ध है।

करे तो कमसे कम हिंसासे वह अपना निर्वाह कर सकता है। खुद मर कर दूसरोको जीने देनेकी तैयारीमे मनुष्यकी विशेपता है। जैसे जैसे मनुष्य बढते है वैसे वैसे खुराक भी बढती है। अभी अुसमे और भी बढनेकी शक्ति है। डार्विन[1] की खोजके बाद तो बहुतसी नअी खोजे हुअी है। जो पुस्तक तू पढ रही है वह पुरानी मालूम होती है। नअी हो या पुरानी, 'बडीसे बडी सख्याका भला' और 'जिसकी लाठी अुसकी भैंस' के सिद्धान्त गलत है।

अहिंसा सबके भलेका विचार करती है। अीश्वरके यहा सबके भलेका ही न्याय होता है। यह न्याय कैसे दिया जाय और अैसे न्यायमे मनुष्यका कर्तव्य क्या है, यह खोजना हमारा काम है। अिस नीतिसे विरुद्ध नीति प्रस्तुत करना हमारा काम नही। लेकिन यह विपय बडा है। मैंने तो सक्षेपमे थोडासा बताया है। तुझे अिस पर ज्यादा चर्चा करनी हो तो प्रश्न करना।

बापू

८६

[पूज्य महात्माजी बहुत बार 'अन्तरकी आवाज' की बात करते थे। मैंने अुसका स्पष्टीकरण मागा था।

आश्रमके पुस्तकालयमें मैं पुस्तकोकी सूची बना रही थी। अुर्दू पुस्तकोका बाहरी रूप आकर्पक तो था ही नही, मजबूत भी नही था। अिसलिअे मैंने आलोचना की थी।]

यरवडा मदिर,
३-८-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पहली तारीखका पत्र मिला। छात्रालयमें होनेवाली भीडसे तू घबराती नही होगी। अच्छी लडकिया हो तो कोअी तकलीफ नही

1 चार्ल्स रॉबर्ट डार्विन (१८०९-१८८२)। प्रसिद्ध अग्रेज प्राणिशास्त्री।

होगी। और अगर हम अनासक्तिका पाठ अच्छी तरह सीख सके हो, तो भी कोअी दिक्कत नही आयगी। दूसरे लोग तो तेरे शरीरके लिअे मुख्यत बाहरी अुपाय ही बता सकते है। अन्तरकी बात तो तू ही ज्यादा जान सकती है। मनोवैज्ञानिको पर मुझे बहुत विश्वास नही है। चाहे जैसे अनुभवी शास्त्री भी क्यो न हो, मनुष्यके मनको वे भी आखिर कहा तक जान सकते है? अिसलिअे तेरी तबीयतका मनके साथ जो सबध हो, अुसे तो तुझे ही पहचान लेना चाहिये, और जरूरी अुपचार करना चाहिये। लेकिन अिसी पत्रमे तूने यह भी लिखा है कि हलके या भारी कामका और नीदका या अुसके अभावका शरीर पर असर हुअे बिना नही रहता। अिसलिअे सच तो यह है कि भीतरी और बाहरी दोनो वस्तुओका शरीरके स्वास्थ्यके साथ सबध है। बाह्य साधनोकी अुपेक्षा करके केवल मनसे कोअी भी अपने शरीरको नीरोग नही रख सका है। अिसलिअे नीद, आराम और कामके बारेमे नारणदास जो कहे अुसे तू सुन और मनके बारेमे तू स्वय मालूम कर ले। किसी भी अुपायसे शरीरको तू फौलाद जैसा बना ले। मासिक धर्म चालू हो तब गरम पानीमे नही बैठना चाहिये, यह मुझे पहले ही लिखना चाहिये था।

अन्तरकी आवाज अवर्णनीय वस्तु है। लेकिन कुछ अवसरो पर हमे अैसा लग ही जाता है कि अन्तरमे से अमुक प्रेरणा हुअी है। जब मैने अन्तरकी आवाजको पहचानना सीखा वह काल मेरा प्रार्थना-काल कहा जा सकता है। यानी १९०६ के आसपास। तूने पूछा है अिसलिअे याद करके यह लिखा है। वैसे मेरे जीवनमे अैसा कोअी अवसर नही आया जब मुझे लगा हो कि 'अरे, आज तो कुछ नया ही अनुभव हुआ!' जैसे बिना जाने हमारे बाल बढते है, वैसे ही मेरा आध्यात्मिक जीवन बढा है अैसा मै मानता हू।

नामजपसे पापोका हरण अिस तरह होता है। शुद्ध भावसे नाम जपनेवालेमे श्रद्धा तो होती ही है। नाम जपनेसे पाप-हरण होता ही है, अैसे निश्चयसे वह आरम्भ करता है। पाप-हरणका अर्थ है आत्मशुद्धि। श्रद्धापूर्वक नाम जपनेवाला कभी थकता ही नही। अिसलिअे जो जिह्वासे बोला जाता है वह आखिर हृदयमे अुतरता है और अुससे शुद्धि होती

है। अैसा अनुभव निरपवाद हे। मनोवैज्ञानिक भी यह मानते है कि मनुष्य जैसा सोचता है वैसा ही वन जाता है। रामनाम अिसका अनुसरण करता है। नामजप पर मेरी अटूट श्रद्धा है। नामजपकी शोध करनेवाला अनुभवी मनुष्य था और यह खोज अत्यन्त महत्त्वकी है अैसा मेरा दृढ मत है। निरक्षर मनुष्यके लिअे भी शुद्धिका द्वार खुला होना चाहिये। वह नामजपसे होता है। (देखना गीता ९-२२, १०-१०)। माला अित्यादि गिनती करके अेकाग्र होनेके साधन है।

विद्याम्यास सेवाके लिअे ही होना चाहिये। लेकिन सेवामे अपूर्व आनन्द रहता है, अिसलिअे विद्या आनन्दके लिअे है, अैसा कहा जा सकता है। लेकिन कोअी भी आज तक सेवाके विना केवल साहित्य-विलाससे अखड आनन्द अनुभव कर सका हो, अैसा जाननेमें नही आया।

कला किसी देश या व्यक्तिका अेकाधिकार नही होती। जिसमें छिपानेकी जरूरत है वह कला नही है।

प्रत्येक देशको अपने अुद्योगोकी रक्षा करनेका अधिकार है और वह अुसका धर्म है।

निराश्रितको आश्रय देना अहिंसक मनुष्यका धर्म है। निराश्रित कौन हे, यह तो प्रत्येक परिस्थिति परसे ही वताया जा सकता है।

जो वाहरसे वुरा दिखता है वह अन्दरसे भी वुरा ही हो, अैसा कोअी नियम नही हे। अुर्दू पुस्तके वाहरसे वुरी दिखती है, यह प्रकाशित करनेवालेकी गरीवीको प्रगट करता है। लेकिन अुनके अन्दरके लेख अुत्तम क्यो नही हो सकते? कुछ पुस्तकोमें होते ही है। लेकिन यह सूची वनानेमें रसकी वात ही क्यो अुठनी चाहिये? सूची वनानी है अिसलिअे अुसमें रस आना ही चाहिये, क्योकि कर्तव्यमें रस है। तू कभी थोडी अुर्दू सीख लेनेकी मेहनत करे, तो स्वतत्र रूपसे भी तुझे अुनमें रस आ सकता है।

वापू

[पूज्य महात्माजी मुझे आश्रमको 'अपना' समझनेकी और अपनेको आश्रमकी समझनेकी सतत शिक्षा देते रहते थे। मैं लिखती थी, "आप मुझे प्रिय है अिसलिअे 'आपका' आश्रम मुझे प्रिय है। आश्रमका स्वतत्र रूपसे मेरे हृदयमे स्थान नही है।" प्रेमको आलम्बन चाहिये, प्रेमको स्पर्शकी आवश्यकता होती है, क्योकि वह मानव स्वभावके लिअे सहज होता है। अैसी अैसी दलीले मैं किया करती थी। पूज्य महात्माजी मेरी अिस भावनाका अूर्ध्वीकरण (Sublimation) करनेका प्रयत्न करते थे।

प्रेम और भक्ति दोनोमे थोडा भेद है। प्रेममें विकार दोषरूपमें पैदा हो सकते हैं। भक्ति तो शुद्ध प्रेम है। जिसमें विकार हो वह भक्ति ही नही हे। भक्तिको योगोकी भी रानी कहते हैं। नारद मुनिसे लेकर स्वामी रामकृष्ण परमहस तक सभी भक्त और सन्त पुरुष भक्तिप्रेममें ओतप्रोत थे। आत्म-साक्षात्कार होनेके वाद, जीवन्मुक्तिकी अवस्था तक पहुचनेके वाद भी अुन्होने सगुणोपासना चालू रखी थी। अैसा न करते तो वे सव कभीके देह छोडकर विश्वरूप हो जाते। देहधारियोके मनकी यह मर्यादा है कि प्रेमभक्तिके लिअे अुन्हे कोअी आलम्वन जरूर चाहिये। और भगवान ही अुनका आलम्वन है। केवल मनके लिअे ही आलम्वनकी आवश्यकता नही रहती, लेकिन शरीर तथा अिन्द्रियोके लिअे भी आलम्वनकी आवश्यकता रहती है। सन्तोका साहित्य पढनेके वाद, अुनका चिन्तन-मनन करनेके वाद मेरा यह मत कायम रहा हे।

'ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या' कहकर मायावादका — विवर्तवाद — का मडन करनेवाले तत्त्वज्ञानियोके चक्रवर्ती शकराचार्यने भी गाया है - 'दामोदर गुणमदिर सुन्दरवदनारविन्द गोविन्द।' सन्तोने ब्रह्मको सगुण रूपमे प्रस्तुत किया, यह अुनका लोगो पर महान अुपकार है। भक्तजन आख, कान, जीभ, स्पर्श सभी अिन्द्रियो द्वारा अीश्वरकी प्रतीतिका मधुर अनुभव लेनेकी लालसा रखते हैं। अिसीलिअे स्पर्शमें दोष नही है, अुसके पीछे रही भावनामे दोष हो सकता है। अैसा मेरा मत था और है।

यही चीज मैं पूज्य महात्माजीके सामने रखनेका प्रयत्न अपनी अुस समयकी शक्तिके .अनुसार करती थी। लेकिन मेरी छोटी अुमर और कच्चे अनुभव अिन दोनोंके कारण मेरी दलीलोंका कोअी मूल्य नही आका जाता था, अिसमे पूज्य महात्माजीका दोष नही था। अुस समय यही परिणाम स्वाभाविक था।

पूज्य महात्माजी भक्तिकी वाते तो करते थे। अपने सर्जनहारके सामने हम सव वालक है, यह भी कहते थे। फिर भी भक्तिमार्गके सन्त भगवानके सामने जिस तरह लाडले वालक वन जाते थे, अुसी तरह पूज्य महात्माजीने अपने मनमें भी किसी दिन अपने आपको अुस भूमिका पर रखा हो, अैसा मुझे नही लगता। भगवानके सामने भी वे प्रौढ और समझदार वालक वनकर ही वैठे होगे, अैसी मेरी मान्यता है।

अेक समय अैसा था जब श्री विनोवाजीको वहुतसे लोग 'वेदाभ्यास-जड' और रुक्ष मानते थे। अव भूदान-यज्ञकी यात्रामें सवने देख लिया है कि वे गद्गद हो जाते है और भक्तिप्रेमकी अुमगमे अुनकी आखोसे अश्रुधारा वहने लगती है। पूज्य महात्माजीमे हृदयकी कोमलता तो थी ही। लेकिन दुःख, करुणा या भक्तिप्रेमकी अुमग — अिनमें से अेक भी भावनाके कारण अुनकी आखोसे आसू वहनेका दृश्य मैंने कभी नहीं देखा। और किसीने अैसा दृश्य देखा हो तो मुझे निश्चित मालूम नही है।

अिससे मुझे लगता है कि भगवानने पूज्य महात्माजीके लिअे जिस अवतार-कार्यकी योजना कर रखी थी, अुसके अनुकूल ही अुनकी मानसिक रचना भी की होगी। 'भारतका स्वातंत्र्य' ही अुनका अवतार-कार्य था। अुसके लिअे देशव्यापी राजनीतिक सगठन तथा अन्य प्रकारसे भी प्रजाका सगठन करनेका काम अुनके कधो पर आ पडा था। अिसलिअे भगवानको विराट रूपमें देखनेका और अुसीकी भक्ति सेवाके रूपमें करनेका अुन्होने अपना धर्म मान लिया था। अुनकी सारी मानसिक रचना ही भिन्न थी।

कितनी ही वार अुनके मानसको समझ लेनेकी मेरी जिज्ञासाने 'विचित्र' लगनेवाले प्रश्न अुनसे पूछनेके लिअे मुझे प्रेरित किया है। पूज्य महात्माजी अवतारी पुरुष है अैसा मै तो मानती थी। और अवतारी

पुरुषोका मानस हमारे जैसा ही होता है या भिन्न होता हे, यह जाननेके लिअे मै प्रयत्नशील रहती थी।

मैंने वहुत वार देखा था कि पूज्य महात्माजी छोटे वच्चोको खेलाते है, अुन्हे पुचकारते है, लेकिन कभी अुन्हे चूमते नही। श्री विनोवाजीका मत था कि चूमना गदी चीज हे। माको अपने वच्चेको भी नही चूमना चाहिये। पूज्य महात्माजीके भी अैसे विचार है या नही? अथवा यह सयमकी परिणति है? —यह जाननेकी अिच्छासे मैंने अेक दिन अुनसे पूछा, "महात्माजी, आपने जीवनमे कभी वच्चोको चूमा है?" वे हसे और कहने लगे, "अरे, चूम चूम कर थक गया हू!"

दाडी-कूचसे पहले आश्रमके पास वने हुअे लाल वगलेमे अुमिया गावीका विवाह-सस्कार हुआ। पूज्य महात्माजीके साथ मै भी वहा अुपस्थित थी। सस्कार पूरा होनेके वाद हम वाहर निकले। रास्तेमें चलते चलते मैंने अुनसे पूछा, "महात्माजी, यह विवाह-सस्कार देखते ही आपको अपना विवाह-प्रसग याद आया या नही?"

अुन्होंने हसते हसते कहा, "अपना विवाह-प्रसग कोअी भूल सकता है! मुझे वह अच्छी तरह याद है। मजेकी वात तो यह थी कि विवाह-सस्कार हो रहा था अुस समय वाका हाथ पकडनेका मौका मुझे मिलता तव मै अुसे दवाता ही रहता था। और वाको मेरा हाथ पकडनेका मौका मिलता तव वह भी मेरा हाथ दवाती रहती थी। "

मेरे प्रश्नोमें थोडा भी दोप निकाले विना वे जिस अकृत्रिम स्वाभाविकतासे अुनका जवाव देते, अुससे मुझे वडा सन्तोप होता था। लोकोत्तर होते हुअे भी महात्माजी पूरे मानव हैं, मेरी यह भावना जैसे जैसे दृढ होती गअी वैसे वैसे मेरा आकर्षण भी अुनके प्रति वढता गया।

पूज्य महात्माजी जव 'व्यक्तिपूजा' शव्दका अुपयोग करते तव मैं 'विभूति-पूजा' कहती थी।

'यस्य देवे परा भक्ति यथा देवे तथा गुरौ।'

पत्रमे मैंने पूछा था कि कुछ लोग आपसे द्वेप करते है और लाखो लोग आपकी पूजा करते है। अिन दोनो तरहके लोगोके वारेमें आपकी प्रतिक्रिया (reaction) कैसी रहती है?]

यरवडा मंदिर,
१२-८-'३२

चि० प्रेमा,

नीचेकी पुस्तकें परचुरे शास्त्रीके लिअे चाहिये। अिनमें से जो वहा हो वे भेजना। जो नही होंगी वे दूसरी जगहसे मगा लूगा। जरा जल्दी भेज सके तो अच्छा हो। मणिबहन[1]को देना या नन्दूबहन[2]को। वे डाह्याभाअी[3]को भेज देगी। परचुरे शास्त्री आश्रममे थे। बहुत विद्वान है। यहाके जेलमें है। अुन्हे कोढका रोग हो गया है। अिसलिअे अुन्हे पुस्तकें देनेकी जल्दी है। वे रोज कातते है। मैं अुन्हे देख तो नही सकता, लेकिन पत्र लिख सकता हू। अुनकी पत्नी भी रोगशय्या पर पडी है। वे बाहर है। पुस्तकें ये है (१) Imitation of Christ, (२) Works of Swami Vivekanand (जो हो वे), (३) Works of Sister Nivedita, (जो हो वे), (४) Essays of Tolstoy, (५) व्याकरण-महाभाष्य, (६) यजुर्वेद-भाष्य, (७) Dispensations of Keshavchandra Sen.

वे आश्रममें रह चुके है, अिसलिअे अुन्होने लिखा है कि आखिरी तीन पुस्तकें तो आश्रममें है ही। लगता है कि ये पुस्तकें अुन्होने वहा पढी है।

तेरा पत्र मिला। तू अैसा मानती मालूम होती है कि मैं चाहू तब रसपूर्ण पत्र लिख ही सकता हू। लेकिन अब तू समझ गअी कि अैसा कुछ है नही। कौनसा पत्र रसपूर्ण है और कौनसा नीरस, अिसका भी मुझे पता नही चलता। बिलकुल सच कहता हू। और जिसे तू रसपूर्ण मानती है वह वस्तुत रसपूर्ण ही है, यह भी कौन कह सकता है? अैसा लगता है कि रसिकता नापनेका स्वतत्र गज परमेश्वरने अपनी पेटीमें ही ताला बन्द करके रखा है। अिसलिअे अभी तो रसिकताका नाप सबका अपना अपना होता है। तेरे नाप तक पहुचनेका प्रयत्न करने बैठू तब तो मेरी शामत ही आ जाय। अुसीमें मेरा समय चला जाय। अगर यह पत्र

---

१ सरदार वल्लभभाअी पटेलकी पुत्री।

२ अहमदाबादके सुप्रसिद्ध स्व० डॉक्टर बलवन्तराय कानूगाकी पत्नी।

३ सरदार वल्लभभाअी पटेलके पुत्र।

नीरस लगा तो — असी शका रखकर दूसरा, फिर तीसरा लिखता ही रहू ? और तुझे जैसे रसपूर्ण पत्र लिखने चाहिये वैसे ही औरोको भी। और आखिरमे दिवाला !!! अिसके वजाय मैंने सीधा नियम वनाया है। सरस-नीरसका खयाल किये विना जो मनमें सूझे अुसे जैसी भी भाषामे लिखते वने लिख देना। लेकिन तू ठहरी मूर्ख और अुस पर अभिमानी। अैसी सीधी वात तू थोडे ही समझनेवाली है। और जव देखता हू कि तू सर्वज्ञ होनेका भी दावा करती मालूम होती है। अैसा लगता है कि जो भी सयानी वात मै लिखता हू वह तू जानती ही है। लेकिन जरा ठहर। जो मानते है कि वे जानते है, लेकिन अुस पर अमल नही कर सकते, वे जानते ही नही या जानने पर भी नही जानते। अिसलिअे जव तक तू नादानीकी वाते लिखेगी, क्रोध करेगी, अभिमान रखेगी, तव तक मेरी दृष्टिमे तो तू मूर्ख ही रहनेवाली है। अिसका अर्थ यह नही है कि तू अपने अभिमान, क्रोध या पागलपनको छिपाकर लिखे। जव तक यह सव तुझमे है, तव तक तो लिखना ही चाहिये। तेरे पत्रकी कीमत तू जैसी है वैसी दिखाअी देनेमे ही है। पागल तू भले ही रहे। परन्तु क्रोध तो निकालना ही चाहिये। और अभिमान थोडा कम करना चाहिये। अभिमानको पूरी तरह निकाल देना लगभग असभव है।

तू नारद मुनिका अुदाहरण देती है। लेकिन अुनके वचन[1]का रहस्य तू कहा जानती है ? अुनके जैसी व्यक्तिपूजा तू जरूर कर। यह करने योग्य है। जैसे वैकुठके भगवान अैतिहासिक है, वैसे ही अुनके कृष्ण है। नारद मुनिके भगवान अुनके कल्पना-मदिरमे विराजते थे। वे नारद मुनि तो आज भी है और अुनके कृष्ण भी है। क्योकि वे दोनो हमारी कल्पनामें रहते ही है। मेरी दृष्टिमे अितिहासकी अपेक्षा कल्पना अधिक अूची है। रामकी अपेक्षा अुनका नाम वडा है, अैसा जो तुलसीदासजीने कहा है, अुसका यही अर्थ सम्भव है।

तू व्यक्तिपूजाके भवरमे पडी हुअी है, अिसीलिअे मुझे चिन्तामे डालती है न ? आश्रमके वारेमे तू मुझे निर्भय नही कर सकती। नारण-

---

१ श्री नारद मुनिका भक्ति-विपयक यह सूत्र प्रसिद्ध है 'सा तु अस्मिन् परमप्रेमस्वरूपा।'

दास कर सका है। अैसे और भी अुदाहरण मैं दे सकता हू। वे भी व्यक्तिपूजक तो है ही। कौन नही है? लेकिन आखिरमें वे व्यक्तिको पार करके अुसके गुणोके यानी अुसके कार्योंके पुजारी वन जाते है। यह अमूल्य वस्तु भूलकर हमने अपनी मूढताके कारण स्त्रियोको सती होना सिखाया। यह व्यक्तिपूजाकी पराकाष्ठा है।। जब कि पत्नीका धर्म तो यह है कि वह पतिके कार्यको अपनेमें अमर वनाये। पति-पत्नीमें से विकारको और "नर-नारी-भेद" को निकाल फेके, तो यह आदर्श सारे ससारके लिअे प्रत्येक स्थितिमे लागू होता है? अर्थात् (पति-पत्नीका) यह प्रेम भगवानमे जाकर मिलता है। लेकिन अव अिस विषयको छोड दू।

तू धीरूके आनेकी खवरसे परेशान क्यो होती है? अुसे भी वशमे करनेकी हिम्मत रख, अितना विश्वास रख। प्रेम सवको जीत लेता है, यह अमर वाक्य तू हृदयमें अुतार ले। चाहे जो आवे, हमारा धर्म तो खुश रहनेका ही है। हमे तो हो सके अितनी सेवा ही करनी है न? तू अैसा क्यो नही मानती कि दूसरे बच्चे अगर सचमुच सुधरे होगे, तो वे धीरूको सुधारेगे? सभव तो यह भी है कि धीरू अव सयाना हो गया होगा। मैंने तो अैसी आशा रखी ही है।

लडकियोके लिअे परेशानी अुठाना तेरा कर्तव्य है। अगर वे किसीसे पूरी वात ही न कहे, तो सव वीमार ही पडेंगी। आनन्दीको लिखा हुआ पत्र पढना। अगर आनन्दी वह पत्र दे तो अैसी सव लडकियोको, जो समझदार हो गअी है, वह पत्र पढकर सुनाना चाहिये।

केलेमें वायु पैदा करनेका गुण है अैसा मैंने तो कभी अनुभव नही किया। मेरे जितने केले शायद ही किसीने खाये होगे। वहुत वर्षों तक केला मेरी मुख्य खुराक रहा। दूध नही, रोटी नही। केले और जैतूनका तेल तथा मूगफली और नीवू — अितना ही मैं लेता था। लेकिन वायुकी शिकायत मुझमे नामको भी नही हुअी। वर्षों वाद अव फिर लेता हू। लेकिन कोअी खराव असर अपने शरीर पर नही देखता।

केले खानेका अेक नियम जरूर है। या तो केले आग पर पकाये हुअे हो या विलकुल पक्के हो। कच्चे केलेमें केवल स्टार्च होता है। स्टार्च पकाये विना नही खाया जा सकता, यह अुस गोपालरावके प्रयोगमें

देख लिया। अिसलिअे केले नरम न लगें, पक्के न लगे तव तक नही खाने चाहिये। दो तीन दिन पडे रहे तो पक जाते है। खानेकी जल्दी हो तो अुन्हे भूनना या अुवाल लेना चाहिये।

तेरी पढी हुअी पुस्तक भले ही १९२४ मे छपी हो, लेकिन अुसमे दी हुअी वात वहुत पुरानी हो गअी हे।

मेरे विरोधी पहले भी थे और आज भी है, लेकिन मुझे अुनके प्रति रोप नही हुआ। स्वप्नमें भी मैंने अुनका वुरा नही चेता। परिणाम-स्वरूप वहुतसे विरोधी मेरे मित्र वन गये है। किमीका भी विरोध मेरे सामने आज तक काम नही कर सका। तीन वार तो मुझ पर व्यक्तिगत हमले हुअे, फिर भी आज तक मै जिन्दा हू। अिसका यह अर्थ नही है कि विरोधी कभी भी अपनी सोची हुअी सफलता प्राप्त नही करेंगे। प्राप्त करे या न करे, अिसके साथ मेरा सवध नही है। मेरा धर्म अुनका भी हित चाहना है और मौका आने पर अुनकी भी सेवा करना है। अिस सिद्धान्त पर मैंने यथाशक्ति अमल किया हे। मै यह मानता हू कि यह चीज मेरे स्वभावमें रही है।

लाखो लोग मेरी पूजा करते है, तव मुझे थकान लगती है। किसी भी दिन अिस पूजामे मुझे रस नही आया या अैसा नही लगा कि मैं अिस पूजाके योग्य हू। हमेशा मुझे मेरी अयोग्यताका ही भान रहा है। मान-सम्मानकी भूख मुझे कभी रही हो, अैसा याद नही आता। लेकिन कामकी भूख रही है। मान देनेवालेसे मैंने काम लेनेका प्रयत्न किया है और जव अुसने काम नही किया तो मै अुसके मानसे दूर भागा हू। मै कृतार्थ तो तव होअूगा जव कि जहा मुझे पहुचना है वहा पहुच जाअू। लेकिन अैसा दिन कहासे?

दुनियाके विरुद्ध खडे रहनेकी शक्ति प्राप्त करनेके लिअे अभिमान या अुद्धतता पैदा करनेकी जरूरत नही है। औसा दुनियाके विरोधमे खडे रहे, वुद्धने भी अपने युगका विरोध किया, प्रह्लादने भी वैसा ही किया। वे सव नम्रताकी मूर्ति थे। अिसके लिअे आत्म-विश्वास और प्रभु पर श्रद्धाकी जरूरत है। अभिमानी वनकर दुनियाके विरुद्ध खडे होनेवालोका अन्तमे पतन हुआ हे। तेरा अभिमान और तेरा क्रोध कअी वार केवल

ढोंग होता है। लेकिन यह ढोंग भी बुरा है। ढोंग आखिरमें आदतका रूप ले बैठता है, जिससे कभी बार व्यर्थमें गलतफहमीके कारण अुत्पन्न हो जाते हैं। अैसा न हो अिसके लिअे मनुष्यको बहुत सावधानीसे चलनेकी जरूरत है। मै मानता हू कि अत्यधिक नम्रताके बिना अन्त तक अकेले टिके रहनेकी शक्ति प्राप्त होना असभव है। और यह शक्ति आ गअी हो तो ही वह सच्ची चीज मानी जायगी। अुसकी परीक्षा अिसीमे होती है। बहुतसे मनुष्य जो बहादुर माने गये है, वे सचमुच बहादुर थे या नही, यह परखनेका अवसर ही समाजको नही मिलता। अब तो अम्तुलबहनका पत्र भी पढना।

वापू

८८

['लोकमत' के विषयमें मैंने अपने पत्रमें चर्चा की थी। लोकमतका किस हद तक आदर करना चाहिये? रामायणमे धोबीका किस्सा आता है। राग-द्वेषसे भरे हुअे अेक मामूली धोबीकी निन्दा सुनकर राजा रामने अपनी निष्पाप पत्नी सीताका त्याग कर दिया! अिसके सिवा, अेक बार तो सीताजीकी अग्नि-परीक्षा हो चुकी थी, फिर भी अुन्हे देशनिकाला भोगना पडा। अैसे 'लोकमत' की कीमत आखिर कितनी है? यह मेरा प्रश्न था। पूज्य महात्माजीने अिस पत्रमे मेरे प्रश्नका जो अुत्तर दिया अुससे मुझे सतोष नही हुआ। मैंने छोटी अुमरमे वाल्मीकिकी रामायण पढी थी। अिससे अुसकी सारी विगत तो याद नही थी। अिसलिअे अनुकूल समय मिलने पर वह ग्रथ मगाकर मूल वृत्तात पढ जानेका मैने सकल्प किया। अुस सकल्पको पूरा होनेमे अनेक वर्ष लग गये। लेकिन ग्रथ मिलने पर अुसमे (अिस किस्सेसे सम्बन्ध रखनेवाला) जो वृत्तात मैंने पढा वह बिलकुल अलग ही था।

रामायणके अुत्तरकाडके तैतालीसवे सर्गमे यह प्रसग आता है। राजा राम अपने समवयस्क मित्रोके बीच बैठकर बातचीत कर रहे थे।

तत कथाया कस्याचिद्राघव समभापत।
का कथा नगरे भद्र वर्तन्ते विपयेषु च॥
मामाश्रितानि कान्याहु पौरजानपदा जना।
किं च सीता समाश्रित्य भरत किं च लक्ष्मणम्॥

अपने विषयमे तथा अपने सगे-सवधियोके विषयमे प्रजा क्या कहती है, यह जाननेके लिअे रामने अपने अेक मित्रसे अूपरका प्रश्न किया। पहले तो मित्रने मीठी मीठी वाते करके 'प्रजा राजा पर प्रसन्न है, अुनकी प्रशसा करती है' अैसा ही कहा। परन्तु जब रामने प्रतिकूल मत भी सुननेका आग्रह किया तब अुसने कहा

श्रुणु राजन् यथा पौरा कथयन्ति शुभाशुभम्।
चत्वरापणरथ्यासु वनेपूपवनेषु च॥१३॥

दुष्कर कृतवान् राम समुद्रे सेतुबन्धनम्।
अश्रुत पूर्वकै कैश्चिद्देवैरपि सदानवै॥१४॥

रावणश्च दुराधर्षो हत सबलवाहन।
वानराश्च वश नीता अृक्षाश्च सह राक्षसै॥१५॥

हत्वा च रावण सख्ये सीतामाहृत्य राघव।
अमर्ष पृष्ठत कृत्वा स्ववेश्म पुनरानयत्॥१६॥

कीदृश हृदय तस्य सीतासभोगज सुखम्।
अकमारोप्य तु पुरा रावणेन बलाद्धृताम्॥१७॥

लकामपि पुरा नीतामशोकवनिका गताम्।
रक्षसा वशमापन्ना कथ रामो न कुत्सते॥१८॥

अस्माकमपि दारेपु सहनीय भविष्यति।
यथा हि कुरुते राजा प्रजा तमनुवर्तते॥१९॥

अिन श्लोकोमे यह स्पष्ट कहा गया हे कि राज्यमे सर्वत्र सीताकी निन्दा की जाती थी। रास्ते, चौराहे, बाग-बगीचे, दुकाने, अरण्य — जहा भी लोग अेक-दूसरेसे मिलते थे वहा वातें होती थीं और राजा रामकी निन्दा की जाती थी। अिसलिअे रामायणमे तो 'लोकमत' का स्पष्ट प्रकट होना बताया गया है। अुसमे धोबीका किस्सा नही मिलता।

वाल्मीकिकी रामायणके वाद दूसरी रामायणे रची गअी, भवभूति जैसे प्रतिभाशाली लेखकने रामकी कथा पर नाटक लिखे, अुनमे धोवीका किस्सा दाखिल कर दिया गया।

अहल्याको अुसके पति गौतम अृषिने शाप देकर हजारो वर्ष तक पत्थरकी शिला बनाये रखा, शवरीने रामको जूठे वेर खिलाये, रामके पुत्र लव और कुशने रामके अश्वमेघ यज्ञका घोडा पकड लिया और अपने पिताके साथ युद्ध किया — आदि कथाओके लिअे वाल्मीकिकी रामायणमें कही भी कोअी आधार नही है। ये सव कथायें वादके काव्योमें रची गअी मालूम होती हैं। अिसलिअे वाल्मीकिकी रामायण अितिहास-ग्रन्थ है, जव कि वादकी रामायणे भक्तिकाव्य हैं।

यह अनुसन्धान करनेके वाद वाजी मेरे हाथमे आअी। और किसी दिन यह सव महात्माजीको सुनानेका मैंने सकल्प किया।

पू० महात्माजी सेवाग्राममे रहने लगे अुसके वाद अेक वार मैं कुछ दिनके लिअे अुनके साथ रहने वहा गअी थी। अेक दिन हम कुछ वहनें पूज्य महात्माजीके साथ घूमने गअी। वात-वातमे अेक वहनने धोवीका किस्सा सुनाकर राजा रामकी निन्दा शुरू कर दी। तव महात्माजी अुसके सामने वही दलीले पेश करने लगे जो अुन्होने अिस पत्रमे की हैं। अिसलिअे मुझे जोश आ गया। वीचमे पडकर मैंने वाल्मीकि रामायणमें पढा हुआ पूरा वृत्तान्त पू० महात्माजीको सुनाया और कहा "वाल्मीकिने तो रामके साथ अन्याय हो अैसा कुछ नही लिखा है। लेकिन लोग गहराअीमे अुतरते नही, शोध करते नही और अकारण ही रामकी निन्दा करते हैं।" मेरे मुहमे रामायणका मूल वृत्तान्त सुनकर महात्माजीको अच्छा तो जरूर लगा, लेकिन अुन्हे ताना मारनेका मौका मैंने हाथसे जाने नही दिया। मैंने जरा आवेशमें अुनसे कहा "महात्माजी, मुझे वहुत वार अैसा लगता है कि आप अैतिहासिक दृष्टिसे विचार नही करते।"

अुनका विशिष्ट स्वभाव प्रकट करनेवाला अुत्तर महात्माजीके मुहसे निकला "जहा नीतिके साथ सम्वन्ध नही होता वहा मैं अैतिहासिक दृष्टिको नही मानता।"]

१८-८-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

राखी मिली, दो दिन देरसे। लेकिन मैंने तो मान लिया था कि सोमवारको मिल गअी।

केले अनुकूल न आवे तो जबरदस्ती खानेसे लाभ नहीं होगा। हरअेकके पेटकी विशेषता तो होती ही है।

तेरे क्रोधके पृथक्करणको मैं अच्छी तरह समझ गया हूं। तू अुसे जीतना। तू अुसे जरूर जीतेगी, अैसा मेरा विश्वास है। अपने पत्रमें से जो भाग तूने वापिस नही लिया अुसे मैं समझा। वापिस नही लिया यह ठीक ही था। अपनी कोअी जरूरत हो तो अुसे न कहनेमें भारी अभिमान और अन्याय है और अिससे प्रियजनो पर बहुत बोझ भी पडता है। विनय और निरभिमानता तो हमारी जरूरतें जाननेके कष्टसे प्रियजनोको बचा लेते हैं। यह विनयका पहला पाठ है। अब अिसे सीख।

कृष्ण नायरको लिखना कि अुसे मैं बहुत याद करता हूं।

तू राजकोट गअी, यह तो ठीक ही हुआ। अितना (आराम) तेरी तन्दुरुस्तीके लिअे जरूरी हे अैसा मालूम होता हे।

लोकमत यानी जिस समाजके मतकी हमे जरूरत है अुसका मत। यह मत नीतिके विरुद्ध न हो तब तक अुसका आदर करना हमारा धर्म है।

धोबीके किस्से परसे शुद्ध निर्णय करना कठिन है। हमें तो आज वह बिलकुल नही रुचेगा। अैसी आलोचना सुनकर अपनी पत्नीका त्याग करनेवाला पुरुष निर्दय और अन्यायी ही कहा जायगा। लेकिन रामायणमे कविने अिस घटनाको किस दृष्टिसे स्थान दिया हे, यह मैं नही कह सकता। हमारा काम अुस विवादमे पडना नहीं है। मैं तो अिस झगडेमे नही पडूंगा। रामायण जैसी पुस्तकोको भी मैं अिस दृष्टिसे नही पढता।

लडकियोके साथ मेरी छूटसे आश्रमवासियोको यदि आघात पहुचे, तो मुझे अुस छूटका अुपयोग करना बन्द कर देना चाहिये, अैसा मैं

समझता हू। अैसी छूट लेनेका न तो कोअी स्वतत्र धर्म है, और न छूट लेनेमें नीतिका भग है। लेकिन अैसी छूट न लेनेसे लडकियो पर वहुत वुरा असर पडे, तो मैं आश्रमवासियोको समझाअूगा और छूट लूगा। लड़किया ही मुझे न छोडे, तव देखना मेरा काम होगा। मैं जो छूट जिस तरह लू, अुसकी नकल दूसरे किसीसे नही हो सकती। यह चीज स्वाभाविक हो जानी चाहिये। 'आजसे मुझे छूट लेनी है' अैसा विचार करके कृत्रिम रूपसे कोअी छूट नही ले सकता, और यदि कोअी ले तो वह गलत ही माना जायगा। नारणदासको जैसा अुचित लगे वैसा करनेके लिअे वह स्वतत्र है। मुझे अुसकी आलोचना करनेकी अिच्छा भी नही होगी। मूल वात यह है कि जो मनुष्य विकारवश होकर निर्दोपसे निर्दोप लगनेवाली छूट भी लेता है, वह खाअीमे गिरता है और दूसरेको भी गिराता है। हमारे समाजमें जव तक स्त्री-पुरुपका सवध स्वाभाविक नही हो जाय, तव तक जरूर सावधानीसे चलनेकी जरूरत है। अिस वारेमे सव पर लागू हो सके अैसा कोअी राजमार्ग नही है। तेरे अपने व्यवहारमे तालीमका अभाव मालूम होता है। तेरी स्वाभाविक निर्दोपता तुझे वचाती है। लेकिन तू अुस पर अभिमान करती हे और अुसे हठपूर्वक पकडे रहती है, यह विलकुल ठीक नही है। अिसमे अविचारीपन है। आज अिसका नुकसान तुझे दिखाअी नही देता। लेकिन किसी दिन जरूर पछताना पडेगा। अभिमान किसीका भी नही टिका है। मारी लौकिक मर्यादाये वुरी हैं, यह कहकर समाजको आघात नही पहुचाया जा सकता। अव लोकमतके वारेमें कुछ समझी?

धुरन्धरसे कहना कि मेजरकी कही हुअी वातको याद रखे। अुसे स्वय आसनोका घूमता-फिरता विज्ञापन वन जाना चाहिये[1]।

वापू

---

१ भाअी धुरन्धर योगासनोके अभ्यासी थे और जहा जाते वहीं लोगोमें अुनका प्रचार करते थे।

८९

[पत्रके पूर्वार्धमे रचनात्मक सेवाके क्षेत्रमे काम करनेवाले अेक भाअीके बारेमे महात्माजीकी राय है। अुनकी पत्नी गुजर गअी थी। वर्षो बाद अेक युवतीके साथ अुनका प्रेम हुआ। अुनके बारेमें अपनी अपेक्षा पूज्य महात्माजीने बताअी है। आगे ता० ११-९-'३२ के पत्रमे अिसी विषय पर ज्यादा लिखा है।]

यरवडा मन्दिर,
२६-८-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे विशेषण प्राप्त करनेके लिअे ही तो तू अुन अलग अलग विशेषणोके लायक गुण प्रगट नही करती न? अैसा करेगी तो विशेषणोकी कोअी कीमत ही नही रह जायगी।

काठियावाडमें जितना द्वेषादि दिखाअी देता है, अुतना और जगह नही दिखाअी देता। अिसलिअे तूने अिसका प्रदर्शन भी देखा, अिसमे मुझे कोअी आश्चर्य नही लगता। द्वेषादिका प्रदर्शन वहा बिना तैयारीके देखनेमे आता है। और अिसमे जैसा तो स्तब्ध ही हो जाय। लेकिन के मे होते हुअे भी वह की ग्लानि दूर न कर सके, यह विचित्र बात है। श्रावणी पूर्णिमाके दिन अुसने राखी तो बाधी ही होगी। लेकिन यह काम क्या अुस सूतके डोरेसे ही पूरा हो गया? के शोकका कारण जान लेना और अुसे दूर करना की शक्तिके बाहर नही होना चाहिये। अपनी पत्नी की पूजा करता था। मै यह मानता हू कि दोनो विवाहित होने पर भी ब्रह्मचर्यका पालन करते थे। के चल बसनेसे को भारी आघात पहुचा है। की अन्दर ही अन्दर विवाह करनेकी शायद अिच्छा हो, लेकिन अपनी स्थितिको वह स्वय भी नही जान सकता। लेकिन अुसे स्वय अपने जैसी ही भावना-वाली स्त्री चाहिये। अैसी स्त्री तो मिले या न मिले, लेकिन अिनके बदलेमे भावना-प्रधान बहन मिल जाय तो शायद का विकास हो

और वह खुले। को मैंने पूर्ण ब्रह्मचारिणी माना है। अुसका . . के प्रति मित्रताका भाव है। अुसमे भी भावना है। तूने की खिन्नताके वारेमे लिखा है। अिसलिअे अितना लिखनेकी मुझे प्रेरणा हुअी। को मैंने अच्छी तरह पहचाना है। तुझे अैसा लगे और यह भी लगे कि अूपर वताया काम अुसकी शक्तिसे वाहर नही है, तो यह पत्र तू खुशीसे अुसे भेजना। यह काम अुसकी शक्तिसे वाहर या अुसके क्षेत्रसे वाहर लगे, तो पत्रका अितना हिस्सा तू भूल जाना। . शुद्ध प्रेमका भूखा है। लेकिन में राग और विराग भरे हैं। वहुत थोडे लोगोको ही वह चाह सकता है। अिसलिअे मन ही मन घुटता रहता है।' अैसे आदमीको पत्नीकी जरूरत कम रहती है। पत्नीमें वह फस सकता है। अुसके लिअे विकारशून्य वहनकी जरूरत है। वह मिले तो का जीवन सुधर जाय।

हमारे समाजमें स्त्रिया विकारशून्य होनेका यह गुण अपनेमें पैदा नही करती। अुन्हे पत्नी वनना आता है, वहन वनना नही आता। वहन वननेमे वहुत वडी त्यागवृत्तिकी जरूरत होती है। जो पत्नी वनती है वह पूरी तरह वहन वन ही नही सकती, यह मुझे तो स्वयसिद्ध लगता है। सच्ची वहन सारे जगतके लिअे हो सकती है। पत्नी तो अपनेको अेक पुरुषके हाथोमे सौंप देती है। पत्नीके गुणकी जरूरत है, लेकिन वह पैदा नही करना पडता, क्योकि वहा विकार-शातिके लिअे अवकाश है। जगतकी वहन होनेका गुण कष्टसाध्य है। अैसी वहन तो वही हो सकती है जिसमें ब्रह्मचर्य स्वभावसिद्ध हो और जिसमें सेवाभाव अुत्कृष्ट स्थितिको पहुचा हो। अितनी दूर तक पहुची है अैसी छाप मेरे अूपर नही पडी। लेकिन यहा तक पहुचनेकी शक्ति अुसमे है, अैसा मुझे जरूर लगता है। अैसी छाप पडनेमे तू स्वय कारणभूत है। तो मेरे मनमे जो कुछ आया वह सव मैंने यहा लिख दिया है। तू खुद अैसी आदर्श वहन वने, यह तो मेरी कोशिश है ही। काम कठिन है। लेकिन प्रभुको करना होगा सो करेगा।

तूने प्रदर्शनका वर्णन ठीक किया है। तेरे वर्णन तो हमेशा पढने-विचारने योग्य होते ही है।

जन्माष्टमीके लिअे तू आश्रममे पहुच गअी, यह ठीक ही हुआ। देख, क्रोधको जीतना। धीरु तेरे साथ आनेको तैयार ही नही हुआ, यह तू जानती है? धीरु पर क्रोध मत करना। वह वालक है, तू वालक नही है। धीरुको जीतनेमे तेरी जीत है। अुसे न जीतनेमें तेरी हार है।

अच्छे सस्कारोवाले **माता-पिताकी** परीक्षा कौन कर सकता है? जव गर्भ रहे तव माता-पिताकी स्थिति कैमी थी, यह कौन कह मकता है? अिससे मुझे लगता है कि अच्छेका फल अच्छा ही होता है, अिस निरपवाद नियमसे चिपके रहनेमे ही लाभ है। हर वार हम अमुक व्यक्तिके वारेमे यह नियम सिद्ध न कर सके, तो अिसमे हमारा अज्ञान हो सकता है, नियमकी अपूर्णता नही।

दैवको मै मानू तो भी अुमे मिथ्या नही किया जा मकता।[1] दैव अर्थात् पूर्वकर्मोका प्रभाव।

वेश्याका अुद्धार करनेके लिअे पुरुषोको अपनी पशुता छोडनी होगी। जव तक पुरुष-पशु अिस जगतमे रहेगे तव तक वेश्यायें भी रहेगी ही। वेश्या अपना धवा छोडे और सुधरे, तो अुनके साथ 'कुलीन' कहे जाने-वाले पुरुष जरूर विवाह करे। अेक वार वेश्या वन जानेवाली हमेशा वेश्या ही रहेगी, अैसा नियम नही है।

सेनाके लिअे लडकियोको भगाया ही जाता है, अैसी मान्यतामें मुझे अतिशयता लगती है। सुव्यवस्थित राज्यमे अैसा कभी नही हो सकता।

मलावार तटके रहनेवाले लोग अैसी आवहवा छोडनेके वाद भी नारियल हजम कर सकते है, अैसा मानना गलत है। तादलजाकी भाजीमें नारियल डालकर तूने तादलजाका असर कमजोर कर दिया। मैने खुद तो नारियलका प्रयोग वहुत किया है। मुझे अुमसे लाभ नही हुआ। लेकिन जहा वह पैदा होता है वहा दूसरी चीजोके साथ अुसे मिलाना आवश्यक हो सकता है।

वापू

---

१ 'आप दैवको मानते है?'—मेरे अिस प्रश्नका यह अुत्तर है। 'दैवको मै न मानू तो भी' अैसा वाक्य होना चाहिये था, अैसा मुझे लगता है।

य० मदिर,
३१–८–'३२

चि० प्रेमा,

अिस वार तुझे कौनसा नया विशेपण दू, यह सूझ नही रहा है। तू जो मागेगी वही दे दूगा।

परचुरे शास्त्रीके लिअे मगाअी हुअी पुस्तकें अभी मिली नही है, लेकिन अब मिल जायगी।

मै यह नही मानता कि अुन दो वहनोके आनेसे अैसा कहा जा सकता है कि पढी-लिखी वहने (आश्रममे) आने लगी। अैसे तो कोअी भूली-भटकी आ ही पहुचती है। अुनमें से किसीका अभी तक हम सग्रह नही कर सके। तुझे पढी-लिखी माने और आश्रममे सगृहीत माने, तो मान मकते है। लेकिन यह तो अपवाद हुआ। अेक चिडियाके आनेसे गरमी आ गअी, अैमा थोडे ही कोअी मानेगा?

के वारेमे मुझे अफमोस है। अुमे कक्षासे भले ही छुट्टी दे दी। लेकिन अुसे भूल मत जाना। अुसके अूपर नजर रखकर मीधे राम्ते ला सके तो लाना। धीरूके वारेमे तेरी परेशानी मै समझा। तेरे भीतर अुदारता और हिम्मत हो तो अुसके वारेमें जोशी और रमा-वहनसे तुझे वात करनी चाहिये और अुसके हितका कोअी मार्ग निकालना चाहिये। अपने मार्गमे हम खुद ही काटे वोते है और फिर अुनके चुभनेकी शिकायत करते है। अपनी खुदकी शक्तिको लेकर जाय तो हम शायद कही भी सफल न हो, लेकिन अीश्वरकी शक्तिको लेकर जाय तो घोर अधकारमे भी हमें प्रकाशके दर्शन हो सकते है। "मेरे अदर प्रेम हो तभी न?"—यह कहकर तू नाराज हो जाय, तो मेरा कहना निरर्थक है। अिसके मिवा, मै मानता हू कि मेरे अदर प्रेम है। फिर भी मै वहुतोको क्यो नही जीत सका? तव फिर तुझसे कहनेका मुझे क्या अधिकार है, अैमा मुझे सुनाकर तू अपना हृदय-द्वार वन्द कर ले तो भी मै लाचार हो जाअूगा। अपनी अपूर्णताको मै स्वीकार करता हू। अुमका

अनुकरण तुझे क्यो करना चाहिये ? अपने अनुभवोमे से मै तुझे जो कुछ दू, अुसका तू अुपयोग कर। माथीके दोपोको अपनाना नही चाहिये, वल्कि अुन दोपोसे वचना चाहिये और अुसमे जो गुण हो अुन्हे ग्रहण करना चाहिये। फिर मै तेरी तरह हारकर नही वैठता, लेकिन कठोरतम हृदयको भी ओश्वरकी कृपासे पिघलानेकी आशा रखता हू और अुसके लिअे प्रयत्नशील रहता हू।

तू रसोअीघरमे अखवार पढकर सुनाती हो और आनन्द लेनेके लिअे मजाक भी करती हो, तो मै अुसे खराव ही मानूगा। रसोअी-घरमे तो मौन ही रखना चाहिये। वहा क्या सुनाना ? अिसके सिवा नारणदासका ध्यान तो चारो तरफ लगा हुआ होना चाहिये। वहा तू पढे और सुनाये अिसे मे ठीक नही मानता। तेरा पढना भी रसोअीघरमें तो गम्भीरतासे ही होना चाहिये। अिसलिअे अितना सुधार तो तू कर ही लेना। अगर तू रसोअीघरमें विनोद और नखरे करे, तो छोटे वच्चोका क्या होगा ? ओर वे सव भी अैसा ही करने लगें, तो रसोअीघर 'रीछोका वाग'* वन जाय और वहाका अनुशासन भग हो जाय। यह सव 'स्मार्ट लिटल गर्ल' के 'स्मार्ट' दिमागमे अुतरा या अुसकी सारी 'स्मार्टनेस' आश्रममे चोरी हो गअी ?

अिस वार अिससे ज्यादा नही।

वापू

९१

११-९-'३२

चि० प्रेमा,

तू धीरज और विश्वास रखेगी तो मेरी 'स्वभाव-पुस्तक' के सारे पृष्ठ तेरे सामने खुल जायगे। 'जो मुझे (सत्यको) प्रेमपूर्वक सतत भजता है अुसे मै वुद्धियोग देता हू।' यह सत्य-भगवानका वचन है। अिसके मननसे मेरे स्वभावके सव पृष्ठ खुल जाते है। पुस्तक सामने पडी हो तो भी अुसे पढना न आये या पढनेकी कोअी तकलीफ न अुठाये, तो

* Bear-garden शोरगुलका स्थान।

यह स्वप्न मैंने पू० महात्माजीको नही बताया, क्योकि अेक पत्रमे अुन्होने मुझे लिखा था कि सपनोको महत्त्व नही देना चाहिये। यहा मुझे अेक सुख-सवाद याद आता है।

दाडीकूचसे पहले पू० महात्माजीका निवास सत्याग्रह आश्रममे था, तबकी यह घटना है — शायद लाहौर काग्रेससे पहलेकी हो। शामकी प्रार्थनाके बाद पूज्य महात्माजी हृदय-कुजके आगनमे अपनी खाट पर बैठे थे। सामने बेंच पर दो अमेरिकन मित्र बैठे थे। अुनमे से अेक अमेरिकाके लेखक श्री शेरवुड अेड्डी थे, अैसा स्मरण है। मै पास खडी ध्यानपूर्वक अुनकी बाते सुन रही थी। अैसी मुलाकातोसे मुझे बहुत सीखनेको मिलता था।

वे लेखक पू० महात्माजीसे पूछ रहे थे, "जब आपके सामने कोअी कठिन समस्या खडी होती है, तब आप अुसे किस तरह हल करते है? अर्थात् जब आपको मार्ग स्पष्ट नही दीखता तब आप क्या करते है?"

पू० महात्माजी बोले, "I think and ponder over it for hours together and when I cannot see the light I say, 'Let it go to the devil' and sleep over it But when I get up in the morning, lo! the solution is there!" (मै घटो तक अुस पर विचार और मनन करता हू, और जब मुझे प्रकाश नही दीखता तब मै कहता हू कि, 'अभी अिस बातको छोडो?' और अेक रात नीद निकाल लेता हू। लेकिन सुबह मै अुठता हू तो अचानक हल सामने आकर अुपस्थित हो जाता है!)

लेखकने पूछा, "Do you mean to say that you get the solution in your dream, as if through a miracle?" (आपके कहनेका क्या यह अर्थ है कि चमत्कारकी तरह स्वप्नमे आपको हल मिल जाता है?)

पूज्य महात्माजी बोले, "No, no miracle! It is something like the case of a mathematician He ponders over his problem for hours together and after a great deal of concentration and effort he finds the solution all of a sudden and cries, 'Ah! here it is!' That exactly is the

case with me." (नही, चमत्कार नही! यह तो गणितज्ञके जैसी वात है। वह घटो तक अपनी समस्या पर विचार करता रहता है। और खूव अेकाग्रता और प्रयत्नके वाद अेकाअेक अुसे अुसका हल मिल जाता है और वह वोल अुठता है 'अहा, हल मिल गया!' मेरे वारेमे ठीक अैसा ही है।)

श्री विनोवाजीसे मैंने अेकवार स्वप्नोके वारेमे पूछा था। मेरी स्मरण-शक्ति ठीक काम करती हो तो "मुझे स्वप्न आते ही नही।" अैसा अुत्तर अुन्होने दिया था। अत अुनके लिअे स्वप्नकी वात विचार करने योग्य थी ही नही।

अिस तरह अिस युगके दो महान आध्यात्मिक शक्तिवाले पुरुषोके मत मैंने जान लिये। लेकिन प्रत्येक व्यक्ति अपने अनुभवसे ही चलता है। मुझे स्वप्नोकी सूचक और सच होनेकी प्रतीति कअी वार हुअी है। मेरे पिताजी कारवारमे अचानक नीदमें गुजर गये, अुसी रातको लगभग अुसी समय मुझे भय-सूचक स्वप्न आया था! तव मैं सफरमे थी। दो दिन वाद पूना पहुची और तार मिला! और मुझे रामायणका राजा दशरथकी मृत्युके वारेमे भरतको आये स्वप्नका वर्णन याद आ गया।

*

सासवडमे सेवाकार्य शुरू हुआ। पूज्य महात्माजीके साथ पत्रव्यवहार चालू रहा। समय समय पर मिलना भी हो जाता था। गाधी-सेवा-सघकी सदस्या वननेके वारेमे स्व० श्री किशोरलालभाअीकी सूचना मुझे मिली और मै सदस्या वनी। अिससे हर साल सम्मेलनमें सात दिन रहकर पूज्य महात्माजीका सहवास प्राप्त करनेका सुख मिलने लगा। सासवडका आश्रम महाराष्ट्रमे गाधीजीके विचार और कार्यका केन्द्र वने, अैसी श्री शकर-रावजीकी अिच्छा और प्रयत्न था। आचार्य भागवत जैसे विद्वान और तत्त्वचितक सचालक आश्रमका मार्गदर्शन करते थे। धीरे धीरे आश्रमकी प्रवृत्तिया वढने लगी। चरखा, वुनाअी, तेलघानी, राष्ट्रभापा-प्रचार, साक्ष-रता-प्रचार, हरिजन-सेवा आदि काम चलते ही थे। अिसके सिवा, महाराष्ट्र चरखा-सघकी तरफसे सासवडमे खादी-विद्यालय शुरु हुआ और तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठकी तरफसे वुनियादी शिक्षाकी चार शालाये भी सासवड और पासके तीन गावोमे चलने लगी। सन् १९४० तक सासवडमे

रचनात्मक काम वडी तेजीसे चल रहा था। फिर सत्याग्रहका आंदोलन शुरू हुआ। आश्रमवासी अेकके बाद अेक जेल जाने लगे। आश्रमकी प्रवृत्तिया वन्द होती गअी और सन् १९४२ मे आश्रम और खादी-विद्यालय दोनो वन्द हो गये।

सन् १९४४ से आश्रम नये रूपमे शुरू हुआ। आचार्य भागवतके विचार — खास तौर पर राजनीतिक क्षेत्रके — बदल गये थे। वे काग्रेसके विरोधी और ममाजवादी दलके पक्षपाती हो गये थे। पू० महात्माजीके अवसान तक समाजवादी दल काग्रेसमे था, फिर भी दोनो दलोके बीच अविश्वास वढता जाता था।

मैने सासवडका केन्द्र कायम किया था। आश्रम फिर शुरू हुआ। श्री शकररावजी जून १९४५ मे जेलसे छूटे तब तक आश्रममे वहने ही आकर रहती थी। फिर पुरुष कार्यकर्ता आने लगे।

काग्रेस स्त्री-सगठन समितिके कार्यके सिलसिलेमे मुझे महाराष्ट्रमें वार वार भ्रमण करना पडता था। फिर कस्तूरबा ट्रस्टका काम वढने लगा। अिसलिअे ग्रामकेन्द्रोके निरीक्षणके लिअे भी घूमना पडा।

पूज्य महात्माजी नोआखालीमे घूम रहे थे तब अेक वार मै अुनसे मिल आअी थी। सन् १९४७ का समय तमोयुगकी तरह मालूम होता था, अैसा याद पडता है। देश आजाद हुआ अुसका आनन्द मनाने जैसी परिस्थिति नही रही थी। मै जहा जाती वहा अुनका ही चिंतन करती थी। अुनकी जीवनभरकी तपस्याका फल अैसे अुग्र वातावरणमे, हला-हलसे व्याप्त मानव-सागरके क्षोभमे, आसुरी द्वेषके ताडवमे प्रकट होगा, अैसी कल्पना ही नही थी। अीश्वरके अैसे महान भक्तको अैसी भयानक कसौटीमे से क्यो गुजरना पडता होगा, यह मेरी समझमे ही नही आता था। मुझे अपने अूपर भी चिढ आती थी। हम अुनके अनुयायी, खास-तौर पर मै खुद, क्यो कुछ नही कर पाते? क्यो अुनकी मदद नही कर सकते? हमारी प्रार्थना क्यो नही फलती? क्या भगवानका कोप हुआ होगा?

आगाखा महलसे पूज्य महात्माजीके छूटकर आनेके वाद मैने दो वार अुनसे कहा था, "आपके अवसानसे पाच मिनट पहले मुझे मर जाना

है। आपके वाद मै जीना नही चाहती। मुझे घोर अधेरा लगेगा।" अुन्होने अेक वार हसकर कहा 'हा'। दूसरी वार पूछा, "पहले मरकर तू क्या कर लेगी?"

लेकिन सन् १९४७ मे देशमे चारो ओर जो यमराज्य चल रहा था, वह मौतसे पहले मरने जैसा दिखाअी देता था, अुसे क्या 'जीवन' कहा जा सकता था? पूज्य महात्माजीका जन्मदिन आता तव प्रतिवर्ष मै अुनकी दीर्घायुके लिअे प्रार्थना करती थी और पत्रमे भी वैसी ही शुभेच्छा लिखती थी। लेकिन १९४७ मे अुनके जन्मदिन पर अिस प्रकार लिखनेकी याद आती है "जीवनभर आपने जिस आदर्शकी तपस्या की अुससे अुलटा ही परिणाम भविष्यमे आनेवाला हो, तो अुसे देखनेके लिअे आप जीये और हम आपके अनुयायी निकम्मे वनकर वैठे रहे और आपकी मददमे मर मिटनेकी हिम्मत न वता सके — अिसकी अपेक्षा भगवान अपनी कृपासे आपको अैसी स्थिति पैदा होनेसे पहले ही अपने पास वुला ले, अैसी प्रार्थना मन करता है।"

सन् १९४७ के दिसम्बरमे पूज्य महात्माजीका निवास नअी दिल्लीमे था। दिसम्बरके दूसरे सप्ताहमे कस्तूरवा ट्रस्टके प्रान्तीय प्रतिनिधियोकी वैठक पूज्य महात्माजीकी मौजूदगीमे होनेवाली थी, अिसलिअे मै दिल्ली गअी थी। लगभग १० महीने वाद मै अुनसे मिलने गअी थी। जेलमे न होनेकी स्थितिमे अितना लम्वा समय मै कभी न जाने देती थी। अुनकी मुलाकातको ४–५ महीने होते कि या तो मुझे किसी कारण-वश अुनके दर्शनका मौका मिल जाता, या कोअी कारण ढूढकर मै ही अुनसे मिलने चली जाती थी। मेरी अिस आदतसे शकररावजी अच्छी तरह परिचित थे, कभी कभी विनोद भी करते थे। मेरी आतुरता देखकर वे कहते, "अव वैटरी खतम हो गअी मालूम होती है। अव वहा (पूज्य महात्माजीके पास) जाकर फिर अुसे भर लाना।" और सचमुच ही मै चाहे जितनी थकी हुअी होती, तो भी हमारे अुन प्रियदर्शी नेताका दर्शन हुआ कि कोअी नअी ही चेतना मेरे मनमे प्रवेश करती थी, थकान अुतर जाती थी, मनमे अुल्लास भर जाता था। अुनकी वातचीतसे चित्तको सुखका अनुभव होता था, अुनके प्रसन्न हास्यसे हृदय डोलने

लगता था और अुनका वात्सल्यपूर्ण हाथ कधे पर विराजता तव अखिल जगतको जीतनेका अुत्साह मनमे पैदा हो जाता था। अिसलिअे अुनसे मिलते ही वैटरी भर जाती और मै नये अुत्साहके साथ वापस आकर स्वधर्ममे जुट जाती थी, अिसमे आश्चर्यकी कोअी बात नही।

अिस वर्ष वे नोआखाली और विहारमे भीषण परिस्थितिमे काम करने गये थे, शैतानका हृदय पिघलाने गये थे, अत हमारे लिअे — अुनके अनुयायियोके लिअे — तो 'स्वे स्वे कर्मण्यभिरता' होकर रहना ही स्वधर्म था। सासवड और पुरन्दर तालुकोमे हिन्दू बहुमतके बीच थोडेसे मुसलमान सुरक्षित रहे थे। कस्तूरवा ट्रस्टकी सेविकाअे और काग्रेस स्त्री-सगठन समितिकी वहने महाराष्ट्रमे अपने अपने कर्तव्यका दृढतापूर्वक पालन कर रही थी। यह समाचार लेकर मै दिल्ली गअी थी।

पूज्य महात्माजीसे मेरी मुलाकात हुअी। मेरी स्मृतिके अनुसार ९ दिसम्वरकी शामको पूज्य महात्माजीके साथ मोटरमे वैठकर मै विडला-भवनकी तरफ जा रही थी। हम दो ही थे। पूज्य महात्माजी हृदयकी वेदना अुडेलने लगे। अपने पुराने साथियोके वारेमे, जो अुस समय राज्याधिकार भोग रहे थे, वे वात कर रहे थे। "मै अकेला हू, मेरे साथ कोअी नही है।" यह था अुनके कथनका आशय! मै थोडी देर अवाक् होकर वैठी रही। मैने पहले कभी अुनके मुहसे अन्तर्वेदनाको अिस तरह प्रगट होते नही देखा था।

प्रतिनिधियोकी वैठकमे भी अैसा ही हुआ। अनेक प्रश्न पूछे गये, मैने भी अेक प्रश्न पूछा था। सारे देशमे कस्तूरवा ट्रस्टकी सेविकाओके लिअे कार्यकी अेक नीति है। लेकिन देशमे अनेक सस्थाये अलग अलग तरीकेसे मनमाना काम करे तो, अुससे कोअी निश्चित परिणाम नही आता। अिसलिअे सारे देशके लिअे अेक योजना वननी चाहिये, जिसमें सरकार और जनता दोनो शामिल हो, जिससे ट्रस्टका काम चमक अुठे और सवके लिअे सरल भी हो जाय। आजकी विकेन्द्रित शक्तिके केन्द्रित होनेसे राष्ट्रीय कार्यके साथ राष्ट्रीय गुणोका भी अुत्कर्ष होगा — अैसा मैने कहा।

पूज्य महात्माजीने पूछा, "अैसी योजना कौन वनायेगा?"

मैने कहा, "यह तो आप ही वना सकते है।"

वे बोले, "अुससे क्या होगा?"

मैंने कहा, "क्यो? केन्द्रीय मन्त्रि-मडलमे आपके ही अनुभवी नेता है। अुनके गले यह योजना आप अुतारे। फिर राष्ट्रीय पैमाने पर काम शुरू होगा।"

पूज्य महात्माजी गभीर हो गये। कहने लगे, "तू मानती है कि वे सब मत्री मेरा कहा सुनेगे? मै कहता हू कि मेरी बात कोअी नही सुनेगा। मै अकेला हू।" फिर हरअेकका नाम लेकर वे अपने और अुनके बीचके मतभेदका विवेचन करने लगे। यहा अुसके विस्तारमे जाना व्यर्थ है। लेकिन पूज्य महात्माजीके मनमे भीतर ही भीतर कितनी निराशा पैदा हो गअी थी, अिसकी झाकी मुझे मिली।

मै बेचैन हुअी। मै तो बिलकुल सामान्य सेविका थी। असभवको सभव बनानेके लिअे मै भला क्या कर सकती थी? फिर भी मै पूज्य महात्माजीको फिरसे प्रसन्न और अुत्साहपूर्ण देखना चाहती थी। अिसलिअे दुबारा हम मिले तब मैंने पास जाकर अुनसे पूछा, "सरकारको जाने दीजिये। हमारा गाधी-सेवा-सघ तो है। जिसका आपने विसर्जन किया था अुसीको फिरसे खडा क्यो नही करते? वह आपकी योजनाको पूरी करनेमे मदद करेगा।"

वे सिर नीचा करके लिख रहे थे। मेरा अुत्तर सुनकर अुन्होने अेकदम सिर अूचा करके मेरी ओर देखते हुअे जरा हसकर कहा, "गाधी-सेवा-सघको फिरसे खडा करनेकी बात ही तू मत बोल। क्या तू चाहती है कि मै अपने चारो तरफ hypocrites (दाभिको)का अेक दल खडा कर दू? अुस सघमे से अैसा ही दल पैदा हुआ था। मै दुबारा वैसा नही करना चाहता।"

मुझ पर जैसे वज्रपात हुआ। मै भी सघकी सदस्या थी। पूज्य महात्माजी हमसे जो अपेक्षा रखते थे अुसका पूरा होना तो अेक किनारे रहा, अुन्हे हमने दुख ही दिया। कैसा पाप?

पूज्य महात्माजीसे कुछ भी कहनेकी मैंने फिरसे हिम्मत नही की। विचार आया "अवतारी पुरुपकी अुत्कट अभिलापा रखना अेक चीज है। लेकिन अुसके अवतरित होनेके बाद युगकी माग पूरी करनेके लिअे

आवश्यक शक्ति पैदा करना दूसरी चीज है। युग-पुरुषकी सेवाके लिअे योग्यता होनी चाहिये।"

बैठक खतम होनेके बाद वापस लौटनेसे पहले मैंने पूज्य महात्माजीसे विदा ली। अुस दिन दिसम्बरकी १३ तारीख थी। शामकी प्रार्थनाके बाद अुनके साथ मैं बगीचेमे घूम रही थी। अेक तरफ आभा थी, दूसरी तरफ मैं। डॉ० किचलूके साथ अुनकी बातचीत चल रही थी। अेक और सज्जन डॉक्टर साहबके साथ थे, लेकिन वे कौन थे यह अब याद नही है। सुशीला मुझे लेने आअी तब मुझे अत्यत दुःख हुआ। अिस बार दस महीनेके वियोगके बाद मुलाकात हुअी है। भविष्यमे कब होगी? अैसा विचार मनमे आया और अनजानमे वैसे शब्द मुहसे निकले।

पूज्य महात्माजी मुझसे पूछने लगे, "बोल, तू फिर कब मुझसे मिलना चाहती है?"

मैंने क्षणमात्र विचार किया और कहा, "अैसी अिच्छा होगी तब आपको लिखकर बताअूगी।"

"ठीक, वैसा ही करना," अैसा आश्वासन देकर अुन्होंने मेरी झुकी हुअी पीठ पर अभयहस्त रखा। प्रणाम करते करते मनमे भान हुआ, "अरे, आज तेरहवी तारीख है!!!"

सुशीलाके साथ जाते जाते मैंने कितनी ही बार मुह घुमाकर अुनका दर्शन किया। सुशीला हसते हसते मुझसे पूछने लगी, "आज विदा लेते समय तू अितनी विह्वल क्यो हो गअी थी?" अिसका जवाब मैंने अुस समय नही दिया। डेढ महीने बाद राजघाटकी तरफ जाते हुअे श्मशान-यात्रामे हम साथ मिली, तब अुसे अिसका अुत्तर अपने आप मिल गया!

मैं सासवड वापस आअी तब मनमे अनेक विचार अुठते रहते थे। पूज्य महात्माजी कभी भी अपने साथियोके बारेमे अिस तरह नही बोलते थे। कभी मैं किसीकी आलोचना करती तो अुन्हे वह अच्छी नही लगती थी। काम सफल होता तब वे सब साथियोको श्रेय देते, काम बिगडता तब अपनी भूल निकालते। लेकिन अिस बार तो अुनकी रीति कुछ और ही दिखाअी देती थी। अिसका कारण क्या होगा? साथियोसे नाराज

हुअे होगे? या यह भावीकी सूचना कहलायेगी? अैसा कहा जाता है कि स्वामी रामकृष्ण परमहसने अपनी मृत्युके वारेमे पूर्व सूचना दे दी थी। वे कहते थे कि, "न करने जैसी वाते मै करने लगू तव समझना कि मेरी मृत्यु समीप आ गअी है।"

दिसम्वर पूरा हुआ। जनवरीका महीना आया। चौदहवी तारीखको सक्राति थी। हमेशाकी तरह मैंने पूज्य महात्माजीको पत्रके साथ तिल-गुड भेजा। अुसके वाद अखवारोमे पढा कि अुन्होने अुपवास शुरू किया है। हृदयको अेक आघात लगा। मनमे डर पैदा हुआ कि, "अिस सकटके समयमें अहिंसा-मूर्तिकी आहुति तो नही पडेगी!" लेकिन मैंने देखा कि भारतका हृदय अविचल है, वलवान है। अूपर दिखाअी देनेवाली हिंसाके पर्देके नीचे पूज्य महात्माजीके प्रति प्रेम और निष्ठाकी तहे है। अुनकी टेकको पूरा करके जनताने आत्माके प्रति द्रोह करनेसे अिनकार कर दिया है।

वातावरण कुछ पलटता-सा लगा। अुपवासमे अपमत्यु टल गअी। फिर वम-सकटसे भी पूज्य महात्माजी वच गये। मुझे लगा कि भगवान भक्तोके रक्षक है। हम व्यर्थ ही डरते थे। जितना महान पुरुष अुतनी ही महान अुसकी कसौटी! अुसके लिअे सकट भी महान ही आयगे। महान् सकटोमे से पार हुअे विना महापुरुषकी महानता भी कैसे सिद्ध हो सकती है? भगवान अपनी लीला दिखाते है। महात्माजीकी महानता तो शिखर पर पहुच गअी है, अैसा कुछ मनको लगा और हृदय अत्यत प्रसन्न हो गया।

अुस समय श्री शकररावजी काग्रेसके महामत्री थे। वे काग्रेस सस्थामे आअी हुअी शिथिलताको दूर करके अुसको मजवूत वनानेका प्रयास कर रहे थे। वे सर्वोदयकी वुनियाद पर देशमे आर्थिक नियोजन करनेका विचार रखते थे। अिसलिअे रचनात्मक कार्यकर्ताओका अेक सघ सगठित करनेकी आवश्यकता अुन्हे महसूस होती थी। पूज्य महात्माजीने गाधी-सेवा-सघको पुनरुज्जीवित करना अस्वीकार कर दिया था, फिर भी रचनात्मक कार्यकर्ताओको मार्गदर्शन देनेकी तैयारी वताअी थी। स्वतत्रता प्राप्त करनेके वाद अुद्यम और पुरुषार्थ करनेका समय आया था। देशसे

दारिद्र्यके रोगकी जड काटनके लिअे रचनात्मक शक्तिकी बुनियाद पर भगीरथ प्रयास करनेकी जरूरत थी। अिसलिअे शकररावजीके प्रयत्नसे ८, ९ और १० फरवरीको सेवाग्राममे रचनात्मक कार्यकर्ताओका सम्मेलन करनेका निश्चय हुआ था। पूज्य महात्माजी फरवरीके शुरूमे नअी दिल्लीसे सेवाग्राम जानेवाले थे।

अुस सम्मेलनमे शरीक होनेकी मेरी भी अिच्छा थी। अिसलिअे २६ जनवरीको मैने सासवड छोडा। दूसरे दिन कुलावा जिलेके पेण गावमे महाराष्ट्र काग्रेस स्त्री-सगठन समितिकी कार्यसमितिकी बैठक थी। वह दो दिनमे पूरी हुअी। फिर तीसरे दिन दूरके अेक गावमे कस्तूरबा ट्रस्टके ग्रामसेवा केन्द्रको देखने गअी। और ३० जनवरीको दोपहर १२ बजे मै बबअी पहुची। मेरी मौसीके यहा ठहरी थी।

शाम तक सारे काम पूरे करके मै साढे पाच बजे फलाहार करने बैठी थी। बम्बअीसे वर्धा जाना चाहती थी। अिसीके विचार मनमे घुल रहे थे। अेकाअेक किसीने बाहरका दरवाजा धडामसे खोला। मौसी देखने गअी तो अुनका छोटा लडका रेडियो सुनकर हाफता हुआ दौडकर आया और चीख अुठा, 'मा, गाधीजी गये ।'

मेरी छातीमे दो बार दर्द अुठा। मुझे ठीक याद नही कि मै कब अुठी और मुह धोकर बाहर आरामकुर्सी पर बैठ गअी। दिमाग बिलकुल जड हो गया था। मै जीवित हू या मृत, अिसकी भी कल्पना नही थी।

मौसी पास आकर सिर पर हाथ रखकर मुझे समझाने लगी, "शान्त रह बेटी, वह कमबख्त गलत खबर लाया होगा। मै मालूम करती हू।" मालूम करनेके बाद तो तीन गोली लगनेके ही समाचार मिले!

आखसे आसू भी नही बह रहे थे, मै स्थिर बैठी थी। बहुत देर बाद भान हुआ। किसन आकर मुझसे लिपट कर रोने लगी। अुसके बाद मुझे भी रोना आया, अैसा याद है। सारी रात वह मेरे पास ही सोअी। सुबह जल्दी अुठकर मैने सिर धोकर स्नान किया और चौपाटी पर सार्वजनिक प्रार्थनाके लिअे जानेकी तैयारी की। अितनेमे फोन आया। सुशीला सुबह सफर करके बम्बअी पहुची थी। अेक स्नेहीके मारफत अुसने मुझे हवाअी जहाज द्वारा दिल्ली चलनेका सन्देश दिया था। वह

स्वय हवाअी मार्गसे रवाना हुअी, फिर किसन और मैं दोनो विमानसे दिल्ली पहुची। अुस सारे ममयकी मन स्थितिका वर्णन करना कठिन है। तव तक अखवार हाथमे आया और सारे समाचार विस्तारसे जाननेको मिले। अेक तो अुस भीपण मृत्युका आघात। हमारा और देशका जीवन अव शून्य हो गया, अैसी भावनासे पैदा हुअी घोर निराशा। और फिर हत्यारा महाराष्ट्री कुलागार निकला! (अुसका नाम भी अुस समय तक मैंने नही सुना था, यद्यपि वह पूनाका रहनेवाला था और काग्रेस-विरोधीके रूपमे प्रख्यात था।) महाराष्ट्रमे वुद्धिमान, नेता कहे जानेवाले वर्गमे से कुछ व्यक्तियोने वर्षो तक पूज्य महात्माजीके विरुद्ध जो व्यक्तिगत जहरीला प्रचार किया था अुसीका यह पका फल था। अुस समय हवाअी जहाजमें हमारे साथ श्री खेरसाहव, अुनकी पत्नी और लीलावतीवहन आसर थी। लीलावतीवहन क्रोधावेशमे वोल अुठी, "मुझे लगा कि हत्यारा कोअी निर्वासित होगा। लेकिन वादमे मालूम हुआ कि वह तो मुआ घाटिया था।" अिन शब्दोने मुझे सावधान कर दिया। अीसाकी मृत्युको लेकर यहूदी और अीसाअियोके वीच सदियो तक वैर वना रहा था। अव अैसी ही वात क्या भारतमे भी होगी? गुजराती-महाराष्ट्रियोके वीच क्या स्थायी अहि-नकुलका वैर पैदा होगा? अैसे दु सह विचार मनमे आने लगे। मन जड और वधिर हो गया।

जुलूसमें शामिल होकर मैं अश्रुमोचन करती हुअी सुशीलाके साथ चलने लगी। वह खूव शात थी और मुझसे विवेककी वाते करने लगी। राजघाट पर श्रीदेह लाया गया तव श्री मणिवहन पटेलकी मददसे मैं अुस जर्जर किन्तु पावन देहको देख सकी। मैंने मस्तक पर हाथ रखा। वरफ जैसा ठडा लगा। मेरे शरीरमे कपकपी छूटी। जव चिता प्रगट हुअी और शरीर भस्म होने लगा अुस समयके आक्रन्दका वर्णन कैसे करू? जो शरीर हम सवको प्रियदर्शी और प्रिय लगता था, जिसकी सेवाको हम सव साक्षात् भगवानकी ही सेवा मानते थे, वह शरीर आखिर 'भस्मान्तम्' हुआ!! कैसी विचित्र लीला है!

'जिसको तूने जगमे जिलाया वो ही तुझको जलाये।'

*

किसन और मै श्री मावलकरजीके यहा गअी। शकररावजीको मालूम हुआ तो वे आकर हमे अपने घर ले गये। अुस दिन तो किसीको खाना-पीना सूझा ही नही। दूसरे दिन अखबारमे खबर आअी, "महाराष्ट्रमे —खास तौर पर पूना-कोल्हापुर-सतारामे काग्रेस-विरोधी तथा गाधी-विरोधी लोगो पर बहुसख्यक समाज टूट पडा है। अुनके मकान जलाये जा रहे है। अत्याचार हो रहे है।" आदि आदि।

हृदयमे क्रोध और सताप भरा था। आवेगमे मै बोल अुठी, "मुझे अुन लोगो पर जरा भी दया नही आती।"

शकररावजी शातिसे मुझे समझाने लगे, "हमे अुदार होना चाहिये, प्रेमाबाअी, अिस तरह नही बोलना चाहिये।"

तीन दिन बाद किसनके साथ मै दिल्लीसे रवाना हुअी। अन्तरमे वैराग्यकी आग जलने लगी। मैने अपने बाहरी वेशमे परिवर्तन कर डाला। देखनेवालोको आघात लगा। लेकिन मुझसे कुछ कहनेकी किसीकी हिम्मत नही हुअी। अेक दो बहनोने सहज प्रयत्न किया, लेकिन मैने अुन्हे रोक दिया। पूनासे आचार्य भागवत मेरे साथ हुअे। सासवड पहुचनेके बाद मेरी वेदना और क्लेश बढ गये और अब परमात्माके साथ झगडा शुरू हुआ।

मै भगवानसे कहने लगी, "तू दयामय नही है। कोअी क्रूर राक्षस जैसा है! अपने भक्तोकी भी तू रक्षा नही करता। तू वचनका झूठा है। 'न मे भक्त प्रणश्यति।' अिस आश्वासनको तूने झूठा सिद्ध किया है! सुकरात, अीसा और महात्माजी — तेरे अिन भक्तोको अपना बलिदान देना पडा। अहिंसाका पूर्ण पालन करनेवाले व्रतियोको भी तू भीषण मृत्यु देता है। दुनियामे भलेका नतीजा भला, बुरेका बुरा — यह नीति अब तेरे पास नही रही। अिसलिअे पूज्य महात्माजीका अैसा भयानक अन्त देखकर लोगोकी श्रद्धा टूट गअी और कानूनको हाथमे लेकर वे तोडफोड और मारकाट करने लगे, अिसमे आश्चर्य क्या? अतिम अुपवासके दिनोमे पूज्य महात्माजीका असाधारण धर्मतेज प्रगट हुआ, तब मुझे श्रद्धा हुअी थी कि अिस पुण्यभूमिमे सतकी हत्या नही होगी। लेकिन तूने तो मेरी आखे खोलनेमे जरा भी देर नही लगाअी।" अिस तरह जैसे जैसे झगडा

चलता गया वैसे वैसे मनमे निराशा फैलती गअी। आन्तरिक श्रद्धाका सारा वल तो भगवानमे था। अुसके अूपर रही श्रद्धा टूट जाय तव तो जीवनका दिवाला ही निकलेगा न!

फिर भी प्रार्थना और सतवाणीका परिशीलन मैंने नही छोडा। मन तो रातदिन सतप्त रहता था। अन्तरमे कही वडी रिक्तता आ गयी थी।

१२ फरवरीको राष्ट्रीय पैमाने पर अशौचकी निवृत्ति हुअी। अुस दिन मैंने पूरा अुपवास किया था। तेरहवीको शुक्रवार था। अुस दिन अेक वार खाया और हर सप्ताह अैसा करनेका सकल्प किया।

शुक्रवारको कुछ मानसिक ग्लानि वढ गअी थी। अिस दुनियामें अव अपना कोअी नही है, भगवान भी नही है, अैसी कुछ विचित्र शून्यावस्था चित्तमे पैदा हो गअी थी। पूज्य महात्माजीके अवसानसे पहले मर जानेकी अिच्छा पूरी नही हुअी। मै जीवित हू। निराश और निरुत्साहित हू। अव जीवन कैसे विताअू? सेवाकार्यमे मेरा पथदर्शक कौन होगा? हृदयका दु ख और भूलोका भार किसके सामने हलका करूगी? अैसे विचारोसे मन अुद्विग्न हो गया था।

हमारे मकानकी दूसरी मजिल पर अेक छत थी। वरसात नही होती तव आठ महीनेसे ज्यादा समय मै वही सोती थी। मुझे कमरेमे सोना कभी अच्छा नही लगता था, खुलेमें सोना ही अच्छा लगता था। आज भी यही स्थिति है।

तेरहवी फरवरीको माघ शुक्ल तृतीया थी। रातको साढे ग्यारह वजे मै छत पर गअी। आचार्य भागवतको क्षयका ससर्ग हो गया था, अिसलिअे वे पहली मजिल पर कमरेमे ही सोते थे। आश्रम-माता वृद्ध माअी और अेक छात्रा दोनो नीचेके अेक कमरेमे सोती थी। मकान गावके अेक किनारे होनेसे चारो ओर अेकान्त था। फिर आधी रात हो चली थी। चारो ओर शाति विराज रही थी। मै थकी हुअी थी। क्योकि मनमे वेदना होनेके वावजूद काम तो वरावर चलता ही था। मनको खाली रखनेसे अुद्वेग वढ जाता था, अिसलिअे काममे लगे रहना ही लाभप्रद मालूम होता था।

छत पर विस्तर विछाकर मै लेटी। चारो तरफ अधकार था। आकाशमे नक्षत्र चमक रहे थे। यामिनी नि शब्द थी। पूज्य महात्माजीका

चिन्तन करती हुअी मै पडी थी। फिर सो गअी। नीदमे कभी स्वप्न आया अुससे जाग अुठी। अुसके वाद कुछ देर तक नीद नही आअी। फिर पावन स्मरण, फिर अश्रुमोचन, अिस तरह चलता रहा। अचानक जोरसे हवा चलने लगी। मुझे ठड-सी मालूम हुअी। ओढनेका खेस ओढकर मै पडी रही। अितनेमे मेरे सिर पर अुगलियोका स्पर्श हुआ। धीरे धीरे वालोमे अुगलिया घूमने लगी। मेरे तकियेके पास कोअी वैठा है अैसा मुझे लगा। और मनमे डर पैदा हुआ। मैने आखे मीच ली। कुछ सैकड वीते होगे। स्पर्श लुप्त हुआ। तो भी मै वैसे ही पडी रही। अेकाध मिनिट वाद हिम्मत करके मैने सिर अूचा करके देखा। कोअी नही था। सर्वत्र शान्ति थी और आकाशके तारे पृथ्वी पर प्रकाश-किरणे फेक रहे थे।

मेरे तकियेके पास घडी थी। देखा पौने तीन वजे थे।

वादमे तो मै फिर सो गअी। सुवह आचार्य भागवतसे मिली तव रातका अनुभव मैने कह सुनाया। वे कहने लगे, "आपने स्पर्श हुआ तभी तुरन्त सिर अूचा करके देखा क्यो नही? डर क्यो लगा?"

"डर नही लगना चाहिये था।" मैने कहा, "लेकिन पता नही क्यो देखनेकी अिच्छा होते हुअे भी मेरी हिम्मत नही हुअी।"

*

हृदयकी शाति भग हुअी थी। लेकिन श्रद्धा भग हो जाती तो जीवनमे रहा मागल्य भी चला जाता। फिर भी लगभग अेक वर्ष तक भगवानके साथ मेरा झगडा चलता ही रहा। पूज्य महात्माजीकी मृत्युका गूढ रहस्य मै समझ नही पाती थी। अनेक लोगोने अनेक प्रकारसे मीमासा की। मार्चमें सेवाग्राममें गाधी-अनुयायियोकी अेक वडी परिषद हुअी। वहा लम्वा-चौडा वार्तालाप हुआ। अुसमें से सर्वोदय समाजका जन्म हुआ। अुन दिनोमे मै श्री विनोवाजीके साथ काफी सपर्कमें आअी। मेरी सान्त्वनाके लिअे अुन्होने खास समय दिया। अुनके सहवासमे अच्छा तो लगता था, लेकिन अतिम समाधान तो अतरमें से प्राप्त करना चाहिये अैसा लगा।

यह समाधान या शान्ति प्राप्त करनेका मार्ग तो सूझा नही था। पूज्य महात्माजी गये, लेकिन अुनका मुझे सौंपा हुआ काम (कस्तूरवा ट्रस्टका) तो मेरे पास ही था। अुसमे तथा दूसरे कामोमे मन

लगानेका मैंने वहुत प्रयत्न किया। गाधी-स्मारक-निधिकी स्थापना होते ही महाराष्ट्रमे अेक कामचलाअू शाखा-समिति स्थापित हुअी। अुसके चार मत्री नियुक्त हुअे। अुनमे से अेक मै भी थी। कोष अिकट्ठा करनेके लिअे तीनो मत्रियोने अपने अपने जिले चुन लिये। तीनो द्वारा 'त्यक्त' दो जिले मेरे हिस्से आये। वे थे रत्नागिरी और कुलावा। कगाली और यात्राके साधनोकी असुविधाके लिअे ये दोनो जिले महाराष्ट्रमे 'प्रसिद्ध' है। लेकिन मुझे यह वात अच्छी लगी। क्योकि दोनोमे, विशेपत रत्नागिरीमे अुच्च कोटिका सृष्टि-सौदर्य है। अिसलिअे यह जिला मुझे वहुत पसन्द है। फिर तपस्वी श्री अप्पासाहव पटवर्धन अिस जिलेके प्राण कहे जा सकते है। वरसातके मौसममे मै रत्नागिरी जिलेमे घूमी। छोटे वडे वृक्षोसे ढके हुअे सह्याद्रिके पहाड, अुनमे से कलकल नाद करते नीचे अुतरते हुअे झरने, दूर अनन्त तक जाते मालूम होनेवाले लाल मिट्टीसे रजित रास्ते, सहस्रधाराओमे वरसती वर्षा, चारो ओर विराजती शाति और आसपासकी सुन्दर प्रकृतिके साथ अेकरूप होनेसे प्राप्त होनेवाला अद्वैतानन्द। यह रत्नागिरीकी ही विशेपता है।

पूज्य महात्माजीके स्मारकके लिअे मै कोप अिकट्ठा करने गअी थी। अुनका पावन स्मरण पग पग पर होता था। चौमासेमें सृष्टि भले ही रमणीय लगती हो, लेकिन अैसा प्रतीत हुआ कि अेकान्त वनश्री और मेघ-गर्जना मनके वियोग-दुखको भी तीव्रतर वना देती है। पूज्य महात्माजीको मीरावाअीके दो भजन वहुत प्रिय थे। अेक 'म्हाने चाकर राखोजी' और दूसरा 'तोहारे कारन सव सुख छोडिया'। जव मै अुनके पास थोडे समय रहने जाती, तव वे हमेशा मुझे प्रार्थनामे ये गीत गानेके लिअे कहते थे। रत्नागिरीके प्रवासमे मुझे दूसरा भजन वरावर याद आता था

तोहारे कारन सव सुख छोडिया अव मोहे क्यो तरसाओ ? प्रभुजी ।।
अव छोडिया नहि वने प्रभुजी, तव चरणके पास वुलाओ ।।१।।
विरहव्यथा लागी अुर अन्दर, सो तुम आय वुझाओ ।।२।।
मीरा दासी जनम जनमकी, तव चित्तसु चित्त लगाओ ।।३।।

*

रत्नागिरीके बाद कुलाबाकी बारी आअी। तब दीवालीका त्योहार पास आ गया था। पूज्य महात्माजीके अवसानके बाद राष्ट्रमे शोक व्याप्त हो गया था, अिसलिअे अुत्सव मामूली-सा मनाया गया था। फिर भी बच्चोके और ग्रामीणोके रसिक मनको दुख भी क्षणजीवी ही लगता है। अच्छा हुआ कि यात्राके मेरे अधिकाश दिन मुसलमानोकी बस्तीवाले प्रदेशमे बीते। भाअीदूजके दिन काम नही था। यात्रा करके मै ठहरनेके लिअे महाड नामके गावमे पहुची। रातके १० बजे थे। छत पर सोने गअी। प्रार्थना और नामजप करके लेटी, लेकिन पडोसमे रेडियो और अुत्सवकी धूमधाम चालू थी, अिसलिअे थकी होने पर भी जल्दी नीद नही आअी। नीद कब आअी यह पता नही चला।

नीदमे स्वप्न आया। विह्वल होकर मै बैठी थी और पूज्य महात्मा-जीका स्मरण कर रही थी। तभी अन्तर्नाद होते सुना "मै यही हू, पास ही हू।" चौककर मै देखने लगी तो पूज्य महात्माजी सामने हसते हुअे खडे थे और मुझे आश्वासन दे रहे थे। खुशीमे मै लोगोको आवाज देकर बुलाने लगी, "आओ यहा, दौडकर आओ। ये रहे महात्माजी।" लोग दौडते आये, लेकिन पूछने लगे, "कहा है? कहा है?" मै बताने लगी, लेकिन लोगोको वे दिखाई नही देते थे। केवल मै ही अुन्हे देख सकती थी! फिर तो मै जोरसे रोने लगी और महात्माजीसे कहने लगी, "आप मुझे छोडकर चले गये! अैसा क्यो किया? अब मै कैसे जीअूगी? मुझे तो सब ओर शून्य ही शून्य लगता है।" वे कहने लगे, "पगली, रोती क्यो है? शोक मत कर। मै तो तेरे पास ही हू। कही नही गया। आख खोलकर देख।" और भी कुछ कहा, लेकिन रुदनमे मैने सुना नही। रुदनकी तीव्रता अितनी बढ गअी कि धक्का लगनेसे मै जाग पडी। देखा तो चारो ओर अधेरा और शाति!!

पूज्य महात्माजीके अवसानके बाद वे पहली बार ही मुझे स्वप्नमे दिखाअी दिये थे। जीवित थे तब अनेक बार स्वप्नमे आते थे। लेकिन अवसानके बाद नौ महीनो तक अुनका दर्शन नही हुआ। अिस स्वप्नमे आश्वासन मिला, जिससे हृदयको कुछ शाति हुअी। मनमे विचार आया कि मृत्युको मित्र माननेकी सीख वे हमे अनेक बार देते थे। रामका

दर्शन न हो तो भी अुनका काम करते रहना चाहिये, अुसीमे रामका ध्यान और दर्शन आ जाता है, जैसा अुनका मानना था। हमे भी अिसी पाठका अनुसरण करनेका प्रयत्न करना चाहिये।

वादमे तो मै काममे डूब गअी। स्वतत्रता-प्राप्तिके वाद करनेके लिअे अनेक काम पडे थे। अपनी शक्तिके अनुसार मै भी करने लगी। नवम्बरके आखिरी सप्ताहमे मै वर्धा गअी थी। वहा श्री रैहानावहन तैयवजी मिली। अुन श्रद्धालु वहनका मानस भक्तका है। अपने स्वप्नकी वात मैने अुनसे कही। वे खुश होकर कहने लगी कि, "यह अेक सूचक स्वप्न है। वापूने आपको सदेश दिया है। अुनका काम करके काममे ही अुन्हे देखनेका प्रयत्न करिये। अुसीमे आपको शाति मिलेगी।" फिर अुन्होने अपने अेक स्वप्नका वर्णन किया, जिसमे अुन्हे भी पूज्य कस्तूरवाके साथ पूज्य महात्माजीके दर्शन हुअे थे और अुनका सदेश मिला था।

महाराष्ट्रमे कस्तूरवा ट्रस्टका काम वढता गया। शिविर चले और वादमे ग्रामसेविका-विद्यालयकी स्थापना हुअी। १९४९के जूनमे सासवडका आश्रम गावके मकानसे हटकर गावसे वाहर अेक रमणीय स्थान पर चला गया। पर्वत, नदी, मदिर, झरनो और प्रकृति-सौदर्यके लिअे यह स्थान प्रसिद्ध था। अिसके सिवा वह 'सिद्धस्थान' माना जाता था। वहा आश्रमके पक्के मकान वने। वाग-वगीचे लगे। आश्रम वहा गया अिसलिअे कस्तूरवा ट्रस्टका प्रान्तीय कार्यालय भी वहा गया। अत आश्रमके पास ही ग्रामसेविका-विद्यालयके लिअे मकान वने। खेती-वाडी शुरू हुअी, गोशाला खुली, वैलगाडी आअी, करघा आया, अनेक प्रवृत्तिया चलने लगी। ट्रस्टके अध्यक्ष स्व० श्री दादासाहव मावलकर हर साल आकर आश्रममे अेक दो दिन रह जाते थे। आश्रममे अेक हिरनी भी पाली गअी। ग्रामसेवा केन्द्र वढ गये। स्त्री-सगठन-समितिका काम व्यापक होने लगा। काग्रेसका काम, फिर भूदान-यज्ञ सवधी प्रवृत्तिया, साहित्य-सेवा और दूसरी अनेक प्रवृत्तिया — अिन सवमे मै डूव गअी। पढने या चितन करनेकी फुरसत ही नही मिलती थी। श्री शकररावजी वहा वार वार आते थे, अिसलिअे कार्यकर्ताओंकी भीड लगी रहती और तरह तरहकी चर्चाअे भी होती। वादमे नेता, मत्री और सरकारी अधिकारी सभी आने

लगे। मेरी यात्रा और भ्रमण भी चलता था। श्री मोरारजी देसाअी हर साल अेक वार आकर आश्रममे रह जाते थे। मेरे सेवाकार्यमे अुन्होने अपनी मर्यादामे रहकर वहुत मदद की। मुझे विना खर्च किये लोकसभामे भेजनेके लिअे वे तैयार हो गये थे, लेकिन मैने मना कर दिया। फिर अुनके आग्रहसे मैने दो-तीन सरकारी कमेटियोमे काम किया। अैसे काम मेरी प्रकृतिके अनुकूल न होनेके कारण आगे अैसा न करनेकी मैने अुनसे प्रार्थना की और वे मान गये। विदेश जानेके मौके भी मैने टाल दिये। सस्था अन्न-वस्त्रके वारेमे स्वावलम्वी होनी चाहिये, यह आदर्श पूज्य महात्माजीने हमारे सामने रखा था। अुस आदर्श तक पहुचनेका मै महाप्रयत्न करती रही।

अिस प्रकार महात्माजीके अवसानके वाद सात वर्ष वीते। १८ नवम्वर, १९५४ को राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसाद आश्रममे पधारे तव राज्यके वडे वडे शासक, वहने, सेवकगण और आम लोग हाजिर थे। राष्ट्रपतिने सव जगह घूमकर सन्तोप व्यक्त किया और कहा, "सचमुच यह जगलमे मगल हो गया है। यहा फिरसे आनेकी मेरी अिच्छा है।"

किसी भी सेवक या सेविकाके लिअे अुसकी सेवा कृतार्थ हुअी, अैसा अनुभव करनेका यह धन्य क्षण था। लेकिन अैहिक वैभवसे मेरा मन अपनेको कृतार्थ मान ले अैसी मेरी मन स्थिति या मनोरचना नही है।

मै समाजके प्रति कृतज्ञ थी, क्योकि हजारो हाथोसे वह मुझे सहायता देता था। सामाजिक सेवाकार्यमे अनेक कठिनाअिया आती है। लेकिन मेरे कार्यमे कभी भी वडी कठिनाअिया खडी हुअी हो अैसा मुझे याद नही है, हमेशा अनुकूलता ही मिली है। सहयोग और स्नेहका अभाव भी मैने कभी अनुभव नहीं किया। जो काम हाथमे लिया अुसमे लोगोकी सहायता और पूज्य महात्माजीके आशीर्वाद दोनोके फलस्वरूप मुझे सफलता ही मिली है।

लेकिन अितना वरदान मिलता गया अिस कारण अुत्तरदायित्वका भार मन पर वढता गया। समाजके अनन्त हाथ है, जव कि मेरे दो ही हाथ है, अिसका मुझे सतत स्मरण रहा है। दिया अुससे अधिक लिया — यह वस्तुस्थिति मुझे नम्रताका पाठ सिखाती आअी है। अिसके

सिवा, सेवाको मैंने कभी भी अपनी भौतिक अुन्नतिका साधन नही माना, मै अुसे चित्तशुद्धिका साधन मानती आअी हू। सेवासे अन्त करणका मैल धुलना चाहिये, योग सधना चाहिये, परमात्म-दर्शनका मार्ग सुलभ होना चाहिये, अैसी मेरी मान्यता थी। लेकिन मैंने देखा कि मेरी यह अिच्छा सफल नही हुअी। कामका क्षेत्र जैसे जैसे वढता गया वैसे वैसे सन्ताप भी वढता गया। अपने कामसे मुझे ही असन्तोप होने लगा। अूपरसे वैभव दिखाअी देता था, लेकिन दीपकसे दीपक प्रगट होता है अुसी तरह सेवाके द्वारा सेवाभावी चारित्र्यवान सेविकाओका सघ तैयार करनेकी मेरी अभिलापा सफल नही हुअी। वाहरी शिक्षा और चरित्रके सस्कार ये दो चीजे भिन्न हैं। सस्कारकी दृष्टिसे शिक्षा देनेका काम सरल नही है अैसा अनुभव मुझे हुआ। अलवत्ता, अिसमे मुझे अपनी ही कमी नजर आअी। और अपने प्रति मेरा असन्तोप वढने लगा।

मै आत्म-निरीक्षण करने लगी। मेरी कितनी प्रगति हुअी है? अपने क्रोधको मै जीत सकी हू या नही? मानवके मनमे पड्विकार तो रहते ही है। लेकिन मुझे क्रोधके विकारको जीतनेके लिअे सतत प्रयत्न करना पडा है। दूसरे विकार साधारणत सुप्त अवस्थामे ही रहते है। कभी अेकाध विकार जाग्रत हो जाय तो सामान्य विवेककी वाणी ही अुसे शात करनेके लिअे काफी होती है। लेकिन क्रोधको जीतना मुझे कठिन लगा है। वर्पोके प्रयत्नसे मैंने निग्रह-शक्ति थोडी मात्रामे प्राप्त की है। लेकिन सेवाकार्यमे क्रोध-विकारने वार वार मुझे खूव सताया है।

मैंने देखा कि आजके यत्रयुगका असर सेवा पर भी पडा है। आजकल सेवा किसी सस्था या सगठनके मारफत ही होती है और सेवाको यत्रकी गति मिल गअी है। परिणामस्वरूप सेवा करनेवाला व्यक्ति जड यन्त्र जैसा वन जाता है। आत्माके विकासके लिअे अुसमे अवकाश नही रहता। सेवाकार्यमे आवेशके आनेमे शक्ति नही आती। तलवारको तपानेसे अुसकी धार भोथरी हो जाती है।

अिसके सिवा, मनको सवसे खराव लगनेवाला काम है सेवाके विवरण तैयार करके छपाना। सेवाका हिसाव करने वैठे तो अुसकी कीमत पैसोमे आकनी पडती है। लोगोसे पैसे लेते है अिसलिअे पैसोका

हिसाव तो देना ही पडता है। लेकिन सेवाका भी हिसाव देना पडे यह वात मुझे पसद नही थी। मुझे लगता कि अिमसे सेवाकी पवित्रता भ्रष्ट होती है। अैसी कार्य-पद्धतिसे मनमे अहकार वढता जाय तो अिसमे आश्चर्य क्या ?

मुझे मानसिक शाति भी नही थी। हृदयमे गहरा घाव हो चुका था। अुसे व्यापक सेवाकार्यकी पट्टी वाधकर मैंने ढक दिया था। जीवनमे या सेवाकार्यमे होनेवाली भूले, आचार-दोष, विचार-दोष, दु ख — सभी 'पाप' जिसमे अर्पण करनेसे मनको मुक्ति और शाति मिलती थी, वह 'महातीर्थ' तो दृष्टिसे ओझल हो गया था ! ! अब मनको पावन करनेवाली और शाति देनेवाली कोअी महाशक्ति मौजूद नही थी। अिससे मेरी अकुलाहट वढने लगी। सात वर्षमे जो 'सचय' हुआ था, अुसका भार मुझसे सहन नही हुआ। मुक्तिकी अभिलाषा रहने लगी। समाजसे दूर कही अेकान्तमे भाग जानेकी व्याकुलता मनमे वढने लगी।

मैंने यह भी अनुभव किया कि सामाजिक या व्यक्तिगत स्नेहकी मर्यादा होती है। दो या अनेक व्यक्ति मिलकर अेक सामान्य ध्येय या आदर्शके लिअे सह-प्रयत्न करते है और व्यक्तिगत जीवनमे अनेक अपेक्षाये भी रखते है। अिसलिअे सेवाक्षेत्रमे भी हिसावी व्यवहार हो जाता है। बहुत वार यह अपेक्षा अहकारकी पोषक होती है। अिसलिअे वह पूरी न हो तो क्लेश पैदा होता है। जगतकी अिस मर्यादाको समझकर ही साधु-सन्तोने लिखा होगा

जगतमे कोअी नही अपना। मेरा श्रीराम प्यारा है ।।

निरपेक्ष प्रेम करनेवाला या तो भगवान है या सद्गुरु ! जगतका प्रेम व्यावहारिक ही रहता है। यह कहकर मै जगतकी निदा नही करती, वल्कि अुसकी मर्यादा वताती हू। क्योकि हम भी जगतके ही अश है, अिसलिअे अुसकी मर्यादासे परे नही है।

*

अिस तरह अिस जजालमे से छूटनेके लिअे मन तडप रहा था, तभी हमेशाकी तरह दृष्टिसे अगोचर रहनेवाले परन्तु अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड तक वस्तुमात्रका कल्याण करनेवाले, मेरे सर्जनहार और तारनहार भगवानने

फिर मेरी मदद की! अेक अेक चिन्ता दूर होने लगी। सन् १९५२ मे स्त्री-सगठन-समितिका विसर्जन हुआ। लगभग अुसी समय मैंने कांग्रेसकी सदस्यता छोड दी। अलग अलग कमेटियोसे मुक्त हुअी। रहा कस्तूरबा ट्रस्टका काम। अुसके लिअे भी योग्य व्यक्ति मिल जानेसे सन् १९५४ के आखिरमे अुसकी सारी जिम्मेदारी भी मैंने सौप दी। और सचमुच मै मुक्त हो गअी!!

अिन सात वर्षोमे मुझे भारी श्रम करना पडा था। नीद कम मिलती थी, वाचन-चिंतनके लिअे पूरा समय नही मिलता था। सफरके समय गाडीमे हिलती-डुलती कुछ पढती थी। मनमे हमेशा कामनाये और मनोरथ 'अुत्पद्यन्ते विलीयन्ते' किया करते थे, अिसलिअे गम्भीर चिन्तन तो होता ही कैसे? मेरी अवस्था शरावी जैसी हो गअी थी। अिसे 'कर्मयोग' कैसे कहा जाय? कर्मयोग हो, भक्तियोग हो अथवा ज्ञानयोग हो— चाहे जो योग हो, परन्तु योगका अर्थ है जोडना। हमारा मन अीश्वरके साथ सतत जुडा हुआ रहना चाहिये, वडेसे वडे काममे भी यह अवस्था कायम रहनी चाहिये। तभी योग साधा अैसा कहा जा सकता है। नही तो वह 'कर्म-जजाल' हो जाता है। जैसे वुनियादी शिक्षामे शिक्षाका प्रत्येक प्रकार 'जीवन' के साथ जुडा हुआ होना ही चाहिये, तभी अुसे जीवन-शिक्षण कहा जा सकता है, वैसे ही योगमे चित्तका सम्वन्ध भगवानके साथ जुडा रहना चाहिये, तभी कर्ममे अनासक्ति आती है और मनको शाति मिलती है।

भविष्यका कोअी खास विचार अिस समय मनमे पैदा नही हुआ था। अैसा निश्चय किया था कि अेक वर्ष तक आश्रममे शातिसे वैठकर वाचन, चिन्तन, लेखन और थोडा भूदान-यज्ञका काम करूगी। अेक वर्ष वाद आगेका विचार! लेकिन मैंने देखा कि मेरा जीवन मेरे हाथमे था ही नही। वर्षो पहले मैंने यह जीवन पूज्य महात्माजीको अर्पण किया था। वे देहधारी थे तव मेरा मार्गदर्शन करते थे। अुनके अवसानके वाद अुनके साथ मेरा जीवन भगवानके हाथमे गया। अव भगवान मार्गदर्शन करने लगे। अुनकी अिच्छा थी अुतना सार्वजनिक सेवाकार्य अुन्होने मेरे हाथमे करा लिया। अव अुन्होने मेरे लिअे कुछ और ही योजना वनाअी

थी। वह भी अुनकी अिच्छाके अनुसार हुआ। अेक अैसी विलक्षण घटना घटी कि मेरा जीवन बिलकुल दूसरी ही दिशामे मुड गया।

*

पूनामे अेक तत्त्वज्ञानी और विद्वान भक्त रहते है, जिनका नाम महाराष्ट्रमे प्रख्यात है प्रो० शकर वामन अुर्फ सोनोपत दाडेकर। कुछ वर्ष तक वे पूनाके सर परशुराम भाअू कॉलेजके प्रिंसिपाल थे। ब्रह्मचारी है। महाराष्ट्रके सत-शिरोमणि श्री ज्ञानदेव महाराज और श्री तुकाराम महाराजके परम भक्त है। पढरीके वारकरी (महाराष्ट्रके अेक भक्ति-सप्रदायके अनुयायी) है। सुन्दर प्रवचन करते है। मै कस्तूरबा ट्रस्टका काम करती थी, तब दो बार अुन्हे विद्यालयमे आमत्रित करके छात्राओके सामने अुनके अनेक प्रवचन कराये थे। पहली बार वे आये तब मैने अुनसे पूछा था, "ज्ञानेश्वरीके छठे अध्यायमे ध्यानयोगका जो अनुपम वर्णन है, वह वास्तविक है या काव्य है?" वे बोले, "वह सत्य है।" मैने कहा, "आज योगशास्त्रको जाननेवाला कोअी अधिकारी व्यक्ति है क्या? मुझे अुस शास्त्रमें रस है। कोअी अधिकारी व्यक्ति मिले तो अुसे सीख लेनेकी मेरी अिच्छा है।" अुन्होने कहा, "हा, अैसे अधिकारी पुरुषको मै जानता हू। अुनका नाम श्री गुळवणी है।" फिर मैने कहा, "मुझे अुनका पता दीजिये। मै अुनसे मिलूगी।" अुन्होने कहा, "वे यात्रामे रहते है। पूना आयेगे तब आपको लिखकर बताअूगा।"

अुसके बाद लगभग दो वर्ष बीत गये। मै पूछती तब "श्री गुळवणी यात्रामे है", यही अुत्तर मिलता। सन् १९५४ के दिसम्बरमे मैने प्रो० दाडेकरको विद्यालयमे दूसरी बार बुलाया तब अुनसे मिलना हुआ। मैने श्री गुळवणीके बारेमे पूछा तो वे कहने लगे, "आप सच्चे दिलसे पूछती थी क्या? आपको सचमुच ही श्री गुळवणीसे मिलना है? मुझे लगा कि आप शिष्टाचारके लिअे ही पूछती होगी, अिसलिअे मैने आपकी बात पर कोअी खास ध्यान नही दिया।" तब मैने अुनसे कहा कि, "मै सच्चे दिलसे ही पूछती थी। मुझे योगके बारेमे जिज्ञासा है और अब मै कामसे मुक्त हो जानेवाली हू।" तब अुन्होने अुत्तर दिया, "मुझे विश्वास हो गया। अब मै पूना जाअूगा तब मालूम करके आपको लिखूगा।"

जनवरीमे प्रो० दाडेकरका कार्ड मिला कि, ' श्री गुळवणी पूनामें है। मैंने आपके बारेमे अुनसे कह रखा है। अुनके साथ पत्रव्यवहार करके आप अुनसे मिल लीजिये।"

मुझे आनन्द हुआ। १४ जनवरीको सक्रांति थी। अुस मुहूर्त पर मैंने कस्तूरबा ट्रस्टकी जिम्मेदारी नये प्रतिनिधिको सौंप दी और हर्षयुक्त अन्त करणसे श्री गुळवणीको लिखकर पूछा, "१८ तारीखको आपसे मिलने आअू ?" अुनका अुत्तर आया, "आ जाअिये।"

मैं पूना गअी। मेरे साथ मेरे अेक वृद्ध स्नेही श्री हरिभाअू मोहनी थे। श्री हरिभाअू नागपुरके बहुत पुराने कांग्रेसी कार्यकर्ता और पूज्य महात्माजीके पुजारी हैं। वर्षोंसे मुझे जानते और मुझ पर स्नेह रखते थे। मेरे भावी जीवनके बारेमे अुन्हे चिंता थी। अिसलिअे वे मेरे साथ गये।

श्री गुळवणीसे मुलाकात हुअी तब अुनकी आयु ७३ वर्षकी होगी। कदके छोटे लेकिन प्रसन्न-गभीर दिखते थे। अुन्हे देखकर मुझे सतोष हुआ। हम पास बैठे और हमारे बीच बातचीत शुरू हुअी। वे योगके अभ्यासी और अनुभवी थे अिसलिअे बातोमे रस आया। योगके बारेमे जिज्ञासा बताते हुअे मैंने अपनी जीवन-कथा सक्षेपमे अुन्हे सुनाअी। बातो ही बातोमे अपने जीवनके चार आश्चर्यजनक अनुभव मैंने अुनसे कह सुनाये।

पहला अनुभव मैं बहुत छोटी थी। पाचवा वर्ष पूरा होनेके बाद स्कूल जाने लगी अुससे पहलेका यह अनुभव है। स्कूल जानेसे पहले ही मैंने अक्षरोकी पहचान कर ली थी और रोज सुबह स्नानसे पहले अेक जगह बैठकर पट्टी पर सारी बारह-खडी और पहाडे लिखकर पूरे करनेकी मेरी आदत थी। अिसीके अनुसार मै लिखने बैठी थी। लिखते लिखते मुझे अेक विचित्र अनुभव हुआ। लिखना बन्द करके मै विचार करने लगी — मुझे ज्ञान हुआ अैसा भी कहा जा सकता है — कि, "मै अेक जीवित मनुष्य हू। मेरे शरीर है। हाथ-पैर हैं। मै लिखती हू। विचार करती हू। मेरा अस्तित्व है।" छोटे मस्तिष्कमे अिससे अधिक स्फुरित नही हुआ। लेकिन मैं सिर अूचा करके अिधर-अुधर देखने लगी। "वे मनुष्य घूमते है। मेरी तरह वे भी जीवित हैं। मनुष्य है। बोलते हैं। मैं भी

बडी होअूगी। लेकिन मै हू, मै हू, मै भी कोअी हू!" अुमी समय मुझे अपने अस्तित्वकी प्रथम बार प्रतीति हुअी और अुसके बाद यह अनुभव सतत याद रहा!

मै बडी होती गअी वैसे वैसे मुझे लगता गया कि और लोगोको भी मेरी तरह जीवनमे कभी न कभी अपने अस्तित्वकी स्वतत्रताकी प्रतीति जरूर हुअी होगी। लेकिन मैने बहुतोसे पूछा (काफी बडी अुमरमे) तब प्रत्येकने कहा, "अैसा अनुभव तो मुझे कभी नही हुआ।" अिससे मुझे आश्चर्य हुआ।

दूसरा अनुभव मै कॉलेजमे पढती थी तबका यह अनुभव है। गरमीकी छुट्टियोमे मै कभी कभी अपने पूर्वजोके गाव कारवार जाती थी। समुद्री मार्गसे कम समय लगता है। लेकिन १५ मअीके बाद जहाज चलने बन्द हो जाते है, अिसलिअे रेलमार्गसे जाना पडता है। कारवारसे बसमे हुबली जाना होता था और वहासे रेलगाडीमे बैठकर बम्बअी आना होता था। अुस समय हुबलीमे अेक प्रसिद्ध सिद्ध योगीका निवास था। लोग अुन्हे 'श्री सिद्धारूढ स्वामी' के रूपमे पहचानते थे। हमारे सबधियोमे बहुतसे अुनके पुजारी थे। पिताजीके साथ मै भी दो बार अुनके दर्शन करने गअी थी। लेकिन अुनकी कन्नड भाषा मुझे नही आती थी, अिसलिअे मै कुछ बातचीत नही कर सकी।

अेक बार बम्बअीमे पिताजीके यहा थी तब रातको अेक अद्‌भुत स्वप्न देखा। अेक सिद्ध पुरुष मेरे सामने खडे थे। वे वही सिद्धारूढ स्वामी थे या और कोअी, यह याद नही है। लेकिन अुन्होने मुझसे पूछा, "बेटी, तेरी क्या कामना है?" स्वप्नमे भी मुझे कैसे प्रेरणा हुअी यह भगवान ही जाने। मैने कहा, "स्वामिन्, मुझे समाधिका अनुभव लेना है।" अिस पर कुछ हसकर वे सिद्धपुरुष बोले, "अिसमे कितनी देर?" और अुन्होने अपना हाथ मेरे मस्तक पर रखा। हाथ रखते ही मुझे बिजलीके जैसा धक्का लगा और अैसा मालूम हुआ मानो अेकदम मेरा शरीर नीचे गिर गया हो। जो सच्ची 'मै' थी (अर्थात् मेरी जीवात्मा) वह अुस शरीरसे बाहर आकर दौडने लगी। चारो ओर सारा विश्व लुप्त हो गया और जहा देखती वहा प्रकाश ही प्रकाश दिखाअी देता। वह भी सूर्यके

प्रकाश जैसा नही, कुछ अनोखा अद्‌भुत! प्रकाशके ढेर वादलो जैसे या लहरो जैसे दिखाअी देते थे और मै हलकी होकर वडी तेजीसे दौडती थी! मेरे भारी शरीरके गिर जानेका मुझे भान आया और मै चिल्लाने लगी, "मेरा शरीर! अरे मेरा शरीर कहा गया?" लेकिन यह शब्द मुहसे निकले तव तक तो मै सैकडो योजन आगे वढ गअी थी। अैसी अजस्र गतिसे (पवनवेगमे कही अधिक गतिसे) मै दौड रही थी। सामने दूर क्षितिजके पास प्रकाशका केन्द्र दिखाअी देता था, जिसमे से विश्वमे फैला हुआ वह प्रकाश निकल रहा था। अुस केन्द्रकी ओर मै दौड रही थी। वह केन्द्र पास आने लगा था, लेकिन मेरी वासना मेरे शरीरसे जुडी होनेके कारण अुस शरीरका स्मरण मुझे आगे नही जाने देता था! फिर अेकाअेक मै चोक अुठी "मेरा शरीर कहा खो गया।" और अुसी डरके कारण मै जाग पडी तव अपने विस्तर पर ही शरीरमे आवद्ध मैने अपनेको देखा।

तीसरा अनुभव मै सत्याग्रह आश्रममे थी तव दाडी-कूचसे पहले चौमासेमे अेक रातको यह अनुभव आया। हृदय-कुजके आगनमे पूज्य महात्माजी और मै खाटे डालकर सो रहे थे। हमारे वीच ६–७ फुटका अतर होगा। वरसात नही हो रही थी, अिसलिअे वाहर खुलेमे सोये थे। कुछ वहने वरामदेमे सोअी थी। आधी रातको मै गहरी नीदमे थी। स्वप्न था ही नही। अेकाअेक किसीने मुझे तमाचा लगाकर अूची आवाजसे कहा, "अुठ, अुठ, वरसात होने लगी है। महात्माजी भीग जायेगे।" हड-वडाकर मै जागी, अुठकर वैठी और देखने लगी। कोअी दिखाअी नही दिया। मुझे तमाचा किसने मारा? कौन वोला? सव कोअी सोये हुअे थे। पास या दूर कोअी नही था। सिर्फ झरमर झरमर पानी वरसने लगा था और पूज्य महात्माजी पर पानीकी वूदे गिरने लगी थी। मैने तुरन्त वरामदेमे सोअी हुअी कुसुमवहन देसाअीको जगाया और हम दोनोने महात्माजीकी खाट अदर कर दी। फिर मैने अपनी खाट भी अन्दर की। फिर भी मुझे आश्चर्य होता रहा कि यह चेतावनी मुझे किसने दी होगी? स्वप्न तो था ही नही। मुझे तमाचा लगा था और शब्द भी मैने साफ सुने थे।

चौथा अनुभव आश्रममे आनेके वाद पूज्य महात्माजीने मुझे ग्यारह व्रतोकी दीक्षा दी। अुसमे ब्रह्मचर्यका सहायक अस्वाद-व्रत भी लेनेके लिअे अुन्होने कहा। शुरूमे मैं सिर्फ आश्रममे ही अिस व्रतका पालन करती थी, वाहर नही। लेकिन १९३३ मे आश्रमका विसर्जन करके पूज्य महात्माजीने हम आश्रमवासियोसे कहा, "अबसे तुम लोग अपने अपने साथ जगम आश्रम लेकर ही घूमना और आश्रम-व्रतोको कभी न छोडना।" तव मैंने देशके आजाद होने तक सारे व्रत पालनेकी प्रतिज्ञा की, और आजादीके वाद वे व्रत मेरा स्वभाव वन गये अिसलिअे आगे भी चलाये। अनुभवके आधार पर मुझे कहना है कि किसी भी व्रतकी अपेक्षा अस्वाद-व्रत मुझे अधिक सरल लगा। पीढियोसे चला आया अपना आहार छोडकर अस्वाद-व्रतका आहार स्वीकार करनेमे मुझे जरा भी कठिनाअी मालूम नही हुअी। शरीर, वाणी और मनसे मुझे जरा भी क्लेश नही हुआ और न कोअी विशेप प्रयत्न करनेकी जरूरत मालूम हुअी। पूज्य महात्माजीको भी यह देखकर अचरज होता था और अुन्होने अनेक वार मेरे सामने और दूसरे आश्रमवासियोके सामने अुसे व्यक्त किया था। शुरूमे कभी कैभी स्वप्नमे मैं मिठाअी वगैरा खाती थी। लेकिन अैसा अेक दो वार होनेके वाद स्वप्नमे भी मुझे अिसका भान रहने लगा कि क्या चीजं खानी चाहिये और क्या नही खानी चाहिये। मुझे स्वय भी आश्चर्य-सा लगा करता था कि यह व्रत मेरे लिअे अितना सहज कैसे वन गया।

अिस तरह अपने ये चार अनुभव मैंने श्री गुळवणीको कह सुनाये।

श्री गुळवणी वोले, "आपको समाधिका जो स्वप्न आया वह स्वप्न नही, सच्चा अनुभव है। समाधि अैसी ही होती है। अुस अनुभवको और आपके दूसरे अनुभवोको देखते हुअे यह स्पष्ट दिखाअी देता है कि अपने पूर्वजन्ममे आपने योगाभ्यास किया होगा। वह अधूरा रहा, अिसलिअे अिस जन्ममे आपको अुसे पूरा करना होगा। आप प्रवृत्ति-मार्गमे अितनी फस गअी है कि आपमें रजोगुणकी वहुत वडी वृद्धि हो गअी है। अिसलिअे आपका अव प्रवृत्ति-मार्गसे निवृत्त होना आवश्यक है। अव अेकान्त स्थल पर जाअिये और दो तीन घटे तक पलथी मारकर स्थिर वैठना सीख लीजिये। यही आपका पहला पाठ है। अुस समय कुछ भी नही करना चाहिये।

केवल शान्त और स्थिर बैठी रहे। अिस तरह दो तीन घटे बैठ सकेगी तो आपका आसन स्थिर हो जायगा। मनको स्थिर करनेके लिअे प्राणायाम कीजिये। लेकिन अभी लबे समय तक नही। आरम्भमे थोडे मिनिट तक करे और फिर धीरे धीरे समय बढाये।" अैसा कहकर अुन्होने मुझे प्राणायाम करनेका तरीका बताया।

श्री गुळवणी द्वारा किया हुआ अपने अनुभवोका स्पष्टीकरण मुझे जचा। अस्वाद-व्रतके बारेमे मुझे भी कभी कभी लगता था कि, "बहुत सभव है अपने पिछले जन्ममे मैंने अुसका अभ्यास किया होगा, जो जिस जन्ममे सफल हुआ दिखता है।" मेरे दूसरे अनुभवोके बारेमे तो अुनका बताया हुआ कारण ही सन्तोष देने जैसा था।

मुझे अेकान्त स्थान पर जाकर योग-साधना करनेके लिअे श्री गुळवणीने कहा। परन्तु अैसा स्थान कहा मिले? सासवडके आश्रममे अेकान्त असभव ही था। पास ही विद्यालय था और अुसमे सम्बन्धित प्रवृत्तिया थी, जिनके साथ मेरा ९ वर्षका निकट सम्बन्ध था। अिसके सिवा, आश्रममे शकररावजी आते तब वे भी अपने साथ बहुतसी प्रवृत्तिया ले आते थे। मेरा आज तकका जीवन सार्वजनिक था और आसपासके सब लोग अुसके आदी हो गये थे। अिसलिअे वहा शान्ति और अेकान्त मिल नही सकता था। तब अैसा स्थान कहा खोजू?

और, वर्षोसे अन्तरमे रही अेक अुत्कट अिच्छा अूपर आअी, अुसने अुत्तर दिया, "हिमालयकी गोदमे!"

अुस पवित्र स्मरणसे मनमे अुल्लास पैदा हुआ और मैंने श्री गुळवणीसे पूछा, "मै हिमालयमे जाकर रहू और अभ्यास करू तो?"

"तब तो अत्यन्त सुन्दर! योगाभ्यासके लिअे हिमालयसे अधिक अनुकूल जगह और कही है ही नही। फिर, आप अपने कार्यक्षेत्रसे जितनी दूर चली जाय अुतना ही आपको लाभ होगा।"

मुझे भी अैसा ही लगा। सन्त ज्ञानेश्वरकी यह अुक्ति याद आअी

व्याधाहातोनि सुटला। विहगम जैसा॥

व्याधके हाथसे छूटा हुआ पक्षी जैसे पूरा जोर लगाकर दौडता है, अुड जाता है, वैसे ही हमे भी करना चाहिये।

फिर हिमालयकी सुविधाओके वारेमे तथा अन्य अिधर-अुधरकी वाते हुअी और मै अुनसे विदा लेकर वापस सासवड आअी।

श्री हरिभाअूको यह बात अच्छी नही लगी। प्रौढ अुमरमे मेरे जीवनमे अैसा मोड आये यह अुन्हे कुछ भयावह लगा। वे मुझे समझाने लगे, लेकिन मेरा तो निश्चय ही हो गया था। अिसलिअे मै अुनकी दलीले सुननेको तैयार नही हुअी।

मै सासवड वापस आअी तब कस्तूरबा ट्रस्टसे जुडा हुआ अेक काम वाकी था। विद्यालयकी अेक छात्राने गम्भीर भूले की थी। "सच वता देगी तो अपराध माफ कर दिये जायगे, नही तो मुझे प्रायश्चित्त करना पडेगा"— अैसा मैने अुससे कहा था, फिर भी वह तीन वार झूठ वोली। अिसलिअे मुझे त्यागपत्र देनेसे पहले प्रायश्चित्त करना था। लेकिन प्रतिनिधियोका वार्षिक सम्मेलन पास आ गया था, अिसलिअे अुस मौके पर अुपवास स्थगित कर दिया था। अव पूनासे आनेके वाद प्रायश्चित्तके लिअे मैने चार दिनका अुपवास किया। अिस वीच मैने हिमालय जानेके वारेमे चिन्तन भी खूव किया।

मुझे लगा कि मेरा किया हुआ निश्चय पूज्य महात्माजीके अुपदेशसे अलग जाता है। अुन्हे हिमालय जाकर तपस्या करनेकी कल्पना पसन्द नही थी। वे जनसेवा पर ही जोर देते थे। अुनका अुपदेश अमलमे लानेमे मैने कभी आलस्य नही किया था। अपनी सारी शक्ति लगाकर जनसेवा करनेका प्रयत्न किया था। लेकिन मै असफल रही, अुसका क्या हो? सत्याग्रह आश्रममे जो हुआ वही सासवडमे हुआ। सस्थाके सचालनके लिअे मै अयोग्य हू। फिर वूतेमे वाहर काम क्यो करना चाहिये? अथवा मेरी कार्य-पद्धतिमे दोप होगा। प्रत्यक काम निर्दोष हो, अैसा मै आग्रह रखती हू। अुससे भी काममे दोप पैदा होता होगा। चाहे जो हो, लेकिन यदि अैसे ही चलाती जाअू तो मेरा कचूमर निकले विना न रहेगा।

पूज्य महात्माजीके पास मै पहली वार आअी थी, तब मनमे निश्चय किया था कि देशकी आजादीके लिअे यही सेवाकी पद्धति अुचित है। वे तो अपना कार्य करके गये। अव देशके 'विकास' का काम शुरु हुआ है। अिस कामका कभी अन्त ही नही आनेवाला है। तव मै कव तक अिस

कामका अेक अंग वनकर रहू ? फिर, आज जिस दिशामे चक्र घूम रहे है वह पूज्य महात्माजीकी वताअी हुअी दिशा तो नही है। अुलटे, अधिक-तर वातोमे अुनके दिये हुअे मार्गदर्शनसे अुलटी दिशामे ही सरकार और अुसकी प्रेरणासे लोग चलते है। मैं तो तुच्छ मानव ठहरी। अिस धाधलीमे मुझे नही पडना है। अव मार्गदर्शनके लिअे पूज्य महात्माजी नही है। मैंने अपना जीवन अुन्हे अर्पण किया था और अुन्होने अन्त तक वह अैसा ही रहे यह आशीर्वाद दिया था। अव मार्गदर्शन करनेकी जिम्मे-दारी अुनकी है। मैं तो अव भगवानकी शरणमे ही जाअूगी, जिनके पास वे पहुचे है। भगवानकी अिच्छा होगी वैसा होगा।

अिस तरह चिन्तन करते हुअे चार दिन बीते। २३ को मेरा अुपवास छूटा। रातको स्वप्न आया।

पूज्य महात्माजीका दर्शन हुआ। वे अेक कमरेमे वैठे थे। लोगोका आना-जाना चालू था। वे अव जीवित नही है, अैसा भान मुझे स्वप्नमे नही था। पहलेकी तरह वे अिस दुनियामे ही है, अैसी मनकी भावना थी।

अुनके साथ वातचीत करनेका मौका मिला तो मैंने पूछा, "महात्माजी, पहलेके और आजके भारतमे आपको क्या फर्क दिखाअी देता है?"

अुन्होने पूछा, "पहलेके भारतसे तुम्हारा क्या मतलव है?"

मैंने कहा, "पहलेका यानी सन् १९३० मे आप दाडी-कूच पर गये थे अुस समयके अिस देशके लोगोमे और आजके लोगोमे आपको क्या फर्क दिखाअी देता है?"

मुझे स्वप्नमे भी लग रहा था कि आन्तर-राष्ट्रीय शान्तिके लिअे भारत द्वारा किये गये सफल प्रयत्नका और पचवर्षीय योजना जैसे सिद्ध किये हुअे रचनात्मक कार्यक्रमका विचार करके पूज्य महात्माजी गौरवपूर्ण शब्द कहेगे।

लेकिन वे स्मित हास्य करते हुअे वोले, "आजके लोगोमे hypocricy (दभ) वढ गयी है।"

मुझे लगा कि मैंने ठीकसे सुना नही होगा। अिसलिअे दुवारा मैंने वही प्रश्न पूछा। अुन्होने फिर वही अुत्तर दिया। तीसरी वार वही प्रश्न, मैंने किया और तीसरी वार भी वही अुत्तर मिला।

मै जागी तब मुझे विस्मय हुआ। सयोगवश अुसी दिन मुझे किसी कारणवश श्री मोरारजीभाअीको पत्र लिखना था। अुसमे मैने अपने स्वप्नकी बात लिखी।

अुत्तरमे अुन्होने लिखा, "स्वप्नकी बात पर कितना जोर दे यह कहना मुश्किल है। मनुष्यके आन्तर मनमे अनेक प्रक्रियाअे चलती रहती है। अुनका प्रतिबिम्ब स्वप्नमे पडना सम्भव है। लेकिन यह प्रतिबिम्ब मनुष्यके सच्चे मनको व्यक्त नही कर सकता। गाधीजीके प्रति आपकी भक्तिके कारण वे आपके स्वप्नमे आये। क्या अैसा हम नही कह सकते कि आपके प्रश्नका अुन्होने जो अुत्तर दिया, वह आपके मनके भीतरकी ही बात व्यक्त करता है? देशमे और दुनियामे होनेवाले परिवर्तन अनेक कारणोसे होते है। जगत विकास करता है या अुसकी अधोगति होती है, यह कहना भी कठिन है। हम शुभदर्शी रहकर समाजके हितके लिअे मेहनत करनेमे विश्वास करते है, अिसलिअे हमारे लोग ज्यादा 'हिपोक्रेट' हो गये है अैसा हम कैसे कह सकते है? अलबत्ता, अिस प्रश्न पर पत्र द्वारा चर्चा करना कठिन है।" आदि।

श्री मोरारजीभाअी वस्तुनिष्ठ राजनीतिक पुरुष ठहरे, अिसलिअे अुनकी दृष्टिमे स्वप्नकी ज्यादा कीमत नही हो सकती। लेकिन मुझे तो स्वप्नमे सकेत मिला ही करता था। अगर समाजमे दभ बढा हो तो भी मै अुसी समाजका अग हू, अिसलिअे मेरे भीतर भी दभ बढा ही होगा, अिसमे मुझे शका करनेका कारण नही था। अिसलिअे शुद्धिके लिअे तपश्चर्या ही अेकमात्र अुपाय था और वह अुपाय पहलेकी तरह सार्वजनिक सेवाकार्योकी जिम्मेदारी सिर पर लेकर नही, लेकिन सर्वथा मुक्त रहकर नत-मस्तक होकर अीश्वरकी शरणमे जाकर ही करनेकी जरूरत थी। विकासके शिखर पर चढना हो तो सिर पर बोझ रखकर कैसे चढा जा सकता है? समाजरूपी शिवकी सेवा करनेके लिअे पहले हमे शिव बनना चाहिये। 'शिवो भूत्वा शिव यजेत्।' अयोग्य सेवक या सेविकासे समाजका भला नही होता, नुकसान होता है। सेविकाका भी अुससे अध पतन होता है।

अैसे विचार मनमे आये और अेकान्तमे जाकर तपस्या करनेका मेरा निश्चय अधिक दृढ हुआ।

जनवरीके अन्तिम सप्ताहमे श्री शकररावजीकी षष्ठिपूर्तिका समारोह था। आश्रममे ही होनेवाला था। वह पूरा हुआ अुसके बाद मैंने अपना भविष्यका कार्यक्रम अुन्हे और दूसरे स्नेहियोको बताया, यद्यपि लोगोने अलग अलग राय जाहिर की। थोडे लोगोको ही मेरी यह बात पसन्द आअी, ज्यादातरको नही आअी। शकररावजीको दु ख हुआ। मेरी कर्म-प्रवण वृत्तिको छोडकर मै 'सन्यास' लू, यह कल्पना ही अुन्हे असह्य लगी। फिर महाराष्ट्रसे दूर, बिलकुल देशकी सरहद पर जाकर मै गुफामे-बैठी रहू, यह चीज भी अुन्हे अच्छी नही लगी। लेकिन मुझे तो अिस कर्म-प्रवण जीवनके प्रति प्रबल वैराग्य अुत्पन्न हो गया था। वे समझाने लगे, "सासवडके आश्रममे रहनेकी अिच्छा न हो तो महाराष्ट्रमे ही कोअी अेकान्त स्थल मै ढूढ दूगा, लेकिन आप अितनी दूर मत जाअिये।" हिमालय जानेकी बात करना जितना सरल है अुतना वहा बसना सरल नही है। मेरी अुमर अुस समय ४९ वर्षकी थी। अैसी अुमरमे अेकाअेक नया ही प्रयोग जीवनमे करनेका निश्चय खतरनाक है, हिमालयमे सब कुछ अज्ञात है, वगैरा दलीले वे देने लगे। लेकिन मैंने अुनकी अेक भी बात नही मानी। स्वामी रामदासके शब्दोमे कहे तो 'देह पडे का देव जोडे।' (या तो देह नष्ट होगी, या भगवान मिलेगा।) अैसी टेक पर मन आ टिका था।

निराश होकर शकररावजी मुझे स्वामी आनन्द[1], श्री नाथजी और

---

१ स्वामी आनन्द मूल बबअीके निवासी हैं। बचपनमे अुनकी प्राथमिक शिक्षा मराठी स्कूलमे शुरू हुअी। अीश्वरकी खोजमे छोटी आयुमे घर छोडकर वे भागे और अनेक बाबा-वैरागियोके सहवासमे ठेठ हिमालय तक पहुचे। बहुत घूमे, लेकिन अीश्वर-दर्शनकी अिच्छा पूरी नही हुअी। फिर सौभाग्यसे रामकृष्ण मिशनके साथ अुनका सबध हुआ और कलकत्ताके बेलूर मठमे रहकर अुन्होने बगला और अग्रेजी भाषाओका ज्ञान प्राप्त किया, शिक्षा पूरी की और सन्यासकी दीक्षा ली तब अुन्हे स्वामी आनन्दकी अुपाधि मिली। युवावस्थामे वे पूज्य महात्माजीके पास पहुचे और अुनके मार्गदर्शनमे सेवाकार्य किया। पिछले कुछ वर्षोसे वे वर्षमे आठ महीने हिमालयके कौसानी गावमे बिताते है।

श्री कृष्णमूर्ति[1] से मिलाने ले गये। अुन्हे आशा थी कि ये सज्जन मुझे समझायेगे। श्री कृष्णमूर्ति तो त्याग और वैराग्यके विरुद्ध ही है। लेकिन स्वामी आनन्दने कहा, "अिन्हे तीव्र अुत्कठा हुअी है तो अिन्हे जाने दीजिये। मै मानता हू कि छह महीने हिमालयमे रहकर अिन्हे शान्ति मिलेगी और ये वापस लौट आयेगी। न आये और वही शाति मिले तो भले वही रहे। लेकिन जहा तक मै सोचता हू छह महीने वाद अिन्हे वहा रहनेकी जरूरत नही होगी।" वहाकी जानकारी देते हुअे स्वामीने मुझसे कहा, "मै हिमालयके पेटमे कौसानीमे रहता हू। छह महीने वाद आप मुझसे मिलने आअिये। वादमे हम आगेका कार्यक्रम वनायेगे।" फिर हम नाथजीसे मिलने गये। अुन्होने भी स्वामी आनन्दकी सलाहका समर्थन किया। अिस तरह मेरा निश्चय हो गया।

शकररावजीके आग्रहसे १८ मार्च, १९५५ तक मै आश्रममे रही। अुस दिन सबसे विदा लेकर मैने आश्रम छोडा। शकररावजीके साथ मै पुरी गअी। वहा सर्वोदय सम्मेलनमे भाग लिया। फिर नअी दिल्ली जाकर पहली अप्रैलको वहासे हरद्वार गअी। शकररावजी साथ ही थे। मेरे मनमे जरा भी शका नही थी कि यह सब भगवानका वरदान है। वहा भी मुझे किसी तरहकी कठिनाअी नही हुअी। सब कुछ अिस तरह होता गया जैसे भगवानने पहलेसे योजना वना रखी हो। पुरीमे श्री सुरेन्द्रजी मिले थे। अुन्होने कहा कि, "हृषीकेशमे पशुलोकके सचालक हमारे पारनेरकरजी है। अुन्हे आप मिलिये। वहा कुछ मदद मिलेगी।" वैसा ही हुआ। शकररावजीके साथ मै पारनेरकरजीसे मिलने गअी। मेरा मानस देखकर वे कहने लगे, "मुझे लगता है, आप यहा पशुलोकमे ही

---

[1] स्व० श्री अेनी वेसेन्टके मानस पुत्र। वे जगद्‌गुरु होगे अैसी भविष्य-वाणी श्रीमती वेसेन्टने की थी, अिसलिअे कृष्णमूर्तिको वचपनमे विलायत भेजकर अूचीसे अूची शिक्षा देनेकी व्यवस्था की गअी थी। आगे जाकर थियॉसॉफिकल सोसायटीके छह लाख सदस्योने अुन्हे अपने सद्‌गुरुके रूपमे स्वीकार किया। लेकिन कृष्णमूर्तिने स्वय अुस पथको तोड डाला और स्वेच्छासे अज्ञात-वास पसन्द किया। आज दुनियाके विरले आध्यात्मिक शिक्षकोमे अुनकी गिनती होती है।

रहिये। मैं आपको पूरी मदद दूगा। यहासे आप हिमालयकी यात्रा भी कर सकती है।" पशुलोक हृपीकेशसे तीन मील दूर है। हिमालयकी तलहटीमे है। गगाजीके किनारे बसा हुआ है। अेकान्त, शान्ति और अरण्य — अितनी अनुकूलता, अुस पर पारनेरकरजी जैसे सत्याग्रह-आश्रमके मेरे पुराने साथी। अिससे ज्यादा और क्या चाहिये।

शकररावजीको भी यह बात पसन्द आअी। परिचितोमे रहनेका मौका मिला अिससे वे चिन्तामुक्त हो गये। हम दोनो अुत्तरकाशी गये और चार दिन वहा रहकर वापस पशुलोक आये। वहा चार दिन रहकर शकररावजी १४ अप्रैलकी रातको दिल्लीके लिअे रवाना हुअे। पारनेरकरजीने मुझे अेक सुन्दर झोपडी रहनेको दी। अुनकी अपनी झोपडी पास ही थी। सुन्दर बगीचेके बीच थोडे थोडे अन्तर पर दो चार झोपडिया बनाअी गअी थी; जिससे पडोस और अेकान्त दोनोका लाभ मिलता था। वहा रहनेवाले कार्यकर्ता सारे दिन काममे व्यस्त रहते थे, सफरमे न हो तब दूर दफ्तरमे काम करने जाते थे। रातको खाने और सोनेके लिअे झोपडीमे आते थे। मुझे पूर्ण अेकान्त मिलता था। रहनेके लिअे आवश्यक चीजे मिल गअी थी। पारनेरकरजीने मेरी बहुत मदद की। सरकारी कामके लिअे वे गगोत्री गये तब मै भी अुनके साथ गअी। अिसके बाद केदारनाथ, तुगनाथ और बदरीनारायणकी यात्रा मैंने स्वतत्र रूपसे दो परिचित भाअियोके साथ की।

तप्त और अुदास मनको प्रसन्न और शान्त करनेके लिअे हिमालय जैसा कोअी स्थान नही है। अुसके भव्य और दिव्य दर्शनसे मनुष्यका मानस-परिवर्तन हुअे बिना रहता ही नही। हिमालयकी गोदमे घूमते समय अैसा अनुभव हुअे बिना नही रहता कि हम अेक नअी ही दुनियामे है। पुरानी दुनिया पीछे रह जाती है। मुझे तो वह याद भी नही आती थी। हिमालयकी दुनिया ही सत्य लगती थी। वहा मै अपना सारा दुःख भूल गअी।

गगोत्रीका प्रदेश बहुत ही रमणीय और पवित्र है। वहा तपस्या करनेवाले साधक और सिद्ध रहते है, अैसा मैंने पहलेसे सुन रखा था।

वहा अेक सिद्धयोगीके और तीन चार साधकोके दर्शन हुअे। अुस सिद्ध-योगीकी आयु ९० वर्षकी होगी, अैसा लोग कहते थे। लेकिन आश्चर्यकी बात यह थी कि १०,००० फुटकी अूचाअीवाले गगोत्रीके प्रदेशमे वे योगी नग्नावस्थामे रहते थे। अूनके कपडे ओढकर मिलने गये हुअे हम लोग सरदीसे कापते थे, लेकिन अुन नग्न योगीके शरीरके रोअे भी खडे नही होते थे। वे सीधे तनकर वैठे थे और अुनके चेहरेका गाम्भीर्य सहज लगता था। अुनका नाम कृष्णाश्रम था। पास ही अेक शिष्या थी। वह तीस वर्षसे अुनकी सेवा करती थी। पहाडी होने पर भी सस्कारवान मालूम हुअी। स्वामीजी मौनव्रती है, वोलते नही, लेकिन अगर अुत्तर देनेका अुनका मन हो तो अिशारेसे या अुगलीसे लिखकर प्रश्नोके अुत्तर देते है। पारनेरकरजी और दूसरे मित्रोके साथ मै गअी तब वहा अितनी शान्ति थी कि हम भी अेकदम शान्त हो गये। कोअी वोले नही। अुस शिष्याने ही हमे विठाया और फिर वही मध्यस्थ बनकर स्वामीके अिशारोका अर्थ हमे समझाने लगी।

स्वामी कृष्णाश्रम योगकी अतिम भूमिका तक पहुचे है, अैसी जान-कारी वहाके दूसरे साधकोने हमे दी थी। अिसलिअे अुनसे मार्गदर्शन लेनेको मै अुत्कठित थी। लेकिन वे वोलते नही थे। शिष्याकी सम्मति लेकर मैने ही आरम्भ किया। मेरी भूमिका अुन्हे वताकर मार्गदर्शन मागा।

स्वामीने कहा, "प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनो अलग अलग मार्ग है। प्रवृत्ति-मार्गसे अीश्वर-प्राप्ति हो सकती है, लेकिन क्रमश होगी, जब कि निवृत्ति-मार्गसे मनुष्य सीधे अीश्वर तक पहुचता है। तुम्हारा पिड कर्म-प्रवण है। अिसलिअे तुम कुछ समय निवृत्तिमे विताना। साधना करना। भगवानकी कृपा प्राप्त करना। फिर अपने क्षेत्रमे प्रवेश करना।"

मैने और भी कअी प्रश्न पूछे, जिनका अुन्होने अुत्तर दिया। अुनका अधिकार तो दिखाअी देता ही था। गगोत्रीमे रहते हुअे मै अुनसे दो वार मिली। मुझे खूब आनन्द हुआ। जाते समय अुनके चरण-स्पर्श करके मैने आशीर्वादकी याचना की। अुन्होने सिर हिलाया और मै वापस आअी। शिष्यासे खबर मिली कि स्व० पडित मदनमोहन मालवीयजी

स्वामीजीको बहुत मानते थे और अुनके आग्रहके वश होकर स्वामीजी अेक बार हिन्दू युनिवर्सिटीमे जाकर तीन दिन रहे थे। अिसके बाद वे फिर हिमालयसे नीचे नही अुतरे और बारहो महीने गगोत्रीमे ही रहते ह।

मेरी साधनाके लिअे यह शुभ शकुन हुआ, अैसा मैने माना।

पशुलोकमे १६ अप्रैल, १९५५ को मेरी साधना शुरू हुअी, जो २५ जनवरी, १९५६ तक चली। अिस बीच मै तीन बार यात्रा कर आअी (१) गगोत्री, (२) केदार-बदरी और (३) कौसानी। साधनामे मार्गदर्शन करनेवाला भगवान ही था। मेने अष्टाग-योग और भक्तियोगका परि-शीलन और अभ्यास किया। मैने देखा कि वाचन, चिन्तन और अभ्यास करते करते आगेका रास्ता अपने आप मालूम हो जाता है। अिसके सिवा, हमारी कल्पना भी न हो अैसी रीतिसे और अैसे अवसर पर अतर्क्य रूपमे सहायता और मार्गदर्शन भी मिल जाता है। मुझे वहा साधनामे किसी तरहकी मुसीबत नही आअी। दयाघन भगवानने कअी दिव्य अनुभव भी कराये, जिससे मेरी श्रद्धा बढ गअी।

प्रतीति मिलनेसे विश्वास हुआ कि योगमार्ग या भक्तिमार्गमे मिलने-वाले जिन अनुभवोके वर्णन साधकोने लिख रखे है, वे सब बिलकुल सच्चे है। दोनो मार्ग सच्चे है। केवल बुद्धि पर आधारित तर्क करनेमे कुछ भी हाथ नही आता। अुस अुस मार्गका शास्त्रोक्त अभ्यास करनेसे अुसके सत्यकी प्रतीति होती है। अिसलिअे अिन प्राचीन मार्गोके बारेमे अब कोअी कितना ही विरोधी तर्क करे और बुद्धियुक्तिके नाच करके दिखाये, तो भी मेरे मन पर अुसका कोअी असर होनेवाला नही है। क्योकि अब प्रतीतिके बादका ज्ञान मुझे हुआ है। पहले तो केवल श्रद्धा ही थी।

सितम्बरमे मै कौसानी गअी। पूज्य महात्माजीने वर्षो पहले वही रहकर 'अनासक्तियोग' लिखा था। कौसानीमे लक्ष्मी-आश्रम नामकी पहाडी कन्याओकी अेक सस्था है। वहा मै तीन हफ्ते तक रही। स्वामी आनन्दसे मिली। मेरी साधनाका वर्णन सुन लेनेके बाद अुन्होने कहा,

"मुझे लगता है कि आप योग्य मार्ग पर चल रही है और आपकी प्रगति होती दिखाओी देती है।" बादमे शकररावजी भी ५-६ दिन वहा आकर रह गये। अिसके बाद मै पशुलोक आओी। साधना चालू ही रही। अनुभव होते गये। दिसम्बरमे शकररावजी कुछ मित्रोके साथ वहा आये। मेरा काम ठीक चल रहा था। अब वापस सासवड जाकर रहू और वहा अेकान्तकी अनुकूलता मिले, तो साधना आगे चलानेमे कठिनाओी नही होगी, अैसा विश्वास मनमे पैदा हुआ और अीश्वरकी अिच्छानुसार ३० जनवरी, १९५६ को मै वापस सासवड आश्रममे आ पहुची।

हिमालय जाते समय मनमे किये हुअे अधिकतर सकल्प पूरे हो गये थे। अेक ही बाकी था। वह सासवड आश्रममे पूरा हो तब तक अेकान्त-सेवन और साधना करनेका मैने निर्णय किया था और शकर-रावजी तथा दूसरे स्नेहीजनोसे कह रखा था। साधना शुरू हुअे अब लगभग साढे चार वर्ष हो चुके थे। यहा भी भगवानकी कृपासे कुछ प्रसाद मिल गया, फिर भी सकल्प पूरा नही हुआ, अिसलिअे साधना चालू रहेगी।

हिमालयमे क्या और यहा क्या, निरपवाद अेकान्त तो मिलता ही नही। लोगोके साथ थोडा-बहुत सबध तो रहा ही है। सहज सेवा जितनी हो जाय अुतनी करती हू। लेकिन किसी तरहकी जिम्मेदारी नही लेती। मन मुक्त रहना चाहिये। तभी वह अेकाग्रता साधता है। मनको ठिकाने लाना हो तो अुसे क्षोभ हो अैसी परिस्थिति पैदा न होने देनेके लिअे जाग्रत रहना पडता है। अिसलिअे स्वाभाविक रूपमे ही जन-सबध पर अकुश रखना पडता है। दूसरे, मैने यह भी देखा कि साधकके लिअे मौन लाभदायी सिद्ध होता है। बकबक करनेसे या अधिक समय तक बोलनेसे चित्त चचल होता है।

व्यर्थ बल्गना बहु न करावी। साधक जीवे।।
जरि म्हणशिल योगी व्हावे ।।

साधक मनुष्यको व्यर्थ बकबक नही करनी चाहिये, यदि वह योगी होना चाहता हो।

ध्यानयोग, कर्मयोग या भक्तियोग, सभी तरहके योगोमे यह नियम अनिवार्य हे।

पगुलोकमे मे थी तव श्री गुळवणीके साथ मेरा पत्रव्यवहार चलता ही था। यहा आनेके वाद कभी कभी अुनमे मिल भी लेती हू, यद्यपि अव लगभग ढाअी वर्ष हुअे, मे क्षेत्र-सन्यास लेकर यही वैठी हू। दूर सफरमे जाती ही नही, पूना भी कभी कभी ही जाती हू।

सन् १९५७ मे श्री गुळवणी ७५ वर्षके हुअे तव पूनामे अुनका अमृत-महोत्सव ७ दिन तक चला था। तव मुझे मालूम हुआ कि वे महाराष्ट्रमे प्रसिद्ध हे और अुनका शिष्य-परिवार भी वडा है।

*

अिस साधनामय जीवनसे मुझे वहुत शान्ति मिली है, फिर भी अमुक वस्तु मिली है अैसा नही कहा जा सकता। छोटे वालकका धीरे धीरे वडा पुरुप होता हे, अकुरमे से वृक्ष वनता है, अुसी तरह आध्यात्मिक प्रगति वृद्धि पाती हे। वह सहज होनी चाहिये। अुसका माप, हिसाव या विवरण नही दिया जा सकता। लेकिन अभ्यास और चिन्तनके वाद मैंने यह देख लिया हे कि आध्यात्मिक या दिव्य अनुभव प्राप्त करना अेक वस्तु हे और अपने स्वभाव-दोप सुधारना दूसरी वस्तु हे।

सदृश चेष्टते स्वस्या प्रकृते ज्ञानवानपि।

ज्ञानी मनुष्य भी प्रकृतिवश होता है। योगी अथवा भक्त अेकसे स्वभावके नही होते। सव अपनी अपनी प्रकृतिका अनुसरण करते हे। तपश्चर्याका वहुत वडा सामर्थ्य रखनेवाले अृषि-मुनि क्रोध, अीर्ष्या आदि विकारोसे मुक्त नही थे, अैसा हम पढते है। अिसलिअे अपने स्वभाव-दोप वदलनेके लिअे विशेप तपस्याकी ही जरूरत होती है। रावण किसी भी समय भगवान शकरके दर्शन कर सकता था और तपस्यासे अुसने तीनो लोकोका राज्य प्राप्त किया था। फिर भी अुसने परस्त्रीका हरण किया ही, अपने विकारोको वह वशमे नही रख सका। अेक और भी कारण है। आत्म-साक्षात्कार अिन सव प्रकारकी साधनाओकी अतिम परिणति,

अतिम फल है। अुसके विना अस्मिता — देहभावना नही मिटती। और जब तक देहभावना है तब तक भेद अर्थात् रागद्वेष रहता ही है। अभेद अर्थात् 'वासुदेव सर्वमिति' भावना अन्तरमे दृढ होनी चाहिये। तभी मनुष्य 'परा शान्ति' प्राप्त करता है।

अिस अवस्थाका जीवनमे क्या अुपयोग है? कोअी व्यक्ति आत्म-साक्षात्कार या जीवन्मुक्ति प्राप्त करे अिससे समाजको क्या लाभ? समाजको मुक्ति न मिले, अुसका अुद्धार न हो, तब तक व्यक्तिका स्वार्थ साधनेमे क्या लाभ? अुसकी कीमत भी क्या हो सकती है? अिस तरहके अनेक प्रश्न अुठेगे। आजकल 'समाजके लिअे व्यक्ति' की पुकार चारो ओर मची हुअी है और समाजवादी राज्य स्थापित करनेके स्वप्न दुनियाके सभी राज्य देख रहे हैं। अुद्धारका अर्थ लोग अलग अलग तरहसे करते होगे। आध्यात्मिक दृष्टिसे जगतका अुद्धार तो परमेश्वर ही कर सकता है, मनुष्य नही कर सकते। साधक अथवा सेवक नम्र होकर व्यक्तिमात्रमे तो क्या, भूतमात्रमे रहनेवाले अीश्वरको देखकर अुसकी पूजा और सेवा ही करता है और अुसके द्वारा अपनी चित्तशुद्धि कर लेता है। समाजका अुद्धार करनेवाले अवतारी पुरुषोको भगवान भेजता है। यह काम हमारा नही है। हमे तो भगवानकी सेवा ही करनी चाहिये। जिस रूपमे भगवान सामने आता है अुसी रूपमे अुसे पहचानकर शक्तिभर अुसकी सेवा करनी चाहिये। जब हम अपना ही अुद्धार नहीं कर सकते, तब समाजका अुद्धार कैसे कर सकेगे?

आश्रमके बगीचेमे हरे चपाका अेक पेड है। बहुत बार अुसमे फूल खिलते हैं। अुनकी सुगन्धसे हवा महकती रहती है, लेकिन फूल ढूढने जाअू तो बहुत प्रयत्न करने पर भी वे नही मिलते! मुझे लगता है कि सच्चे सेवकका यही आदर्श है। कोनेमे रहकर सुगध फैलने देना चाहिये। किसीकी जानकारीमे नही आना चाहिये। भगवानकी भक्ति करना चाहिये। अैसी सेवा करते हुअे अीश्वरको अुसके हाथसे ज्यादा सेवा लेनी होगी तो वह लेगा, लेकिन वह सहज रूपसे विकास पायेगी। कलीमे से फूल कैसे खिला अिसकी किसीको जानकारी नही होती, सेवकको तो कभी भी नही होती। माके पेटसे बालक पैदा होता है तभीसे माता अुसकी सेवा

करती है, वह सेवा बालक बढकर बड़ा पुरुष होता है तब तक चलती है। वह सेवा महज होती है। अुसकी जानकारी किसीको नहीं होती — न देनेवालेको होती है, न लेनेवालेको होती है और न आसपासके लोक-समाजको होती है। समाजसेवा भी अिसी तरीकेसे होनी चाहिये। मनुष्य स्वाभाविक रूपमे ही समाजमे रहना पसन्द करता है। अेकाकी रहना अुसके लिअे लगभग असभव बात होती है। समाजकी सुव्यवस्थाका लाभ वह अुठाता है, अिसलिअे अुस व्यवस्थामे शान्ति बनी रहे, कलह अथवा हीन सस्कृति अुत्पन्न न हो, अिसके लिअे यत्नशील रहना अुसका स्वधर्म बन जाता है। सेवा स्वधर्मसे अलग नही होती।

लेकिन स्वधर्म क्या है? समाजकी आजकी सकर-अवस्थामे स्वधर्म या धर्मका ज्ञान प्राप्त करना कठिन हो गया है।

भगवान मनुने कहा है

विद्वद्भि सेवित सद्भिर् नित्यम् अद्वेषरागिभि ।
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस् त निबोधत ।।

विद्वान, सन्त और रागद्वेषसे मुक्त वीतराग सज्जनोने जिसका सेवन किया है और जिसे हृदय मान लेता है वही धर्म है। अुसे जान लो।

यह परिभाषा जिनको पूरी तरह लागू हो सके अैसे धर्माचार्य आज कहा है? आज समाजको धर्म नही सिखाया जाता, कानून दिये जाते है। सेवाधर्मकी दीक्षा नही दी जाती, सेवाके लिअे तरह तरहके राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक सगठन निर्माण करके अुनके द्वारा सयोजक, व्यवस्थापक, योजक और नेतागण लोगोकी शक्ति खर्च कर डालते है। राज्यकर्ता लोग (सरकार) भी अिसी कोटिके माने जायगे। प्राचीन कालमे समाजको कानून नही परन्तु धर्म दिया जाता था। भगवान व्यासने पुकार पुकार कर कहा है कि, "मानवोके दो पुरुषार्थ — अर्थ और काम — धर्मके आधार पर ही प्राप्त करने चाहिये। धर्मके बिना दोनो भयावह है।"

अुस सार्वभौम धर्मका ज्ञान प्राप्त करनेके लिअे महर्षिगण भगवान मनुके पास गये और अुन्होने भगवान मनुसे धर्मकी व्याख्या करनेकी प्रार्थना की।

मनुम् अेकाग्रम् आसीनम् अभिगम्य महर्षय ।
प्रतिपूज्य यथान्यायम् अिद वचनम् अब्रुवन् ।।१।।
भगवन्! सर्ववर्णाना यथावद् अनुपूर्वश ।
अन्तरप्रभवाणा च धर्मान् नो वक्तुमर्हसि ।।२।।
त्वम् अेको ह्यस्य सर्वस्य विधानस्य स्वयभुव ।
अचिन्त्यस्याप्रमेयस्य कार्यतत्त्वार्थवित् प्रभो! ।।३।।

'अेक वार महर्षि लोग अेकागचित्त होकर भगवान मनुके पास गये और विधिके अनुसार परस्पर शिष्टाचार होनेके वाद कहने लगे, "भगवन्, सव वर्णोका धर्म यथाक्रम और सम्पूर्ण रूपमे हमे वतानेके लिअे आप ही अेकमात्र योग्य है। कारण, आप स्वयभू है, और अचिन्त्य और अप्रमेय निखिल वेदोका कार्य और अुनका प्रतिपाद्य विषय अिन दोनोका अर्थ-ज्ञान आपको ही है।"

समाजके लिअे धर्म-प्रतिपादन करनेवालेका यह अधिकार था। आज अलग अलग मतदान-विभागोमे वहुमत प्राप्त करके लोकसभा अथवा विधान-सभामे चुनकर जानेवाले सैकडो सदस्योकी धर्म-प्रतिपादन या 'कानून-प्रतिपादन' सम्वन्धी योग्यताका समर्थन कौन कर सकेगा?

कानून धर्म नही है। कानूनमे अधर्म प्रवेश कर सकता है। लेकिन मान लीजिये कि प्रजाके कल्याणके लिअे ही सारे कानून वनाये जाते है। लेकिन जहा रागद्वेषके लिअे अनुकूल क्षेत्र है (दलीय राजनीतिके सम्वन्धमे), जहा सत्ता ही सर्वोपरि लक्ष्य है, जहा कानून वनानेवाले खुद ही आपसमे झगडा-फसाद करते है, गाली-गलौज करते है, चप्पलोका अुपयोग करते है, मारपीट करते हैं, वहा अैसे लोग प्रजाके लिअे अनुशासन किस तरह वना सकते है? अगर काजी स्वय ही अपराध करने लगे तो वह दूसरोका न्याय कैसे करेगा? कानूनकी प्रतिष्ठाकी रक्षा अुसे पुस्तकोमें लिखनेसे नही होती। पूज्य महात्माजीकी अेक वार कही हुअी वात सोलह आने सच्ची है "धर्मके विना राजनीति भयानक है!"

काम और अर्थ अिन दो पुरुषार्थोमे कामकी अपेक्षा अर्थ अधिक भयावह लगता है। क्योकि आजकी दुनियामे अर्थका मूल्य सर्वोपरि माना

जाता है। युद्ध भी अर्थके लिअे ही होते है। कामका अधिक मूल्य होता तो सीता-हरणके कारण हुअे राम-रावण-युद्धकी पुनरावृत्ति आज भी कअी बार हो जाती । पुराने जमानेमे भी अैसे युद्ध कभी कभी ही हुअे है। अिसीलिअे महाभारतमे कहा गया है 'अर्थस्य पुरुषो दास ।'

अिस विवेचनका अर्थ अितना ही सिद्ध करना है कि सगठित सस्था, जिसमे स्थूल अनुगामनको स्थान है, धर्म अथवा सेवाके लिअे सच्ची पथप्रदर्शक नहीं हो सकती। अुपसहारमे भगवान मनु कहते है

अव्रतानाममन्त्राणा जातिमात्रोपजीविनाम् ।
सहस्रग समेताना परिपत्त्व न विद्यते ।।

ब्रह्मचर्यादि व्रत न पालनेवाले, वेदाध्ययनशून्य, केवल जाति पर निर्वाह करनेवाले ('हम ब्राह्मण है' यह कहकर) हजारो मनुष्य अिकट्ठे हो, तो भी अुनकी परिपद नही कहलायेगी।

य वदन्ति तमोभूता मूर्खा धर्मम् अतद्विद ।
तत् पाप शतधा भूत्वा तद्वक्तॄन् अनुगच्छति ।।

तमोगुणसे व्याप्त, धर्मको न जाननेवाले मूर्ख लोग यदि धर्मका निर्णय करने लगेगे, तो पाप करनेवालेका पाप सौगुना बढकर गलत निर्णय देनेवालोके सिर पर आ पडेगा।

मेरा अभिप्राय यह नही है कि आजके जमानेमे राजनीति या दूसरे क्षेत्रोमे सज्जन, धर्मनिष्ठ मनुष्य नही है। लेकिन पद्धतिमे और दृष्टिमे दोप है, यह प्रमाण-ग्रथके वचन अुद्धृत करके मैने बताया है।

अध्यात्मकी दृष्टि 'व्यवहार' की दृष्टिसे अलग होती है। जीवनमें देहको अग्रस्थान दिया जाय या आत्माको — यह प्रश्न है। व्यवहारमें देहको अग्रस्थान दिया जाता है। आत्माकी अुपेक्षा न हो तो भी अुसे गोण स्थान तो मिलता ही है। परिणामस्वरूप सभी प्रयत्न देहका सुख बढानेके लिअे होते है। अिसका फल है असुख और असतोप । अगर आत्माको अग्रस्थान मिले तो देहकी अुपेक्षा न हो, परन्तु आत्माकी प्राप्तिके लिअे देह साधन बन जायगी, और अुसकी मर्यादामे अुसे स्थान मिलेगा।

अिसलिअे सारे व्यवहार, योजना, ध्येय धर्मके आधार पर खडे होंगे। अर्थात् मानव-जातिका कल्याण करनेकी दृष्टिसे होंगे। जीवनमे सयम, अहिसा, सत्य, श्रम, दानशीलता, निर्भयता आदि दैवी सम्पत्तिका विकास देखनेमे आयेगा।

सार्वजनिक सेवाकार्यके बारेमे भी यही नियम लागू होता है। जिस सस्थाके मार्गदर्शक धर्मबल और तपोबल रखनेवाले दीर्घदर्शी सत्पुरुष होते है, अुनके द्वारा काम करनेवाले सेवकोकी नैतिक अुन्नति और चरित्र-वृद्धि हुअे बिना नही रहेगी। अिसके विपरीत, जहा विषमताकी भावना, सत्ताका अभिमान और रुपयेका महत्त्व होता है, वहा सेवा भौतिक लाभका साधन बन जाती है। अुससे चित्तशुद्धि नही होती। समाजमे मागल्य अुत्पन्न नही होता।

सेवाके द्वारा अपना स्वार्थ या अैहिक लाभ प्राप्त करनेका लोभ महापातक माना जाना चाहिये। अपने लाभके लिअे सेवा करनेवालेका जीवन-विकास नही होता। चित्तशुद्धिका अर्थ यह है कि अुससे मनुष्यका मन विशाल होता जाता है। मानव-जातिमे अुसे भगवानका साक्षात्कार होता है। अुसके भीतर भक्तिकी अुमग अुठती है। समय बीतने पर सेवा अुसका सहज स्वभाव हो जाता है। चित्तमे क्लेशका मैल कभी भी पैदा नही होता। अुस व्यक्तिके सहवासमे आनेवाले सब लोग प्रसन्न-चित्त हो जाते है। अुसकी छूत लगनेसे वे भी भक्ति-परायण और श्रद्धालु बन जाते है।

तुज सगे कोअी वैष्णव थाअे, तो तु वैष्णव साचो,
तारा सगनो रग न लागे, ताहा लगी तु काचो।[१]

यह है सच्चे सेवक या सेविकाकी कसौटी।।

*

अैसे विचार मनमे आया करते है। नवविधा भक्तिमे अतिम भक्ति आत्म-निवेदन है। समर्थ रामदास स्वामी लिखते है

---

१ तेरे सगमे कोअी वैष्णव बन जाय तो तू सच्चा वैष्णव है। तेरे सगका किसीको रग न लगे वहा तक तू कच्चा ही है।

मी भक्त अैसे म्हणावे। आणि विभक्तपणेचि भजावे ।।

"मै भक्त हू यह कहना चाहिये और विभक्त होकर ही भगवानको भजना चाहिये।" यह आश्चर्यजनक लगता है, लेकिन अनुभवने समझमे आता है।

अैसी अुच्च अवस्था तक पहुचनेके वाद 'सेवा' कोअी अलग वस्तु नही रहती। लेकिन हमारे जैसे सामान्य मनुष्योंके लिअे भूतमात्रमे भगवानको देखकर भक्तिपूर्वक अुनकी सेवा करनेका आदर्श ही योग्य है। शुभ सकल्पोका दाता भगवान होता ही है। शातिका शाश्वत और अेकमात्र स्थान भी वही है। पूज्य महात्माजीने अेक वार मुझसे कहा था, "हमे सेवाकी योग्यता प्राप्त करनी चाहिये। भगवान मौका देगा ही।" अुनके अिस कथनका पालन मैने आज तक यथाशक्ति किया है और अिसकी सत्यता अनुभवसे जान ली है।

*

आज गाधी-जयन्तीका पुण्य अवसर है। मन अुनके अवतार-कार्यका चिन्तन करता है।

महाराष्ट्रमे चार सौ वर्ष पहले श्री अेकनाथ महाराज नामके महात्मा हुअे है। श्रीमद् भागवतके ग्यारहवे स्कन्ध पर अुन्होने महान टीकाग्रथ लिखा है। अुसे 'अेकनाथी भागवत' कहते है। महाराष्ट्रमे ज्ञानेश्वरीके वाद अिस ग्रथका महत्त्व माना जाता है। अिस ग्रन्थमे ३१ अध्याय है। अतिम अध्यायमे भगवान श्रीकृष्णके निर्वाणका वर्णन है। अुसे पढते समय भक्त-हृदय अश्रुमोचन किये विना रह ही नही सकता, अैसा हृदयगम वर्णन वह है। साधना-कालमे अिस ग्रन्थका मैने तीन वार वाचन और चितन किया और हर वार मुझे अुसमे नवीनता ही मालूम हुअी है। ग्रन्थके तीसवे अध्यायके अुपसहारमे श्री अेकनाथ महाराज भगवान श्रीकृष्णके अवतार-कार्यका सार कहते है

अजन्मा तो जन्म मिरवी। विदेहाअगी देहपदवी।
स्वये अक्षयी तो मरण दावी। अति लाघवी श्रीकृष्ण ।।

जो अजन्मा है वह जन्म दिखाता है, जो विदेह है वह देहकी अुपाधि लगा लेता है, जो स्वय अक्षय है वह मरण दिखाता है। भगवान श्रीकृष्ण वडे नटवर है।

अेकादशाचा कळस जाण। श्रीकृष्णाचे निजनिर्याण।
जेथ नाही देहाभिमान। ते ब्रह्म पूर्ण परिपक्व।।

भगवान श्रीकृष्णके निजनिर्याणको ग्यारहवे स्कन्धका कलश मानना चाहिये। जिसमे देहाभिमान नही है वह पूर्ण परिपक्व ब्रह्म है।

भय नाही जन्म धरिता। भय नाही देही वर्तता।
भय नाही देह त्यागिता। हे ब्रह्मपरिपूर्णता हरि दावी।।

जन्म लेनेमे भय नही है। देहमे रहनेमे भय नही है। देहका त्याग करनेमे भय नही है। अैसी ब्रह्मपरिपूर्णता भगवान श्रीकृष्ण बताते है।

मुझे लगता है कि यह अतिम ओवी पूज्य महात्माजीके अवतार-कार्यका भी दिग्दर्शन करती है।

भय नाही जन्म धरिता। भय नाही देही वर्तता।
भय नाही देह त्यागिता। हे ब्रह्मपरिपूर्णता हरि दावी।।

*

अिकतीसवे अध्यायमे भगवानका स्वेच्छासे किया हुआ निर्याण वर्णित ह।

मूल सस्कृत श्लोक यह है—

लोकाभिरामा स्वतनु धारणाध्यानमगलाम्।
योगधारणयाग्नेय्याऽदग्ध्वा धामाविशत्स्वकम्।।

अिस श्लोक पर सन्त अेकनाथ महाराजकी टीका अिस प्रकार है

घृत थिजले विघुरले। तैसे सगुण निर्गुणत्वा 'आले।
या नाव योगाग्निधारण बोले। कृष्णे देह दाहिले हे कदा न घडे।।

जैसे जमा हुआ घी पिघलता है वैसे ही सगुण ब्रह्मने निर्गुणत्वको प्राप्त किया, अिसीको योगाग्नि-धारण कहा जाता है। कृष्णने अपनी देह जला डाली, यह कभी हो ही नही सकता।

कृष्णे देहो नेला ना त्यागिला। तो लीलाविग्रहे सचला।
भक्तध्यानी प्रतिष्ठिला। स्वये गेला निजधामा॥

कृष्णने देह न तो धारण की, न अुसका त्याग किया। वह लीला-देह सब जगह ओतप्रोत हो गयी। भक्तोके ध्यानमे अुसकी प्रतिष्ठापना करके भगवान स्वय निजधामको पधारे।

*

मेरा मन कहता है, "३१ जनवरी, १९४८ की शामको मै नअी दिल्लीमे राजघाट पर थी। पूज्य महात्माजीके पार्थिव शरीरको वहा चदन-काष्ठकी चिता पर जलकर भस्म होते मैने अपनी आखोसे देखा। अुस पवित्र चिताभस्मका थोडासा अश अिस आश्रममे अेक डिब्बीमे सुरक्षित रख छोडा है। अब पूज्य महात्माजी विश्वरूप हो गये है!"

वहा हृदयके अेक छोटेसे कोनेमे मृदु निनाद गुजन करता है, "नही, नही, पूज्य महात्माजीकी सगुण विभूति भी अक्षय है!! अमर है!!!"

*

लेखनमे खड हुआ। परन्तु जीवन-प्रवाह अखड है!

मेरे अिस साधना-कालमे बाहरकी सारी प्रवृत्तिया मैने छोड दी है। लेखन-प्रवृत्ति भी बन्द ही थी। अेकाग्रतामे विक्षेप डालनेवाला कोअी भी काम करनेकी मेरी अिच्छा नही होती थी। लेकिन अिस लेखनका निमित्त मेरा हाथ हुआ है, फिर भी प्रेरणा अुसकी है। अुसकी अिच्छानुसार सब हो गया है। अेकाग्रता भी वही है। विक्षेप भी वही है। अुसे ढककर रखनेवाली अुसीकी शक्ति 'माया' है! वह प्रगट होती है तब वही शक्ति अुसकी 'लीला' बन जाती है!!

सत श्री तुकाराम महाराजके पवित्र वचनसे अिसकी समाप्ति करती हू

आपुलिया बळे नाही भी बोलत।
सखा भगवत वाचा त्याची ॥१॥
साळुकी मजूळ बोलतसे वाणी।
शिकविता धणी वेगळाची ॥२॥
काय म्या पामरे बोलावी अुत्तरे।
परि त्या विश्वभरे बोलविले ॥३॥
तुका म्हणे त्याची कोण जाणे कळा।
चालवी पागळा पायाविण ॥४॥

मै अपनी शक्तिके बल पर नही बोलता। भगवान मेरा सखा है, अुसकी यह वाचा है। मैना मजुल वाणी बोलती है, अुसे सिखानेवाला स्वामी कोअी और ही है। मै पामर क्या वचन बोलू? लेकिन अुस विश्वभर भगवानने मुझे बोलनेको प्रेरित किया। तुकाराम कहता है, अुसकी कलाको कौन जान सकता है? वह लगडोको बिना पैरोंसे चलाता है।।

ॐ तत्सत् ब्रह्मार्पणमस्तु।

हमारे कुछ महत्त्वके प्रकाशन

	रु नपै.
अहिंसक समाजवादकी ओर	१ ००
आरोग्यकी कुंजी	० ४४
खादी	२ ००
गांवोंकी मददमें	० ४०
गीताका संदेश	० ३०
पंचायत राज	० ३०
मंगल-प्रभात	० ३७
मेरे सपनोंका भारत	२ ५०
विद्यार्थियोंसे	२ ००
विश्वशांतिका अहिंसक मार्ग	० ४०
सत्यके प्रयोग अथवा आत्मकथा	१ ५०
सत्य ही ओश्वर है	० ८०
सर्वोदय	२ ००
स्त्रियां और अुनकी समस्यायें	१ ००
हमारे गांवोंका पुनर्निर्माण	१ ५०
हिन्द स्वराज्य	० ७०
सरदार पटेलके भाषण	५ ००
विचार-दर्शन — १	१ ५०
विचार-दर्शन — २	१ ५०
सरदार वल्लभभाओी — भाग १	६ ००
सरदार वल्लभभाओी — भाग २	५ ००

गांधी अध्ययन केन्द्र

तिथि	तिथि
४	

वापूके पत्र – १

आश्रमकी वहनोको

सपादक काकासाहव कालेलकर

ये पत्र वापूजीने भारतके विभिन्न भागोका दौरा करते हुअे सावरमती आश्रमकी वहनोको लिखे थे। अिन पत्रोमें तीन वातो पर सतत जोर दिया गया हे १ सामाजिक जीवनका महत्त्व, २ शिक्षाका सच्चा अर्थ है चरित्र-निर्माण और जीवनके लिअे आवश्यक कुशलताकी प्राप्ति, और ३ शरीर-श्रम, अुद्योग-परायणता, सादगी और सयमके प्रति निष्ठा।

कीमत १ २५ - डाकखर्च ० ३०

वापूके पत्र – २

सरदार वल्लभभाअीके नाम

सपादिका मणिवहन पटेल

अनु० रामनारायण चौधरी

अिस पुस्तकमे नवीन भारतके निर्माणमे महत्त्वपूर्ण भाग. लेनेवाले दो महापुरुषो — गाधीजी और सरदार पटेल — के वीच हुअे ता० ८–७–’२१ से २९–१२–’४७ तककी पूरी अेक पीढीके अरसेका पत्र-व्यवहार आ जाता है। अिन पत्रोकी विशेपता अिसीमे हे कि ये "अेक वहादुर योद्धा और वफादार साथीको लिखे गये थे, जिनकी विवेक-शक्ति और व्यवहार-कुशलतामे वापूको वडा विश्वास था।" अिन पत्रोसे पाठकोको वहुत कुछ जानने-सीखनेको मिलेगा।

कीमत ३ ०० डाकखर्च १ २५

नवजीवन ट्रस्ट, अहमदावाद–१४

य० मंदिर,
३१-८-'३२

चि० प्रेमा,

अिस बार तुझे कौनसा नया विशेषण दू, यह सूझ नही रहा है। तू जो मागेगी वही दे दूगा।

परचुरे शास्त्रीके लिअे मगाअी हुअी पुस्तके अभी मिली नही है, लेकिन अब मिल जायगी।

मै यह नही मानता कि अुन दो बहनोके आनेसे अैसा कहा जा सकता है कि पढी-लिखी बहने (आश्रममे) आने लगी। अैसे तो कोअी भूली-भटकी आ ही पहुचती है। अुनमें से किसीका अभी तक हम सग्रह नही कर सके। तुझे पढी-लिखी माने और आश्रममे सगृहीत माने, तो मान सकते है। लेकिन यह तो अपवाद हुआ। अेक चिडियाके आनेसे गरमी आ गअी, अैसा थोडे ही कोअी मानेगा?

 के बारेमे मुझे अफसोस है। अुसे कक्षासे भले ही छुट्टी दे दी। लेकिन अुसे भूल मत जाना। अुसके अूपर नजर रखकर सीधे रास्ते ला सके तो लाना। धीरूके बारेमे तेरी परेशानी मै समझा। तेरे भीतर अुदारता और हिम्मत हो तो अुसके बारेमे जोशी और रमा-बहनसे तुझे बात करनी चाहिये और अुसके हितका कोअी मार्ग निकालना चाहिये। अपने मार्गमे हम खुद ही काटे बोते है और फिर अुनके चुभनेकी शिकायत करते है। अपनी खुदकी शक्तिको लेकर जाय तो हम शायद कही भी सफल न हो, लेकिन अीश्वरकी शक्तिको लेकर जाय तो घोर अधकारमे भी हमे प्रकाशके दर्शन हो सकते है। "मेरे अदर प्रेम हो तभी न?"— यह कहकर तू नाराज हो जाय, तो मेरा कहना निरर्थक है। अिसके सिवा, मै मानता हू कि मेरे अदर प्रेम है। फिर भी मै बहुतोको क्यो नही जीत सका? तब फिर तुझसे कहनेका मुझे क्या अधिकार है, अैसा मुझे सुनाकर तू अपना हृदय-द्वार बन्द कर ले तो भी मै लाचार हो जाअूगा। अपनी अपूर्णताको मै स्वीकार करता हू। अुनका

अनुकरण तुझे क्यों करना चाहिये? अपने अनुभवोंमें से मैं तुझे जो कुछ दूं, अुसका तू अुपयोग कर। साथीके दोषोंको अपनाना नहीं चाहिये, बल्कि अुन दोषोंसे बचना चाहिये और अुनमें जो गुण हों अुन्हें ग्रहण करना चाहिये। फिर मैं तेरी तरह हारकर नहीं बैठता, लेकिन पत्थर जैसे हृदयको भी ओश्वरकी कृपासे पिघलानेकी आशा रखता हूं और अुसके लिअे प्रयत्नशील रहता हूं।

तू रसोअीघरमें अखबार पढ़कर सुनाती हो और आनन्द लेनेके लिअे मजाक भी करती हो, तो मैं अुसे खराब ही मानूंगा। रसोअी-घरमें तो मौन ही रखना चाहिये। वहां क्या सुनाना? जिसके सिवा नारणदासका ध्यान तो चारों तरफ लगा हुआ होना चाहिये। वहां तू पढ़े और सुनाये अिसे मैं ठीक नहीं मानता। तेरा पढ़ना भी रसोअीघरके तो गम्भीरतासे ही होना चाहिये। अिसलिअे जितना सुधार तो तू कर ही लेना। अगर तू रसोअीघरमें विनोद और नखरे करे, तो छोटे बच्चोंका क्या होगा? और वे सब भी अैसा ही करने लगें, तो रसोअीघर 'रीछोंका बाग'* बन जाय और वहांका अनुशासन भंग हो जाय। यह सब 'स्मार्ट लिटल गर्ल' के 'स्मार्ट' दिमागमें अुतरा या अुसकी सारी 'स्मार्टनेस' आश्रममें चोरी हो गअी?

अिस बार अिससे ज्यादा नहीं।

बापू

९१

११-९-'३२

चि॰ प्रेमा,

तू धीरज और विश्वास रखेगी तो मेरी 'स्वभाव-पुस्तक' के सारे पृष्ठ तेरे सामने खुल जायंगे। 'जो मुझे (सत्यको) प्रेमपूर्वक भजन करता है अुसे मैं बुद्धियोग देता हूं।' यह सत्य-भगवानका वचन है। जिसके मननसे मेरे स्वभावके सब पृष्ठ खुल जाते हैं। पुस्तक सामने पड़ी हो तो भी अुसे पढ़ना न आये या पढ़नेकी कोअी तकलीफ न अुठाये, तो

* Bear-garden शोरगुलवाला स्थान।

दोष किसका? लेकिन यह तो वहुत कह दिया। फिर भी मैंने तुझे यह पुस्तक पढनेका तरीका वता दिया। तू कहेगी कि यह तो तू जानती ी थी। अैसा कहे तो मैंने तुझे जो सर्वज्ञ कहा है, वह सच ही निकला माना जायगा न?

तू . को मेरे सव पत्र भेजती है, अुसमे मुझे कोअी आपत्ति हो ही नही सकती। आखिरी पत्र तो अुसीसे सवधित था, अिसलिअे मैंने (अुसके पास भेजनेकी) विशेष अिच्छा प्रकट की। अव जो लिखने जैसा लगे सो लिखना। की औषधि मै नही खोज सका, अैसा . लिखती हे वह सच है। लेकिन यह अधूरा वचन है। औषधि तो मैंने खोज ली। लेकिन वह मेरे पास न हो तो मैं क्या करू। अुनकी औषधि स्त्री थी — अैसी स्त्री जो अुसे पसन्द आये और जिसके साथ वह विवाह कर ले, या जो अुसके लिअे सगी वहनसे भी वढकर हो जाय। . के अूपर मेरी नजर तभीसे थी जवसे मैंने का अुसके प्रति और अुसका के प्रति राग देखा। अिस रागकी निर्मलता मैंने मान ही ली थी। फिर भी किसी मौकेके विना के अूपर मैं जिम्मेदारी कैसे डालू? तेरे पत्रने मुझे वह मौका दे दिया। मेरा निदान ठीक है या नही, वह औषधि है या नही, यह मैं नही जानता। शायद भी नही जानती। यह तो प्रयोग करने पर ही मालूम हो सकता है। मैं तो की स्वस्थता चाहता हू। अिसके विना अुसकी शक्ति रुधी रहती है और वह क्षीण होता जाता है। काम तो वह करता जाता है, लेकिन अुसमें अुसे रस आता है या नही, अिसका भी अुसे पता नहीं चलता।

मेरे वचपनकी वाते शायद तू काफी चुरा लाअी है।[1]

रमावहन वीमार है। यह तू जानती है? अरे, अुसके साथ वात तो कर। हमारी कल्पना हमें जितना डरपोक वनाती है, अुतने डरका कारण वस्तुस्थितिमे कभी होता ही नहीं है। 'कल्पना भूत और शका डाअिन' यह कहावत विलकुल सच्ची है। शत प्रतिशत सच्ची है।

---

१ श्री नारणदास काकाकी मासे मैं मिली तव अुनसे पूज्य महात्माजीके वचपनकी कअी वाते सुननेको मिली थी। अुनमें से कुछ मजेदार होनेसे मैंने महात्माजीको पत्रमें लिख भेजी थी।

सब सखी बहनोंकी तू अच्छी तरह देखभाल करती होगी। दूसरे काम कम करके भी यह काम अच्छी तरह करना।

किसनके बारेमें अखबारमें पढा था। घुमक्कड़का नाम सुन्दर है। लेकिन अुसे शरीरको मजबूत बनाना चाहिये। अुसका वजन कितना है?

तेरे बारेमें आनन्दीके पत्रमें मैंने क्या लिखा है, गोशीबहनसे क्या कहा है, मुझे याद नहीं है। मुझे तेरे आजके ब्रह्मचर्यके बारेमें जरा भी शका नहीं है। कलकी बात मैं नहीं जानता। तू जानती हो तो नारणदासजी और रामजीसे भी तू विशेष कहती जायगी। जिसके बावजूद भी तेरे आग्रहका तो मैंने हमेशा स्वागत ही किया है। तुझे जट कोअी फुसला ले, अैसा मैं नहीं मानता। लेकिन तेरे जैसी ही दृढ स्त्रियोंको भी मैंने विवाह करते देखा है। अिसमें अुनका भी क्या दोष? अिसलिअे अभी तो मैं तेरे बारेमें अैसी अिच्छा ही रख सकता हूं। तुझे आशीर्वाद दूंगा। मुझसे हो सकेगी अुतनी तेरी मदद करूंगा, मुझसे हो सके अुतने प्रहार भी तुझ पर करूंगा। अंतमें तो तेरे और भगवानके हाथमें (सूत्र) है।

तेरे पत्र जैसे आते हैं, वैसे ही मुझे चाहिये। तू गणित बन जाय तो मेरे लिअे बेकार हो जायगी। तेरे भीतर गांठें पड़ी हुअी हैं। मैं जैसे जैसे अुन्हें देखता जाअू वैसे वैसे ही अुन्हें खोलनेका प्रयत्न करता जाता हूं। लेकिन मैं खोलनेवाला कौन? यह काम मनुष्यके बसका नहीं है। मुझे भगवान जिस हद तक निमित्त बनने दे अुसी हद तक मैं बन जाता हूं। अिसमें मेरा स्वार्थ है, क्योंकि तुझसे तो मुझे बहुत ज्यादा काम लेना है। तेरे भीतर जो बातें मैं अुडेल रहा हूं वे स्वयं जानती हैं, यह मान लूं तो अितने लम्बे पत्र लिखनेकी तकलीफ अुठाअूं?

किसी व्यक्ति या समाजकी अवनतिका कारण ठीकसे खोजा गया हो, अैसा जाननेमें नहीं आया। अनुमान तो बहुत लगाये जाते हैं। तात्कालिक कारण मिल भी जाते हैं और वे हमेशा अैसे नहीं होते। लेकिन सामान्य रूपसे यह जरूर कहा जा सकता है कि अवनतिमें धर्मकी आंतरिक न्यूनता जरूर होती है। परतंत्रता कभी मूल कारण नहीं है, न होगी, क्योंकि वह स्वयं दूसरे कारणोंका, दुर्बलताओंका परिणाम होती है।

पड़ोसीका कर्तव्य हमेशा पड़ोसीको धार्मिक रीतिसे मदद करना है।

अहकारके वीज [अपनी] शून्यता अनुभव करनेसे ही [नष्ट] होते हैं। अेक क्षणके लिअे भी कोअी गहराअीमें जाकर विचार करे, तो अुसे अपनी अति अल्पताका भान हुअे बिना न रहे। पृथ्वीके प्राणियोंकी तुलनामें हम जतुको तुच्छ मानते हैं, किन्तु अिस जगतकी तुलनामे मनुष्य-प्राणी हजार गुना अधिक तुच्छ है। मनुष्यमें वुद्धि है, अुससे अिस स्थितिमे कोअी फर्क नही पडता। अुसकी महिमा ही अपनी तुच्छता अनुभव करनेमें है। क्योंकि अिस अनुभवके साथ ही दूसरा ज्ञान पैदा होता है, वह यह कि जैसे वह मनुष्यके रूपमे तुच्छ है वैसे ही भगवानका तुच्छतम अश होते हुअे भी जव भगवानमे अुसका लय होता है, तव वह भगवान-रूप वन जाता है, और अुस सूक्ष्म अणुमे भगवानकी शक्ति भरी हुअी है।

मायावादको मैं अपने ढगसे मानता हू। कालचक्रमें यह जगत माया है। लेकिन जिस क्षण तक अुसका अस्तित्व है अुस क्षण तक वह जरूर है। मैं अनेकान्तवादको मानता हू।

अगर कोअी भी वस्तु मनुष्यके सामने प्रत्यक्ष हो तो वह मृत्यु तो है ही। अैसा होते हुअे भी अिस अनिवार्य प्रत्यक्ष वस्तुका भारी डर लगता है यही आश्चर्य है, यही ममता है, यही नास्तिकता है। अुससे तर जानेका धर्म अकेले मनुष्यको ही सुलभ है।

पाप-पुण्य मृत्युके वाद भी जीवके साथ जाते ही हैं। जीव जीवके रूपमें अुन्हे भोगता है। फिर भले वह दूसरे दृश्य शरीरमें हो या सूक्ष्म शरीरमे।

अव तो वहुत हो गया न?

वापू

९२

१९-९-'३२

चि० प्रेमा,

आज तो पत्र लिखते लिखते थक गया हू। डाक निकलनेका समय भी हो गया है। अिसलिअे छोटा ही पत्र लिखता हू। दूसरा वादमें। हमारे पास नअी विल्ली है। वह 'स्मार्ट लिटल गर्ल' है। अिसलिअे अुनका

नाम तेरा कॉलेजका स्मरण बनाये रखनेके लिअे प्रेमा रखा है। तू कितनी 'स्मार्ट' रहती है, अिसकी परीक्षा अब हो जायगी।

पास होगी या नहीं?

बापू

दूसरा पत्र समय मिला तो बादमें लिखूंगा।

९३

[पू० महात्माजीके हरिजनोंसे सम्बन्धित ११ दिनके पहले अुपवासके कारण पत्रव्यवहार बीचमें बन्द रहा। अुपवास समाप्त होते समय मैंने अीसाअी स्तोत्र 'Abide with me' में से दो कडियां लिख भेजी थीं। अुपवास २० सितम्बर, १९३२ के दिन शुरू हुआ था।]

य० म०
२-१०-'३२

चि० प्रेमा,

आज लम्बा पत्र नहीं लिखा जायगा। तेरे काटनेसे कौन डरता है? हमारी बिल्ली बहन अपने बच्चोंको जैसे जैसे काटती है, वैसे वैसे वे अुसकी गोदमें घुमते हैं। बिल्ली अपने दांतोंके बीचमें जब सोमाको लेती है तब सोमा रोता नहीं, लेकिन अपनेको सुरक्षित मानता है। वैसे ही तेरा काटना होगा।

तूने सुन्दर कडियां लिख भेजी हैं। तेरे सयमको भी सुंदर मानता हूं। लेकिन तेरे लिअे या आश्रमवासियोंके लिअे खुश होनेका कोअी कारण नहीं है। बूढे अब्बासजी,[1] रेहाना वगैरा अुपवासके बारेमें जानकर नाचे। मेरे पास आनेकी अिच्छा भी प्रगट नहीं की। अीश्वरका हाथ मेरे सिर पर है ही, अैसा अुन्होंने माना और अपने अपने काममें लगे रहे। अैसा दूसरोंने भी किया। लेकिन बोल, अुपवासके दिनोंमें तूने कितना वजन बढाया?

बापू

१ श्री अब्बास तैयबजी। बडौदाके अेक समयके न्यायाधीश, दाजी-कूचमें पूज्य महात्माजीके साथी। अुनकी पुत्री श्री रेहानाबहन।

[पू० महात्माजीके पत्र 'व्रत-विचार' नामक पुस्तकके रूपमे छापकर श्री नारणदास काकाने अुसकी प्रस्तावना लिखी थी। अुस पर मैंने विनोद किया था।]

८-१०-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। प्रस्तावना लिखकर प्रसिद्ध होना हो तो अुसके लिअे योग्यता प्राप्त करनी चाहिये। यह योग्यता कैसे प्राप्त की जा सकती है, यह नारणदाससे पूछ लेना।

मुझे आराम मिल ही रहा है। ६ अुपवास मेरे जीवनमे कोअी वडी वात नही है। गअी हुअी शक्ति लगभग वापस आ गअी है। पत्रव्यवहारमे तो अव कोअी कठिनाअी नही होती।

आश्रममे वीमारी आवे यह मुझे जरा भी पसन्द नही है। कही भी वीमारी लापरवाहीसे ही आती है। वीमारीके अिस महीनेमे खुराककी ठीक तरह सभाल रखनी चाहिये। वहुतसी वीमारियोंका कारण विगडा हुआ पेट होता है।

वाली[1] तो मजवूत लडकियोमे गिनी जाती थी, वह भी कमजोर हो गअी। मै देखता हू कि तेरे पास कुछ लडकिया कठिनाअी पैदा करनेवाली है। शान्ताके वारेमे ज्यादा जाने विना यहासे मार्गदर्शन नहीं कर सकता। नारणदासके साथ सलाह करके जो अुचित लगे करना।

. का किस्सा भी विचारने जैसा तो है ही। दस वर्षकी लडकीको मासिक धर्म हो यह भयकर वात है। [अुसकी वुआ] के साथ वात करके अुसके वारेमे ज्यादा जान लेना। सभव है कि वह शालामें जाती थी तव वुरी आदत सीखी हो।

---

१ विद्यालयकी अेक लडकी जिसका विवाह कुछ वर्ष वाद श्री लक्ष्मीदासभाअी आसरके पुत्र पृथ्वीराजके साथ हुआ।

अपनी प्रेमीसे तो हम अलग हो गये हैं, क्योंकि हमें दूसरी जगह पर रखा गया है। अुसका वियोग खटकता तो है, लेकिन क्या करें? जिन्दगी वियोगका समुदाय ही है न?

वापू

९५

य० मंदिर,
१५-१०-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। सबके समाचार दिये यह ठीक किया। लीलावतीका काम कठिन है। तुझ पर अुसे श्रद्धा है, अिसलिअे तू कुछ कर सके तो करना। वह है भली, अुसका हेतु शुभ है, लेकिन बहुत विह्वल और अव्यवस्थित चित्तवाली है। प्रेमसे जो किया जा सके करना।

तेरा वजन घट रहा है, अिसका कारण खोजकर तुझे दूर करना चाहिये। दूध वगैरा कम लेती हो तो ज्यादा लेना चाहिये। हठ करके सारे शरीरको कमजोर मत कर डालना। तुझे कोअी टूटी कमरवाली कहे तो मुझे सहन नहीं होगा।

ने माफी मांगी यह ठीक किया। अुसे आश्रय दे सके तो देना। वह बहुत होशियार है, यह मैंने देख लिया है। अपनी होशियारीका वह ठीक अुपयोग करे तो कितना अच्छा हो!

आश्रमके पैसेका अुपयोग जिसके लिअे होना चाहिये अुसीके लिअे होता है। फिर वह चाहे जो हो। लेकिन आलोचना तो चाहे जिस कामकी हो सकती है। भूलें होती होंगी, लेकिन आश्रमका हेतु हमेशा तटस्थतासे व्यवस्था करना रहा है।

आश्रमकी पाअी पाअीका हिसाब देखनेका लोगोंको अधिकार है। आश्रम व्यक्तिगत संस्था नहीं है। खर्चकी मर्यादा अुसकी आयसे संबंध रखती है। आश्रमके पास कौड़ी न हो तो भी अुसका काम चलेगा, करोड़ों हों तो वे भी आश्रम खर्च करेगा। देनेवालोंको विश्वास है तब

तक वे देंगे। सस्थाको औश्वर चलाता है। देनेवालोंको वही प्रेरणा देता है।

मेरी दृष्टिसे तो जो भी वाहर जाय अुसे मत्रीसे अिजाजत लेनी चाहिये।

वापू

९६

२३-१०-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला है।

जमनादासकी वात दुखद है। क्या किया जाय? आखिर तो भाग्य दो कदम आगे रहता ही है।

किसनका मेरे नाम लम्वा पत्र आया था। अुसने अपने रहन-सहनका अच्छा वर्णन किया है। वह अैसी कर्तव्य-निष्ठ है कि सुवह तीन वजे अुठकर पत्र लिखने वैठी। मैं अपनेको ही अैसा कर्तव्य-निष्ठ मानता था। किसन जैसी लडकिया भी मेरा गर्व अच्छी तरह अुतारती मालूम होती है। तू नही अुतार सकती, क्योंकि आश्रममे तो जल्दी अुठनेकी आदत होती है। अिसलिअे अुसमें नयापन नही लगता। लेकिन वम्वअीमें जो सुवह ६ वजे अुठे वह मेहरवानी करेगा। अिसमें वेचारे गरीव मजदूर नही आते। लेकिन किसन कोअी मजदूरिन नहीं है।

कुछ समय यदि तू वचा सके तो वचाकर आश्रममे वीमारीको निकालनेकी कला तुझे हस्तगत कर लेनी चाहिये। लेकिन तेरा पहला काम अपना शरीर कसनेकी कला हस्तगत करना है।

मक्का अपने खेतमे न होती हो तो मगाअी नही जा सकती? अुसीसे वजन वढता हो तो यह तो सरल वात हो गअी। जेलमे अैसा कहा जरूर जाता है कि मक्काके आटेकी राव (काजी) मे दस्त साफ होता है और वजन भी वढता है। कैदियोको हमेशा सवेरे मक्काकी राव ही दी जाती है। अुसमें नमक डाला जाता है। मक्काके आटेमें

मे चापड निकालनेकी जरूरत नही होनी। कैदियोका माथ देनेके लिअे और प्रयोगके रूपमें कुछ दिन तक यह प्रयोग करने लायक जरूर है। आजकल सुबह क्या दिया जाता है? अगर पहलेकी तरह गेहूके आटेकी राब दी जाती हो, तो ज्वारकी देकर देखना बिलकुल सरल है। बहनोको, विट्ठल, कान्ति वगैराको तो व्यक्तिगत अनुभव है। वे जो कहे वह सच्चा। मैं तो दूसरोका कहा हुआ कहता हू।

शान्ताने जो लिखा है अुसे मैं कुछ समझा नही। मुझे तो अुसने कुछ लिखा नही। तुझे अपना रहस्य बताये तो ठीक हो। शान्ता जो गुप्त रखना चाहे अुसे मैं जरूर गुप्त रखूगा।

तूने जो प्रश्न पूछे है अुनका जवाब नही दे सकूगा। अिसलिअे अभी धीरज रखना।

तेरी शक्ति और योग्यताका पार ही नही है। लेकिन अुनका मैं अुपयोग करू तभी न? अभी तो ग्रेके अुन फूलो[1]की तरह वे जगलमे बिखर जाती है।

हमारी बिल्ली बहनसे हम मिले तब वह सचमुच ही पागल बन गअी। हमे छोडती ही नही थी। अुसे हमारा वियोग जरूर बहुत खटका होगा। अब शान्त है।

बापू

९७

[साबरमती आश्रम सडकके दोनो ओर बना था। रोज सुबह सारे क्षेत्रकी सफाअी होती थी। लडके और लडकिया सफाअी करते थे और मैं कचरा-गाडी खींच-खींचकर सब ढेर अिकट्ठे करती थी। गाडीमे खराबी थी अिसलिअे ज्यादा शक्ति लगानी पडती थी। बरसातके मौसममे बरसात हो रही हो और मुझे मासिक धर्म चल रहा हो, तब भी यह काम मैं चालू रखती थी। अिसका कमर पर असर हुआ और

1 अग्रेज कवि ग्रे की फूल-सम्बन्धी कविताका सदर्भ है
'Full many a flower is born to blush unseen'

दर्द शुरू हो गया। बादमें मैं बम्बअी गअी और डॉक्टरकी दवा ली तब मिटा। परन्तु अैसा याद आता है कि सात आठ महीने तक अुसने मुझे खूब तकलीफ दी।]

३०-१०-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। कृष्ण नायरके बारेमें तूने लिखा है सो ठीक है। . के साथ अुसके जानेसे पहले कोअी बात हुअी? वह अुसकी होशियारीका दुरुपयोग करता है। अिससे अुसे बचा लिया जाय तो अच्छा।

तेरे पास लडकियोंका अच्छा जमघट हो गया दीखता है। अुन सबको सभाल लेने अर्थात् अुन्हें प्रेमसे शुद्ध करने और शुद्ध रखनेकी शक्ति अीश्वर तुझे दे।

लीलावतीकी सभाल रखना। वह दुखी लडकी है।

गोंदका पाक तुझे खाना हो तो खाकर देख लेना। मुझे तो डर है कि अुसे तू पचा भी नहीं सकती। तुझे जरूरत तेल मलवानेकी और कटिस्नानकी है। साथ ही पीठ भी मलवानी चाहिये।

पुराने वर्षके साथ ही तूने अपना क्रोध भी दफना दिया हो तो कितना अच्छा हो!

आश्रमके रुपयेके बारेमें सतोष न हो तो अुसकी चिन्तामें न पड। कभी अपने आप सतोष हो जायगा। अन्तमें किसी दिन आश्रमका प्रबंध हाथमें लेगी तब तो होगा ही।

फूलोंके पौदोंके साथ मेरी तरफसे बात करना, आश्वासन देना। अुनसे कहना कि अपने जैसा सौंदर्य, अपने जैसी सुगन्ध, अपने जैसी अेकनिष्ठा, अपने जैसी दृढता, अपने जैसी नम्रता, अपने जैसी समता और सरलता हमें प्रदान करो और अपनी मित्रता सिद्ध करो।

बापू

९८

यरवडा मंदिर,
६-११-'३२

चि० प्रेमा,

मुझ पर अब बोझा अितना आ गया है[1] कि आश्रमको लम्बे पत्र शायद ही भेज सकूं। अुसमें तेरा नंबर पहला आया है। परन्तु मैं जानता हूं कि अब मेरे लम्बे पत्र अखबारोंमें पढकर तुझे संतोष होगा।

दीवालीके दिनोंके अनोखे वर्णन पढकर वहां अुड आनेका जी हुआ। परन्तु देखा तो पिंजडा अूपर, नीचे और चारों ओर बन्द ही है! अिसलिअे पंख फडफडाकर बैठा रहा।

तू मक्खनकी मात्रा बढाकर अच्छी हो जाय तो अिसे मैं सच्ची दवा मानूंगा।

तेरी जिम्मेदारी बढती जा रही है, यह मैं समझता हूं। ओश्वर तुझे निभा लेगा, तू आत्म-विश्वास न खोना। मेरी अितनी ही सलाह है कि तू धीरज न छोडना।

अेक शिकायत जो रमाबहनने की सही मालूम होती है। तूने चिढकर कह दिया — 'तो चला जा पालनपुर।'[2] अैसा किसीसे नहीं कहा जाता। बालकोंके साथ सभ्यतासे ही काम लेना चाहिये। आश्रममें रहनेवाला कोअी भूल करे तब तुरन्त 'तो रास्ता नापो' कह देना बहुत अपमान-कारक है। अैसा किसीसे न कहना। और रमाबहनको संतोष दिलाना।

कृष्ण नायरका संवाद मधुर है। तेरे अुत्तर तो तूने मुझे पूरा अधिकार दिया हो तो मैं भी दे दूं।

किसनका वर्णन अच्छा है।

हमारा गीत हमें शोभा देनेवाला है।[3] सपनोंका पृथक्करण मुझे नहीं आता।

---

१ 'हरिजन' साप्ताहिक निकालनेका।

२ यह वचन मैंने बालक धीरुसे कहा था।

३ 'हमारा गीत'=राष्ट्रगीत 'वन्देमातरम्'। वह प्रार्थना-गीत है, राष्ट्रगीत जैसा नहीं लगता, अैसी आलोचना मैंने की थी।

नारणदासकी दी हुअी भेट[1]का अर्थ समझी न?

भावना कब प्रगट की जाय, अिसका कोअी नियम नहीं है। यह कहूंगा कि जब सत्यनारायण प्रेरित करे तब प्रगट की जाय।

बापू

९९

१३-११-'३२

चि० प्रेमा,

आज भी छोटासा ही पत्र लिखूंगा। अब हरिजन भाअी-बहन मेरा बहुत समय लेते हैं।

कमला बाअी[2], जो नअी आअी है, शिकायत करती है कि अुसे अपनी लडकीके लिअे समय नहीं मिलता और न पढनेके लिअे मिलता है। देख लेना।

तू गोंद हजम कर गअी।[3] यह खुशीकी बात है। कितना खाया? साथमें क्या मिलाया था?

तेरे कामकी कठिनाअीको मैं अच्छी तरह समझता हूं। भगवान तुझे निभा लेंगे और आवश्यक शक्ति भी देंगे।

बीमारीका कारण ढूंढ लिया है तो अब अिलाज भी कर ले।

मेरी भावनाके बारेमें तू पूछती है, अिससे कुछ लाभ नहीं होगा। क्योंकि कोअी अपनी भावनाका पृथक्करण पूरी तरह कर नहीं सकता।

जब तत्त्व व्यवहारमें आता न दिखे तब जान लो कि हमने तत्त्वको अच्छी तरह नहीं पहचाना है। शुद्ध तत्त्व हमारे व्यवहारमें अुतरना ही

---

१ दीवाली पर प्रतिपदाके दिन श्री नारणदास काकाने मुझे 'व्रत-विचार' और 'आश्रमवासियोंके प्रति' पुस्तकें भेट की थीं।

२ महाराष्ट्रके अेक खादी-कार्यकर्ताकी पत्नी अपनी बच्चीके साथ आश्रमके संस्कार लेने आअी थीं।

३ कमरके दर्दके अिलाजके लिअे खाया था। श्री रामदासभाअी गांधीकी पत्नी श्री निर्मलाबहनने मुझे अिसकी सिफारिश की थी।

चाहिये। पूरी तरह तो कोअी तत्त्व व्यवहारमे नही अुतारा जा सकता। परन्तु जो व्यवहार तत्त्वके निकट नही जाता वह अशुद्ध और त्याज्य है।

बापू

१००

२०-११-'३२

चि० प्रेमा,

अभी भी मेरे पत्र छोटे ही रहेगे। तेरे लम्बे हो तो अुनकी मुझे चिन्ता नही। मुझे तेरे वर्णन जरूर चाहिये। मै खबर तो दे ही नही सकता। मै विनोद करूगा या प्रेम करूगा। अुलाहना दूगा और देना आयेगा तो कभी कभी ज्ञान भी दे दूगा। परन्तु तुझे तो अपना हिसाब देना होगा, सुख-दु खकी बाते कहनी होगी।

रमाबहन[1]के बारेमे मै तुझे तग नही करना चाहता। तेरा वर्णन ही अैसा हे कि अुसमे से प्रेम निकाल सकना मुश्किल है। गनीमत यही है कि तेरे वचनोमे जितना कटाक्ष होता है अुतना तेरे कार्योमे नही आता। मेरे पास समय होता तो अिस पर बडा व्याख्यान दे देता। परन्तु तुझे हरिजनोने बचा लिया है, क्योकि अुन्होने मेरा सारा समय ले रखा है।

अमीना[2] खूब परेशान जान पडती है। अुनका दर्द पहचाना जा सके तो पहचानना। अुसे शाति दे सके तो देना।

मगलाका हाल वैसा ही है जैसा तूने लिखा है।

बापू

---

१ श्री रमाबहन श्री छगनलाल जोशीकी पत्नी। धीर अुनका लडका।

२ श्री अमीनाबहन श्री अिमामसाहबकी लडकी। अिमामसाहब आश्रमके अुपाध्यक्ष थे।

२७-११-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। जो सयमका मूल्य समझता है अुसे तो आहारके परिवर्तनमे मजा ही आता है। अखबारोमे किसने लिखाया कि आश्रममें जेलका भोजन शुरू किया गया है? यह वात सच होती तो कोअी हर्ज नही था। परन्तु हम तो दूध, घी वगैरा वहुतसी चीजे लेते है। फिर भी जेलका भोजन शुरू किया है, यह कैसे कहा जा सकता है? अिस गपकी जड ढूढ ली हो तो लिखना।

तेरी शिकायत सही है कि कठोर नियम भी मैं वनाता हू और विलासी मनुष्य आश्रममें आ पहुचते हैं अुसका कारण भी मैं हू। मैंने तो कहा है कि अुनका विरोव तुम सव कर सकते हो और शक्तिसे अधिक किसीको लेनेके लिअे ववे नही हो। मैं तो केवल सलाह ही दे सकता हू। अमल करना न करना केवल तुम लोगोके हाथमे है। अितना मुझे आवश्यक लगता है कि स्वय कडे नियमोका पालन करते हुअे भी कोअी अनियमित रहनेवाला व्यक्ति आ ही जाय, तो अुसे निभानेकी, अुसके प्रति अुदारता रखनेकी शक्ति हममें होनी चाहिये।

तेरी नसीहतको ध्यानमें रखूगा।

. का सारा किस्सा दु खद है। 'निग्रह किं करिष्यति?'

नारणदासके साथ वैठकर अिन्दूका विचार कर लेना।

वावूकी मुझे चिन्ता नही है। वह तो ठिकाने आ ही जायगा।

आज तो कह सकता हू कि जव आना हो तव तुम दोनों[1] आ जाना। कलकी राम जाने।

छोटी वडी जो भी प्रतिज्ञा ले अुसका पालन हम कर सकें, तो समझना चाहिये कि वह अीश्वरकी ही कृपा है।

लक्ष्मीके साथ वात करके देखना। अुसे विवाह तो नही करना है?

वापूके आशीर्वाद

---

१. पू० महात्माजीसे मुलाकात करनेके लिअे मैंने सुशीलाके साथ आनेकी माग की थी।

यरवडा मंदिर,
५-१२-'३२

चि० प्रेमा,

यह पत्र प्रार्थनाके बाद लिखता हूं। लम्बे पत्रकी तुझे आशा नहीं रखनी चाहिये। परन्तु तुझे तो लम्बे पत्र लिखने ही चाहिये। अुनमें से मुझे बहुत कुछ मिल जाता है। वह सब मुझे चाहिये।

तारादेवीका[1] क्या हाल है? क्या पंजाब जानेका विचार कर रही हैं?

अमीना जो कहे सो सुनना, सच तो यह है कि जो भी कोअी अपनी बात कहे अुसे सुनना चाहिये। जिम्मेदार आदमीको अैसा करना ही पड़ता है। अिस प्रकार शान्तिपूर्वक सुननेसे ही बहुत कुछ बातें निबट जाती हैं।

किसनके समाचार आते थे, पर अब अुसका तबादला हो जानेसे नहीं आ सकते। परन्तु वह मजेमें होगी। सुशीलाका पत्र साथमें है, अुसे भेज देना।

छारा[2] लोगोंमें तू, लक्ष्मीबहन[3] वगैरा क्यों नहीं जाती? यह सच है कि तुम्हें किसीको समय नहीं रहता। परन्तु थोड़े समयके लिअे कोअी काम छोड़कर भी जा सकती हो। वे लोग कितने हैं? दिनभर क्या करते हैं?

अुपवासके बारेमें नारणदासके पत्रमें लिखा है।

घुरधरका पत्र अब मुझे मिलना चाहिये। कृष्ण नायरका मेरे पास कोअी पत्र नहीं आया। व्रजकिशन[4]को लिखकर पुछवाना।

बापू

---

१ श्री प्यारेलालजीकी मां।

२ छारा लोग जरायम-पेशा (Criminal) कहलाते थे। अुस समय सरकारने छारोंकी अिच्छाके विरुद्ध अुनकी बस्ती आश्रमके पास बसाअी थी, अिसलिअे आश्रममें चोरियां बढ़ गअी थीं। रातको आश्रममें चारों ओर बारी बारीसे पहरा लगाना पड़ता था।

३ श्री पंडित खरेकी पत्नी।

४ श्री व्रजकिशन चांदीवाला थोड़े दिन आश्रममें रह गये थे। दिल्लीके कार्यकर्ता। आज भी वहीं हैं। कृष्ण नायरके मित्र।

१०३

यरवडा मदिर,
११-१२-'३२

चि० प्रेमा,

तेरे गलेकी गिल्टिया कट गअी होगी, पूरे वर्णनकी प्रतीक्षा कर रहा हू।

पतली राव अधिक अनुकूल पडे तो वही लेना। मेरा कहना अितना-ही है कि सवेरे राव ही लेनेसे दस्तकी दृष्टिसे लाभ हो सकता है। परन्तु अेक भी वातके लिअे मेरा आग्रह नही है। अुवाला हुआ साग लेनेकी आवश्यकता जान पडे तो वह लिया जाय। पानी भी धीरे धीरे पीनेमें लाभ जरूर है।

घुरघरको पूनिया भेजी होगी।

अिस मासके अन्तमे तेरी और सुशीलाकी राह देखूगा।

किसनको पत्र लिखे तव मेरे आशीर्वाद लिख भेजना।

लक्ष्मीका मन अच्छी तरह जान लेना। पद्माको समझनेका प्रयत्न करना।

क्या शान्ता आअी है? अुससे सव जान लेना। मुझे यह तौर-तरीका पसन्द नही आया। मै अुसे लिख रहा हू।

मेरे पत्र कितने ही छोटे क्यो न हो, तो भी तुझे तो पुराण भेजते ही रहना है।

वापू

१०४

[गलेकी गिल्टिया कटवानेकी सिफारिश पू० महात्माजी कर रहे थे। ऑपरेशन करनेसे गला ज्यादा विगडेगा, अैसी मान्यता होनेसे वहुत दिन तक मैने अिस ओर ध्यान नही दिया। वादमें पू० महात्माजीका तार मिला तो मैने अस्पताल जाकर गिल्टिया कटवा ली। दो दिन वहा रहकर वापस आ गअी और फिर काममे लग गअी। ऑपरेशनके समयका और अस्पतालके अनुभवोका वर्णन पू० महात्माजीको मैने लिख भेजा था।]

१७-१२-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिल गया। अस्पतालमें जबरन् आओगी तो अिसमें मैं दोष मानूंगा। अस्पतालमें पड़े पड़े भी सेवा हो सकती है, यह ज्ञान तो है न? कम बोलना। अभी दूध और फलों पर ही रहना। बीमार आदमी चावल नहीं खा सकता, यह नियम कहांसे निकाला? जल्दबाजी करके बीमार न पड़ना।

बापू

१०५

[पूज्य महात्माजीका यह मत था कि पत्र खुले होने चाहियें, आश्रममें किसीका पत्र कोओी पढ़े तो भी कोओी हर्ज नहीं होना चाहिये। मुझे वह पसन्द नहीं था। मैं पढ़ती थी तभीसे अैसा मानने लगी थी कि पत्रकी विशेष पवित्रता होती है। अिसलिअे अेक व्यक्तिके पत्र दूसरे लोग अुसकी अिजाजतके बिना नहीं पढ़ सकते। अिस नियमका मैंने आज तक पालन किया है। महात्माजीका दफ्तर अनेक लोगोंके हाथमें रहता था। अिसलिअे कुतूहलके लिअे भी पत्र पढ़ लिये जाते थे, यह वस्तुस्थिति थी। अंग्रेजी शब्दका प्रयोग करें तो secrecy (गुप्तता) नहीं परन्तु privacy (खानगीपन) तो जरूरी है और अुसका आग्रह रखनेमें दोष नहीं है, अैसी मेरी मान्यता थी। आज भी है।

अुन दिनों श्री छगनलालभाओी जोशीको जेलमें पूज्य महात्माजीके पास ही रखा गया था। आश्रमके अेक परिवारकी अेक युवा लड़कीको प्लूरिसी हो गओी थी। वह मेरे पास अंग्रेजी पढ़ने आती थी। वह बीमार पड़ी तब कभी कभी समय निकालकर मैं अुसके पास बैठने जाती थी। बात बातमें अुसने मुझे बताया कि बीमारीमें अकेलापन अुसे अखरता है। अुसके हालचाल पूछनेके लिअे अुसके पास कोओी भी नहीं जाता था। अुसका बड़ा भाओी भी, जो आश्रमका अेक होनहार कार्यकर्ता गिना जाता था, अुसकी अुपेक्षा करता था, अैसी मेरे मन पर छाप पड़ी थी। अिसलिअे पत्रमें पूज्य महात्माजीको यह किस्सा मैंने लिख भेजा था।]

यरवडा मंदिर,
१८-१२-'३२

चि० प्रेमा,

बीचमे तुझे पत्र लिखे तो है। यह साप्ताहिक पत्रका अुत्तर है।

छगनलालको तेरा पत्र न पढने देनेकी तेरी निषेध-आज्ञाको मैंने स्वीकार किया है। निषेध-आज्ञा मुझे पढानी ही पडी। मै अैसा मानता हू कि अुनके बारेमें तूने जो लिखा अुसे वे न जानें, यह तो तू भी नही चाहती होगी। अितना पढाकर बाकी भाग न पढनेके लिअे अुनसे कहा। लेकिन तेरी आज्ञा मुझे अच्छी नही लगी। आश्रमका अेक व्यक्ति आश्रमके ही दूसरे व्यक्तिसे कैसे कुछ छिपा सकता है? छोटी बालिका अैसी अिच्छा रखे, बडी अुमरके नासमझ लोग अैसा चाहे, यह भी समझमें आ सकता है। लेकिन तेरे पास छिपानेका क्या हो सकता है? दूसरे लोग तेरा पत्र पढें, अिससे अुसकी पवित्रता कम नही होती परन्तु बढती है। तेरे विचार दुनिया जाने अिसमें तुझे सकोच होना ही नही चाहिये। हमें छिपे विचार करनेका अधिकार नही है। अैसी आदत डालनेसे हमारे विचारो पर स्वभावत अकुश लग जाता है। मनुष्यमात्र अीश्वरके प्रतिनिधि है। अीश्वर तो हमारे सब विचार जानता ही है। लेकिन अुसे हम प्रत्यक्ष नही देखते, अिसलिअे हम निश्चित रूपसे नही कह सकते कि वह हमारे विचार जानता है। लेकिन अगर मनुष्यको अुसके प्रतिनिधिके रूपमें हम पहचानें, तो हमारे विचार वह जाने अिसमें हमें सकोच नही होना चाहिये। और प्रतिनिधि प्रत्यक्ष है अिसलिअे हम अपने विचारो पर सहज ही नियत्रण रख सकते हैं। मै चाहता हू कि तू ज्ञानपूर्वक अपनी निषेध-आज्ञा वापस ले ले। (मुझे आशा थी कि दायें हाथसे लिख सकूगा। लेकिन देखता हू कि मुझे अिस हाथका अुपयोग नही करना चाहिये। अिसलिअे जितना सोचा है अुतना शायद नही लिख सकूगा।) रमाबहनके लिअे तेरी मरजी हो वह तू लिख सकती है। तू जो भी लिखेगी वह द्वेषभावसे नही लिखेगी, अितना तो वह जानती ही है। अब तू जो चाहे सो लिखना। जो लिखेगी अुस पर मैं अमल करूगा।

मालूम होता है कि तू अस्पतालसे जल्दबाजी करके आओी है। डॉक्टरकी हिदायतोंका तू पूरी तरह पालन करती हो तो कोओी दिक्कत नहीं होनी चाहिये। ऑपरेशनका सोचा हुआ फल निकले तब तो बहुत ही अच्छा हो।

का किस्सा दु:खद है। का पक्ष जाने बिना अुनका दोष निकालनेके लिअे मैं तैयार नही हू। स्वच्छ है, निर्दय नहीं है। यह अपना धर्म समझता है। मेरे पास ज्यादा समय होता तो ज्यादा समझाता। तुझसे जितनी हो सके अुतनी तू की सेवा करना। अगर अकेली पड गअी है तो अिसमें अुसका दोष कम नही है। परन्तु अिस दोषके कारण अुसकी सेवामें कमी नही होनी चाहिये। में गुण भी बहुत है।

अिंदु तो बेखबर है ही। वह भोला और खिलाडी है। मैंने अुनके पिताको लिखा है कि अुसे अपने पास ही रखें।

दूध और फलको औषधि समझकर अभी लेते रहना। राब वगैरा अभी मत लेना। चावलकी अिच्छा हो तो खा सकती है। डॉक्टरको दिखाती रहना।

सुशीलाका पत्र अिसके साथ है।

बापू

१०६

[श्री छगनलालभाओी पर अुस समय मैंने जो दोष लगाये थे, वे आज तो पूरे याद नही आते। अेक बात याद आती है। मैंने पूज्य महात्माजीको लिखा था, "आपको मैं जो पत्र लिखती हू अुनमें अपना हृदय अुडेलती हू। साथ ही, आश्रम और बाहरके व्यक्तियोंके बारेमें निजी राय भी लिखती हू। अुसमें बहुतसे किस्से भी आ जाते हैं। ये सब व्यक्तिगत माने जाने चाहिये। विचार दुनियाके सामने रखे जा सकते हैं, व्यक्तिगत मत नही। जब रखे जाय तब जिनके लिअे वे रखे गये हैं अुसीको अुन्हें पढनेका अधिकार होता है। श्री छगनलालभाओीको अनेक बातें करनेकी आदत है। अुनके मित्रोंका क्षेत्र भी विस्तृत है। मेरे पत्रोंमें दी गअी बातोंकी वे बाहर चर्चा करें, तो गलतफहमी पैदा हुअे बिना नहीं

रह सकती।" मेरी दलीलके समर्थनमें मैंने गीताजीके अठारहवें अध्यायका 'अिद ते नातपस्काय' श्लोक अुद्धृत किया था।

अुस समयकी मेरी अुमरमें मेरे रागद्वेष तीव्र होनेके कारण जब मैं विकारोंके वशीभूत हो जाती थी, तब मेरी भाषामें कभी कभी संयमकी मर्यादा भंग हो जाती थी। अिस पत्रमें भी अैसा हुआ था, अिसलिअे पूज्य महात्माजी नाराज हुअे।

यह पत्र मुझे मिलनेसे पहले मैं पूना जाकर पूज्य महात्माजीसे मिल आअी थी। आश्रम लौटने पर मुझे यह पत्र मिला। और मेरा मिजाज हाथसे चला गया। मुझे लगा, "दूसरे लोग पूज्य महात्माजीसे मेरे विरुद्ध शिकायत करते हैं तब वे मुझे डांटते हैं। लेकिन मैं किसीके विरुद्ध अकारण शिकायत नहीं करती हूं तब भी मुझे डांट पड़ती है। किसीके बारेमें शिकायत करनेका मुझे कोअी अुत्साह तो है नहीं। यहां काम करते हुअे रास्तेमें जो अड़चनें आती हैं, तरह तरहके लोगोंके विशेष स्वभावोंका जो अनुभव होता है, अुसे महात्माजी कैसे जान सकते हैं? अुनके पास तो सब कोअी पांडव — साधु बनकर ही जाते हैं।" मेरी यह दलील मूर्खता-पूर्ण थी, अुसमें अविवेक था, यह मैं अब समझ रही हूं। अुस समय तो मैं फिरसे क्रोधके कारण रूठ गअी थी। मैंने अुन्हें लिखा, "मेरे भीतर जहर है अैसा आप कहते हैं, तो आजके बाद मैं पत्र ही नहीं लिखूंगी। मेरा जहर आपको किसलिअे पिलाअूं?"]

य० मंदिर,
२५-१२-'३२

चि० प्रेमा,

तू मिलने ही वाली है, अिसलिअे अिस बार पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं है। तूने शुक्रवारसे पहले मिलनेका जवाब मांगा, लेकिन तेरे लगाये हुअे प्रतिबंधके कारण तेरा पत्र मैं तुरंत पढ ही नहीं सका। छगनलाल अुसे पढ नहीं सकता था, अिसलिअे घूमते समय अुसे सुनना संभव नहीं था। बादमें मैं काममें लग जाता था। तूने खुद होकर असुविधा मोल ली है और मुझे असुविधामें डाला है। छगनलालके बारेमें लिखा तेरा पुराण अुसे पढाया है। अुसे तो तू छिपाना नहीं चाहती न? मैं तो हरगिज

नहीं छिपा सकता। लेकिन अुनमें कितना जहर है! छगनलालको अिन दोषोंका ज्ञान ही नहीं है। तेरे लगाये हुअे दोष अगर अुनमें होते, तो वह कभी आश्रममें रह ही नहीं सकता था। और सुरेन्द्र?[1] अुनके जैसे स्वच्छ मनुष्य आश्रममें शायद ही कोअी होंगे। साधुभावसे कही हुअी बातको तू आज तक संग्रह करके रख सकी! अैसे जहरकी तेरे भीतर मैंने कभी कल्पना नहीं की थी। तेरे हृदयके अुद्गार तू लिखे यह मुझे प्रिय है। लेकिन अैसे विचार तू किसीके बारेमें भी अपने मनमें संग्रह करके रख सकती है, यह मेरे लिअे अत्यन्त दुःखदायी है। तेरा धर्म अिस महादोषके लिअे भगवानसे क्षमा मांगकर शुद्ध होना है। तू शुद्ध होना और मेरा दुःख दूर करना।

बापू

१०७

यरवडा मन्दिर,
१-१-'३३

चि० प्रेमा,

तू और सुशीला आ गअी यह अच्छा हुआ। आज तुझे लम्बा पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं है। तेरे अनुभवोंकी राह देखूंगा।

धुरन्धरकी तबीयतके समाचार लिखना। अुसे पत्र लिखनेके लिअे कहना।

तेरी कमर (के दर्द) का कारण ढूंढ निकालना। हरिभाअीसे तो मिलना ही। गिल्टियां कट गअी अिनका व्यर्थ शोक मत कर। बहुत बोलकर गला मत बिगाड़ना। अूंची आवाजसे बोलनेकी आदत ही छोड़ देना।

बापू

---

१ आश्रममें नैष्ठिक ब्रह्मचारीके रूपमें तीन व्यक्तियोंका विशेष आदर था। अुनमें से अेक सुरेन्द्रजी थे। दूसरे दो श्री बालकोबाजी और श्री छोटेलालभाअी। सुरेन्द्रजी प्रार्थना-भूमि पर पेड़के नीचे रहते, अुपनिषद्के श्लोक गाते और चर्मालय चलाते थे। व्रतीके रूपमें अुन्होंने मान्यता प्राप्त की थी। सन् १९३४ के बाद वे खेड़ा जिलेमें बोरियावीमें रहकर सेवा-कार्य करते थे। आजकल बोधगयामें समन्वयाश्रमके संचालक हैं।

१०८

यरवडा मन्दिर,
५-१-'३३

चि० प्रेमा,

तेरे दोनो पत्र मिले। आज मुझसे लम्बे अुत्तरकी आशा मत रखना। दाया हाथ थक गया है। वायेकी गति चार गुनी कम तो है ही। अिसके सिवा, अब 'मुझे 'हरिजन' के लिअे हाथ (दोनो) और समय बचाना पडेगा। फिर भी तुझसे तो मै पूर्ण पत्रकी आशा रखूगा ही। सब बहनोंके समाचार तो तू ही देती है।

तेरे गलेके बारेमें मैंने जो लिखा अुस पर तूने अमल किया होगा।

तू कामकी चिंता छोडकर शान्तिसे काम करना सीख जाय, तो तेरा शरीर दुर्बल न हो। मै अच्छी तरह जानता हू कि यह कहना जितना सरल है, करना अुतना ही कठिन है। फिर भी कभी कभी अैसे वचन गले अुतर जाते हैं और अुनका अमल होता है, अैसा मैंने अनुभव किया है।

लक्ष्मीके बारेमे जाच करती रहना।

नर्मदाके क्या हाल हैं?

धुरन्धरका शरीर कैसा रहता है?

किसनके क्या समाचार हैं?

बापू

१०९

[पहले अेक बार मैं पूज्य महात्माजीसे रूठ गअी थी तब मुझे अुसके लिअे संताप हुआ था, पूज्य महात्माजीको मैंने क्लेश पहुचाया अुसका दुःख हुआ था और मैं अपने अूपर ज्यादा चिढ गअी थी। यह अनुभव भी बादमें मैंने अुन्हे बता दिया था। अुसीको लक्ष्य करके महात्माजीने मुझे अुस घटनाकी याद दिलाअी है।

बादमें तो मैंने रूठना छोड दिया। मेरा मन ही मुझे अिसके लिअे कचोटने लगा।]

७-१-'३३

चि० प्रेमा,

तू जैसी क्रोधी है वैसी ही रूठनेवाली भी है। पर पिताके साथ पुत्री कितने दिन रूठ सकती है? पिताका प्रेम अुसका गर्व अुतार देता है। तू कब तक रूठनेवाली है? शायद तू पत्र लिखकर ही पछताजी होगी। तू जानती है कि तेरी चिट्ठीमें तूने जले पर नमक छिड़का है? लेकिन तू अपने आपको जितना पहचानती है, अुसके बनिस्बत मैं तुझे शायद ज्यादा पहचानता हूं। मुझे पहले तो बहुत दुःख हुआ। फिर तुरन्त हंसा। तेरे पत्रमें तू जितनी बुरी दिखती है अुतनी बुरी तू है नहीं। मैंने तुरन्त निश्चय किया कि जैसे पहले तू रूठकर दुःखी हुअी थी वैसे ही अब भी पछताकर माफी मांगेगी। लेकिन मेरा अनुमान गलत हो तो अब माफी मांग और तेरे जीमें आवे वैसे पत्र लिख। मेरा अुलाहना तो मनमें जहर रखनेके बारेमें है। जब तक तेरे मनमें जहर हो तब तक अुसे मेरे सामने नहीं अुंडेलेगी तो कहां अुंडेलेगी? मैं तेरे कान न पकड़ूं तो और कौन पकड़ेगा? जहर है तब तक तो मुझे पीने ही देना। तेरी दृष्टिमें शायद वह जहर न हो। अपने स्वभावको कोअी शायद ही पहचानता है। तू पहचान और जाग।

बापू

११०

य० म०
८-१-'३३

चि० प्रेमा,

बिलकुल पागल मत बन।

तेरा दोहरा धर्म है यह मत भूलना। अेक तेरा हृदय अुंडेलनेका। अिसका तो यंत्रवत् पालन नहीं हो सकता। स्रोत सूख गया हो तो तू क्या करेगी? दूसरा, तेरे कार्यके बारेमें हिसाब देनेका। यह हिसाब तो यंत्रवत् दिया ही जा सकता है। अितना तो करना।

बापू

१११

१५-१-'३३

चि० प्रेमा,

तेरा रूठना बताता है कि तू बहुत नादान है। मेरा कुछ कहना तू सहन न करे, तो दूसरोंका तो सुनने भी क्यों लगी? मेरे अूपर तू जो छाप डाले अुसके लिअे अुपकार मानना तो दूर, अुलटे क्रोध करती है। तेरा धर्म तो मेरे आक्षेपको न समझ सकी हो तो अुसे मुझसे समझनेका है, मेरे साथ झगडनेका नही। यहा तो तेरी शिक्षा और बुद्धिमानी पानीमें गयी मालूम होती है। तेरे रूठनेके पीछे तेरा महा अभिमान है, यह भी तू नही देख सकती। यह निश्चित मानना कि यह स्वतत्रता नही, परन्तु स्वेच्छाचार है। मैं चाहता हू कि तू अपनी आखें खोल, मेरे प्रेमको समझ और तेरे बारेमें मेरी परीक्षाको गलत सिद्ध मत कर। यह समय तेरे रूठनेका नही है, बल्कि मुझे दु ख देनेके लिअे पछताने और रोनेका है। तुझे अितना भी भान नही है कि मैं तुझे कडवे वचन कहूगा तो वे तेरे भलेके लिअे ही होगे? अैसा करनेमें मेरी भूल हो रही हो तो नम्रतासे भूल बताना तेरा फर्ज है। तेरी निर्दोषता पर तुझे विश्वास हो, तो अुसे मेरे सामने सिद्ध करनेकी श्रद्धा तुझमें होनी चाहिये। अिसके बजाय रूठकर तू अपने दोषको दृढ करती मालूम होती है। तुझसे अैसी आशा मैंने कभी नही रखी थी। जाग और रूठनेके लिअे माफी माग।

बापूके आशीर्वाद

११२

२२-१-'३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आने पर मैं चिन्तामुक्त हुआ हू। चिन्ता भी कल्पनाकी प्रजा है। पत्र न मिलनेसे चिन्ता क्यो? और मिला तो मुक्ति क्यो? अिसका अुत्तर तू मागे तो मैं नही दे सकता, या दू तो यह कहूगा, "यह मेरा मोह है।"

तू मुझे पागलपनमें कुछ लिखे अुसमे मै नहीं अकुलाता। लेकिन मुझे तेरी जो भूल मालूम हो अुसे तेरे सामने मै न रखू, तो मै तेरा हितेच्छु, साथी, मित्र या पिता नही कहला सकता। मुझे विचित्र तो यह लगता है कि मै जो बात शुद्ध भावसे कहता हू, अुसे तू लेती कैसे है? मेरा अुपकार क्यो नही मानती? हमारे बारेमें किसीके मनमें जो लगे वह यदि हमसे कहे, तो हम अुनका अुपकार नहीं मानेंगे? मैने तो यह पाठ बचपनसे सीखा है। अितना तो तू मुझसे सीख ही ले। मेरी परीक्षा गलत होगी तो मै दयाका पात्र बनूगा, अगर सच्ची होगी तो तेरा भला होगा। तुझे तो दोनो ओरसे लाभ ही होगा, क्योंकि जिसके साथ तेरा पाला पडा है, अुसे तू ज्यादा अच्छी तरह जान सकेगी। मै यह चाहता हू कि तुम सब मेरे दोषोंको, मेरी कमजोरीको पूरी तरह जानो और अुन्हे बतानेकी मेरी हमेशा कोशिश रहती है। मै अपने विचारोंको भी ढकना नही चाहता। अुन्हे लिखनेकी मेरेमे शक्ति हो, तो मै अुन्हे जरूर लिख डालू। लेकिन यह सभव नही है, अिसे मै जानता हू। मै नही मानता कि विचारोंकी गतिको पहुच सके अैसी कोअी शक्ति अिस जगतमें हो सकती है। कोअी अुसे नापनेका यत्र खोजे तो पता चले। अितना लिखते लिखते तो मेरे विचार ब्रह्माडकी पाच-सात प्रदक्षिणा कर आये।

तू स्वीकार करेगी कि हमारे भीतर जहर है या नही, जिसकी परीक्षा हम स्वय अचूक रूपमें कर सकते है अैसा नियम नहीं है। जहरका सग्रह करनेकी हमारी अिच्छा भले न हो, लेकिन अुससे यह नही कहा जा सकता कि हमारे भीतर जहर नहीं है। वह हमारे न चाहने पर भी हम पर सवारी करता है। जिसमे क्रोध है अुसमें जहर तो है ही, पर बात शायद तू स्वीकार न करे। यह स्वीकार न करे तो कहना होगा कि जहरका हम दोनो अेक ही अर्थ नही करते। बाने मुझे बहुत बार जहरीला माना है, अैसा मुझे याद है। मै अुसके आक्षेपसे अिनकार कैसे कर सकता हू? मै अपने वचनोंमे जहर न मानू अिससे क्या? अुसे मेरे वचन लगे यही मेरे लिअे काफी होना चाहिये। जो वचन पूर्णत सत्य और अहिंसा-मय है, वे कभी किसीको चुभते नहीं। गुस्से चुभनेवाले मालूम हो पर

अलग वात है, लेकिन अैसा अनुभव करनेवाला ही वादमें अुनके अमृतको स्वीकार करता है।

मैं चाहता हू कि तू सव वातोंमें अपनी परीक्षिका न वन। यह हो सकता है कि दूसरे लोग तेरी ज्यादा अच्छी परीक्षा करे। जहरका प्रकरण मैं यही खतम करता हू।

तेरे आश्रम छोडनेका प्रश्न अभी अप्रस्तुत है। मैं छूट जाअू और आश्रममें आकर रहने लगू तभी यह प्रश्न अुठ सकता है, अैसा तेरे पत्र परसे मैं समझा हू। नीतिकी दृष्टिसे तो अुसी समय अुठ सकता है। मैं आश्रममें न रह सकू तव तक तो आश्रमकी दृष्टिसे जेलमें होनेके वरावर ही माना जाअूगा। और, मैंने जव आश्रमसे विदा ली थी तव तुम जो वहा थे [वे] मैं वापस आअू तव तक वहा रहनेके लिअे अुनी समय वध चुके थे। अगर मेरा यह मत सही हो तो मेरे वहा रहने आनेके वाद क्या करना ठीक होगा, अुसका विचार अभी करना शक्ति और समयका दुर्व्यय है।

आश्रमके वारेमें जो समाचार तूने दिये वे मेरे लिअे वहुत अुपयोगी है। लक्ष्मीके वारेमें नारणदाससे वात कर लेना, तुम दोनों विवाह कर देनेके निर्णय पर पहुचो तो विवाह कर देना चाहिये। वह वेचैन रहती हो तो भी गहराअीमें अुसकी विवाह करनेकी ही अिच्छा होना सम्भव है। अव वह विवाहके योग्य तो हो ही गअी है। और विवाह अुसे करना ही है। मेरे छूटनेके मोहको विलकुल मिथ्या मानना चाहिये। लक्ष्मीको तू अच्छी तरह समझ लेना, अुसकी 'हा' की राह देखने तक रुकना जरूरी नही है। अिस सववमें लक्ष्मीवहन और दुर्गावहन[1]की सलाह लेना ठीक लगता है। वे तेरी अपेक्षा अिस वातको ज्यादा समझेगी। विवाह करनेवालीके मनमें क्या चलता है, यह तेरे अनुभवसे वाहर है, अैसा तुझसे मैं समझा हू। अर्थात् तुझे विवाह करनेकी अिच्छा भी नही हुअी, नही होती। अैसी कुछ कुमारियोको मैं जानता हू। दूसरी प्रयत्नपूर्वक कुमारी रहती है। वे विवाह करनेके अर्थको जानती है।

---

१ श्री दुर्गावहन। महादेवभाअीकी पत्नी।

तेरी तबीयतके बारेमें तो क्या कहूं? घीकी आवश्यकता तो लगती ही है। बाहर गओी कि तेरा वजन बढ़ा, आश्रममें आओी कि प्राप्त किया हुआ खोया। यह दोष तुझे दूर करना ही चाहिये। दोष कैसे दूर हो यह तो तू ही जान सकती है। बोलनेमें तो अब कोओी कठिनाओी बिलकुल नहीं आती होगी।

मैं किसीको अपने जालमें फसाना नहीं चाहता। सब मेरे ही पुतले बन जाय, तो मेरा क्या हाल हो? अैसे प्रयत्नको भी मैं तो बेकार समझूंगा। लेकिन शायद मैं किसीको फसानेका प्रयत्न भी करता होअूं, तो तुझे क्यों आत्म-विश्वास खोना चाहिये? तू तो सावधान है ही, अैसा तेरे पत्रोंसे साबित होता है। हां, अितना सच है कि तुझे मेरे जालमें फस जानेका डर हमेशा रहा करता है। यह बुरा चिह्न है। निश्चय करनेके बाद डर किसलिअे? अथवा क्या यह संभव नहीं है कि 'फसना' शब्दका अर्थ भी हम अेक न करते हों?

बापू

११३

२९-१-'३३

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र पागलपन भरे हों या जैसे भी हों, लेकिन मुझे अुनकी जरूरत है। अिसलिअे तू अेक भी सप्ताह मुझे पत्रके बिना मत रखना। अब तू कैसी है?

बापू

११४

१-२-'३३

चि० प्रेमा,

तुझे गलेके बारेमें चेतनेकी जरूरत है। मैंने तो पहलेसे ही चेताया था कि गलेका तुरन्त अुपयोग तुझे नहीं करना चाहिये। जब मेहरबानी करके डॉ० हरिभाअीको गला दिखा दे और वे कहें अुसके अनुसार चलकर अुसे सुधार ले। अुनकी अुपेक्षा करके दुःख मोल न ले। जिनमें

हठकी गुंजाअिश नही है। मेरा हुक्म मानना तेरा धर्म है। सरदी जडमे जानी चाहिये। गिल्टिया सबसे पहले तेरी ही नही निकली है। हजारोंने निकलवायी है और अुन्होने लाभ भी अुठाया है। तेरे भाग्यमे नुकसान हो तो दैव जाने। परन्तु हानि सिद्ध करनेसे पहले डॉक्टर जो कहे अुस पर अमल करके तुझे बताना चाहिये। तुझे गला फाडकर बोलना तो बन्द कर ही देना चाहिये। पूर्ण मौन अुत्तम वस्तु है। परन्तु डॉक्टरको दिखाकर मुझे लिखना कि वे क्या कहते है।

बापू

११५

१३-२-'३३

चि० प्रेमा,

यह मौनवारका प्रातःकाल है। तीन बजे अुठकर तेरा पत्र हाथमें लिया है। यह पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा है। मुझे जो चाहिये सो सब तूने लिखा है। मैंने स्त्रियोसे जो कुछ पानेकी कल्पना की है वह सब अिसमें है। तूने जो बातें लिखी है अुनमें कोअी आडबर नही है, अूपरसे वे छोटी मालूम होती है, लेकिन वैज्ञानिकके लिअे वे अत्यन्त अुपयोगी है। अैसे तटस्थ पत्रसे मुझे ज्ञान मिलता है और मै तेरा और दूसरोका मार्गदर्शन कर सकता हू।

सचमुच आश्रम धर्मशाला है। धर्मशालाके दो अर्थ है दानमें दिया हुआ निवासस्थान, धर्मको जाननेका और जानकर अुसके पालनका प्रयत्न करनेका स्थान। अिस दूसरे अर्थमें आश्रम धर्मशाला है। परन्तु सत्य ही धर्म है, अिसलिअे आश्रम सत्यकी खोज करके अुमके अनुसार चलनेका प्रयत्न करनेकी यानी सत्यका आग्रह रखनेकी शाला अर्थात् सत्याग्रह आश्रम है।

सत्यकी खोज करते हुअे जीवमात्रके साथ अैक्य साधना है। अिस-लिअे आश्रम अेक विशाल बनता जा रहा कुटुम्ब है। फिर भी वह अिससे अधिक है, क्योंकि वह धर्मके लिअे है, धर्म अुनके लिअे नही

है। अिसके अलावा, वह शिक्षालय है और नहीं भी है, क्योंकि वह कुटुम्ब है अिसलिअे सामान्य शिक्षाके वाह्य नियम अुस पर जडभरतकी तरह लागू नहीं किये जा सकते। नियमकी आत्माकी रक्षाके लिअे नियमके देहका — वाह्य स्वरूपका त्याग करना पडता है।

अब यह बात जरा विस्तारसे समझाता हू। लक्ष्मीके पालन-पोषणमें हमारी, तेरी परीक्षा है। कुटुम्बके बच्चोंके बारेमें हम क्या करते है? तेरी सगी बहनके बारेमें तू क्या करती है? लक्ष्मी नियमका पालन न करे, नियम न जाने, अिसमें दोप मेरा है, बादमें तेरा है। बीचके और लोगोको मैं छोड देता हू, नारणदासको भी छोड देता हू, क्योंकि अुसे प्रदककें लिअे जिम्मेदार मानकर अुससे अुनके धर्मका पालन नहीं कराया जा सकता। वह काम ही स्त्रीका है। और अुनमें भी जिसके हाथमें वह आया हो अुसका अधिक है। मेरा अपराध पहला है, क्योंकि (आश्रमकी) कल्पनाका पिता मैं हू और माता भी मैं हू। पिताके धर्मका तो मैंने पालन किया, परन्तु माताके धर्मका पालन नहीं किया, क्योंकि मैं यहा वहा फिरता रहा। अिसलिअे शायद मुझे लक्ष्मीको रखना ही नहीं चाहिये था। परन्तु मैं कौन? अीश्वरका दास। मैं लक्ष्मीको ढूढने नहीं गया था। अुसे अीश्वरने भेजा। वही अुसकी रक्षा करेगा। अुसे सभालनेवाली पहले बा, बादमें सतोक, फिर गगाबहन और अब तू है। तुममें से किसीने अुसे मागा नहीं था। समय और परिस्थितिवश वह तुम लोगोंके हाथोंमें आअी। अब तुझे जो करने सो कर। जहा पूछना अुचित हो वहा मुझे पूछ। थकना नहीं, निराश न होना, श्रद्धा रखना और अुस पर प्रेम अुडेलना। अन्तमें अिसका हल अीश्वर निकालेगा। वह हरिजनोंकी प्रतिनिधि बनकर हमसे ऋण चुकाने आअी है। वह अधूरी और आलसी है, अिसका पाप तेरे, मेरे और सवर्ण हिन्दुओं पर है। जैसा किया वैसा भरे। अुसका विवाह करनेकी व्यवस्था कर रहा हू। मारुतिके बारेमें लक्ष्मीदासने पुछवाया है। दूधाभाअीको भी लिखा है।

दूसरी लडकिया और लडके आते जा रहे हैं, अिनसे घबराना मत। जितने नियमोंका पालन वे करे अुतना ही लाभ समझना। जब तक लगन

व्यवहार सहन हो तब तक अुन्हे रहने दे। सहन न हो तब छुट्टी दे दे। धर्मशालामें किसीका मुकाम स्थायी नही होता। कुटुम्बीजन भी स्थायी रूपसे नही रहते। जो आश्रमके चौखटेमें समायेंगे वे रहेगे। जो नही समायेंगे वे चले जायेंगे। अिसका हर्ष-शोक क्या? फिर, अभी तो हम और कुछ कर भी नही सकते। जहा तक शक्ति है वहा तक जो चला आये और जिस पर हमारी आख जरा जम जाय अुसका सग्रह कर ले। बहुतसे तो अपने आप ही भाग जायगे। हमारे नियम ही बहुतोको भगा देंगे। जो आयेगा अुसे मेहनत तो करनी ही होगी, पाखाने साफ करने होगे। भोजन दवाके तौर पर खाना होगा। वहा गुड भी नही मिलता और गेहू भी जब चाहिये तब नही मिलते। आश्रम गरीबो, कगालो और भूखो मरनेवाले लोगोका प्रतिनिधि है, यह हम रोज साबित करते रहे तो सदा सुरक्षित और सुखी रहेगे। अिसलिअे आश्रममे रोज सादगी बढनी चाहिये, नियमोका पालन रोज कडा होना चाहिये। अग्नि अपने स्वरूपमें रहे तो जो जीव अुसमें निभ न सके वे रह ही नही सकते। यह अग्निका दोष नही परन्तु गुण है। अिसी तरह हम स्वय ही अपने स्वरूपमें नही रहते, अिसलिअे सारी मुसीबतें पैदा होती हैं। सादगी वगैराकी कडाअीकी जो बात लिख रहा हू वह हमारे ही लिअे है। हममें अिनकी मात्रा रोज बढनी चाहिये। हमने अपनी रक्षाका मार्ग हमारे अतरमें ढूढा है, बाहर नही। और हम यानी आश्रममें समझ-बूझकर रहनेवाले लोग। अर्थात् मैं, तू और प्रत्येक व्यक्ति। सब आश्रमवासी जो नियम पाले वही मैं पालू यह बात ठीक नही है। मुझसे जिन नियमोका अधिकसे अधिक पालन हो सके, अुनका पालन मुझे तो करना ही चाहिये। अिसमें आश्रमकी अुन्नतिकी कुजी है। दूसरेके प्रति अुदारता रखनी चाहिये, अपने प्रति कृपणता। अैसा करते हुअे भी हम अपने प्रति मुश्किलसे ही किंचित् विवेकसे बरतेंगे। क्योकि बहुत बार दूसरोंके प्रति दिखाअी जानेवाली अुदारता सच्ची अुदारता नही होती। और अपने प्रति दिखाअी जानेवाली कृपणताका भासमात्र होना बहुत सम्भव है।

लडकियोंके लिअे आदर्श अखड ब्रह्मचर्यका होना चाहिये, अुनीमें आदर्श विवाह समाया हुआ है। विवाहकी तालीम देनेकी जरूरत नही

होती। यह सत्रव देहधारीके स्वभावमें ही रहता है। अिस स्वभावको कुछ नियंत्रणमें रखनेके लिअे विवाह-विधिकी रचना हुअी। अिस स्वभाव पर पूर्ण अंकुश ब्रह्मचर्य है। जो पूर्ण अंकुशका पालन करेगी, वह विवाह-रूपी मर्यादित अंकुशका तो पालन करेगी ही। परन्तु विवाह जिसका पहलेसे ही आदर्श बना हुआ है, वह विवाहका स्वरूप भी नहीं समझेगी। विकारोंके लिअे तालीम कैसी? वे तो अपने आप फूट निकलेंगे। परन्तु जो लडकी ब्रह्मचारिणी है अुसे घरकी व्यवस्था चलानेका ज्ञान जरूर प्राप्त करना होगा। शिशु-पालनका ज्ञान लेना ही चाहिये। वह गुफामें बैठकर कुमारी नहीं मानी जा सकती। कुमारी सारे जगतसे विवाह करती है, सारे जगतकी माता बनती है, पुत्री बनती है, सारी दुनियाका कारबार चलाने लायक बनती है। भले ही अैसी कोअी कुमारी पैदा न हुअी हो। परन्तु आदर्श तो यही है। अिसलिअे शिक्षा सबके लिअे अेक-सी ही होगी। मुझे लगता है कि मैंने यह स्पष्ट कर दिया है। लेकिन न हुआ हो तो फिरसे स्पष्ट करा लेना।

अिससे यह स्पष्ट हो जाना चाहिये कि अुस मुसलमान बहनके बारेमे हमारा क्या कर्तव्य है।

लडकियोंको जो 'फिट' आते हैं अुनकी जड हमारा अध्यापन है। यदि हम जरा भी ठीकसे आगे बढे हों, तो नौजवानोंकी हस्ती हमें भयंकर नहीं लगेगी। परन्तु जहा खतरा मालूम हो वहा नौजवानोंको छुट्टी दे देनी चाहिये। नयोंको लेना बन्द करना हो तो किया जा सकता है।

मेरी सारी आशायें नारणदासमें समाअी हुअी हैं। मेरी कल्पनाका नारणदास ही आश्रमका मंत्री हो, तो सब कुशल ही समझना चाहिये। अुसके विषयमें मेरी श्रद्धा बढती जा रही है। वह सही सिद्ध होगी तो जो दूसरे पुराने आश्रमवासी हैं, वे आगे बढते ही रहेंगे और सबका कल्याण ही होगा। आश्रममें आदमी बहुत हैं, परन्तु आश्रमी थोड़े हैं। अिसलिअे मन पर बोझ बना रहता है। अैसी अत्यन्त अपूर्ण स्थितिमें तुम सबसे जो हो सके अुतना करो।

आश्रम मुझे मापनेका अेक गज है। मैं जहा होता हू वहा आश्रमको साथ लेकर घूमता हू। शरीर कहीं भी हो, आत्मा मेरी वहीं रहती है।

अुसमे जो दोष है वे सब दृश्य अथवा अदृश्य रूपमे मुझमे होने ही चाहिये। तुम सबको पहचाननेमे मेरी भूल हुआी हो तो वह दोष मेरा नही तो किसका है? परन्तु मै अपनेको ही न पहचानू तो तुम सबका काजी कैसे बन सकता हू? जब नाम चुनता हू तो छगनलाल[1] और मगनलालके सिवा मै किन्हीको ढूढने नही गया। अुन्हे ओीश्वरने मेरी परीक्षा लेने या मेरी सहायता करनेके लिअे भेजा है।

यह तेरी भूल है कि तू डॉ० पटेलके पास नही गअी। डॉक्टरसे अिस प्रकार चिट्ठी द्वारा नही पूछा जा सकता। तू मौन ले ले। डॉक्टरको गला दिखाकर जो वह कहे वैसा ही कर। अिसमें हठ करना ठीक नही।

बापू

११६

य० म०
१९–२–'३३

चि० प्रेमा,

आज तो अब लबा पत्र नही लिखूगा।

मैत्रीको तू जीत ले और तीनो बहने अच्छी हो जाय, तो अिसे मै तेरी और आश्रमकी विजय ही मानूगा। नारणदासने तो प्रेमका प्रयोग किया है। सफल हो जाय तो करना।

तूने देखा होगा कि लक्ष्मीका तो अब विवाह कर ही देना है अथवा वह आश्रमसे चली जाय। मै मानता हू कि अुसका बोझा अब तुम्हारे किसीके सिर पर नही रहना चाहिये। मारुति बढ़िया लडका है। अुसके निर्माणमे लक्ष्मीदासका हाथ तो है ही। तूने देख लिया कि अुसके बारेमें मोतीने तुझसे जो कहा वह ठीक नही था।

---

१ श्री छगनलालभाअी। मगनलाल गाधीके बडे भाअी।

मालूम होता है कि लड़कियोंकी व्यवस्था तूने ठीक कर दी है। निर्मला[1] के बारेमें तेरा सुझाव मुझे तो पसन्द आया। महादेवके साथ इसकी चर्चा नहीं कर सका। पृथुराज[2] की बात भी समझ गया। मुसलमान बहनके बारेमें मैं अधिक जाननेको आतुर हूं। जिस अंग्रेज भाओीको भेजा है असुसे अच्छी तरह परिचय करना। मुझे तो वह त्यागी मालूम हुआ है। असुकी जरूरतोंका खयाल रखना।

सुशीलाके साथ तू मिलने आयी असु समय मेरे किस व्यवहारके बारेमें तूने सवाल किया था? मैं तो भूल गया हूं। फिर सवाल करे तो जवाब देनेकी कोशिश करूंगा।

डॉक्टरोंकी बात मैं समझा। अेक बार असुनके हाथमें चले जानेके बाद असुनसे जो वस्तु प्राप्त करनी हो वह हमें प्राप्त कर लेनी चाहिये। अैसा न करे तो असुनके साथ न्याय नहीं होता और हमें हानि होनेकी संभावना रहती है। यह बात तो हमें स्वीकार करनी ही होगी कि कुछ काम असुनके हाथों अच्छे होते हैं। हां, गफलतसे, अज्ञानसे वे अनेक भूलें करते हैं, यह तो जग जाहिर है। कोअी असुनकी सहायता कभी न लेनेकी प्रतिज्ञा करे, तो असुका मैं जरूर आदर करूंगा। कमजोरोंको तो असुनकी मदद मिलती ही नहीं। परन्तु मैंने माना है कि अैसा त्याग आश्रमकी शक्तिके बाहर है। अिसलिअे अच्छे माने जानेवाले डॉक्टरोंकी मदद हम लेते हैं। तू किसनके मामा[3] की सहायता जरूर ले।

बापू

---

१ महादेवभाअीकी बहन। असुनकी छात्रालयसे हालमें निवृत्त हुअी थी।

२ आनंदीका भाअी। श्री लक्ष्मीदास आसरका पुत्र।

३ वे डॉक्टर थे। जब मैं बम्बअीमें थी तब जरूरत पड़ने पर असुनकी मदद लेनी थी। अनुभव अच्छा होता था। मेरी पुरानी दर्द असुनके अुपचारसे मिट गया था।

११७

२६-२-'३३

चि० प्रेमा,

आज लंबे पत्रकी आशा न रखना। दाहिना हाथ लिख-लिखकर काफी थक गया है। समय भी नही है।

तेरी पूनिया पहुच गअी है। कल शामको आअी। आज काता। तेरा (दिया हुआ अिनका) वजन ठीक है, यह मानू तो देव-कपासकी पूनियोंसे ६० अकका सूत निकला अैसा कहा जा सकता है। अिनमें से आधी पूनिया महादेवसे कतवाअूगा। पूनियो पर अुनका कावू मुझसे बहुत अधिक है। सभव है महादेव पहले ही प्रयत्नमें १०० अकका सूत निकाले।

तूने अपने स्वास्थ्यके समाचार नही दिये। गलेकी आवाज ठीक काम देती है? कमर कैसी है?

भाअी डकन[1] का अनुभव बताना।

बापू

११८

य० म०
६-३-'३३

चि० प्रेमा,

यह पत्र मैंने ठीक पाच बजे (मौनवार) हाथमें लिया है। आश्रमके पत्रोमे तेरा अतमें पढता हू।

तेरी पूनियोंसे मैं ७५ अकसे आगे नही जा सका। ७५ अकका सूत बहुत कच्चा माना जायगा। पूनियोका जो वजन तूने दिया अुसी परसे सूतका अक निकाला है। सूक्ष्म वजन यहाके काटे पर नही निकलता। मेरा हाथ अच्छी तरह काम दे तो मैं मानता हू कि १०० अक तक जरूर जाअू।

---

१ डकन. दक्षिण अफ्रीकासे अेक यूरोपियन भाअी आश्रममें आये थे। अुनका अुल्लेख अूपरके पत्रमें हुआ है।

सुशीलाके बारेमें तू जो लिख रही है वह मेरे लिअे स्वप्नवत् है। अुसके प्रति जरा भी अुपेक्षा बतानेका मुझे भान तक नही है। अुसीने मुझ पर यह छाप डाली थी कि अुसे न तो कुछ पूछना बाकी है और न कहना। यह तू अुसे [बता देना]। मैं क्या जानू कि वह तेरी ही तरह लाड चाहनेवाली या खुशामद करानेवाली है। तेरी सहेली तेरे जैसी ही होनी चाहिये, यह मुझे जानना चाहिये था। यही तू कहना चाहती है न? परन्तु सुशीला कदाचित् यह बात स्वीकार न करे। क्या मेरे लिअे अेक ही प्रेमा काफी नही है? दूसरी भी है तो नही। परन्तु अुनमें थोडा थोडा अंतर है। खैर, अैसी गलती फिर न हो अिसका ध्यान रखूगा।

विजयाकी अुमर कितनी है? अुनका बरताव कैसा है?

लक्ष्मीको अच्छी तरह तैयार करना।

दुर्गाके फोडे अभी तक नही मिटते, अिससे मुझे सदेह होता है। वह मुझे हमेशा पत्र लिखती थी, लेकिन अब बिलकुल नही लिखती। अिससे भी मै मानता हू कि वह कुछ न कुछ छुपा रही है। पता करना, अुसे कोअी दूसरा रोग तो नही है?

कच्चे शाक और खजूरसे वजन घटना ही चाहिये। अुसके साथ रोज २।। तोला ताजा कच्चा दूध लेना चाहिये। कच्चे शाकमें टमाटर, मूली, गाजर या लेटिस जैसी चीज ली जा सकती है। नमक न लिया जाय। दो-तीन नीबू पानीके साथ या खजूरके साथ लेकर लेना चाहिये। पानीके साथ नीबू अलग पीना शायद ज्यादा अच्छा होगा। अिससे दात खटा जाय तो न लिये जाय। अुसमे सोडा डालकर पिया जा सकता है।

राजाजी वगैराके प्रश्नकी चर्चा मै नही कर सकता। अुसमें सत्यका भग होगा। वह तो कभी अवसर आयेगा तब। मेरे लेखोंमें तो अेक अेक शकाका जवाब है।

आश्रमकी त्रुटिया तो तू जितनी बतायेगी अुतनी मैं स्वीकार कर लूगा। परन्तु अुसीके साथ तू अुपाय भी ढूढ दे तो वह अधिक अुपयोगी होगा। न ढूढ सके तो भी तेरी आलोचना तो मुझे चाहिये ही। मेरी दृष्टि

जितनी चलती है अुतनी दौड़ाता हू। मै जितना जानता हू आश्रमका दोष आश्रमका नही, मेरा दोष है। कुम्हार बेडौल घडा बनाये, अिनमे दोष घडेका या कुम्हारका? यह बात मै सौ फीसदी मानता हू और अुससे मेरी मूढताका अन्दाज लगता है। परन्तु दोष होने पर भी मुझे आश्रम पसन्द है। क्योकि यह कहनेको मै तैयार नही कि मै स्वय अपने आपको पसन्द नही आता। जितने अशमे मुझमे 'मैं-पन' नही है अुतने अशमें मै खुदको पसद आता हू। और जितना 'मैं-पन' मेरे भीतर है अुसे मैं मिटानेका सतत प्रयत्न करता हू।

बापू

११९

[अैसा लगता है कि मैंने शायद महात्माजीको वह समाचार अपने पत्रमे लिखकर बताया था, जो अुनके जल्दी छूटनेकी सभावनाके बारेमें अुस अरसेमें फैला था। परन्तु आज मुझे अुसका स्पष्ट स्मरण नही है।

पूज्य महात्माजीके लिअे बढियासे बढिया पूनिया पीजन-यत्र पर स्वय बनाकर मैं यरवडा भेजती थी (पीजन-यत्र अुन समय पहले-पहल ही आश्रममें बनाया गया था)। अेक बार श्री लीलावतीबहन आमर पू० महात्माजीसे मिलने गअी थी। वहा श्री महादेवभाअी अुनसे मिले। बातचीतमें लीलावतीबहनको पता चला कि पूज्य महात्माजीके लिअे भेजी गअी पूनियोंके पूडे पर 'पूज्य प्रिय महात्माजीके लिअे' शब्द पढकर महादेवभाअीके मन पर यह छाप पडी कि अुन शब्दोंमें दूसरो (पू० महात्माजीके साथियो) के प्रति तिरस्कार था। पू० महात्माजीने अुन्हें कातनेके लिअे मेरी पूनिया दी थी। महादेवभाअीने लीलावतीबहनसे कहा 'अिससे मैं धर्म-सकटमें पड गया!' लीलावतीबहनसे यह खबर मिलते ही मैंने पू० महात्माजीको लिखे पत्रमें स्पष्टीकरण किया कि आपके प्रति प्रेम और पक्षपातका अर्थ आपके साथियोंके प्रति 'तिरस्कार' न मान लिया जाय।]

य० म०
१०-३-'३३

चि० प्रेमा,

तेरी दलील अेम अे को शोभा दे अैसी ही है। 'कोअी औंधे सिर लटके तो मैं क्यों न बाजा बजाअूं?' अिस तरहके जो प्रश्न रचने हों वे रचे जा सकते हैं। और अुत्तर यही मिलेगा कि अैसा न करनेका कोअी कारण नहीं मिल सकता। अेक आदमी अेक काम करता हो, तो दूसरा आदमी दूसरा काम क्यों न करे?

परन्तु यह जरूर है कि कुछ लोग स्वयं औंधे सिर लटकें, तो शायद अिस कार्यके लिअे भी दूसरोंके समझने लायक कारण वे बता सकते हैं, और औंधे लटकनेवालोंको देखकर मेरे जैसे जो लोग बाजा बजाने बैठ जाय, वे संभव है अपने बाजा बजानेका कारण किसीके गले न अुतार सकें। मगर ठीक है। अब तू आश्रमवासियोंके सामने अपना प्रस्ताव रखना और बहुमत हो जाय तो जरूर सारी तैयारियां कर लेना। मैं ठहरा कैदी, अिसलिअे मुझसे तो अुस बारातमें आया नहीं जा सकता। और कैदीको मताधिकार भी नहीं होता, अिसलिअे मुझसे पूछनेकी भी जरूरत नहीं हो सकती। अिसलिअे सब सिद्ध है (Q E D)।

धुरन्धरके पत्रकी धीरज रखकर राह देखूंगा।

तू अुत्तर दे या न दे, मैं तो तेरे स्वास्थ्यके विषयमें पूछता ही रहूंगा। बोल, तबीयत अच्छी रहती है न? गला सलता है या नहीं? कमर दुखती है? वजन बढ़ रहा है?

तेरी पूनियोंका जो सूत मैं कात रहा हूं अुसे देनेका समय आयेगा तब तेरी योग्यता बनी रहेगी तो तुझे जरूर दूंगा। अिस अुत्तरको तो तू ठीक मानेगी न? सूतका अंक ७५ से अूपर नहीं जा सकता। पूनियोंमें गांठें काफी हैं। संभव है देव-कपासके लिअे बेंतका गज भी पूरा काम न देता हो। देव-कपास साधारण पींजनसे तो धुना ही नहीं जाता, यह तू जानती है न?

महादेवको बुरा लगा है अिसका मुझे जरा भी पता नहीं। महादेवने कुछ लिखा है यह भी मैं नहीं जानता था। नारणदासके पत्रसे

मैंने अिस विषयमे कुछ जाना। तिरस्कारकी बात तो तेरे पत्रसे ही मालूम हुअी। महादेवसे अिस सबधमे मेरी कोअी बात नही हुअी। मैंने जब महादेवसे तेरी पूनिया कातनेको कहा तब अुन्हे धर्म-सकट मालूम हुआ, यह भी मै नही जानता था। अिसमे मुझे तेरी बात बिलकुल सच लगती है। तेरे लिखनेके ढगमे या मागमें मुझे तिरस्कारकी गध तक नही लगी। मुझे पता नही कि महादेवको यह गध कहासे आअी। अिस समय तो मेरा मौन है, नही तो पूछता। तेरी मागमे मैंने मोह जरूर देखा। मेरे प्रति मोह कैसा? जो किसीका बनने योग्य न रहे, जो रोज सबका बननेका ही प्रयत्न करे, अुसके विषयमें मोह त्याज्य है, निरर्थक है। परन्तु यह अेक बात है। अिसमें से दूसरेके प्रति तिरस्कारका भाव निकालना बिलकुल दूसरी बात है।

सरदारके वचनमे तो अुनकी प्रकृतिके अनुसार विनोद ही था, अैसा मै मानता हू।

अब यह देख कि तेरे प्रेमकी मैंने कैसी कदर की। तेरी पूनियोका मुझे वही अुपयोग करना चाहिये न, जिसे मैं अच्छेमे अच्छा मानू? अुसीमे प्रेमकी कदर मानी जायगी न? कोअी वैद्य बहुत प्रेमसे मेरे लिअे सुवर्ण-भस्म भेजे ओर अुसका मेरे लिअे जितना अुपयोग हो अुसकी अपेक्षा मेरे पडोसीके लिअे अधिक अुपयोग हो, तो भस्म अुसे दे देना क्या ठीक नही होगा? अथवा कोअी मेरे चलानेके लिअे गाडी भेजे, और मेरा पडोसी मेरे बजाय अुसे अधिक सलामत ढगसे चलाये अिसलिअे अुसे चलाने देकर मैं अुसका अुपयोग करू, तो मैंने दानीके प्रेमकी सच्ची कदर की अैसा माना जायगा न? यही बात पूनियोकी है। अैसी बढिया पूनियोका सबसे अच्छा अुपयोग हमारी मडलीमे महादेव कर सकते है। अिसलिअे आधी मैंने अुन्हे कातनेको दे दी। अिससे अुनकी शक्तिका पता लगेगा, देशका धन बढेगा और मेरा सतोष बढेगा। अिसलिअे तुझे यह चाहनेका अपना स्वभाव बदलना चाहिये कि जिसे तू भेंट भेजे अुसीको अुसका अुपयोग करना चाहिये। भेंट देनी हो तो बिना किसी शर्तके देनी चाहिये। तुझे सुशीलाने जो अुपाधि दी वह सच्ची थी। किसनके लिअे दिये गये फल वह समय पर न पा सके, तो तेरे खा लेनेमें ही

सुशीलाकी और किसनकी सेवा थी। अुन्हें जाने देनेमें तेरी सूचना थी। दूसरी समस्या हल हुअी।

तेरे अन्तिम प्रश्नका अुत्तर नहीं दिया जा सकता। अिसलिअे लाचार हूं।

लक्ष्मीके साथ तूने खूब बातें की होंगी।

बापू

१२०

१०-३-'३३

चि० प्रेमा,

तू व्यर्थ शंका करती है। जैसे तू शुद्ध भावसे अपनी अिच्छानुसार आलोचना करती है वैसी ही महादेवने की है। मैंने अुनसे पूछा। बार बार 'महात्माजीके लिअे' पर जोर देनेसे महादेवको अुसमें तिरस्कारकी गंध आअी। अुन्हें जैसा लगा वैसा अुन्होंने कहा। तूने अुत्तर दिया अिसलिअे मामला निबट गया। तुझे सहन-शक्ति बढानी चाहिये, अधीरता मिटानी चाहिये। थोडी विनोदी प्रकृति बनानी चाहिये। जगतकी सारी आलोचनाको सोनेके कांटेमें न तौलकर लोहे या पत्थर तौलनेके कांटेका अुपयोग करना चाहिये। अुसमें मन आवे मनका तो हिसाब तक नहीं होता। तू जरासी नाजुक नहीं दीखती, लेकिन तेरा मन बहुत नाजुक मालूम होता है। अब तू अुसे कठिन या सहनशील बना ले। अब तुझसे अनुरोध करनेके बजाय आज्ञा देनेका अिरादा कर रहा हूं। भले ही तू अुनका अनादर करे। दूसरी आज्ञाओंका अनादर करनेकी तो तुझे अिजाजत नहीं मिलती, अिसलिअे मेरी आज्ञाओंका अनादर तू किया करना। यह अनादर सविनय माना जाय अथवा अविनय, दीवानी माना जाय या फौजदारी, यह देखा जायगा।

बापू

[पत्र स० १०५ ता० १८-१२-'३२ मे जिस कार्यकर्ताका अुल्लेख है, अुसके वारेमे अिस पत्रमें और आगे पत्र स० १२३ ता० २-४-'३३ में लिखा गया है। कुटुम्बियोकी वडी अुमरकी लडकियोमे यह कार्यकर्ता अधिक घुलता-मिलता था। यह वात मुझे ठीक नही लगी तो मैंने श्री नारणदास काकाको अपनी शका वता दी। परन्तु अुनका अुस पर वहुत विश्वास था। सवका ध्यान रखनेवाले वुजुर्ग थे, अिसलिअे मैं अुदासीन रही। वादमें परिणाम यह हुआ कि सोलह वर्षकी अेक लडकीके साथ अुसका प्रेम वढा और जव वह वाहर गअी थी तव अुसने पत्र लिखकर अुससे पूछा, "तू मेरे साथ शादी करेगी?" लडकी अुन समय वीमार थी, अिसलिअे वह पत्र अुसकी मौसीके हाथमे पहुचा। अुसने पत्र पढा और स्वय पू० महात्माजीसे मिलने गअी और वहा अुनके हाथमें पत्र रख दिया। अुसे पढकर पू० महात्माजीको भारी आघात पहुचा, क्योकि कार्यकर्ता और लडकी दोनोंने पू० महात्माजी वडा स्नेह रखते थे। अुन्होने कार्यकर्ताको वुलाकर पत्रके वारेमें रूवरू पूछा। अुसने जवाव दिया, "पत्रमे मैं अुस लडकीकी परीक्षा ले रहा था।" अिस अुत्तरसे पू० महात्माजीको वडा दु:ख हुआ, क्योकि वह असत्य कथन था।]

२६-३-'३३

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिला। यह भावना तुझमें स्थिर हो। सूत तो मैंने तेरे लिअे रखनेको कहा है न? वह रखूगा। अुस (माग)का तिरस्कार करनेकी भी जरूरत नही। मुझसे कुछ भी मागनेका तुझे जरूर अधिकार है। सूतकी माग निर्मल है। जिस ढगसे तूने माग की अुसमें दोष था। अुसे तूने सुधार लिया, अिसलिअे अव कहनेको कुछ नही रहता।

तू देखती है कि मेरी आशायें राख होती जा रही हैं। और . के वारेमें तो क्या कहू? अुनके वारेमें मुझे शका हो ही नही सकती थी? अुन पर मैंने आशाओंका पहाड चुना था, परन्तु वह रेतकी वुनियाद पर खडा था। आश्रमके आदर्श तक कैसे पहुचा जाय? कोअी किसीकी

स्पर्धा किये विना स्वतत्र प्रयत्न करे तो ही पहुचा जा सकता है। तू अैसा प्रयत्न कर रही है? ब्रह्मचर्यकी मेरी व्याख्या तू जानती है न? अुस व्याख्या तक तू पहुचेगी? अुसमें राग और रोषके लिअे बिलकुल अवकाश नही है। मुझे तेरी आलोचना नही करनी है, तुझे शिक्षा नही देनी है, मै तो भिक्षा मागता हू। जब तक यह भिक्षापात्र नही भरता, तब तक आश्रम आश्रम नही हो सकता।

अपनी तबीयतके बारेमें तूने समाचार दिये यह ठीक किया। कच्ची गोबीको पीसकर खाया जाय तो शायद नुकसान न हो, परन्तु अुसे अुबालकर खानेमें कोअी आपत्ति नही है। शाक कच्चा ही खाना जरूरी नही है। थोडा भी कच्चा खाया जाय तो काफी है। परन्तु मुख्य बात यह है कि तुझे बोलना कमसे कम कर देना चाहिये। जिस नियमका पालन करनेमें जो ढिलाअी होती है वह चिन्ताजनक जिस तरह बन जाती है कि बादमें किया हुआ सयम निरर्थक सिद्ध होता है। सब कुछ अपने अपने समय पर होना चाहिये। गलेकी हालत नाजुक हो, तभी अुसे आरामकी जरूरत होगी।

मारुति[1]के साथ बात हो गअी, यह बहुत अच्छा हुआ। अुनके साथ पत्रव्यवहार जारी रखना। लक्ष्मीको आश्रमकी सहेली चाहिये? कोअी भेजने लायक है? यह भी लक्ष्मीदाससे जान लेना कि वहा जाकर वह रह सकती है या नही।

वहा बहुतसी महाराष्ट्रीय बहनें है। अुन्हें जमनालालजीने भेजा है अैसा वे कहते थे। अुनमें से किसी न किसीको अुनके महिला-आश्रमके लिअे तुझे तैयार करना चाहिये, अैसा जमनालालजीने तेरे लिअे सदेसा भेजा है। अैसी कोअी बहन है क्या? वह प्रौढ और अनुभवी होनी चाहिये। मुझे लिखना। नारणदासके लिअे भी यही सन्देश है। अुसे अलगसे नही लिखूगा। अुसके लिअे जिसकी पूर्ति बाकी रखता हू।

---

१ श्री मारुतिके साथ लक्ष्मीका व्याह हो गया था। पू० बापूसे मिलनेके लिअे मै दोनोंके साथ अहमदाबाद सेंट्रल जेल गअी थी। दोनोंको पू० बापूके आशीर्वाद मिले। रास्तेमें श्री मारुतिसे मेरा परिचय और बातचीत हुअी थी।

श्वेतपत्रके वारेमें मैं कुछ भी नहीं लिख सकता। यहां बैठे हुअे मेरा वह क्षेत्र भी नहीं है, अिसलिअे मैंने अुसे पढा भी नहीं।

वापू

१२२

[ता० २६-३-'३३के पत्रमे पू० महात्माजीने मुझसे ब्रह्मचर्य-जीवनकी भिक्षा मागी, अिसलिअे मेरे मनमे यह भावना पैदा हो गअी कि मुझे कुछ भी लिखकर अुन्हे सन्तोष देना चाहिये। यह बात सच है कि कॉलेजमे तथा युवक-आन्दोलनके समय बहुतसे पुरुष साथियोंसे मेरा परिचय होता था, अुनके साथ घुलने-मिलनेके प्रसग भी आते थे, परन्तु मुझे न तो किसीके प्रति आकर्षण हुआ और न किसीके प्रति काम-विकार अुत्पन्न हुआ था। छोटी आयुसे मैं आदर्शवादके सपने देखती थी, अिसलिअे 'प्रणय'की ओर मेरा मन गया ही नहीं था। सोलह वर्षकी आयु हुअी तब अेक बार मैं भागवत पढ रही थी। अुसमें कपिल-देवहूतिका सवाद पढा, तब मुझे पता लगा कि बच्चे कैसे पैदा होते हैं। मुझे याद है कि अुस समय मेरे शरीर पर रोंगटे खडे हो गये थे। अपने जन्मकी कल्पना मुझे आअी और अपने शरीरके प्रति तथा अपने माता-पिताके प्रति भी अेक तरहकी घृणा मेरे मनमें पैदा हुअी थी! जीवन गदा लगा था! यह घृणा बहुत वर्षों तक बनी रही। अैसा याद है कि जीवनमें मुझे तीन चीजोंसे घृणा रही (१) स्त्री-पुरुष-सभोग, (२) वितडावाद, (३) चुनाव। फिर समय बीतने पर वाचन और चिन्तन करनेके पश्चात् तथा विद्वान, सज्जन गुरुजनों और स्नेहियोंके साथ बहुत चर्चा करनेके पश्चात् जैसे जैसे मनुष्य-स्वभावका ज्ञान बढता गया, वैसे वैसे 'सभोग'के बारेमे अेक वैचारिक भूमिका मनमें दृढ हो गअी

'धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ।'

प्रजननके लिअे ही सभोग, बाकी सयमी जीवन — यह भूमिका दृढ होनेके बाद घृणा कम हो गअी। लेकिन अन्य दो वस्तुओंके प्रति आज

भी बनी हुअी है। हा, मेरी यह मान्यता जरूर है कि सत्यनिष्ठ, अहिंसक समाजमें आदर्श चुनाव हो सकता है। परन्तु आजके लोकतन्त्रमें जो निर्वाचन-पद्धति है वह अपरिहार्य होने पर भी अुसके प्रति मनमें अरुचि जरूर है।

पू० महात्माजीका पत्र आया तब विचार कच्चे और भावना अुत्कट — यह परिस्थिति थी। मेरा आदर्श तो आमरण ब्रह्मचर्य-जीवन पालन करनेका था। भविष्यकी बात अुस समय तो मैं कह ही नहीं सकती थी। परन्तु मुझे लगा कि २५ वर्ष तक यदि मैं पुरुषोंकी जरा भी अिच्छा किये बिना रह सकी, तो दूसरी लडकियोंका भी जैसा करनेमें क्या कठिनाअी हो सकती है? अभी १६ वर्ष भी पूरे न हुअे हों तब काम-विकार कैसे अुत्तेजित हो सकता है? मेरे सामने यही समस्या थी। कॉलेजमें पढती थी तब Sex Literature की कोअी तीन पुस्तकें मैंने पढी थी। परन्तु वे अच्छी नहीं लगीं, अिसलिअे मैंने वैसी पुस्तकें फिर हाथमें नहीं ली। डॉ० फ्रॉयडको मैंने देखने पढा, परन्तु तब अुनके कुछ मत मुझे अतिरंजित लगे। खैर! अपनी भावनाके वश होकर मैंने कहीं पढा हुआ या किसीके मुहसे सुना हुआ अेक वाक्य अपने पत्रमें लिख डाला 'I may sleep with any man on the same bed during the whole night and get up in the morning as innocent as a child!' (किसी भी पुरुषके साथ सारी रात अेक शय्या पर सोकर मैं दूसरे दिन सवेरे निर्दोष बालक जैसी ही जागूगी।) अिसमें पू० महात्माजीको अभिमानकी गंध आअी। आज मुझे लगता है कि यह मेरा अविवेक था, अभिमान नहीं। अनुभवहीनता तो थी ही। पू० महात्माजीके सामने मैं अपना अन्तर खोल कर रख देती थी। परन्तु मेरी अुमर बहुत बढ जानेके बाद भी मैंने किसी दूसरे व्यक्तिके सामने आमरण ब्रह्मचर्य-पालनका दावा किया हो, अैसा मुझे स्मरण नहीं है। 'पचपन वर्षकी अुमरमें भी विवाह करनेकी जीमें आ जाय तो मैं विवाह कर लूगी' यही मैं कहती थी। परन्तु आज मैं कह सकती हू (आज तो मुझे त्रेपन वर्ष पूरे हो गये) कि ब्रह्मचर्य-पालनमें जो भी टूटी-फूटी सफलता मिली है, वह पू० महात्माजीके रूपमें औश्वरकी जो कृपा व्यक्त हुअी अुसीके कारण मिली है। श्री सद्गुरुके प्रति अनन्य निष्ठा और ध्येयपथ पर चलते हुअे साधनाकी

सतत सहायता — अिन दोनोंके ही कारण (मैं) पगु पहाडको लाघ सकी।
वैसे मेरा कर्तव्य तो शून्य ही है।

पूर्ण ब्रह्मचारिणीको मासिक धर्म नही होता, पू० महात्माजीकी यह मान्यता शास्त्रीय हो सकती है अिसमे मुझे शका हे। मैंने वहुतसे स्त्री और पुरुष डॉक्टरोकी सलाह ली है। अेक अपवादके सिवा किसीने अिस मान्यताका समर्थन नही किया। अपवादस्वरूप डॉक्टरने भी कहा कि जनन-शक्ति और अिन्द्रिय तथा गर्भाशयका अुपयोग किया ही न हो, तो मासिक धर्म वन्द हो जानेकी सभावना है, परन्तु तव स्त्रीका पुरुषमें रूपान्तर हो जायगा, अुसे मूछें आ जायगी, वगैरा।]

२-४-'३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अच्छा है। आज ब्यौरेवार नही लिख सकता। पत्र अच्छा है, फिर भी अुसमें ब्रह्मचारिणीको शोभा न देनेवाला अभिमान है। नारदकी कथा याद कर। नारदने ब्रह्मचर्यका अभिमान किया कि तुरन्त अुनका पतन हो गया। ब्रह्मचारीका आधार ठेठ अीश्वर पर रहता है। अिसलिअे वह नम्र होता हे। वह अपना भरोसा नही करता। जो जन्मसे निर्विकार है वह मनुष्य नही। वह या तो परमेश्वर है अथवा पुरुष अथवा स्त्रीकी शक्तिसे रहित है। अिसलिअे अपूर्ण है, रोगी है। परमेश्वरको अभिमान किस चीजका? पत्थरको पत्थरपनका अभिमान हो सकता हे? रोगीको रोगका अभिमान नही हो सकता। स्त्री-पुरुष अपने विकारोको वशमे रखनेकी शक्ति पैदा कर सकते है और अिसलिअे सग्रह की हुअी शक्तिका सदुपयोग कर सकते है। परन्तु जिसे अिस शक्तिका अभिमान होता है, अुसकी अिस शक्तिका अुसी क्षण नाश हो जाता हे। तुझमे जो ब्रह्मचर्य होगा अुसका कितना क्षय हो रहा है, अिसका क्या तुझे ज्ञान हे? तेरे ब्रह्मचर्यमे न्यूनता तो है ही। तेरे लिअे स्वाभाविक क्या हे? तू विकारको जानती ही न हो तो क्या तू कोअी देवी है? देवीके लक्षण भिन्न होते है। तू देवी नही है। तुझे रोग हो अैसा मैं जानता नही, क्योंकि तुझे मासिक धर्म होता है। तू जाच करके देखना और मुझे लिखना।

वापू

१२३

य० म०
७-४-'३३

चि० प्रेमा,

आज सुबह अेक पत्र तो तुझे लिखा ही है। वह अिससे पहले मिलना चाहिये। और के विषयमें तू जो लिखती है वह [illegible] है। भूल सब करते हैं। अुनका दुःख नहीं मानना चाहिये। परन्तु भूलको कोअी छिपाकर रखे, भूल करनेवालेकी अनिच्छा होते हुअे भी वह प्रगट हो जाये और बादमें वह भूलका अनुचित बचाव करे, तब दुःख होना ही चाहिये। यदि न हो तो अैसी घटनाओंको रोकनेका अुपाय ही हमको न मिले। जो यह मान ले कि अैसी घटनाअें होती ही रहेंगी, अिसलिअे अुन्हें रोकनेका अुपाय ही नहीं किया जाना चाहिये, तो समाजका नाश हो जायगा। अिसलिअे अुन्हें रोकनेके अुपाय तो करने ही चाहिये। वे अुपाय हृदयको आघात पहुंचे तो ही किये जा सकते हैं। जो मिथ्या दुःख करते हैं, शोर करते हैं वे ठीक नहीं करते, अैसा कहा जायगा, और मेरे खयालसे तू भी अितना ही कहना चाहती है। अिससे अधिक कहना चाहती हो तो वह भूल है, अिस बारेमें मुझे शंका नहीं। दुःख, आघात वगैरा शब्दोंके बजाय दूसरा कोअी शब्द मिले, तो मैं जरूर अुसे स्वीकार कर लूं। परन्तु तेरे पत्रमें कहीं न कहीं मोह छिपा हुआ है। मोह शब्दका अुचित अुपयोग हुआ है या नहीं, यह मैं नहीं कह सकता। मेरा आशय तू समझ गयी हो तो काफी है।

मुझसे जो भूल हुअी है वह तो मैंने मान ही ली है।

मैं तुझसे चाहता हूं सरलता, मृदुता, नम्रता, धीरज, सहनशीलता और अुदारता। यह तो मुझे तब मिले जब तू [illegible]। तू कुछ भी नहीं है, यह तू कब मानने लगेगी? रोज धरतीमाताकी वन्दना करना और रोज अुसे क्षमा मांगना यह क्या है? यदि सचमुच हमारी अिस प्रार्थनामें सत्य हो तो हमें रजकण बन जाना चाहिये [illegible]

दुनियाकी लात सहन करने लगना चाहिये। तब धरती-माताको हमारे चरणोका स्पर्श नही होगा, क्योकि तब हम जीतेजी राख बन गये होगे। 'दुअीकी धूल अुडाता जा'।

तेरी पूनिया अभी चल रही है। अुनमे गाठे आअी यह तेरा दोष नही है। वह कुछ पीजनका दोष है और कुछ कपासका। अधिक धुननेने रेशे कमजोर हो जाते। दूसरी पूनिया बहुत बारीक सूत नही देती, परन्तु अुनमे गाठे कम है।

परचुरे शास्त्रीके लडकेको तूने हाथमे ले लिया, यह बहुत ठीक किया।

शान्तासे तूने ठीक कहा। अब अुसे जो अच्छा लगे वही करे।

बापू

१२४

[जब मै सत्याग्रहाश्रममे रहती थी तब आश्रम-जीवनकी तपस्याके बारेमें मेरी कुछ विशेष कल्पनाअें थी। पू० महात्माजीके विचारोका प्रभाव भी अुसका कारण था। "बीमारी होना अपराध है" अैसा वे कहते थे। अिसलिअे किसी समय मै बीमार पडती तब अथवा अुपवासमें भी मै रोजकी तरह ही काम करती रहती थी। फिर पू० महात्माजी कहते कि, "हमे गरीबोकी तरह रहना चाहिये।" अिसलिअे अधिक रुपया खर्च करके अच्छा भोजन खानेको जी न करता था। अिसके सिवा, अेकान्तमें खाना अच्छा न लगता। रसोअीघरमें पगतमे बैठकर साथियोने अधिक घी-दूध लेना या फल आदि खाना मुझे पसद नही था। पू० महात्माजीने लिखा, "आश्रममें रहनेको जेलमें रहने जैसा ही मानना चाहिये।" तब मुझे लगा, "हम जेल नही गये। हमने कुछ भी त्याग नही किया। तो फिर आश्रम-जीवन अधिक कठोर क्यो न बनाया जाय?" अिस तरहके विचारोके कारण विशेष सुविधायें लेनेकी पू० महात्माजीकी अेक भी सूचना मेरे गले न अुतरती थी। वे दलील करते थे और मै भी विरोधमें दलीले करती रहती थी। यह हाल था।]

९-४-'३३

चि० प्रेमा,

तू मूर्ख भी है और सयानी भी, अिसलिअे अेक ही विशेषण नही दे सकता। बोलना लगभग बन्द होना ही चाहिये। अूची आवाजसे बोलना बिलकुल ही बन्द। गाना भी सर्वथा बन्द। काम न चलने पर ही धीमी आवाजसे बोलना पडे तो बोला जाय, अन्यथा जो कहना हो वह लिखकर कहना चाहिये। अैसा नही करेगी तो तुझे पछताना होगा।

तेरी खुराकमें ज्वार-बाजरा अनुकूल न पडे तो वे बन्द हो ही जाने चाहिये। मेरी अिच्छा तो तुझे कच्चे दूध पर रख देनेकी होती है। अुसके साथ थोडेसे मुनक्के चबाकर चूसनेसे सन्तोष रहेगा। टमाटर तो हमारे यहा बारहो महीने पैदा होने चाहिये। और जब भाजी मिले तब हरी भाजी अुबाल कर ली जाय। अितने पर तू रहे तो और किसी चीजकी मुझे जरूरत नही मालूम होती। तेरी शक्ति जरूर कायम रहेगी। जाच करके देखना, क्या हो सकता है।

किसनके समाचार दुःखद है।

बापू

१२५

१०-४-'३३

चि० प्रेमा,

नरहरिके हाथो भेजी हुअी पूनिया मिली। हिसाब बादमें। सूती पूनिया १८ तोला है।

शान्ता[1]के बारेमें समझा। अुसने अभी तक मुझे कुछ नही लिखा है। अिन दोनो बहनोके बारेमें तू जमनालालजीको वर्धा लिख दे तो अच्छा हो।

१ शान्ता पिछले पत्रोमें अिस बहनका अुल्लेख आ गया है। श्री जमनालालजीने दो महाराष्ट्रीय बहनोको भेजा था। अुनमें से अेक थी शान्ता पानवलकर और दूसरी नर्मदा भुस्कुटे। दोनो मैट्रिक तक पढी हुअी थी। नर्मदा महाराष्ट्रके खादी-कार्यकर्ता श्री ना० म० गोखलेकी पत्नी कमलाबाअीकी (जिनका अुल्लेख पीछेके अेक पत्रमें है) छोटी बहन।

लक्ष्मी शिकायत करती है कि अुसे कोअी पत्र नहीं लिखता। मालूम करना। तू तो लिखती है न?

दुःखो और कष्टोंका मैं आदी हो गया हू। अीश्वर मेरी परीक्षा अनेक प्रकारसे ले रहा है। तपे बिना मनुष्यका निर्माण कैसे हो? तू कर्तव्यका पालन नही करती, अितना कष्ट तो जरूर देती है। शुरूमें ही गलेको आराम देनेके लिअे मै लिखता रहा हू। शरीरको भी आराम देनेकी बात मैंने लिखी है। लेकिन तू दोनों आज्ञाओंका अनादर करती है। ये आज्ञाये देनेमे स्वार्थ तेरा नहीं, आश्रमका है। तेरा गला हमेशाके लिअे बिगडे, तेरा शरीर कमजोर हो, तो तुझे जितना नुकसान होगा अुसकी अपेक्षा आश्रमको ज्यादा नुकसान होगा। यह सादा सत्य समझमें आता है? अगर समझमे आ जाय तो नम्र बनकर शरीरको अच्छा रखनेके लिअे जो कुछ कहा जाय अुस पर तू अमल कर। अिसी तरह क्रोधके बारेमे समझना। क्रोध भी अेक व्याधि है। अुसे भी दूर कर। अधीरताको भी दूर कर।

किसन कुछ ठीक है अैसी खबर मिली है। अुसे हिस्टीरियाका दौरा (फिट) हो यह बात समझमे नही आती।

बापू

१२६

१२-४-'३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मैंने तुझे चेतावनी दी अितना काफी है। तेरा यह मानना ठीक नही कि मैं तेरे पत्र अच्छी तरह नही पढता। तेरी बात मैंने समझ ली थी। अितने अधिक आत्म-विश्वासमें ही अभिमान या गर्व निहित है। तेरा अभिमान तेरी भाषामें मौजूद है। यह लिखकर मैं अैसा नही चाहता कि तू अपने विचारोंको छिपाये अथवा अुन्हें गढ कर मेरे सामने रखे। जैसे आते हैं वैसे तू लिख भेजती है, यह मुझे पसन्द है। तू जैसी भीतर और बाहर है वैसी मुझे देखने देती है, अिसे मैं तेरा गुण समझता

हू। तू कृत्रिम वन जाय तो मैं लाचार हो जाऊँ और तुने कुछ भी न कह सकूं।

रजकण वननेका पाठ मैं नही दे सकता। ओश्वरको समझनेके प्रयत्नमें हम रजकण हो ही जाते है। वह स्थिति अपने आप आनी होगी तव आ जायगी।

तुझे किसीका कुछ सहन नही करना पडता, यह बात भी नही है। परन्तु दु ख यह है कि तू अुसे क्षणभरमें खो सकती है।

तू मानती है कि मेरे आसपास तेरे विरुद्ध वातावरण बना दिया गया है। अिसमें तू भूल कर रही है। सरदार तो तेरे विरुद्ध हरगिज नही है। अुनके विनोदको तू विरोध न मान। महादेव तेरे विरुद्ध है, अैसा मुझे बिल्कुल नही लगता। छगनलालने तेरे वारेमें जो कहा वह नया नही है। वे तेरा मूल्य जानते है, परन्तु कहते है कि जब तक तू अपनी जीभको वशमें नही कर सकती, तव तक तुझ पर जिम्मेदारी नही होनी चाहिये। यह अुनकी पुरानी बात है। तू जान ले कि मैं अपने तीन साथियोंके साथ शायद ही वाते करता हू। खाते या टहलते समय थोडेसे विनोदके सिवा और कुछ हो ही नही सकता। प्रसगके विना हम शायद ही किसी व्यक्तिकी चर्चा करते है। अपने काममें मुझे चर्चा करनेका होश भी नही रहता, और व्यर्थकी चर्चा करके मैं अपनी शक्तिका व्यय भी नही करना चाहता।

और की करुण कथाकी चर्चा भी मैं मुश्किलसे ही कर सका हू। विचारोंका कमसे कम आदान-प्रदान करके ही मैंने सन्तोष कर लिया है। न तो तेरे विरुद्ध मेरे आसपास कोअी वातावरण है और न मेरे मनमें है। मैं तुझे सख्त अुलाहना अिसलिअे देता हू कि मैं तुझे अपनी पुत्री मानता हू और तुझे पूर्ण देखना चाहता हू। अिसलिअे मेरी आलोचनासे तू दु खी क्यो होती है? अुसमें से जो लेना हो वह लेकर वाकीको भूल जा, क्योंकि यह तो सर्वथा सभव है कि मेरी आलोचनामें अज्ञान हो, तेरी भाषा मैं न समझ सका होऊं।

अेक ही वस्तुको भिन्न भिन्न मनुष्य भिन्न भिन्न रीतिसे देखें यह ठीक है। अेक ही शक्तिका अुपयोग भिन्न भिन्न प्रकारसे होता है, यह हम रोज देखते है।

मेरा यह विचार जरूर है कि मासिक धर्मके समय किसीको नियत कार्य न सौंपा जाय। कब अुसे दर्द अनुभव होगा यह दूसरे किसीको पता नही लग सकता। अुस समय स्त्री पर किसी प्रकारका बाहरी भार न होना अच्छा है। अपने आप जो काम वह करना चाहे खुशीसे करे। कुछ स्त्रियोको अिस धर्मका असर मालूम ही नही होता और वे अपना काम करती रहती हैं। कुछको असह्य वेदना होती है। कुछको वेदना तो नही होती, परन्तु अुनका शरीर काम करने लायक नही रहता। जो स्त्री अुस धर्मका सदुपयोग कर सकती है वह प्रति मास नअी शक्ति प्राप्त करती है। ये तीन या चार दिन नअी शक्ति प्राप्त करनेके लिअे हैं और अुसे प्राप्त करनेके लिअे स्त्रियोको हर तरहकी जिम्मेदारीसे मुक्त कर देना अुचित है। अुसे लेटे रहना हो तो लेटनेकी स्वतत्रता होनी चाहिये। नासमझीसे कुछ स्त्रिया अुस समय भी दौडधूप नही छोडती। वे ज्ञानहीन है। अुन्हे समझानेकी जरूरत है। अिसलिअे लक्ष्मीदासकी बात कुल मिलाकर मुझे अच्छी लगती है।

किसनके बारेमें तू जो लिखती है वह सभव है। अुसके स्वस्थ हो जानेकी बात जान कर मुझे बडी खुशी हुअी। मालूम होता है किसनने मेरे पत्रकी प्रतीक्षा की है। परन्तु मुझे याद नही कि अुसके अेक भी पत्रका जवाब बाकी रहा है।

तेरी पूनियोके बारेमे लिख चुका हू।

कच्चा दूध पीनेसे वजन घटना नही चाहिये। अुबला हुआ साग अेक बार लेगी तो शायद लाभ ही होगा। सभव है तेरे गलेको अुसकी जरूरत हो। मै मानता हू कि कच्चे दूधकी तो है ही। आजमाकर तो देख।

बापू

१२७

१९-४-'३३

चि० प्रेमा,

तूने अुन लडकीको क्यो मारा? शिक्षिका शिष्योसे माफी मागे तो अपना स्वाभिमान नही खोती। अुलटे वह वढता है। शिष्य भी अुसे अधिक चाहते है। अिसलिअे यदि तूने माफी न मागी हो और अुसे मारनेका दोष तेरी समझमें आ गया हो, तो अुस लडकीसे माफी माग लेना। अिसमे तेरा श्रेय ही है।

तेरा आहार ठीक है। अिसी प्रकार लेगी तो गला जरूर अच्छा हो जायगा। डॉ० शर्माकी सलाह लेना। अुन्हे पता लगेगा तो कुछ वतायेगे।

काम करनेमें अधीरता कैसी? जितना धीरे धीरे करते हुअे हो जाय अुतनेसे सतुष्ट रहे, तो कामकी गति और स्वच्छता वढती है। अैसा अनुभव मैने तो हजारो वार किया है।

वापू

१२८

२३-४-'३३

चि० प्रेमा,

दाया हाथ काफी थक गया है, अिसलिअे जो कुछ शक्ति अुनमें वाकी हो अुसे 'हरिजन' के लेखोके लिअे सुरक्षित रखना चाहता हू। मेरा खयाल है कि पूरे आरामकी जरूरत नही पडेगी।

वीचमें अेक पत्र तो मैने तुझे लिखा ही है। अिसलिअे यह छोटा हो तो चलेगा।

परचुरे शास्त्रीके लिअे मै पुस्तकोकी तलाश कर रहा हू।

मैत्री तकलीफ देगी। अगर वह सुधरनेवाली होगी तो सहन करनेसे और प्रेमसे ही सुधरेगी। अुसे माकी कमी महसूस नही होनी चाहिये।

मासिक धर्मके लिअे जो छूट रखनी अुचित हो वह रखी जाय। अुसका दुरुपयोग कोअी या वहुत करे तो अुसके लिअे आश्रम जिम्मेदार नही होगा। नीदके समयका कोअी दुरुपयोग करेगा, अिस कारणसे हम वह समय काट नही सकते।

तू अपना धीरज टूटने न देना। सुधारकका, सेवकका काम अिसके विना घडीभर भी नही चलता, अिसे हमेशा याद रखना, अपनी दीवार पर लिख रखना, अुसका तावीज वनाकर पहन लेना।

वहासे मजूरी आ जायगी तो नीला नागिनी[1] थोडे ही दिनमे आश्रममे आयेगी। अुसने खुल्लम-खुल्ला व्यभिचार किया है, कर्ज किया है, असत्य वोला है। अव वह साध्वी जैसी वन कर वैठी है। मुझे अुसमें कृत्रिमता नही लगी। अुसने अपने दोषोका दर्शन किया अुसके वाद जितना मैंने अुससे कहा अुतना ही अुसने किया है। यदि अुसे अपने शुभ निश्चय पर स्थिर रहनेका मौका मिलनेवाला हो तो वही मिलेगा। और कही वह सूख जायगी अथवा फिरसे स्वेच्छाचारमे फस जायगी। अुसमें शक्ति वहुत है। वह वहुत वाते जानती है। महाभारतका अुसे खूव परिचय है। वह आये तो अुसे पहचानना। दूसरी वहनोसे भी अुसे पहचाननेको कहना। अुसके भूतकालकी वात न कराना। वह अैसी है कि खुद ही करेगी। परन्तु अुसकी वात करने-करानेमे दोष है। विषयका स्मरण हानिकर है। अपने विषयी भूतकालकी वात वह रसपूर्वक करे, तो जान लेना कि विषय अुसमें से गया नही। अुसे छोटी वहन समझ कर प्रेमपूर्वक अुसके हालचाल पूछना। अुसके जीवनके वारेमे मुझसे जो पूछना हो वह तू पूछ सकती है। अुसे भेजनेका समय आये तव कदाचित् मुझे वहुत लिखनेका समय न मिले, अिसलिअे आज ही अितना लिख डाला। अुसका लडका वहुत अच्छा है।

वापू

---

१ नीला नागिनी २४ वर्षकी अमरीकी युवती। अेक यूनानीके साथ अुसकी शादी हुअी थी। अुसे छोडकर स्वेच्छाचार करती थी। काश्मीरमे आकर हिन्दू हो गअी थी, अैसा वह खुद कहती थी। अुसे सुधारनेके लिअे पू० महात्माजीने आश्रममें भेजा था।

१२९

२५-४-'३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू मेरे पत्रके बहुत गहरे अर्थमें अुतर गअी। अैसा अुसमें कुछ था नहीं। नारणदासके नाम मैंने जो पत्र लिखा अुसमें तेरे संबंधकी शिकायतोंका अुल्लेख था। अुसे ध्यानमें रखकर मैंने लिखा कि तेरे अनेक गुणोंमें अुदारतापूर्वक सहन करनेकी शक्ति आ जाय तो कितना अच्छा हो! मुझे नारणदासको लिखना पडा कि वह पत्र तुझे न बतायें तो अच्छा हो। अुन्हें दुःख हुआ और मैंने अपने अुद्‌गार प्रगट किये। अुसमें तुझे अुलाहना देनेकी तो बात ही नहीं थी। मनुष्यके स्वभावको पकडनेकी भी हद होती है, अिसलिअे तुझे कुछ लिखना मुझे ठीक नहीं लगा।

अितना स्पष्टीकरण काफी हुआ न? अब तुझे वह पत्र देखना हो तो देख लेना।

तुझे अेक मासकी छुट्टी लेनी चाहिये या नहीं, अिसका निर्णय तू ही कर लेना। यह जरूर है कि नागिनीका वहां आना हो तब तू वहां रहे तो मुझे अच्छा लगेगा। परन्तु जैसा नारणदास कहे वैसा करना।

तेरे गलेके बारेमें मुझे चिन्ता तो होनी ही है। परन्तु क्या हो सकता है? वह बिगडेगा तो दोष जरूर तेरा ही निकालूंगा। तू पूर्ण मौनव्रत ले ले तो मुझे अच्छा लगेगा। अिससे तेरा काम कम नहीं होगा। ट्रैपिस्ट साधु और साध्वियां मौनव्रत लेने पर भी सतत काम करते हैं। कच्चा शाक भले ही खा, परन्तु अुसे पीसकर लेना चाहिये। कच्चा दूध और फल हो तो सागके बिना भी काम चल सकता है।

बापू

१३०

२६-४-'३३

चि० प्रेमा,

तुझे अेक पत्र तो बीचमें लिखा है। आजकल जब वातावरण खूब डावाडोल हो रहा है, तब तेरे विचार समय समय पर आते रहते है। तुझे सिखावन देनेकी अिच्छा नही होती, और तेरे साथ चर्चामे पडनेकी हिम्मत नही होती। मेरी स्थिति गजेन्द्र जैसी है। जरासी सूड बाहर रही है। वह भी पानीमें डूब जाय तो सास रुध जाय। अिसलिअे जिनके विषयमें आजकल मनमे विचार आते हैं, अुनके लिअे केवल प्रार्थना ही करना रहता है। परन्तु किससे करू? जो सदा ही जागता रहता है, जिसे आलस्य नामको भी नही है, जो नखसे भी निकट है, जो सब कुछ सुनता है, सब कुछ देखता है, वह तो मेरी प्रार्थनाअे जानता ही है।

अिसलिअे अुसके आधार पर सूड पानीके बाहर थोडीसी रही है। अुसे जो करना हो सो करे, जैसे रखना हो वैसे रखे।

बापू

१३१

[अिस पत्रमे पू० महात्माजीने मेरे नीचेके सवालोंके जवाब दिये है:

(१) हमसे अुमरमें बडा, हमारी अुमरका अथवा हमसे छोटी अुमरवाला व्यक्ति शोर करता हो, अुलटकर जवाब देता हो या गालिया देता हो, समझाने पर भी न मानता हो और अिसका दूसरो पर खराब असर पडता हो, समय और काम बिगडते हो, तो हम क्या करे? अपनी अधीरताको हम किस प्रकार जीतें?

(२) अपना फर्ज अदा करते समय यदि अपनी किसी जरूरतके लिअे आश्रमके नियम या अनुशासनका भग हो, तो अुसका दूसरो पर क्या असर होगा? बुरा असर होनेकी सभावना हो तो हमे अपनी जरूरतका त्याग करना चाहिये या नही?

(३) लोकाचारका सत्याग्रहके मार्गमें कहां तक आदर किया जाय?

(४) आप जैसे पुण्यश्लोक महात्माके और मेरे बीच किसी बातमें मतभेद हो, मुझे अपना मत अन्तःप्रेरणासे सही लगता हो और अुस पर अमल करनेमें आपकी संस्थाके आचार-धर्ममें बाधा होती हो, तो सत्याग्रहीके नाते मेरा क्या कर्तव्य है?

(५) संस्थाके कारण व्यक्ति प्रिय लगना चाहिये अथवा व्यक्तिके कारण संस्था प्रिय होनी चाहिये?

(६) दूसरोंके बारेमें हमें बुरे विचार आते हैं, अिसे जाननेकी कसौटी क्या है?

(७) जो मनुष्य अनेक प्रसंगों पर झूठा, आलसी या स्वार्थी पाया गया हो, अुसके विषयमें शिकायत होने पर अुसके बारेमें हमें सन्देह हो तो वह सत्याग्रहीको शोभा देगा या नहीं?

(८) सादे जीवनकी मर्यादा क्या हो सकती है? साड़ी पर कशीदा करना, फैशनवाला पोलका पहनना, हाथमें या गलेमें फूलोंका कंगन या माला पहनना, कसीदेके कामकी चप्पलें पहनना — अिनमें कला-रसिकता मानी जाय या आश्रमके सिद्धान्तोंका भंग समझा जाय?

(९) आश्रममें अेक आदमी दूसरेकी आलोचना करता है और स्वयं वही दोष करता है, तब जिस व्यक्तिकी वह आलोचना करता है वह आलोचकको ताने मारता है या अुसके दोष बताता है। अिसे निन्दा या हिंसा कहा जा सकता है?

(१०) आश्रममें आनेवाले सब लोग अलग अलग अिरादे मनमें रखकर आते हैं। अैसी स्थितिमें यहांके अुनके जीवनकी ओर हमारी दृष्टिसे अलग अलग ढंगसे देखना चाहिये या नहीं?]

१-५-'३३

चि० प्रेमा,

मेरा अुपवास सब आश्रमवासियोंके लिअे होगा। अिस तरह तेरे लिअे भी होगा, यह जान कर तू अपने सारे रोगोंको निकाल फेंकना।

तेरे प्रश्न तेरे पास होंगे, यह मानकर अुनके अुत्तर ही संक्षेपमें दे रहा हूं। मेरे पास आज समयकी बड़ी कमी है।

(१) बडे या छोटे कोअी भी हो, अुन्हे नम्रतापूर्वक न समझाया जा सके, तब मौन धारण करके हृदयसे अुनके लिअे प्रार्थना की जाय। अैसा करनेसे अधीरता मिट जायगी।

(२) यहा जरूरतकी व्याख्या जाननी चाहिये। मै श्लोक बुलवा रहा होअू अुस समय मै सापको देखू और अुसे पकडनेकी जरूरत हो, तो मुझे श्लोक बुलवानेके नियमका भग करना चाहिये। अुमी समय मुझे पाखानेकी सख्त हाजत मालूम हो तो भी मुझे अुस नियमका भग करना चाहिये। लेकिन मुझे पानी पीनेकी हाजत हो तो अिस जरूरतको दबाकर मुझे श्लोक बुलवाना जारी रखना चाहिये। तुझे गलेमें कुछ हो गया हो तो भी तू श्लोक चालू रखे, यह शायद मूर्खतासे भी कुछ अधिक बुरा कहा जायगा।

(३) सत्यकी खोजमे जो लोकाचार रुकावट डाले अुसे तोडा जाय।

(४) यदि तुझे मेरे प्रति अनन्य श्रद्धा हो तो तुझे मानना चाहिये कि जिसे तू अन्त प्रेरणा मानती है अुसमे भूल होनेकी सभावना है। परन्तु अन्त प्रेरणा श्रद्धासे भी आगे जानेवाली प्रत्यक्ष वस्तु जान पडे, तो कुछ भी सकट झेलकर अुसीके अनुसार किया जाय।

(५) अिसका अेकागी अुत्तर हो ही नही सकता।

(६) यह प्रश्न समझमे नही आता।

(७) स्वय किसीको बार बार झूठा या आलसी पाया हो तो आगे भी अुसके वैसा होनेका सन्देह तो सत्यार्थीको भी होगा। परन्तु सत्यार्थी सन्देह होने पर भी आलसी या झूठे पर प्रेम रखेगा और अुसे (सुधरनेके) अवसर देता रहेगा।

(८) अिसमें सबके लिअे कोअी अेक नियम नही हो सकता। प्रत्येकके मन पर अिसका आधार है। परन्तु कलाके बहाने सादगीका त्याग नही किया जा सकता।

(९) ताना मारनेकी वृत्तिसे अेक-दूसरेको जवाब देना निन्द्य है। 'तू भी अैसा ही है,' यह कहनेमे हीनता है।

(१०) यह वस्तु अहिंसाके गर्भमे ही निहित है।

यह मानकर कि तेरे पास अपने प्रश्नोकी नकल रखनेका समय न रहा हो, प्रश्न मै साथमें भेज रहा हू।

दो बहनोंको भेज रहा हू। सकोच तो खूब हुआ है, परन्तु मैंने इसे धर्म समझकर भेज रहा हू। आशा है कि वे तेरा काम बढायेंगी नहीं, बल्कि तेरे काममें मददगार होंगी। अुनके लिअे हिन्दी सीखनेकी सुविधा कर देना।

मैं चाहता हू कि सुशीला अपनी अिस बारकी छुट्टी आश्रममें बिताये। तुम दोनोंको अिससे आराम मिल सकता है। अुद्यमका परिवर्तन ही आराम है, यह अग्रेजी कहावत जानती है न? अिसमें काफी सत्य है। अिसे तो लिखते लिखते ही मनमें अुठ आनेवाला खयाल समझना। सुशीलाने कोअी खास कार्यक्रम बना रखा हो तो मेरी अिच्छाके खातिर अुसे रद करनेकी बिलकुल जरूरत नहीं।

बापू

१३२

[दाडी-कूचके समय सत्याग्रह-आन्दोलनमें मुझे भेजनेकी मैंने पू० महात्माजीसे प्रार्थना की थी, वह अुन्होंने स्वीकार नहीं की। आश्रममें सेवाकार्य करने लगी, अुसमें असफल सिद्ध हुअी, अिसलिअे मुझसे जिम्मे-दारी ले लेनेकी मैंने दूसरी प्रार्थना की। वह भी स्वीकृत नहीं हुअी। बादमें मैं जैसे जैसे काम करती जाती वैसे वैसे मेरे सम्बन्धमें शिकायतें भी अुनके पास पहुचती रहती। पू० महात्माजी देशकी आजादीका विचार करें, या हरिजन-अुद्धारका विचार करें या मेरे बारेमें की गअी शिकायतोंका विचार करें? जेलमें अुनकी जो मर्यादा थी अुस पर भी भार पड़ने लगा। यह मुझे दु:सह प्रतीत हुआ। मेरे प्रयत्नोंके बावजूद मैं आश्रमको और पू० महात्माजीको भी सतोष नहीं दे पाती थी, अिससे भी मुझे दु:ख हुआ। श्रम, कम नींद, जिम्मेदारीका भान और आत्म-चिन्तनके लिअे समयाभाव आदिसे मेरा जीवन जड़ बनता जा रहा था। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्यके लिअे मैंने अेक महीनेकी छुट्टी मागी, परन्तु दो यूरोपियन बहनें आनेवाली थीं अिसलिअे छुट्टी नहीं मिली। श्री नारणदास काकाको परेशानीमें डालना भी मुझे पसन्द नहीं था। मैं दूसरोंकी सेवा करती थी परन्तु स्वय किसीसे सेवा नहीं लेती

थी। जिससे बीमारीमे कभी कभी तकलीफ तो होती थी। जिस तरह चल रहा था कि पू० महात्माजीके ता० २५–४–'३३ और ता० २६–४–'३३ के दो पत्र मिले। अुन्हे पढकर मै बहुत घबराजी और दूसरा मार्ग न सूझनेसे भगवानकी शरणमे जाकर मैने अुपवास शुरू कर दिया। हेतु यह था कि भगवान कुछ न कुछ मार्ग बतायेगे। जितनेमे पू० महात्माजीका ता० १–५–'३३ का पत्र मिला। वे २१ दिनका अुपवास शुरू करेगे, यह समाचार पाकर मैने अपना अुपवास तीन दिनके बाद छोड दिया। परन्तु अुपवासमें पू० महात्माजीको पत्र लिखकर मैने प्रार्थना की थी कि, "मै आश्रममे अधिक रहूगी तो आपको मेरी ओरसे कष्ट ही हुआ करेगा। जिसलिजे मुझे हमेशाके लिजे आश्रमसे जाने दीजिये।"]

३–५–'३३

चि० प्रेमा,

तेरा हृदयद्रावक पत्र मिला। तुझे मै किस प्रकार सन्तोष दू? तुझे जाने देना मेरे लिजे बहुत कठिन है। मैने तो तुझ पर आशाका मेरु बाधा है। परन्तु जिसका श्रेय आश्रममे रहनेसे सिद्ध न हो अुससे आश्रममें रहनेका मै आग्रह करू, तो मै स्वार्थी बनता हू और आश्रमका पतन होता है। आश्रममे रहनेवाले सभी लोगोके अधिकसे अधिक श्रेयका सूचक और अुसे साधनेका स्थान आश्रम है। जिसलिजे तेरा श्रेय और आश्रमका श्रेय परस्पर विरोधी हो ही नही सकते। परन्तु तुझे मेरी यह बात सही न लगे तो तुझे भाग जाना चाहिये, जिसमे मुझे बिलकुल शका नही है। अगर अभी तक तेरे अुपवास चल रहे हो तो मेरा अनुरोध है कि अब छोड दे। तू जो निर्णय करेगी अुसे मै स्वीकार करूगा। अतिम निर्णय मै नही करूगा, तुझे करना है।

जैसे मैने नारणदास पर बहुत बडी जिम्मेदारी लादी है, वैसे ही नारणदासने तुझ पर लादी है। नारणदास तो टूटे नही। तू टूट गजी तो मुझे दुःख होगा। तेरे टूटनेमे मेरा भी पूरा भाग जरूर माना जायगा। नारणदास क्या करे?

तू रहनेके निर्णय पर पहुचे तो भी अपने अूपरका बोझ तू अवश्य कम कर लेना। शक्तिसे अधिक भार लेना ही अधर्म है, अुसमें अभि-

मान भी है। जितना दोष शक्तिसे अधिक खानेमें है, अुससे ज्यादा दोष शक्तिसे अधिक भार लेनेमें है। यह फर्क जरूर है कि सौमें से निन्नानवे आदमी शक्तिसे अधिक खाते हैं। सौमें से साढे निन्नानवे शक्तिसे कम ही बोझ अुठाते हैं। अिसलिअे हमें ही सदा अिस बातका पता नहीं रहता कि कब अधिक बोझ अुठाया और कब कम। अितने पर भी परिणाम तो वही आता है जो मैंने बताया। मैं अधिक खाअू तो अुसका परिणाम मुझीको भुगतना पडेगा। मैं शक्तिसे अधिक हरिजन-कार्य अपने सिर ले लू, तो अुसका परिणाम चार करोड हरिजनोंको तो भुगतना पडे ही, शायद सारी दुनियाको भी भुगतना पडे।

अीश्वर तुझे शान्ति प्रदान करे और सही रास्ता दिखाये।

बापू

१३३

७-५-'३३

चि० प्रेमा,

मेरे पत्र तुझे मिले होंगे । तेरे अुपवास बन्द हो गये होंगे और तू शान्त हुअी होगी। तेरे अुपवासका परिणाम जिससे अधिक जाये अैसा मैं चाहता हू। यह तू जानती है।

नागिनीसे खूब परिचय करना। मैं मानता हू कि पूर्ण प्रेम अुसे शुद्ध कर देगा और शुद्ध रखेगा। अुसके पापकी सीमा नहीं थी। अुसकी शुभ भावनाओंकी सीमा नहीं है। परन्तु व्यभिचारसे अुसने सब कुछ खो दिया है। मन पर वह काबू खो बैठी है। अुसके जीवनमें अेक क्षणमें महान परिवर्तन करानेकी जिम्मेदारी मेरी है। अिसलिअे अिच्छा बनी रहती है कि अुन परिवर्तनोंको वह हजम कर सके तो अच्छा।

बापू

१३४

८-५-'३३

चि० प्रेमा,

तुझसे अब कुछ कहना बाकी है क्या? जिसमे तू अपना कल्याण समझे अुसे सारे जगतके विरुद्ध जाकर भी करना। मेरी दृष्टिसे यह वस्तु आश्रममे मुसाव्य है। परन्तु तेरे लिअे वही चीज सही है जो तुझे सूझे।

बापू

१३५

[यह पत्र पूनामे पर्णकुटीसे लिखकर भेजा हुआ है। अिक्कीस दिनके अुपवासमें श्री धुरन्धर पू० महात्माजीकी सेवामे थे।]

३०-६-'३३

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र क्यो नही आते? तेरा शरीर कैसा है? मन कैसा है? गला कैसा है?

सुशीलाके क्या समाचार है?

धुरन्धर तो मुझसे फिर मिल गये थे।

बापू

१३६

[मअी मासमे २१ दिनके अुपवासके सिलसिलेमें पू० महात्माजी जेलसे छूटे अुसके बाद मैं अुनसे मिलनेके लिअे पूना पर्णकुटीमें गअी थी। तब अुनका अुपवास पूरा हो चुका था। अुसके बाद व्यक्तिगत सत्याग्रहकी योजना सामने आअी। पू० महात्माजीने आश्रमको यज्ञमें होम दिया। हम अंतिम सत्याग्रही बहुत करके ३१ जुलाअीकी रातको पकडे गये और

अहमदाबाद सेंट्रल जेल पहुचे। हमे कोअी आठ दिनकी हवालात मिली। बादमे छह महीनेकी सजा हुअी। पूज्य महात्माजी और महादेवभाअीको पूना ले गये। वही दोनोको सजा हुअी। पू० महात्माजीने फिर अुपवास किया, छूटे और हरिजनोकी सेवा करनेके लिअे बाहर ही रहे — यह मानकर कि अेक वर्षकी सजा अिस प्रकार हरिजन-सेवा करके भुगतेगे।

अिस पत्रमे मेरी वर्षगाठके आशीर्वाद है।]

१–७–'३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मेरे पत्रके साथ टकरा गया। मैने कल ही लिखा और तूने भी कल लिखा।

हम सबके वर्ष अेकके बाद अेक बहे जा रहे है। हम छोटे हो रहे है, यह कहना कदाचित् अधिक सही नही होगा? जितने वर्ष गये गये अुतने आयुमे से कम हो गये। अिस हद तक क्या हम छोटे हुअे नही माने जायगे? अिसमे से मै तो सार यह निकालना चाहता हू कि हम अधिक सावधान बने। हमे सौपी हुअी पूजी कम होती जा रही है। जो रही है अुसका पूर्ण अुपयोग करना हम सीखे। मै चाहता हू कि तेरे विषयमे अैसा ही हो।

बापू

१३७

८–७–'३३

चि० प्रेमा,

के बारेमे तेरा अनुभव बताना। बहुत लोग कहते है कि वह प्रभुदासके लिअे अयोग्य है। नारणदासकी भी यही राय है। तेरी राय बताना।

बापू

१३८

१७-७-'३३

चि० प्रेमा,

मेरा पत्र तो तुझे मिला ही होगा। मेरी आशाये तू जानती है। नारणदासको लिखे मेरे पत्रसे अधीरता नही पैदा होनी चाहिये। अभी तो अैसे कदम[1] के लिअे तत्परताकी जरूरत है। वह समय कब आयेगा, यह तो दैव ही जानता है।

बापू

१३९

[पू० महात्माजी १९३३ मे जेलसे छूटकर आश्रमसे दूर अेलिस-ब्रिजके पास श्री रणछोडलालभाअीके बगलेमे रहते थे। आश्रमका ग्रंथालय देखनेके लिअे अेक दिन मैंने अुन्हे सन्देश भेजा था। तब वहासे आनेके पहले लिखी गअी चिट्ठी — बहुत करके जुलाअीमें।]

शनिवार

चि० प्रेमा,

अकल्पित बाधा न आये तो आज तीन बजे पहुचूगा।

बापूके आशीर्वाद

१४०

[ता० २१-१०-'३३ से १७-५-'३४ तकके पत्र मुझे जेलमें मिले। छह महीनेकी सख्त सजा भुगतकर (अिसमें १६ दिनकी माफी मिली) मैं २२ जनवरी १९३४ को छूटी। बादमे २६ जनवरीको श्री काका-साहबके नेतृत्वमें फिर सत्याग्रह किया। अुसमें पकडी गअी और फिर मुझे छह मासकी सजा हुअी। जहा तक याद है, मैं १ जुलाअी १९३४ को

---

१. आश्रमको सत्याग्रहके यज्ञमें होम देनेका कदम।

जेलसे छूटी। सजाकी मियाद पूरी नही हुअी थी। परन्तु पू० महात्माजीने आन्दोलन वापस लेनेका वक्तव्य प्रकाशित किया, जिसलिअे सरकारने वहुतसे कैदियोको जल्दी छोड दिया।]

फिरसे नही पढा।

वर्धा,
२१-१०-'३३

चि० प्रेमा,

अपने किसी पत्रमे मैने लिखा था कि मै तुझे जान-बूझकर पत्र नही लिख रहा हू, ताकि धुरन्धरके पत्र तुझे मिलते रहे। परन्तु जमनुके पत्रसे देखता हू कि तू मेरे पत्रकी आशा रखती है और वे तुझे मिल भी सकते है। लिखनेका विचार कर ही रहा था कि जितनेमें कल सुशीलाका कार्ड मिला। अिसलिअे यह पत्र प्रात कालकी प्रार्थनासे पहले लिख रहा हू।

मै देखता हू कि तेरी गाडी वहा अच्छी चल रही है। तू लिखनेकी स्थितिमे हो तो मुझे अपनी दिनचर्या भेजना और खाने-पीने वगैराका दूसरा जो हाल लिख सके वह भी लिखना।

मेरे पास अभी वा, मीरा, चद्रशकर[1] और नायर है। काका अभी यहा है। किशोरलाल और गोमती[2] परसो गये। स्वामी[3] अब आयेगे। तारावहन[4] भी आयेगी। पन्नालाल[5], नानीवहन, गगावहन अहमदाबादमे

१ श्री चद्रशकर शुक्ल। श्री काकासाहबके विद्यार्थी और गुजरात विद्यापीठके कार्यकर्ता। थोडे वर्ष पहले गुजर गये।

२ श्री किशोरलाल मशरूवाला और अुनकी पत्नी श्री गोमतीवहन।

३ स्वामी अर्थात् स्वामी आनद। अेक समय नवजीवन मुद्रणालयके और 'यग अिडिया', 'नवजीवन' तथा 'हिन्दी नवजीवन' साप्ताहिकोके व्यवस्थापक थे।

४ श्री तारावहन श्री रमणीकलालभाजी मोदीकी पत्नी।

५ श्री पन्नालालभाजी झवेरी आश्रमके पास स्वतन्त्र वासमें रहते थे। अुनकी पत्नी श्री नानीवहन और भतीजी मा श्री गगावहन झवेरी। श्री महादेवभाजीकी पत्नी श्री दुर्गावहन मेरे साथ जेलमे थी। पू० वापूकी

हैं। आश्रम सदाके लिअे हरिजन-निवास हो जायगा। अुसमे अुनका (हरिजन-सेवक-सघका) दफ्तर वगैरा चला जायगा। यह सब तूने पढा होगा। तुझे और दूसरी सब वहनोको अच्छा लगा होगा।

महादेवके लम्बे पत्र आते रहते हैं। वे वेलगाव[1]में पुस्तकालय खोलकर वैठे है। दुर्गाके पास अुनके पत्र आते होगे। देवदास मुलतानमें आनन्द कर रहा है। प्यारेलाल नासिकमें है। वा तैयारी कर रही है।

लक्ष्मीवहनके पास ४० से अधिक लडकिया हो गअी हैं। द्वारकानाथ अुनके सहायक हैं।[2] नर्मदा नालवाडीमे विनोवाके पास है।

प्रभुदासका विवाह वुधवारको हो गया। अुसे सगिनी जैसी चाहिये वैसी मिली है। २४ वर्षकी है। गुरुकुलमें पढी है। होशियार मालूम होती है।

मेरी यात्रा ८ तारीखको शुरु हो रही हे। सब वहनें आनदमें होंगी और प्रत्येक क्षणका सदुपयोग करती होगी। अधिक तेरा पत्र आने पर।

वापूके सबको आशीर्वाद

हमारे साथ सजा हुअी थी, परन्तु महात्माजीके अुपवासके समय अुन्हें छोड दिया गया था। वादमे पू० महात्माजीके हरिजन-कार्यमे लगते ही पू० वा भी जेलमें आ गअी। पत्रमे 'तैयारी' का जो सुझाव है वह जेल जानेकी तैयारीका हे।

१ वेलगावकी जेलमे 'अनासक्तियोग' का अग्रेजी करनेके लिअे अुन्होंने वहुत अध्ययन किया था।

२ आश्रमकी तमाम लडकिया तथा श्री लक्ष्मीवहन सरे वर्धा जाकर महिला-आश्रममें रही थी। लक्ष्मीवहनकी सहायता श्री द्वारकानाथ हरकरे करते थे।

१४१

२६-११-'३३

चि० प्रेमा,

तेरे समाचार सुशीला देती है। और लोग भी देते है। मेरा पत्र तुझे मिल गया, यह बहुत अच्छा हुआ। तूने कमाया या खोया, अिसका सही हिसाब तो तू बाहर निकलकर ही लगा सकेगी। लेकिन अनुभव अमूल्य है, अिसमें संदेह नही।

तेरा कार्यक्रम मैं समझ सकता हू। तू शरीरको संभालकर रख सकी, यह बहुत अच्छा हुआ। अिसकी कुजी तेरे हाथमें थी। अुसका अुपयोग तूने ठीक किया दीखता है।

हरिजन-सेवाके बारेमें तो क्या लिखू? (प्रयत्न) चल रहा है। लोगोका अपार प्रेम अनुभव कर रहा हू। मेरा शरीर भी खूब काम दे रहा है। वजन ११० तक पहुच गया है। यह अैसी वैसी बात नही है। चद्रशकर महादेवकी जगह लेनेका महाप्रयत्न कर रहे हैं। मीराबहन तो है ही। रामनारायको तू नही जानती। जानकीबहनकी ओम[1] है। वह बहादुर लडकी है। और अुसकी बुद्धि भी सुन्दर है। अीश्वरने अुसे शरीर भी बढिया दिया है।

अब अधिक लिखनेका समय नही है। दूसरे बहुतसे पत्र लिखने है। मौनमे ही अधिकाश पत्रव्यवहार कर सकता हू।

बापूके आशीर्वाद

---

१ ओम अर्थात् अुमा — श्री जमनालाल बजाज और श्री जानकी-देवीकी छोटी पुत्री।

१४२

[मैंने अेक पत्रमें पू० महात्माजीको वताया था कि जेलमे छूटनेके वाद लम्वा पत्र लिखूगी।]

१५-१-'३४

चि० प्रेमा,

तुझे तो अितना ही लिखना है कि तूने जो लवा पत्र लिखनेका निश्चय किया था अुसकी मै प्रतीक्षा करुगा।

किसन[1] आनदमें है। जितनी मेरी अिच्छा है अुतना ध्यान मै अुस पर नही दे सकता।

'हरिजन' के सारे अक पढ लेना। गुजराती और अग्रेजी दोनो।

वापूके आशीर्वाद

१४३

[छूटनेके वाद तुरत ही जेल जानेकी सलाह महात्माजीने हम सवको दी थी। अिसलिअे मै अुनसे या सुशीलासे भी मिलने नही गअी, अहमदावादके पास श्री काकासाहवके साथ ही छावनीमे रही और चौथे दिन पकडी गअी। श्री धुरन्धर मुझे मिलने आये थे। चार दिन साथ रहे। मेरी गिरफ्तारीके वाद वे वम्वअी गये। मै वाहर थी अुस अरसेमे पू० महात्माजीको मैने लम्वा पत्र लिख डाला। लीलावतीवहन मेरे साथ पकडी गअी। वाकी वहनें वादमे आ पहुची।]

---

१ किसन आन्दोलनका काम करती हुअी पकडी गअी और थाना जेलमें पहुच गअी। वहा अुनकी तवीयत विगड गअी थी। वहासे छूटनेके वाद अुसके कुछ मास शरीर और मनको सुधारनेमे वीते। फिर पू० महात्माजी हरिजन-यात्रा पर निकले तव अुनकी अनुमति लेकर किसन यात्रामें शामिल हो गअी और लगभग पाच महीने तक अुनके साथ भ्रमण करती रही।

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी अभी पूरा पढ सका। तीन बारमें पढना पडा।

मैं तो जानता ही था कि तू मुझसे मिलने आनेका विचार नही करेगी। परन्तु जब मैंने सुना कि तेरी आनेकी अिच्छा हुअी है तब मैंने सयमकी आवश्यकता बताअी, परन्तु आनेसे रोका नही। तुरत मन्दिरमे पहुच जानेका विचार ही तुझे और दूसरे प्रतिज्ञा लेनेवालोंको शोभा देता है। परन्तु जिनके मन विह्वल हो गये हो अुन पर जबरदस्ती थोडी ही की जा सकती है?

तेरे पत्रसे मनमें प्रश्न अुठता है कि यह पत्र तुझे मिलेगा या नही।

तेरी पूनियोंका सूत बहुत प्रेमसे सभालकर तो रखा ही था, अुस पर महादेवके सुन्दर अक्षरोंमें लिखी हुअी चिट्ठिया भी है। परन्तु अुपवासमे अुसका क्या हुआ, अिसका मुझे खयाल नही है। सभव है महादेवने सभालकर कही रख दिया हो। महादेवको अिस समय पत्र लिखनेकी सख्त मुमानियत है, अिसलिअे पुछवाना भी जरा मुश्किल है।

तेरा काता हुआ जो सूत है, अुसे तो बुनवा डालना चाहिये। रामजी बुन देगा।

मै देखता हू कि तू काफी पढ रही है। अिच्छा हो तो तुलसीकृत रामायण, •बाअिबल और कुरान ध्यानपूर्वक पढ लेना। अुर्दू शुरू किया है, अुसे पूरा किया जा सके तो कर लेना। तूने समयका सुन्दर अुपयोग किया है।

तेरे पत्रमे अभी बहुत कुछ बतानेको रह गया है। मुझे आशा है कि तूने दूसरा पत्र लिखा होगा।

लीलावतीका तो वैसा ही हाल है जैसा तूने लिखा है। अुसके भविष्यके बारेमे कुछ नही कहा जा सकता।

'हरिजन' के अक पढ लेनेकी सिफारिश मैंने अिसीलिअे की थी कि अिन महीनोमे अिस प्रश्नके बारेमे जो हुआ अुसे तू जान ले। परन्तु फुरसत न मिली हो तो पढनेकी कोअी बात नहीं।

अब शायद तुझे 'क' वर्ग मिलेगा।[1] अगर मिले तो मुझे अच्छा लगेगा।

किसनका मन और शरीर ठीक हो गया दीखता है। अभी कमजोर तो वह है। अुस पर कामका बोझ डाला जा सके अैसा मुझे नही लगता। अुससे जितना हो सकता है अुतना काम कर लेती है। परन्तु वह जल्दी ही थक जाती है। अुसे खूब सोनेकी जरूरत है। यहा अुसे जो सोहबत मिलती है वह अुसके अनुकूल दीखती है। ओमसे अुमरमे लगभग दुगुनी होने पर भी किसन अुसके साथ खूब घुल-मिल गअी है। अिसमें मुख्य भाग किसका है, यह कहना कठिन है। दोनो बहुत मिलनसार दीखती है। किसन मुझे २८ वर्षकी लगती ही नही।

तेरा जेलसे लिखा हुआ पत्र मिला ही नही। अपने बारेमे तो क्या लिखू? मेरा शरीर अच्छा है और कामका बोझ काफी अुठा सकता है। लिखनेका समय मुश्किलसे ही मिलता है।

बापूके आशीर्वाद

१४४

[मैने अुपवास किये और अीश्वरसे प्रार्थना की कि वह मुझे मार्ग बताये। अैसा जान पडा कि अीश्वरने मेरी प्रार्थना मजूर की। पू० महात्माजी जेलसे छूटे। व्यक्तिगत कानून-भगकी योजना तैयार की गअी और आश्रमको अुसमें होम दिया गया। अुसके साथ ही आश्रमकी अतिम टोली (बाकी रही सब बहनें और कुछ बडी लडकिया) जेल पहुची। हमें तो नीदसे जगाकर पकडा गया, अिसलिअे कानून-भगका 'रोमास' अनुभव करनेका सौभाग्य कहासे मिलता? परन्तु जेलमे मुझे बहुत आराम मिला और वाचन-लेखनके लिअे काफी अवकाश मिला। दो बारके कारा-वासको मिलाकर ११॥ महीनेमे मैने लगभग ६० ग्रथ पढे। अेच० जी० वेल्सके दो बडे ग्रथो (१) Outline of History (२) The Work, Wealth and Happiness of Mankind का मराठी अनुवाद किया।

1 मुझे दोनो ही बार जेलमें 'ब' वर्ग मिला था।

मैं रोज नौ कक्षायें लेती थी, स्वयं अुर्दू पढ़ती थी, सूत कातती थी और जेलका काम नियमानुसार करती थी। आश्रममें ११८ पौंडसे अधिक वजन कभी नहीं हुआ था। जेलमें वह १२८ पौंड तक पहुंचा। जेलके अधिकारी, छोटे-बड़े तथा अपराधी कैदी मेरे प्रति सद्भावनासे सद्व्यवहार करते थे और मेरे साथकी बहनें भी, जो आश्रममें मेरे प्रति अविश्वास या अरुचि प्रगट करती थीं, निकट परिचयमें आकर प्रसन्न हुआीं और सारी गलतफहमी दूर हो गआी। अैसा बहुत ही सुन्दर अनुभव मिला।

बात यह थी कि जेलमें मैं भी सबकी तरह साधारण कैदी थी और सबके साथ रहती थी। मेरे पास किसी प्रकारकी जिम्मेदारी नहीं थी। मैंने अनुभवसे देखा है और मैं अिस निर्णय पर पहुंची हूं कि सत्तामात्र भयावह और विद्वेष फैलानेवाली वस्तु है। फिर वह राजनैतिक हो या सामाजिक, शिक्षा-सम्बन्धी हो या धार्मिक। आम तौर पर लोग अनुशासनका पालन करनेवाले, दक्ष, कार्य-तत्पर और अुद्यमी नौकरोंको चाहते हैं। परन्तु अैसा मालिक मिले तो अुसे पसन्द नहीं करते। वे यह तो चाहते हैं कि सेवा-तत्पर साथी मिले, परन्तु स्वयं अैसे बनना नहीं चाहते। अपने पर दूसरोंका या अपना किसी भी तरहका अंकुश अुन्हें अच्छा नहीं लगता, परन्तु यह अिच्छा वे जरूर रखते हैं कि दूसरे मर्यादाकी रक्षा करें। सार यह कि प्रत्येकको स्वेच्छाचार अधिक पसन्द होता है। मानव-मन अेक पहेली ही है।

आश्रममें मेरे पास किसी प्रकारकी 'सत्ता' या 'अधिकार' था ही नहीं। फिर भी अनेक कामोंकी जिम्मेदारी मेरे सिर पर आ पड़नेसे समुदायसे काम करवानेका कर्तव्य पैदा हुआ था। दिन-रात बजनेवाले आश्रमके घंटेके छप्पन टकोरोंके साथ कामोंका मेल बिठाना ही पड़ता था। पीढ़ियोंसे हमारे समाजमें सामूहिक दायित्वका भान नहीं रहा है। यह नया तंत्र आश्रमवासियोंको सिखाने जितना नैतिक अधिकार या योग्यता भी मुझमें नहीं थी। अिसलिअे जब जिम्मेदारी वापस ले लेनेकी मेरी प्रार्थना पू० महात्माजीने स्वीकार नहीं की, तो मेरी दशा सरौतेके बीच सुपारी जैसी हो गआी। परन्तु भगवानने लाज रख ली। जेलमें यह सारा पाप धुल गया और मैं 'मुक्त' हो गआी।

मैंने देख लिया कि सत्ताके पद पर व्यक्ति रहा कि अुसके दोष ही देखे जाते हैं। मुझमे जो दोष थे वे ही आसपासके लोगोको काटेकी तरह खटकने लगे। जिम्मेदारीसे मुक्त हुअी कि तुरन्त ही परिस्थितिमें परिवर्तन हुआ। अिससे मैंने यह सार निकाल लिया कि 'न गणन्याग्रतो गच्छेत्'। मै नेता या अधिकारी होनेके योग्य नही हू।

वहनोके साथ मेरे स्नेह-सवध दृढ हुअे। यो तो सब वहने सज्जन ही थी, परन्तु आश्रममे हमारे वीच अेक प्रकारका आवरण आ गया था।

प्रारभमे मुझे आन्दोलनमे जाने देनेसे पू० महात्माजीने अिनकार कर दिया। वह भी अीश्वरीय योजनाके अनुसार ठीक ही था, अैसा मै मानती हू। आश्रममे मुझे जो तालीम मिली, जो अनुभव प्राप्त हुअे, पू० महात्मा-जीसे निरतर वात्सल्यभरा मार्गदर्शन मिलता रहा, अुससे मेरा जीवन समृद्ध हुआ है। मैंने अपना जीवन अुन्हे अर्पण कर ही दिया था। तब मेरे लिअे तो वे जिस परिस्थितिमें रखे अुसीमे रहना और वे जो सस्कार दें अुन्हे शिरोधार्य करना धर्म-पालन जैसा हो गया था। प्रारभमें मै कारावासको अपनाती तो अिस अमूल्य धनकी प्राप्ति मुझे होती ही नही। मै तो तालीम लेने ही आश्रममे आअी थी। वह तालीम मुझे आश्रममें मिली और जीवनभर काम आअी। अुस समयकी मेरी आयु तालीम लेकर योग्य वननेकी ही थी। मुझमे निष्ठा थी, अुत्साह था, शक्ति थी। अिसलिअे मै पूज्य महात्माजीके पास समय पर ही पहुची और योग्य संस्कार ही मैंने प्राप्त किये। 'यदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्' अैसा सात्त्विक सुख मैंने प्राप्त किया।

किसन पू० महात्माजीके साथ पाच महीने रही। वादमें गरमीकी छुट्टियोमे सुशीला पू० महात्माजीके पास अेक महीने रह आअी। तब अुनकी हरिजन-यात्रा अुत्कलमे चल रही थी। सुशीलाके साथ मेरा पत्रव्यवहार नियमित रूपसे होता था। पू० महात्माजीके साथ भी वीच वीचमें पत्र-व्यवहार होता रहा।

आन्दोलनके पूरे जोरके समय मुझे जेल जानेका मौका नही मिला था, परन्तु व्यक्तिगत सत्याग्रहके समय जेल जाना नसीब हुआ। अुसमे केवल सैनिकका कर्तव्य पूरा करना था, 'रोमास' जैसी कोअी चीज

अुसमें नहीं थी। दूसरे कारावासका समय आधा बीता था कि पू० महात्माजीका वक्तव्य पढनेको मिला। अुन्होंने आन्दोलन वापस ले लेनेका निर्णय घोषित किया था। अिससे मुझे बहुत बडा आघात लगा। मुझे लगा, "हम बिलकुल नालायक साबित हुअे! पू० महात्माजी जैसे महान आध्यात्मिक शक्ति रखनेवाले कुशल संग्राम-वीरको हार स्वीकार करनी पडी! देशकी सारी तपस्या पर पानी फिर गया!" वहां मुझे अंग्रेजी अखबार 'टाअिम्स ऑफ अिंडिया' मिलता था। तमाम साथी बहनोंको वह वक्तव्य मैंने पढकर गुजरातीमें समझाया। मगर मुझे असह्य दुःख हुआ। अुस समय मुझे तंबूमें रखा गया था। तंबूमें जाकर मैं रो पडी। मुझे सांत्वना देनेके लिअे वहां आनेकी हिम्मत कोअी बहन न कर सकी। जेलर श्री मुखेडकर अुस दिन जेल-समितिके सदस्योंको साथ लेकर वहां आये थे। मेरा मुंह देखकर मेहमानोंको शंका हुअी कि मुझे कुछ न कुछ दुःख है। वे पूछने लगे, "आपको कोअी शिकायत है? हमें बताअिये। हम अुसे दूर करेंगे।" परन्तु मैंने सिर हिलाकर अिनकार कर दिया। सारा दिन रोनेमें गया। दूसरे और तीसरे दिन भी मेरी यही स्थिति रही। मनमें पू० महात्माजीके ही विचार आते थे। "नमक-सत्याग्रहके समयकी परिस्थिति कितनी भव्य थी! और आज कैसी गमगीनी है! देशकी ताकत बिलकुल घट गअी है। हमारे नेताओंको कितना दुःख होता होगा!" असे विचारसे मैं बेचैन हो गअी थी। दूसरे दिन जेलर मुखेडकर मुझे मिलने और सांत्वना देने आये और कहने लगे, "मुझे आश्चर्य होता है। वहां पुरुष-विभागमें सभी संतोष मान रहे हैं और जल्दी छूटनेकी बातें कर रहे हैं। और आप अितनी गमगीन क्यों हैं? दुनियामें अुतार-चढाव तो आते ही रहते हैं!" वगैरा। जेलके सब अधिकारियोंको जिस घटनाका पता चला, अिसलिअे सभी मेरे प्रति विशेष सहानुभूति दिखाने लगे। अेक साथी बहनने कहा, "आपकी गमगीनीके कारण यहांका वातावरण भी गंभीर हो गया है। नहीं तो हम सब छूटनेका आनंद लूटतीं।"

मैंने सुशीलाको पत्र लिखा तब अपनी हालत अुसे बताअी। अुसने पू० महात्माजीसे बात की। अुन्होंने तुरत पटना जाते समय रेलसे मुझे पत्र लिख भेजा और छूटनेके बाद मिलनेकी आज्ञा दी।

मेरे स्मरणके अनुसार १९३४ की जुलाअीकी पहली तारीखको हम छूटे। स्मरण अिसलिअे रहा कि अंग्रेजी तारीखके अनुसार अुस दिन मेरी वर्षगाठ थी। जेलर श्री व्यासने मुझे गुलाबके फूलोका अेक सुन्दर गुलदस्ता विदाअीके समय भेट किया।

पू० महात्माजी अुस समय भावनगरमे थे। श्री नारणदास काका हम सबसे मिलनेके लिअे साबरमती आश्रममे आ गये थे। अुनसे मिलनेके बाद हम अधिकाश बहने पू० महात्माजीसे मिलने भावनगर गअी। बातें हुअी। पू० महात्माजीने सबसे कह दिया कि, "सत्याग्रह आश्रम तो बद हो गया है। वह फिरसे शुरु होनेवाला नही है। मैं भी अन्यत्र रहूगा। तुम सब अपने अपने भावी जीवन-क्रमके बारेमे स्वतत्र निर्णय कर लेना।"

आन्दोलन वापस लेनेका निर्णय पढा, तभीसे मेरे मनमें भविष्यके विचार भी प्रवेश तो कर ही रहे थे। अैसा लगता था कि छूटनेके बाद हमे अपना पथ स्वय ही खोज लेना पडेगा। रोज प्रातकालीन प्रार्थनाके बाद मैं भगवानकी शरणमें जाकर भविष्यका मार्ग बतानेके लिअे दीनता-पूर्वक प्रार्थना करती थी। अिस प्रकार अत तक चलता रहा। बादमें ग्रामसेवाके लिअे पू० महात्माजीने पुकार की, अिससे मुझे भी लगा कि महाराष्ट्रमे जाकर ग्रामसेवाके काममें लग जाअू तो अच्छा। अिसलिअे जब भावनगरमे पू० महात्माजीने मुझसे कहा कि, "मैं जमनालालका सन्देश तुझे कहना चाहता हू। महिला-आश्रमका सचालन करनेके लिअे अुन्होने तेरी माग की है, और अपनी अिच्छा तुझे बतानेको मुझे प्रेरित किया है।" तब मैंने अुनसे कहा, "सत्याग्रह आश्रममें सस्था-सचालनका अनुभव मैंने तीन वर्षसे अधिक किया। अुस कामके लिअे मेरी अयोग्यता सिद्ध हो गअी। अब अैसा काम मैं कभी पसन्द नही करुगी। मै महाराष्ट्रमें बसकर ग्रामसेवा करना चाहती हू।" अिस पर अुन्होने कहा, "ग्रामसेवा तो मुझे प्रिय ही है। अिसलिअे अगर तू वह काम करना चाहती है तो मुझे पसन्द है। वैसा ही करना और मुझे लिखती रहना।"

अुनसे विदा लेकर मैं राजकोट गअी और सुशीलाके पास थोडे दिन रही। महाराष्ट्रका परिचय मुझे नही था, अिसलिअे श्री धुरन्धरको बबअी पत्र लिखकर मैंने अपनी अिच्छा बताअी और मेरा मार्गदर्शन

करनेकी प्रार्थना की। अुनका जवाब आया, "महाराष्ट्रमें तुम्हें सेवाकार्य करना हो तो अेक ही व्यक्ति है जिसकी मददसे तुम काम कर सकती हो। वह है श्री शकरराव देव। अुनसे मिलकर मैंने तुम्हारी बात की है। वे महाराष्ट्रमें आश्रमकी स्थापना करके सेवाकार्यका सगठन करना चाहते हैं। अुसमें तुम्हें प्रवेश देनेमें अुन्हें आनद होगा। वे १५ तारीखको बम्बअी आनेवाले है। अिसलिअे तब तक तुम यहा आ जाना।" यह पढकर मुझे बडा सन्तोष हुआ और मैं तुरन्त ही बबअी पहुच गअी। मैं किसनके घर ठहरी थी। वहा श्री धुरन्धर श्री शकरराव देवको ले आये और परिचयके पश्चात् अुनके आश्रममें शामिल होनेका मैंने निश्चय कर लिया। अुसी दिन शामको मैंने श्री धुरन्धरके साथ महाराष्ट्रके मुख्य नगर पूनामें प्रवेश किया। मुझे शकररावजीके पास पहुचाकर और बातचीतके बाद निर्णय हो जाने पर दूसरे दिन वे बम्बअी लौट गये।

खोजके बाद पूनासे १९ मील दूर घाट पर बसा हुआ सासवड गाव आश्रमके लिअे पसन्द किया गया और ५ अगस्तको दूसरे आश्रमी बन्धुओके साथ मैं वहा पहुची। अेक बडा पुराना मकान आश्रमको मिला था। अुसमें हम चार पहले सदस्य रहने लगे। सयोजक थे आचार्य भागवत। श्री शकररावजी महाराष्ट्र प्रातीय कांग्रेसके अध्यक्ष थे। अिस-लिअे अुनका मुकाम तो पूनामें ही रहता था। परन्तु वे समय समय पर सासवड आ जाते थे। अिस प्रकार मेरे नये जीवनका प्रारभ हुआ।

पूज्य महात्माजीने व्यक्तिगत सत्याग्रहकी आज्ञा देनेसे पहले आश्रमी बहनोंकी हमारी आखिरी टोलीको अुपदेश दिया था, "यद्यपि सत्याग्रह आश्रम अब होम दिया गया है, फिर भी अुसने तुम सबके जीवनमें प्रवेश कर लिया है। स्थावर आश्रम मिट गया है, परन्तु अुनका जगम स्वरूप तुम सब हो, अिसलिअे जहा जाओ वहा तुम आश्रमका वातावरण पैदा करना।" ये शब्द मेरे हृदय पर हमेशाके लिअे अकित हो गये। अिसलिअे क्या जेलमें और क्या बाहर, मैं अपने भीतर और आसपास आश्रमका वातावरण पैदा करनेका प्रयत्न करती थी। अत जेलसे मुक्त होनेके बाद फिरसे पारिवारिक जीवनमें प्रवेश करना मेरे लिअे असभव था। आश्रमके नियमोंका मैं सख्तीसे पालन करने लगी।]

चि० प्रेमा,

अितने महीने किसन मेरे पास रही, अब सुशीला है। अिसलिअे तेरे बारेमें कितनी, कैसी और कितनी बार चर्चा हुअी होगी, अिसकी कुछ न कुछ कल्पना तो तुझे होनी ही चाहिये। यह वस्तुस्थिति होनेसे तुझे संदेश भी क्या भेजे जाते? आज लिख रहा हूं, अिसके दो कारण हैं। अेक तो यह कि सुशीला लिखनेके लिअे मुझे प्रेरित कर रही है। दूसरा, अुसकी दी हुअी खबर। मेरे निर्णयसे तू तीन दिन रोअी? मैं मानता था कि यह निर्णय सुनकर तुझे आघात तो पहुंचेगा, परन्तु साथ ही तू नाचेगी और गायेगी, क्योंकि तू अुसका रहस्य, महत्त्व और शुद्ध सत्य समझे बिना नहीं रहेगी। अनुभव प्रतिदिन अुसका औचित्य सिद्ध कर रहा है। अिसमें साथियोंकी अयोग्यताकी बात नहीं है। कोअी भी अयोग्य साबित नहीं हुअे। परन्तु जो कुछ प्रगट हुआ वह सूचक था और अुसने मुझे यह निर्णय करनेको प्रेरित किया। समय आने पर — और समय तो आयेगा ही — यही साथी फिर जूझेंगे। बात अधिक शक्ति प्राप्त करनेकी, अधिक संयमकी आवश्यकताकी थी। मेरे हथियार अिस समय काम न दें तो अिससे वे अयोग्य नहीं ठहरते। अुन्हें अधिक तेज करनेकी जरूरत रही होगी, अुनका अुपयोग असमय हुआ होगा। अिससे अधिक नहीं समझाया जा सकता। तू छूटे तब मुझे खोजकर सीधे मेरे पास चली आना और न समझी हो तो जी भरकर मुझसे झगड़ना और मेरी बात समझना। अिस निर्णयके पीछे सबकी कसौटी है। मेरी कसौटी भी अुसमें आ जाती है। परन्तु अीश्वरकी कृपासे हम सब अुसमें पास होंगे। अब ज्यादा नहीं।

बापूके आशीर्वाद

यह पटना जानेवाली रेलमें लिखा है। परन्तु ओ० आर्अी० रेलवे हमेशा अैसी सरल गतिसे चलती है कि अुसमें लिखनेमें दिक्कत नहीं होती।

१४५

[नये कार्यक्षेत्रकी खोजमें कुछ समय गया। क्षेत्र निश्चित हुअे बिना पू० महात्माजीको लिखती भी क्या? यह सोचकर मैंने पत्र नहीं लिखा था। परन्तु अुनका धीरज टूट गया और थुतावलीमें अेक पत्र अुन्होंने श्री धुरन्धरके मारफत मुझे भेजा। अिसलिअे जवाब लिखना ही पडा। वर्षगाठके आशीर्वाद भी मुझे चाहिये थे।]

१९-३-'३४

चि० प्रेमा,

तूने पत्र लिखनेका वचन दिया था, फिर भी नहीं लिखा। यह दुःखकी बात है। मैंने आशा रखी थी कि तू भविष्यमें क्या करना चाहती है अिस बारेमें कुछ लिखेगी। अब भी रुकू क्या?

बापूके आशीर्वाद

१४६

३१-३-'३४

चि० प्रेमा,

तेरा काफी लंबा और स्पष्ट पत्र मिला।

माता-पिता बच्चोंके स्वास्थ्यका स्मरण या वर्णन नहीं करते। अुनकी व्याधियोंका स्मरण-वर्णन करते हैं। व्याधि केवल शारीरिक ही नहीं।

तू आश्रमके नियमोंका पालन कर रही है, अिससे मुझे आश्चर्य नहीं होता। न करती तो जरूर आश्चर्य होता।

तेरे शुभ मनोरथ पूरे हों।

वर्षगाठ तो रोज होती है। हम रोज जन्म लेते हैं और रोज मर कर फिर जन्म लेते हैं। परन्तु रूढिके वश होकर हम अमुक दिनको ही जन्मदिन मानते हैं। अुस दिनके और सदाके मेरे आशीर्वाद तेरे पास है ही।

तुझे अुत्तर नारणदासके मारफत लिख रहा हूं। अिसलिये पास पैसे बचा रहा हूं। नारणदास तो तुझे लिखेंगे ही। अुन्हें मुझे आज लिखना

पड रहा है। अिसलिअे यह पत्र धुरन्धरके मारफत न भेजकर नारणदासके मारफत भेज रहा हू।

तू लिखती रहना। वहाका वर्णन अच्छा है। यह पत्र सुवहकी प्रार्थनासे पहले लिखवा रहा हू।

वापूके आशीर्वाद

१४७

[सासवडका आश्रम शुरू होनेके वाद वहाके जीवन-क्रमका वर्णन मैंने महात्माजीको भेजा था। श्री जमनालालजी ववअी आये हुअे थे। मुझे वुलाकर वर्धा जानेका अुन्होंने वडा आग्रह किया, किन्तु मैंने अिनकार किया। फिर भी अुन्होने प्रसन्न होकर ग्रामसेवा-कार्यमें भी मदद देनेका आश्वासन दिया। मेरे पिताजीका रोष अव शान्त हो गया था। अुन्होंने मुझे घर वुलाकर आशीर्वाद दिया। यह वात मैंने पू० महात्माजीको लिखी।

मैं जव सासवड गअी तव महाराष्ट्र और वम्वअीके लोगोसे यह प्रवाद सुननेको मिला कि, "सत्याग्रह आश्रम पू० महात्माजीके आदर्शको नही पहुच सका, अुसमे वहुत दोष थे। अिसलिअे अुन्होंने आश्रमको होमकर प्रकरण खतम कर दिया।" यह वात मैंने पू० महात्माजीको पत्रमे लिखकर वताअी थी।]

२१-८-'३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी अुदारता अपार है। मैं न लिखू तो भी तेरा काम चलेगा। परन्तु अिस अुदारताका अुपयोग करनेकी अभी मेरी अिच्छा नही। फिर भी ववाअी तो देनी ही चाहिये। जमनालालजीसे मिल आअी, यह ठीक किया। अुनके साथ प्रार्थना की, यह भी अच्छा हुआ। अुन्होंने खुद होकर खर्च अुठानेको कहा, यह तो सुन्दर ही कहा जायगा। जैसा सुन्दर तेरा आरभ है, वैसा ही आगेका समय भी रहे। अत तो होगा ही कैसे?

हम रोज जन्म लेते है, यह कहकर मुझे तेरी वालिशता प्रगट नही करनी थी। मैंने सपनेमे भी अैसी कोअी वात सोची नही थी। मैं तो

तूने आशीर्वाद मागे अुसकी प्रशमा ही कर रहा था। अिसलिअे हर वर्प-गाठ पर आशीर्वाद मगवाती ही रहना।

आश्रमकी कोअी निन्दा करे तो अुमका मुझे विलकुल दुख नही होता। परन्तु आश्रमको क्यो भस्म किया, अिमका जो कारण मैंने वताया अुस पर कोअी विश्वास न करे अिससे जरूर दुख होता है। जिसे मैं पवित्र न मानू अुसका वलिदान कैसा? यह वात मैंने अच्छी तरह समझाअी होगी। परन्तु हमे तो जो हो अुसे प्रसन्न चित्तमे सहन करना चाहिये।

पिताजीसे भेट हुअी और अुनका रोप अुतर गया, यह अच्छी वात है। अव यह मेल वना रहेगा, अिममे कोअी सदेह नही।

मेरी गाडी चल रही है। शक्ति आती जा रही है।

पत्र लिखती रहना।

वापूके आशीर्वाद

१४८

वर्धा,
सुवहके तीन वजे,
३–९–'३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र वर्णनसे भरपूर है। मालूम होता है तेरा काम अच्छा चल रहा है। अिसी तरह कामका हिसाव भेजती रहना।

गावमे काम करनेके वारेमे 'हरिजन' मे जो लिखा है अुसे देख लेना। सव जगह अेक ही तरीका काम नही देता। जिन क्षेत्रमें अभी कुछ काम नही हुआ है। अिसलिअे काममे काफी विविधता होना सभव है। मेरे पास जो योजना है और जिसे मैंने 'हरिजन' मे प्रस्तुत किया है, वह तो अेक ही प्रकारकी है। परन्तु अुसका घूट किसके गले अुतारू? तेरे ही गले न? अव यह देखूगा कि तू कितनोके गले अुतारती है।

तेरी परेशानीसे मुझे आश्चर्य नही होता। मेरी सलाह है कि तुझे काग्रेसका नाम तक नही लेना चाहिये। सविनय-भगका तो ले ही क्यो?

अभी तो जो जो काम तू कर रही है अुनके गुण-दोष ग्रामवासियोंके सामने रखने चाहिये। कांग्रेसके कामके बिना अुसका नाम मिथ्या है। काम हो तो नाम अनावश्यक है। जो लोग कृष्ण कृष्ण कहते हैं वे अुसके पुजारी नही हैं। जो अुसका काम करते हैं वे ही पुजारी हैं। रोटी रोटी कहनेसे पेट नही भरता, रोटी खानेसे भरता है।

तेरा कहना ठीक ही है। अगर गाव छोडनेका हुक्म मिले तो अुसका खुशीसे पालन करना चाहिये।[1] जो अरुचिकर कानूनोका भी अिच्छापूर्वक पालन करते हैं, अुन्हीको कभी कानून-भग करनेका अधिकार मिलता है। यह बात शायद ही याद रखी जाती है।

यह न मान लिया जाय कि मेरा कांग्रेसमे आना होगा ही। मनमें बहुतसी बातें पक रही हैं। वे सब लिखनेका समय नही मिलता। जो हो वह देखती रहना। तेरा कार्य निश्चित हो गया, अितना काफी है।

किसन कभी कभी लिखती रहती है। अम्तुलसलाम[2]के नाम तेरा पत्र[3] अच्छा है।

रामदास बीमार है, यह तो तू जानती ही है। शर्माको लेकर वह साबरमती गया है। बा अुसके साथ गअी है — अुसकी सेवा करने।

बापूके आशीर्वाद

---

१ स्थानीय पुलिसने आश्रमकी जाच-पडताल शुरू की थी।

२ अेक मुसलमान बहन। अुनके पिता किसी समय पटियालाके दीवान थे। ये बहन परदा तोडकर आश्रमवासीके रूपमें रहने और सेवा करने साबरमती आअी थीं। अुनसे मैंने अुर्दू सीखी थी। शरीरमें कमजोर होने पर भी सेवा करनेकी अुनमें बडी शक्ति थी। बादमे तो १९३३ में वे जेल भी गअी थीं। अुन्होंने नोआखालीमें भी बडा काम किया था।

३ अुर्दूमें लिखा था।

०

१४९

वर्धा,
२०-९-'३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। आज भी सुबहकी प्रार्थनासे पहले यह पत्र लिख रहा हू। यह तुझ पर मेहरबानी करनेके लिअे नही, परन्तु जितना ही बतानेके लिअे है कि अब नियमानुसार प्रातःकाल तीन बजे अुठकर मैं काममे लग जाता हू। दिनमें पत्र लिखनेकी फुरसत कम मिलती है। मुझे कोअी जगाता नही और अलार्म भी नही है। ज्यादातर यो ही अुठ जाता हू। यहा[1] तो सोनेके लिअे छत है। आसपास अम्तुस्सलाम, वसुमति, अमला,[2] बा हो तब बा, ओम और प्रभावती सोती हैं।

तू अपना काम बढाती जा रही दीखती है। थोडा परन्तु खूब पक्का काम करनेकी मेरी सिफारिश है। गावोंके काममे अधीरता काम नही देती। 'हरिजन' या 'हरिजनबन्धु' या दोनो नियमपूर्वक पढना। अुनमें अिस समय दूसरे विषयोंकी चर्चा होती है।

रामदासकी देखभाल करनेके लिअे बाके साबरमती जानेकी बात लिख चुका हू न?

'गीताजी' की प्रति चाहिये तो भेजू। मेरे वक्तव्य परसे जो विचार आये वे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

---

१ तब पू० महात्माजी मगनवाडीमें रहते थे।

२ जर्मन बहन डॉ० श्पीगल, जिन्हे पू० महात्माजीने यह भारतीय नाम दिया था।

१५०

५-१०-'३४

चि० प्रेमा,

तेरे पिछले पत्रका अुत्तर मैंने नही दिया, अैसा मेरा खयाल है।

तू मेरे वक्तव्यको पूरा समझ सकती हे, अिससे मुझे सन्तोप होता है। तेरा काम तो विकसित हो रहा मालूम होता हे। विस्तार न वढाना। जो काम हाथमे लिया है अुसकी जडें गहरी जमाना। हमारे कगाल मुल्कमे हम घासके वीज वोकर अुस पर गुजर करते हैं। गेहू आदि घासके वीज ही हैं। फल वोनेका हममे धीरज नही है, अिसलिअे गरीव अुन्हे पाते ही नही, अमीरोके लिअे फल पोपक नही होते। अुनके लिअे वे भोजनके वाद मुख सुवासित करनेकी वस्तु हैं। अिसी तरह हम सेवाके क्षेत्रमें कगाल होनेके कारण घाससे सन्तुष्ट रहते हैं। अिस भूलसे हम थोडे भी वच जायगे तो जो फलझाड खडे होगे, वे छाया देगे और अुनके फल पीढी दर पीढी खाये जायेंगे। आज तो अितना ही।

वापूके आशीर्वाद

१५१

[जव वम्वअीमे कांग्रेसका अधिवेशन हुआ तव महाराष्ट्रके प्रतिनिधिके रूपमे मै भी वहा अुपस्थित थी। अुस समय पू० महात्माजीसे मेरी मुलाकात हुअी थी।]

वर्धा,
७-११-'३४
दीवाली

चि० प्रेमा,

तू मिली भी और नही भी मिली। तेरे अंतिम पत्रका अुत्तर तो वही देना था, परन्तु वह हुआ ही नही। अव देनेकी जरूरत है या नहीं, यह मै नही जानता। तेरे पत्रकी मैंने आशा रखी थी। अव तुझे वही प्रश्न

अथवा अन्य प्रश्न पूछने हो तो पूछना। अिस महीने तो मैं यही हू। बादका मुझे कुछ पता नही। सुशीलाके साथ भी बात नही हुअी। किसन अतिम दिन आ गअी, यह मुझे बहुत अच्छा लगा। अुसके साथ भी बात तो हुअी ही नही।

अभी यही है। कल राजकोट जायगी। अुसकी विह्वलता काफी बढी हुअी है। शायद पहलेसे अधिक होगी। अेक भी विचार पर वह स्थिर नही रह सकती।

बा शनिवारके दिन रामदासको लेकर वापस आ रही है।

बापूके आशीर्वाद

१५२

[बम्बअी कांग्रेसके समय श्री गगाबहन वैद्य और श्री लीलावती-बहन आसर मुझसे मिली थी। पू० महात्माजीकी नाराजीके अपने अनुभव अुन्होने मुझे बताये थे। कांग्रेस अधिवेशनमे अुपस्थित होनेसे दोनोको पू० महात्माजीने मना कर दिया था। बहुत करके यह अनुभव अुसीके सिलसिलेमे हुआ होगा।

पू० महात्माजी जब यरवडा जेलमे थे तब मैं अुनके लिअे पूनिया खुद बनाकर भेजती थी। मैंने अुनके सूतकी माग की थी और अुन्होने मुझे वचन भी दिया था। फिर भी अभी तक अुस पर अमल नही किया गया था। अब मैंने फिर याद दिलाअी। बादमे सूत मिल गया।

बम्बअीके अधिवेशनके समय डॉ० हर्डीकर (कर्णाटकवाले) से मुलाकात हुअी थी। वे दुखी थे। सेवादलके कार्यकर्ता घरबारका त्याग करके आन्दोलनमे पडे थे, परन्तु आन्दोलन बन्द होनेके बाद बहुतोकी आर्थिक स्थिति दयाजनक हो गअी थी। अिसका अुन्हे दुख था। खुद अुनकी कोअी मदद नही कर सकते थे, अिसलिअे भी लाचार थे। अुनका दुख मैंने पू० महात्माजीको बताया और मार्गदर्शनकी प्रार्थना की।

पत्रोको खानगी रखनेकी मेरी दलील पू० महात्माजीने अिस पत्रमे स्वीकार की।

श्री शकररावजीने सासवडमे आश्रम तो खोला, परन्तु सासवड कस्बेका गाव था। अुसकी आवादी अुस समय ५००० थी। अिसलिअे विलकुल छोटे गावमे आश्रम ले जानेके विचार अुनके मनमे अुठने लगे थे। अिसके वारेमे पू० महात्माजीने अिस पत्रमे आलोचना की है।]

वर्धा,
४-१२-'३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरे प्रश्नोके सयाने अुत्तर दू तो वह सच्चे सयानेपनकी निशानी ही होगी, अैसा थोडे कहा जा सकता है!

मेरा गुस्सा तुम कोअी नही जानते। अुसका साक्षी मैं ही हो सकता हू। लीलावती या गगावहनने जो अनुभव किया होगा, अुसे मै थोडे ही गुस्सेमे गिना सकता हू? मुझमे जो गुस्सा भरा है अुसे वहुत-कुछ तो मै पी जाता हू। पीते पीते जो वाकी रहता है वही गगावहन वगैरा देख सकी होगी। अितना भी अुन्हे न देखने दू तो मै दभी वन जाअू अथवा सूखकर हाड-पिजर हो जाअू। अैसा नही होता अिसका कारण यह हे कि मै अपने गुस्सेको जान-बूझकर रोकता हू और आगे रास्ता करता हू। आस-पास रहनेवालोके प्रति सावधान रहनेकी आवश्यकता नही समझता, अिसलिअे वे मेरे गुस्सेकी झाकी कर लेते हैं, और मुझ पर अुनकी दया रहती है, अिसलिअे वे अुसे भूल जाते हैं।

मेरे पास जो सूत वाकी रहा होगा अुसे प्रभावती भेज देगी। मेरा हिसाव तो गलत निकला। प्रभावती अिस समय वम्वअीमें है। स्वरूपरानीकी सेवा करने और जयप्रकाशसे मिलने गअी है।

के वारेमे जैसा तू मानती है, वैसा होना वहुत ही कम सभव है। किसीकी निन्दाकी वात माननेमे खूब हिचकिचाना; अुसे न सुने तो अधिक अच्छा हो।

डॉ० हर्डीकर जैसोके लिअे क्या हो सकता है? अुनके मत भिन्न, मनोरथ भिन्न। जो प्रवृत्ति अुन्हे अच्छी लगे अुसे सरकार नही चलने देती, जो चलती हो अुसमे अुन्हे रस नही आता। प्रजाके तत्रमे तो जो कही भी जम सके अुसीका समावेश हो सकता है। अुनके जैसोको किसी न किसी

जगह जमकर हो सके वह सेवा करनी चाहिये। अिस प्रकार मै वहुतोका मार्गदर्शन कर रहा हू।

जो अीमानदारीसे धधा करते है वे भी देशकी सेवा करते है। सेवाका दावा करनेवाले लोग भारस्वरूप हो सकते है, और धधा करके कमानेवाले लोग शुद्ध सेवक हो सकते है।

तेरे पत्रोके वारेमे तूने जो लिखा है वह ठीक है। जो पत्र तुझे मेरे ही पढनेके लिअे लिखने हो, अुन पर तू खानगी लिख सकती है। जिन्हे मेरी मरजी पर छोडेगी, अुन पत्रोका मुझे ठीक लगेगा वही करूगा। मै मुश्किलसे ही पत्रोका सग्रह करता हू।

अुद्योगोका तो जो हो सके वह करना।

भगवान तुझे वहुत अिधर-अुधर न घुमाये तो अच्छा। अेक क्षेत्रमे टिका जा सके तो ही कुछ काम हो सकता है। जहा तू रहती है वह पूनाका अुपनगर ही हो तो वहुत लाभ नही होगा। परन्तु वहा जव रही है तो अेकाअेक वह जगह न छोडी जाय यह अच्छा होगा। परन्तु अिसमें मेरी समझदारी वेकार समझना। यदि वहा रहनेमे भूल हुअी हो, तो वही चिपटे रहनेमे कोअी औचित्य हो ही नही सकता। भूल सावित हो जाय तो अुसे सुधारना ही चाहिये।

अहिंसासे स्वराज्य दिलानेवाला मै कौन? यदि मुझमे अहिंसा सचमुच होगी तो अुसकी छूत लगे विना हरगिज नही रहेगी। मुझे अपने पर कम श्रद्धा है, लेकिन अहिंसा पर अटूट श्रद्धा है। जगतने अिस महान सिद्धान्तको जान लिया है। परन्तु अुसका आचरण वहुत थोडा हुआ है। मुझे तो रोज अुसके नये घूट पीनेको मिलते है, क्योकि मेरे लिअे तो वही कल्पवृक्ष है। अिस दुनियामे मेरे लिअे और कुछ सभव नही है। क्योकि सत्यनारायणसे मिलनेका दूसरा कोअी मार्ग मुझे मिला नही है। और अुसके मिले विना जीवन व्यर्थ लगता है। अिसलिअे अहिंसाका मार्ग कठिन हो या सरल, मुझे तो अुसी मार्गसे जाना है। यदि मेरी मृत्युके वाद मारकाट ही मचे, तो समझना कि मेरी अहिंसा वहुत थोडी अथवा झूठी थी — अहिंसाका सिद्धान्त कभी झूठा नही हो सकता। अथवा यह भी हो सकता है कि अहिंसा सिद्ध करनेसे पहले रक्तकी वैतरणीमें से

हमें गुजरना पडे। सन् २० में राजनीतिमें अहिंसा आओी अुसके वाद क्या चौरी-चौरा अित्यादिकी घटनाये नही हुओी, सरकारने अपने जुल्मोंमें कोओी कसर रखी है? परन्तु मेरा विश्वास हे कि यह सारी हिंसा होते हुओे भी अहिंसाने अपना प्रभाव खूब डाला है। फिर भी वह समुद्रमें विन्दु-मात्र है। मेरा प्रयोग आगे वढता ही जाता हे। भगवान करे तेरी श्रद्धा कभी विचलित न हो।

हमारी अिन्द्रिया जो कुछ देखती है वह सत्य ही है, अैसी वात नही। अकसर तो वे असत्य ही देखती है। अिसीलिअे अनासक्तिका मार्ग ढूढा गया। अनासक्ति अर्थात् अिन्द्रियोंसे परे जाना। यह तो अुनमें रहनेवाली आसक्तिको छोडनेसे ही हो सकता है। आखका प्रमाण माने तो पृथ्वी समतल ही सिद्ध होगी न? सूरज सोनेकी थालीके सिवा क्या है? आखें देखती है वही अगर प्रेमा हो, तो मेरी मुसीवत हो जाय न? कानोंसे मेरे वारेमें जो कुछ तू सुने वह सव सच मान वैठे तो!

अव तो वहुत हुआ। मीरावहनका अलार्म वज गया। अव प्रार्थनाकी घटी वजेगी। अितनेसे जो चित्र खीचा जा सके वह खीचना। १५ तारीखके वाद दिल्ली जानेका अिरादा है। वहा थोडे समय हरिजन-आश्रममें रहनेका विचार है।

अन्तमें तो अभी जेल ही नजर आती है।

वापूके आशीर्वाद

दुवारा नही पढा।

१५३

१६-१२-'३४

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र नारणदासको भेजूगा। आज भी सुवह १-४५ वजे अुठकर पत्र लिख रहा हू। दो वजेके आसपास अुठनेकी आदत ही हो गओी है। सोना नौ वजेसे पहले होता है। दिनमें अेक दो वार मिलाकर आधेसे अेक घटे तक सोनेको मिल जाता है। अिसे काफी मानता हू।

'दुवारा नही पढा' लिखकर अपने लिअे और जिसको लिखता हू अुसके लिअे न्याय प्राप्त कर लेता हू। कही 'अजमेर' का 'आज मर' हो जाय तो सुधार लिया जाय और शका हो तो पूछ लिया जाय। दुवारा न पढा हुआ पत्र अधूरा ही मानना चाहिये। परन्तु तेरे जैसीको न लिखनेकी अपेक्षा अधूरा लिखू, तो भी मुझे तो अच्छा लगेगा और तुझे भी अच्छा लगेगा।

मेरा दिल्ली जाना वहुत करके २७ तारीखके आसपास होगा। मै न लिखू अथवा अखबारमे तू न देखे तब तक वर्धाके पते पर ही लिखती रहना।

स्वप्नमे व्रतभग हो अुसका प्रायश्चित्त आम तौर पर अधिक सावधानी रखना और जाग्रत होने पर रामनाम जपना है। स्वप्नमे होनेवाले दोष हमारी अपूर्णताके चिह्न है। अनजाने भी हम अुन विषयोका मनके किसी न किसी कोनेमे सेवन करते है। अिसलिअे निराश हो तो भी अधिकाधिक प्रयत्नशील बने। निराशा विषयासक्तिकी निशानी होती है, अश्रद्धाकी तो होती ही है। जो रामनाम लेनेसे थक जाय — निराश हो जाय — अुसकी श्रद्धाको हम समाप्त हो चुकी ही कहेगे न? जब कोलम्बसके साथियोकी श्रद्धा खतम हो गअी तब वे अुसे मार डालनेको तैयार हो गये। कोलबस श्रद्धाकी आखसे किनारेको स्पष्ट देख रहा था। अुसने थोडीसी मोहलत मागी और वह अमरीका पहुच गया!!! न खानेकी चीज सपनेमे खाअी जाय तो अुसका भी यही अर्थ है। अैसे सपनोके वाहरी कारण होते है। अुनका पता चले तब अुन्हे दूर करना चाहिये। "जो सब अवस्थाओका साक्षी है वह निष्कल ब्रह्म मै हू", अैसा हम गाते है। अैसा बननेका हम सतत प्रयत्न करे तो ही अिसे गा सकते है। अैसे हम नही बने है अिसीके चिह्नस्वरूप सपने आते है। वे हमारे लिअे दीपस्तभका काम करते है।

अीश्वरकी कृपाके बिना पत्ता भी नही हिलता, परन्तु प्रयत्नरूपी निमित्तके बिना भी वह नही हिलता। प्राणीमात्रकी शुद्धतम सेवा ही साक्षात्कार है।

किसन तेरे साथ रहेगी, यह बहुत अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

१५४

विडला मिल्स,
दिल्ली,
३१-१२-'३४

चि० प्रेमा,

अिस समय छह वजनेको है। परन्तु घोर अवकार है। हाथ ठिठुर गये है। यहा वीरान जैसा है। हरिजन-आश्रम वसाना है। दो कमरे खास तौर पर बनाये गये है। और तीन चार तबू है।

तेरा पत्र मिल गया। तेरे जीमे आये वही प्रश्न पूछती रहना। मेरी फुरसतमे जितने अुत्तर दे सकूगा देता रहूगा।

किसन कैसी हे? तेरे पास कुछ समय रहने आनेवाली थी अुनका क्या हुआ?

तेरा काम आगे चलता ही रहेगा और रुपयेकी मदद मिलती ही रहेगी।

रामनाम रामवाण है, यह अटल विश्वास तू रखती है, अत अिस सत्यका अनुभव करेगी। सर्वत्र अवकार दिखाअी देता हो तो भी राम-नामका रटन् करती ही रहना। अिससे भला ही होगा।

किसानोकी जमीनके टुकडोका प्रश्न वहुत वडा है। हमारे हाथमें सत्ता हो तो भी वह कठिन ही रहेगा। अभी तो हमारा प्रयोग यही देखनेका है कि सत्ताके विना क्या करना सभव है। छोटे टुकडे पर भी वुद्धिपूर्वक खेती हो तो अुसका लाभ मिल सकता है। यह सब प्रयोगोंसे ही करके वताया जा सकता हे। (खेतीका) हमारा अपना ज्ञान भी छिछला है, अिसलिअे हम पगु जैसे है। अिसीलिअे हम खेतीके प्रश्नको सीधे नही छूते। आसानीसे सूझनेवाले और आसानीसे चलाये जा सकनेवाले अुद्योगोंको ही अभी तो हमें हाथमें लेना है, ताकि किसानोका आलस्य मिटाया जा सके और अुद्योगके साथ वुद्धिका मेल साधा जा सके। दूसरा सब अपने आप हो जायगा।

आजकलकी अपेक्षा पहले लोगोकी स्थिति अच्छी तो थी ही। यह बात सिद्ध की जा सकती है। पहले बाहरसे धन बहा चला आता था। जमीनके अितने टुकडे नही थे, अितना धन कभी बाहर नही जाता था। कुदरत अपना काम कुदरती ढगसे करती रहती थी। अब हमने पूरे ज्ञानके बिना प्रकृतिके काममे हाथ डाला है। और वह भी निरकुश ढगसे। अिसलिअे हम चूसे जा रहे है।

रामराज्य अवश्य काल्पनिक है, परन्तु वैसा ही कुछ न कुछ तो पहले था, ही यह भी हम सिद्ध कर सकते है। वैसे असत्य और दारिद्रयका पूरा पूरा लोप बिलकुल तो न पहले किसी समय हुआ और न भविष्यमे कभी होना सभव है।

पहाडोकी गुफाओमे भाग जानेकी प्रथामे दुनियासे अूब अुठनेकी बात तो भरी ही है। अिसका कुछ तो अुपयोग जरूर रहा होगा। परन्तु आज बिलकुल नही है। सेवा करते हुअे मर जाना गुफामे रहनेके बराबर ही है।

जैसा अपने बारेमे वैसा ही दूसरोके बारेमें। अपने बारेमे अनासक्त रहने पर भी सरदी-गरमीका भान तो रहेगा ही। ठडमे गरमी और गरमीमे ठड तो हम ढूढेगे ही, परन्तु खोज सफल न हो तो रोने नही बैठेगे — यही अनासक्ति है। यही बात सरदीसे कापनेवालोके लिअे भी है। अुनके लिअे प्रयत्न तो हम जरूर करेगे। अुन्हे कापते देखकर हमारे पास जो कपडे होगे वे अथवा अुनमे से कुछ अवश्य हम अुन्हे दे देगे। अितने पर भी अगर वे कापेगे तो हम अुसे सहन करेगे। अुससे अधीर होकर मारामारी नही करेगे। असत्याचरण नही करेगे। यही अनासक्ति है।

खादी पेटका धधा है भी और नही भी है। मैने अुसे अन्नपूर्णा कहा है।

हिंसाको छोडकर रूससे बहुत कुछ लेने लायक है अैसा मै मानता हू। परन्तु सभव है कि जो अिस समय केवल बलात्कारसे सभव होता जान पडता है वह स्वेच्छासे स्वीकार्य न हो सके। परन्तु हम सब पढी हुअी बातो परसे अनुमान लगाते है, यह ठीक नही। हमे अपना विचार स्वतत्र रूपमे करना चाहिये। हमारे लिअे क्या हितकर है यह हमीको सूझ सकता है।

विषमताका सर्वथा नाश होना असभव है। परन्तु अधिकसे अधिक समता तक पहुचनेका अेक ही मार्ग है, जो मैंने वताया है। मैंने जो वताया है वह नया नही है। पुराना ही (कदाचित् नये रूपमे) मैं वता रहा हू।

किसानोके लिअे यह वडा आश्वासन है कि सहायक अुद्योग फुरसतके समयमे करके वे अपनी आयमे अच्छी वृद्धि कर सकते हैं।

कर्मका नियम समझना आसान है। जो कानून हम यत्रशास्त्रमें सीखते हैं वही अिसमें है। दृश्य शक्तिया अेक साथ काम करती है, अुनका अेक ही दृश्य परिणाम हम देख सकते हैं। यही वात कर्मोके विषयमे भी है।

तुझे विलकुल छोटे गावमे जाना हो तो भले ही जा। परन्तु ज़िसमें है अुसीसे तू चिपटी रहेगी तो भी काफी है। अेक जगह पूरी सफलता मिले तो वह अेक मापदण्डका काम करेगी। आज हमारे पास अैसा मापदड नही है।

यहा २० तारीख तक रहूगा।

वापूके आशीर्वाद

१५५

[मेरे मुह पर फुन्सिया हो जाती थी। अुनका अुपाय मैंने पूछा था। पत्रमे महात्माजीने जो अुपाय वताया अुसे मैंने करके देखा। परिणाम वहुत अच्छा आया। फुन्सियां अेक वार मिटी तो फिर कभी नही हुअी।

हरिजन-सेवाकार्यका विरोध करनेवाले श्री लालनाथको मार पडी, अिसलिअे पू० महात्माजीने सात दिनका अुपवास किया था।]

वर्धा,
३–२–'३५

चि० प्रेमा,

तेरे पत्रका अुत्तर अिस वार वहुत देरसे दे रहा हू। समय नही मिलता।

आज लिख-लिखकर ही हाथ थक गया है। अिसलिअे वाया काममे ले रहा हू।

मेरा शरीर दुर्वल तो हुआ होगा। परन्तु मुझे अैसा अनुभव नही होता। अुपवासका असर कमजोरी बढानेवाला सिद्ध नही हुआ, नही होना चाहिये, यदि अुपवास छोडनेके बाद सावधानीसे काम लिया जाय।

मै मानता हू कि मेरे भोजनका असर मेरे शरीर पर अच्छा ही हुआ है। मै अुसका पृथक्करण नही कर सकता।

माता-पिता अित्यादि तुझसे मिल गये, यह वहुत अच्छा हुआ।

फुन्सियोका अिलाज जरूर है। थोडे दिनो तक केवल फलो और कच्ची भाजी पर रहना चाहिये। भाप लेनेसे तुरन्त मुरझा जायगी। भाप लेनेके बाद ठडे पानीसे नहाना चाहिये। तीन चार दिनमे चमडी साफ हो जानेकी सभावना है। अुसके बाद दूध अथवा विलकुल फीका दही और फल तथा कच्ची भाजी लेना चाहिये। भाजीमे मेथी, पालक, लोनी, सलाद अुत्तम है। मै तो सरसोकी पत्ती और मुलायम डालिया भी लेता हू।

अीश्वरसे याचना करनेका अर्थ है तीव्र अिच्छा करना। अीश्वर हमसे भिन्न भी है और अभिन्न भी है। भिन्न है क्योकि वह सपूर्ण है, अभिन्न है क्योकि हम अुसके अश है। समुद्रसे अलग पड जानेवाली बूद यदि समुद्रसे विनती न करे तो किससे करे? परन्तु समुद्रके लिअे कुछ करने या न करनेकी बात है क्या? प्रार्थना वियोगीका विलाप है, अुसके विना देहधारी जी ही नही सकता।

राष्ट्रकी प्रगतिकी कुजी हमारे हाथमे है भी और नही भी है। यदि हम शून्यवत् हो जाय तो ही प्रगति होगी। शून्यवत् होना हमारे हाथमे है, परन्तु प्रगति हमारे हाथमे नही है। क्योकि शून्य वने कि प्रगति अेकमात्र परमात्माके हाथमे रहती है।

'अूधो करमनकी गति न्यारी' यह शुद्ध सत्य है। कर्मका नियम है, अितना हम जान सकते है, परन्तु हम यह नही जानते कि वह नियम किस ढगसे काम करता है। अितनी प्रभुकी कृपा है। सामान्य राजाके नियम भी जव हम नही जानते, तो फिर नियमकी मूर्तिके समान परमात्माके [सारे] नियमोको हम कैसे जान सकते है?

अिस लडाअीके शुरूमें जो जीत दिखाअी देती थी वह अेक कल्पना ही थी, पराभव भी केवल दिखावा ही था। सत्यकी नित्य विजय ही होती है अैसी जिसकी अटल श्रद्धा है, अुसके शब्दकोशमें हार जैसा कोअी शब्द ही नही होता।

बापूके आशीर्वाद

१५६

वर्धा,
७–३–'३५

चि० प्रेमा,

पत्रोंके जवाब निबटानेके लिअे मौन लिया है, अिसलिअे अितना मुझे ही लिखना पड रहा है। वैसे तेरा पत्र तो मेरे पास रखा ही है। बाया हाथ काममें लेने लगू तब अथवा पूरा समय मिले तब अुसका अुत्तर दे सकूगा।

तेरे पास जो सूत है अुसका छोटासा भी कोअी कपडा बुनवा सके, तो बुनवाकर सीधे मणिलालको फिनिक्स भिजवा देना। अैसा हो तो ही कपडा अरुणके पास वर्षगाठ पर पहुचेगा। अिसीके लिअे तो सुशीला माग रही है।

मैं कारणवश पत्र न लिख सकू तो भी तुझे नियमानुसार अपने कामका विवरण भेजना छोड नही देना है। वजन तू काफी बढा रही है। यही सुन्दर है।

बापूके आशीर्वाद

१५७

[सासवडके आसपासके खेतोंमें मैं किसानोंके साथ काम करने जाती थी। आठ बैलोंके हल चलाती थी, चार बैलोंका चरस चलाती थी, निदाअी करती थी, कटाअी करती थी, ज्वारके मोटे डठल जमीनसे अुखाड लेती थी। ये सब काम करनेसे मेरी हथेलिया सख्त और छाले पडकर चमडी निकल जानेके कारण खुरदरी हो गअी थीं। अिससे पू० महात्माजी बहुत प्रसन्न हुअे।]

वर्धा,
१४–३–'३५

चि० प्रेमा,

अब तो तेरा दूसरा पत्र आ जानेके कारण हाथसे लिखनेका लोभ छोडकर यह पत्र लिखवा रहा हू।

तेरे पास रखे हुअे सूतका थान न बन सके, अिसमे तुझे माफी क्यो मागनी चाहिये? मैने जो सूत भेजा वह पूरा न हो, तो अिसका तू क्या करे?

अरुणकी वर्षगाठ अप्रैलमे किसी दिन है। मुझे याद नही। सुशीलाके पत्रमे तारीख थी।

तेरे हाथोकी तुलना शायद मीराके हाथोसे की जा सकती हे। जिन हाथोमे घट्ठे न पडे हो, जिनमे कभी छाले ही न पडे हो वे हाथ किस कामके?

यहा जमनालालजीके पास नअी मोटर नही, घोडागाडी और बैल-गाडी ही है।

कच्चे दूध, भाजीकी पत्तियो और अिमली पर रहकर देखना। फुन्सिया शायद सब मिट जायगी।

यहा तेलकी घानी बिठाअी है। अलसीका तेल निकालते हैं। बा वगैरा सब बहनें सारा अनाज साफ करती हैं। नौकर कोअी नही हे। सारा काम हाथसे ही होता है। मैं हमेशा पगतमें ही खानेको बैठता हू।

यहासे अेक मील पर सिंदी नामक अेक गाव है। महादेव, मीरा, कनू, जमनालालजीकी मदालसा और रामकृष्ण रोज अुसे साफ करने जाते हैं। मैं भी अेक बार हो आया था। फिर जानेका विचार है। गावकी सफाअीका सवाल हम स्वय भगी बने तो ही हल होगा।

गावका जो चित्र तूने दिया है वह जितना सजीव है अुतना ही करुणाजनक है। हमें अैसे गावोसे निबटना है। यह काम न तो बुद्धिबलसे होगा, न पशुबलसे। केवल हृदय-बलसे ही यह हो सकता है।

आज तो अितनेसे ही जितना सन्तोप मान सके अुतना मान लेना। तेरी प्रगतिका वर्णन तो मुझे चाहिये ही।

बापूके आशीर्वाद

दुवारा नही देखा।

१५८

[वम्बअीके श्री नरीमानके साथ अहिंसाके विपयमे मेरी वातचीत हुअी थी। श्री नरीमानका कहना यह था कि काग्रेसने अहिंसाको नीतिके रूपमे स्वीकार किया हे, धर्मके रूपमे नही। अिसलिअे जव देश स्वतत्र होगा तव सेना और सैनिक शिक्षा तो रहेगी ही। मैंने जव पू० महात्माजीको पत्र लिखा तव अिस वातचीतका वर्णन करके पूछा था कि, "कागेस अहिंसाको नीतिके रूपमें मानती है, फिर भी अुस सस्थाका नेतृत्व आप कर रहे हैं। अैसी स्थितिमे क्या यह नही कहा जायगा कि आपने अहिंसाके सिद्धान्तके साथ समझौता किया है?"

पू० महात्माजी कहते थे कि अेक भी पूर्ण सत्याग्रही पैदा होगा, तो वह दुनियाको हिला देगा, [वह जगतका अुद्धार कर देगा। अिसका मैंने स्पष्टीकरण चाहा था। सरकार यदि यत्र है तो यत्रमें अहिंसासे परिवर्तन कैसे हो सकता हे? यह सवाल किया था।

सासवड चले जानेके वाद मेरा वजन वहुत वढने लगा था। सत्या-ग्रह आश्रममें ११८ पौण्डसे ज्यादा नही वढता था। जेलमें १२८ तक चला गया था। परन्तु आन्दोलन वापस लेनेकी खवर आने पर घटता गया और जेल छोडते समय ११८ पर पहुच गया था। सासवडमें शरीर-श्रमका काम वहुत करती थी, ४ वजे अुठती थी, १० वजे सोती थी, फिर भी वजन वढकर १३५ तक चला गया। अिससे मुझे सकोच होने लगा। पत्रोमे तो महात्माजी सन्तोप प्रकट करते थे, परन्तु अेक वार वर्धा गअी तव मुझे देखकर अुन्होंने आश्चर्य प्रकट किया और विनोद करने लगे। मेरी पीठ पर जोरसे अेक धप लगायी और वोले "जेलमे वजन वढे तो समझना चाहिये कि तेरा कारावास नही, विलास है! सासवडमें भी वही वात है!"

मेरा खयाल है कि कोअी जिम्मेदारी सिर पर न होनेसे तथा चिन्ताके बिना, किसीका रोष मोल लिये बिना और प्रसन्न चित्तसे स्वाभाविक आनन्दमे मेरा काम चल रहा था, अिसलिअे मेरा वजन बढता गया।

दिल्लीकी असेम्बलीमें बहुमतको ताकमे रखकर अंग्रेज सरकारने राज-प्रतिनिधिके हकसे सरकारी बिल पास कर दिया था (बिल किस बारेमे था यह याद नही है।) अुसके सिलसिलेमे मैंने लिखा था।]

वर्धा,
५-४-'३५

चि० प्रेमा,

आज तेरे ता० ८-२-'३५ और ता० ३०-३-'३५ के दोनो पत्रोका अुत्तर देने बैठा हू। अब किसन कैसी है? क्या करती है? समय किस प्रकार बिताती है?

तेरा हल चलाने और चरस खीचनेका धधा अब भी जारी है?

जिन लोगोमे तेरा असर जम जाय अुन्हे जन्म-मरणके खर्चोसे तुझे बचाना चाहिये। सब न माने तो भी कुछ तो मानेंगे ही।

नरीमानका और तेरा सवाद अच्छा है। यह सच हे कि अधिकतर लोग अहिंसाका नीतिके रूपमे ही पालन करते हैं। परन्तु तेरे जैसे कुछ तो है ही, जो धर्म समझकर अुसका पालन करनेका महाप्रयत्न कर रहे हैं। अन्तमे तो यह अहिंसा ही काम देगी।

भारतके स्वतत्र होने पर भी सेना तो रहेगी ही। मेरी अहिंसामे मै अभी अितनी शक्ति नही पाता, जिससे लोग सेनाकी अनावश्यकताकी बात मान ले। और सेना होगी तो सैनिक शिक्षण भी होगा ही। यह तो अनुमान हुआ। अैसा होना असभव नही कि यदि हम सचमुच अहिंसासे स्वतत्रता ले ले तो सेनाकी जरूरत न रह जाय। जैसे अहिंसाकी शक्ति अपार है, वैसे ही अहिंसककी शक्ति भी अपार है। अहिंसक खुद कुछ नही करता। अुसका प्रेरक अीश्वर होता है, अिसलिअे वह स्वय कैसे कह सकता है कि भविष्यमे अीश्वर अुससे क्या काम करायेगा? अिसलिअे

यहा सिद्धान्तके साथ समझौतेका प्रश्न नही, शक्तिके मापका प्रश्न है। सापसे डरकर मैं सापको मारू, तो मैं कोअी समझौता नही करता। अपनी अशक्तिका प्रदर्शन करता हू। अीश्वरने अिससे ज्यादा शक्ति मुझे नही दी अथवा अैसी शक्ति पाने लायक शुद्धि मैंने नही की — तप नही किया, यह कहा जायगा। समझौता तो मनुष्य जान-बूझकर करता है।

पूर्ण सत्याग्रही अर्थात् अीश्वरका पूर्णावतार। तेरे मनमें क्या अिस बारेमे शका है कि अैसा पूर्णावतार जगतको हिला सकता है? यह कहनेमे अतिशयोक्ति नही कि यह जगत अैसा अवतार पैदा करनेकी प्रयोगशाला है। हम सब अशरूपमें तैयारी करेंगे तो किसी दिन पूर्णावतार जरूर प्रगट होगा, अैसा हमे विश्वास रखना चाहिये। तब तुझे सेनाका प्रश्न पूछना नही पडेगा।

सरकार यत्र है, मगर अुसे चलानेवाला तो यात्रिक है न?

गायन सुनने अथवा नृत्य देखनेमे दोष नही, यदि वह अश्लील न हो। परन्तु हमारे लिअे कोअी पैसे दे और हम जायें, यह जरूर खटकेगा। अेकको देगा, अनेकको कौन देगा? हम तो अनेक है। परन्तु अिसमें सब अपनी शक्तिके अनुसार बरतें।

पावरोटी सम्बन्धी महादेवका लेख सग्रहणीय है।[1]

कुओंकी सफाअीका प्रश्न बहुत बडा है। सीढियोंवाले कुओंकी सीढिया तू बन्द करा सके तो बडा काम हुआ माना जायगा।

तेल छाननेकी क्रिया मुझे अच्छी तरह लिखकर भेज, ताकि मैं अुसे आजमा सकू।

तेरा वजन भले ही बढे। खटाअीकी जरूरत है। मैंने तो यहा अिमली और प्याज दोनो शुरू किये है।

सुशीला परीक्षिका नियुक्त[2] हुअी तो अपनी फीसका हिस्सा दे और परीक्षा-पत्र मौलिक तथा सरल बनाये।

---

१ जेलसे श्री महादेवभाअीने पावरोटी बनानेके बारेमें अेक लेख हाथसे लिखकर मुझे भेजा था।

२. मैट्रिककी परीक्षाके लिअे।

मासिक धर्मके वारेमे मैंने जो लिखा है वह ठीक है। अैसी निर्विकारिता आनेमे वहुत देर लगती है। यह विकार अैसी सूक्ष्म वस्तु है कि हम अुसे हमेशा पहचान नही सकते।

जवाहरलालको छुडवानेकी दौड-धूप यूरोप करे यह ठीक है।

असेम्वलीके मतका आदर नही किया जाता, अिससे मुझे निराशा नही होती। यह परिणाम तो ध्यानमे था ही। यह प्रवेश[1] आवश्यक था और है।

हिन्दू-मुस्लिम अैक्यके वारेमे मौन रखता हू, क्योकि मै कुछ भी करनेमे असमर्थ हू। गजराज थक गये तो अुन्होंने मौन धारण कर लिया और प्रार्थना शुरू कर दी। अुनकी प्रार्थना फली। मेरी स्थिति गजराज जैसी समझ। मेरी प्रार्थना चल रही है। मोक्ष तो जव आये तव सही। अुसका काल-निर्णय जाननेकी अनासक्तको क्या अुतावली है?

यहा नये आदमी वहुत हो गये है। रसोअीघर विलकुल सादा हो गया है। सव कुछ भापसे पकाया जाता है। अिसलिअे अेक ही वरतनमे तीनो वारके वरतन साथ साथ चढते है। समय तो खूव वच जाता है। रोटी वनाने जितना ही पकानेको रह जाता है। रोटी वनानेकी क्रियाको भी आसान वनानेकी खोज कर रहा हू।

तेलकी घानी चल रही है। पासका गाव रोज साफ होता है। मै तो अेक ही वार गया था। महादेव रोज जाते है।

तुझे फुरसत मिले और तेरी अिच्छा हो तव तू आ सकती है। अिन्दौर आनेकी अिच्छा हो तो तू वहा भी आ सकती है।

अव वस।

वापूके आशीर्वाद

---

१ असेम्वलीमे।

१५९

[पू० महात्माजीने अपने आहारमें प्याज शामिल किया था और लोगोंसे भी खानेकी सिफारिश करते थे। अिस पर मैंने पूछा था कि, “पहले आप प्याजको ब्रह्मचर्य-पालनकी दृष्टिसे निषिद्ध मानते थे। अब क्यों अुसकी सिफारिश करने लगे?”

सासवडमें जो सेवाकार्य शुरू किया था, अुसे बीचमें ही छोडकर कहीं जाना मुझे पसन्द नहीं था।]

वर्धा,
१८-४-'३५

चि० प्रेमा,

आज मेरा मौनका अन्तिम दिन है। मौनमें पीछेका काम काफी निबटा लिया है। तेरा पत्र आज ही मिला।

तेरे आनेके बारेमें तेरा लिखना बिलकुल ठीक है।

चावल, गुड, प्याज वगैरा खानेके लिअे मैं किसीको मजबूर थोडे ही करता हूं? लोग जो चीजें खाते हैं अुनके गुण-दोष मैं बताता हूं। अिमली मैं तो कच्चे शाकके साथ ही खाता हूं। अुसे भिगोकर अुसका सत्त्व निकाल लेता हूं। कच्चा शाक भी मुझे तो पिसवाकर ही खाना पडता है।

गांवोंके लोगोंकी खुराकमें प्याजका बडा स्थान है। वह अेक शाक है, जो अुनके लिअे अमूल्य है। प्याज जहां होता है वहां घी वगैराकी अितनी जरूरत नहीं रहती। अिसलिअे मैंने प्रयोगके रूपमें शुरू किया है। जिनकी मरजी हो वे खाते हैं। प्याजके बारेमें मैंने अपना विचार अिस हद तक बदला है कि जो अिसे औषधिके तौर पर खाते हैं अुनके ब्रह्मचर्यमें अिससे बाधा नहीं होती। अिसके लिअे मेरे पास कोअी प्रमाण नहीं है।

लाठी वगैराके शिक्षणसे अहिंसाकी वृत्ति मंद पड जानेकी संभावना तो अवश्य है। लाठी रक्षाके लिअे सिखाअी जाती है न? परन्तु जो सिखाना चाहता है अुसे लाठीका अुपयोग न सिखानेका नियम बनानेकी अिच्छा नहीं होती।

सफेद खादीके बजाय रंगीन खादी अिस्तेमाल ही न की जाय, अैसा तो मैंने नहीं लिखा। लिखा हो तो अुसे भूल समझा जाय।

स्वराज्य मिलने पर बहुतसी वस्तुयें अैसी बदल जायगी कि आज देशी राज्योंके बारेमें निश्चयपूर्वक कुछ भी कहना कठिन है। परन्तु आम-तौर पर देशी राज्योंकी शक्तिको स्वराज्य तंत्र रोकेगा नहीं, अैसा कहा जा सकता है।

लुहार, सुनार वगैरा वश्य माने जायंगे।

कल अिन्दौर जा रहा हूं। २५ तारीखको वापस आ जाअूंगा।

बापूके आशीर्वाद

१६०

[सासवडके मुसलमान समाजमें मैं मिलने-जुलने लगी थी और मुसलमान बहनोंको कुरानका मराठी अनुवाद पढ़कर समझाती थी।]

वर्धा,
३–५–'३५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी ही मिला। सारे वर्णन सुन्दर हैं। तू बहुतसी बातें तो निबटा ही लेगी। कुरानका अनुवाद अुर्दूमें हुआ है, वह तुझे पढ़ लेना चाहिये। तब तुझे अुसकी ध्वनि मिलेगी। और अुर्दू पाठावलियां भी पढ़ लेनी चाहिये। वे पंजाबमें प्रकाशित हुअी हैं। हैदराबादमें भी होंगी।

तेल छाननेकी बात समझ ली। यहां तो घानी है। फिर भी थोड़ी मात्रामें तेल निकालना हो तो तेरी रीति काम देगी। आजमाअूंगा।

शायद ६ तारीखको मुझे यहांसे बोरसद जाना पड़ेगा। वापस यहां १७ तारीखको आनेका विचार है। बीचमें १६ तारीखको कुछ घंटे बंबअीमें बीतेंगे। यह सब निश्चित हो जायगा तो तू अखबारोंसे भी जान लेगी।

बापूके आशीर्वाद

१६१

[मेरी माता मुझे दस महीनेकी छोडकर परलोकवासी हुअी, तव अुसके कोअी तीन हजारके गहने थे। अुनसे अपना स्मारक वनवानेकी अिच्छा अुसने प्रगट की थी। वे गहने वरसो तक पडे रहे। वादमे मेरे नाना और पिताजीके वीच यह निर्णय हुआ कि अुनमें से आधे स्मारकके लिअे काममे लिये जाय और आधे मुझे दिये जाय — अिस शर्त पर कि मै विवाह करु। परन्तु मैंने तो विवाह करनेसे अिनकार कर दिया और दोनोसे कह दिया कि सारे गहने पू० महात्माजीको सौंप दिये जाय। स्मारकके लिअे अुनका अुचित अुपयोग वे ही करेगे। दोनोने अिस कथनका विरोध किया। मुझे समझाने लगे कि, "देशसेवासे रुपया नही मिलता, अुलटे मनुष्य कगाल वनते है। तेरे शरीरमे ताकत होगी तव तक शायद लोग तेरा पालन करेगे। परन्तु वृद्ध या अपग होने पर कौन तेरी मदद करेगा? गहने वेचकर हम अुसका ट्रस्ट वना दे और अुसके व्याजका अुपयोग तेरे लिअे हो अैसी व्यवस्था करनेकी हमे सहमति दे।" परन्तु सच्चा सेवक अपने निर्वाहके लिअे अीश्वर पर निर्भर रहता है, खानगी पूजी नही रखता। सेवकके लिअे यही जीवनका आदर्श कहा जायगा। पू० महात्माजी अैसी शिक्षा देते थे, अिसलिअे मैंने वही दलील देकर दोनोकी योजना अस्वीकार कर दी। अिस पर दोनो नाराज हो गये। पू० महात्माजीको मैंने यह वात वताअी तव अुन्होने अिस पत्रमें मेरे दोनो गुरुजनोके लिअे आश्वासन दिया। परन्तु अिससे अुनका समाधान नही हुआ। यह वात यही रह गअी। सन् १९४४ के वाद नाना गुजर गये। मेरे पिताजीने सभी गहने वेचकर अुनके रुपयोंका ट्रस्ट वना दिया और अुसके व्याजसे हमारे मूल गाव कारवारके अेक हाअीस्कूलमें मेरी माके नाम पर छात्रवृत्तिया तथा पारितोपिक देनेकी व्यवस्था कर दी, जिसमे हरिजन वालकोके प्रति विशेप पक्षपात किया गया था।]

वर्धा,
१३-५-'३५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। यह अुपाय हो सकता है। गहने अथवा अुनके पैसे तेरे लिअे पिताजी मुझे सौंप दे। अिसका अर्थ यह हुआ कि अुससे जो मासिक आय हो वह मैं तेरे लिअे काममे लू। तेरी मृत्युके वाद आश्रमके ट्रस्टी अुसका अुपयोग आश्रमके लिअे करे। अैसा करनेमे तुझ पर कोअी दोष नही आता। तू तो अपना जीवन अीश्वर पर ही अवलम्बित रखती है। पिताजीके और मेरे वीच जो समझौता हो अुसके प्रति तू अलिप्त रह सकती हे। मीरावहनका यही तो होता है। अुनके लिअे १५० से २०० पौण्ड आते है। वे आश्रमके खातेमे जाते है। अुनका खर्च आश्रम अुठाता है। मेरे सुझावमे पिता निर्भय रह सकते हैं, और तू अलिप्त रह सकती है।

मै वहा २२ तारीखको आअूगा। अुसी रातको वोरसदके लिअे रवाना हो जाअूगा। तू वम्वअीमे तो मिलेगी ही। परन्तु वोरसद आना हो तो आ सकती है। वर्धा तो है ही।

वापूके आशीर्वाद

१६२

[मेरी माके गहनोमे से थोडे मेरे पास थे। अुन्हे मैंने नाना तथा पिताजीकी सहमतिसे पू० महात्माजीको अर्पण कर दिया — यह कहकर कि अिस दानको मेरी स्वर्गवासी माका नाम दिया जाय।

अेक स्नेही मुझे ववअीमे मिले थे। वे पाडिचेरी जाकर श्री अरविन्दवावूके दर्शन कर आये थे। अुनके कुछ अनुभव और मत मैंने पू० महात्माजीको पत्रमे वताये थे और श्री अरविन्दवावूके वारेमे अुनकी राय भी पूछी थी।

अीश्वरका कौनसा स्वरूप आपको विशेप प्रिय है, यह प्रश्न भी पूछा था।]

बोरसद,
२८-५-'३५

चि० प्रेमा,

तुझे पौन घंटे कैसे ठहरना पडा ? मगर मैंने यह नही सोचा था कि तू भाग जायगी। बहुत दिन बाद मिली, अिसलिअे कुछ सवाल पूछनेकी और जी भरकर तुझे देख लेनेकी अिच्छा थी। तू अपने स्थान पर पहुच गअी, यह तो ठीक ही हुआ। अुस दिन तो वहा रही ही थी, अिसलिअे मनमें लोभ था।

अरविन्दबाबूके बारेमें मैं कुछ कहनेमें असमर्थ हू। अितना ही कह सकता हू कि मुझे अपना मार्ग फला है। हम जगतके काजी न बने। हा, अितना स्वीकार करे कि अुनकी छायामें रहनेवाले २०० लोगोंमें अैसे भी हैं जिनके जीवनमें अुनके सम्बधसे महान परिवर्तन हुअे हैं।

सब अपने अपने स्वभावका अनुसरण करते हैं।

पश्चिममें व्यक्तिगत जीवनकी पवित्रताकी आवश्यकता नही मानी जाती, यह कहना पूरी तरह सही नही है। यह बात भी नही कि हमारे यहा सभी लोग अुसकी आवश्यकताको मानते हैं। हम केवल अुनकी आवश्यकताको ही स्वीकार नही करते, बल्कि यह मानते हैं कि अन्त-शुद्धिरहित बुद्धिसे होनेवाले कार्य कितने ही सुन्दर क्यो न लगते हो, तो भी अुनमें स्थायित्व कभी नही रहेगा। तात्कालिक परिणामोंके आधार पर अैसे कार्योंकी तुलना की ही नही जा सकती। हा, जिनका नीतिके साथ सबध न हो अुन कार्योंमें अन्त शुद्धिकी जरूरत नही होती। व्यभिचारी बढअी समकोणवाली मेज बना देगा। परन्तु अन्त शुद्धिरहित मनुष्य अस्पृश्यताको नही मिटा सकता, न वह लोगोको चरखेकी तरफ मोड सकता है, क्योंकि दोनोंमें हृदयकी जरूरत होती है। अैसे कामोंमें समयकी गिनती कामकी नही होती। सत्यनिष्ठासे किये गये कामोंके परिणाम अवश्य आयेंगे, अिस बारेमें शका ही नही हो सकती। अितना विश्वास न हो तो हम नीतिकी रक्षा कभी कर ही नही सकते।

अीश्वर तो कल्पनातीत है। अिसलिअे हम जिसे भजते हैं वह हमारी कल्पनाका अीश्वर है। सच्चे अीश्वरको किसीने देखा नही। जिन्होंने

देखा है वे भी अुसका वर्णन नही कर सके है। मुझे कौनसा स्वरूप विशेष प्रिय है, यह कहना कठिन है। परन्तु जिस स्वरूपको मै पूजता हू अुसका नाम सत्य है। वह मूर्त अमूर्त है। अनेक प्रकारमे प्रगट होता है। पूर्ण स्वरूप अपूर्ण (मानव) को भला कैसे दिखाअी दे?

गहनोकी बात कही भी (छपनेके लिअे) नही भेजूगा। मेरी डायरीमे तो अुसका अुल्लेख हो गया है। तेरे पत्रके बाद नयी नोंध लिखी जायगी, वह तो तेरी भावनाके लिअे रहेगी। तू अितना ही चाहती है न?

खादी आयेगी तब अुसका अुपयोग करूगा।

लीलावती राजकोटसे आअी है। अिस बार अुसका शरीर खूब अच्छा हो गया है। वजन भी बढा है। और खुश मालूम होती है।

यहासे ३१ तारीखको रवाना होकर २ तारीखको वर्धा पहुचनेका विचार है।

बापूके आशीर्वाद

दुबारा नही पढा।

१६३

[अुस समयके अेक अग्रेजी समाचार-पत्रमें खबर आअी थी कि अेक यूरोपियन नटीने अपने पतिको पिस्तौल चलाकर मार दिया। वह कैंसरसे बहुत पीडित था और डॉक्टरोने यह विश्वास दिला दिया था कि वह जियेगा नही। वह असह्य यातना झेलकर मरे अिसकी अपेक्षा अुसीकी अिच्छानुसार अुसे मार डालनेमे अुसका हित है, अिस भावनासे नटीने अुसे मार डाला। अुस नटी पर मुकदमा चला, परन्तु अदालतने अुसे निर्दोष घोषित करके छोड दिया। अिस घटनाके बारेमे मैंने पू० महात्माजीकी राय पूछी थी।

जब मै बम्बअी गअी तब विल्सन कॉलेजके प्रिंसिपालसे मिलने गअी थी। वहा कुछ यूरोपियन सज्जन मिले। बातो-बातोमे वे पू० महात्माजीकी आलोचना करने लगे और प० जवाहरलालजीके विचारोकी तारीफ

करने लगे। पू० महात्माजीके विचार अुन लोगोंको मैं अच्छी तरह समझा न सकी, अुससे मुझे जो दुःख हुआ वह मैंने अुन्हें लिखकर बताया था।]

वर्धा,
२१-६-'३५

चि० प्रेमा,

तेरे बढ़िया पत्रका अुत्तर तुरन्त नहीं दिया जा सकता था। दायां हाथ आराम चाहे तब काम पूरा हो ही नहीं सकता।

मेरी बातें अैसी नहीं होतीं जिन्हें लिखकर पूछूं। अैसी बातें तो मैं (मिलने पर) पूछ ही लेता हूं। अिससे अुस समय पूछनेकी बातें अुसी समय खतम हो जाती हैं।

(तुझे) बोरसद ले जानेमें (अुद्देश्य यह था कि वहांका काम तू देख ले तो) भविष्यमें अैसा काम करनेमें तुझे सरल मालूम हो, तुझे यह भी बताना था कि महामारीके निवारणमें भी मेरा हाथ था ही।

भूकम्पका पापके साथ क्या संबंध है, यह तो 'हरिजन' में लिख चुका हूं। अुसे पढ़ लेना। बिहारमें किसीको क्रोध नहीं आया था, अितना ही नहीं, सबने समझ लिया था कि यह पापका फल है। अैक्य (विश्वात्मैक्य) के सिद्धान्तसे यह सब फलित होता ही है।

सर्पादिके विषयमें भी 'हरिजन' में लिखा है। वह पढ़ लेना। आजकल लिखे जानेवाले 'हरिजन' के लेख न पढ़ती हो तो अुन्हें ध्यान-पूर्वक पढ़नेकी मेरी सिफारिश है। तेरे पास आता तो है न?

जो पति अत्यंत दुःख पा रहा है, जो सेवासे भी शांत नहीं हो सकता, अुसकी मृत्यु साधनेमें मैं पाप नहीं देखता। परन्तु पति भानमें हो तो अुसे पूछ लेना चाहिये। वह अति दुःख पाते हुअे भी जीना चाहे तो अुसे जीने देना चाहिये।

मालिक ट्रस्टी बनें अिसका अर्थ यह है कि अपनी कमाअीका अमुक भाग रखकर बाकी सब गरीबोंको अर्थात् राज्यको अथवा अैसी ही लोकोपयोगी संस्थाको दे दें।

सब लोग अपनी कमाअी राज्यको दे दें तो किसीको साहस करनेकी प्रेरणा न मिले और मनुष्य केवल जड़ यंत्र बन जाय।

धनिक लोगोके साथ मेरा सबध रहने ही वाला है। अुन्हे मै दुष्ट नही मानता। और गरीबोको फरिश्ते नही मानता। पूर्व और पश्चिममे बहुतमे अैसे धनिक मौजूद है, जो परोपकारके लिअे कमाते है। वे पूजाके योग्य है। मै अैसे बहुतसे गरीबोको जानता हू जिनका सग त्याज्य है। मेरी कल्पनाके स्वराज्यमे शेर और बकरी अेक सरोवरमे अेक ही समय पानी पियेंगे। यह निरी कल्पना ही रहे, तो भी क्या? मुझे क्या चाहिये यह भी मै न जानू तो मैं प्रयत्न किसके लिअे करूगा?

यह तो सच है कि मै मनुष्योको अच्छी तरह परखता नही, परन्तु दूसरे जो परखनेका दावा करते है वे भी कहा परखते है? अिसलिअे अपने अज्ञानके लिअे मुझे खेद नही है। मनुष्योको नही परखता, अिसीलिअे अुन पर विश्वास रखता हू।

तुझे कोअी पूछे तब मेरे विषयमे तुझे अुत्तर देना ही चाहिये, यह जरूरी नही है। तू अैसा क्यो नही कहती? "मुझे जवाब देना नहीं आता। अुनका काम और विचार मुझे पसन्द है। जो हमे पसन्द हो अुसके पसन्द होनेके कारण हमेशा थोडे ही बताये जा सकते है? अिसलिअे प्रश्न तो आप अुनसे ही पूछिये।" अिस प्रकारका अुत्तर दे तो बहुतसी झझटोसे बच जाय। मुझसे ली हुअी होने पर भी जिस वस्तुको तू पचा सकी हो वह तो तू जरूर दूसरोको देना। परन्तु जो वस्तु हमने पचा ली वह दूसरेकी नही, हमारी ही हो गअी। जो हमारी हो गअी हो अुसके बारेमे शका नही होती और अुसके बारेमें हमारे पास जवाब भी बहुत होते ही है।

आज अितना ही काफी है।

बापूके आशीर्वाद

१६४

वर्धा,
११–७–'३५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी अभी मिला। तेरी वर्षगाठके दिन लिखा गया पत्र है, अिसलिअे आशीर्वाद तो तू ले ही ले।

कैसी है? कौनसी वर्षगाठ है, यह तो तू लिखती ही नही। तेरी शुभकामनायें अवश्य पूरी होगी। शुभ प्रयत्न करनेवालोके प्रयत्न निष्फल होते ही नही। और अशुभ प्रयत्न करनेवालोके कभी फलते ही नही। फलते दीखते हैं वह केवल आभासमात्र है।

दूसरा अवकाशसे।

बापूके आशीर्वाद

१६५

[सासवडके हरिजनोमें से महारोकी वस्तीमें मैंने अेक सेवाकार्य किया था। अुसका वर्णन पू० महात्माजीको पत्रमें लिख भेजा था।]

वर्धा,
१३–८–'३५

चि० प्रेमा,

पत्रोको निवटानेके लिअे आज मैंने अढाअी घटेका मौन लिया है। अभी अेकके वाद अेक पत्रका अुत्तर देते हुअे तेरा ९–७–'३५ का पत्र मेरे हाथमें आया है।

केलकर[1] से मिली, यह बहुत अच्छा किया। अुन्हें तेरा काम देखने ले जाय तो अच्छा हो।

---

१ स्व० श्री नरसिंह चिन्तामणि केलकर। लोकमान्य तिलक महाराजके अवसानके बाद वर्षों तक महाराष्ट्र कांग्रेसके नेता।

गदे कामका वही हाल है जो तूने लिखा है। महारोवाला भाग मैं 'हरिजनवन्धु' मे दे रहा हू। तेरा नाम-पता नही दूगा।

पूनाके प्रस्तावका अमल होने पर मुझे लिखना।

हिटलरके विषयमे दूसरी पुस्तक कौनसी है?

अब तेरा प्रश्न — रूसके दृष्टातका नमूनेके तौर पर अुपयोग करनेमे खतरा है। अेक तो यह कि हमे अुसका प्रत्यक्ष अनुभव नही है, दूसरा यह कि अुसे वहुत समय नही हुआ है, तीसरा यह कि वहा जो कुछ होता है वह जवरन कराया जाता है। अिसलिअे हम रूसको अलग रख कर सोचे। हमारे वीच अितना करना अनिवार्य है। हिंसाके द्वारा न तो कुछ करना चाहिये, न कराना चाहिये। अर्थात् धनिकोसे न्याय प्राप्त करनेका आसानसे आसान अुपाय यह है कि वे अपने प्राप्त किये हुअे धनका अच्छेसे अच्छा अुपयोग करे। अिससे यह परिणाम आ सकता है कि अैसा करते हुअे वे वहुत धन अुपार्जन करनेका लालच ही छोड दें। यह परिणाम आये तो कोअी हानि नही। न आये तो भी ठीक ही है। अुलटे, अितना धन सभालकर रखनेकी झझट किये विना अुसका लाभ मिल जाता है। और यदि वहुतसे धनिक ट्रस्टी वन जाय, तो हमारे लिअे कहनेको कुछ रह ही नही जाता। तेरी दलीलकी तहमे यह शका भरी हुअी है कि धनिक कभी अपनी सपत्तिके ट्रस्टी नही वनेंगे। यह शका सच हो तो चिन्ता नही, क्योकि अन्तमें तो सत्यकी विजय है ही। जो अपनी जरूरतसे ज्यादा सम्पत्ति रखते है वे चोरी करते है। और चोरीका धन कच्चा पारा है। वह पच नही सकता। अन्तमे वह चोरका नही रहेगा, यह विश्वास रखकर हम तो अहिंसक अुपाय ही करते रहे।

अितनेसे सतोष न हुआ हो तो फिर पूछना। तेरा प्रश्न महत्त्वका है, और अहिंसाको तूने पूरी तरह समझ लिया हो, तो मेरा अुत्तर तुझे पूर्ण लगना चाहिये।

वापूके आशीर्वाद

लक्ष्मी वारडोली गअी है। प्रभावती यहा है, अमतुलसलाम भी। वा दिल्लीमे है। लक्ष्मीको लडका हुआ है।

१६६

[सासवडमें बहनोंके काते हुअे सूतकी खादी आश्रममें बुनवाकर सबकी अिच्छानुसार पू० महात्माजीके लिअे भेंटके रूपमें भेजी थी। पू० महात्माजी अपना सूत मुझे देनेका आश्वासन वर्षोंसे दे रहे थे, परन्तु वह अभी तक मेरे हाथमें नही आया था। अुससे पहले सासवडसे खादीकी भेट अुनके लिअे रवाना हुअी।

पू० महात्माजी लिखते समय हाथके कागज और मोटी कलमका अुपयोग करने लगे। मै पूनामें कलम खरीदने अेक स्वदेशी दुकानमे गअी थी। वहा दुकान-मालिकने (जो काग्रेसी कार्यकर्ता थे) कहा कि "कलमें सब अरबस्तानसे आती है, भारतमे नही बनती।" यह बात मैंने पू० महात्माजीको पत्रमें लिख भेजी थी।

श्री जमनालालजीकी ओरसे काकासाहबने मुझे महिलाश्रमके सचालनकी जिम्मेदारी लेनेके बारेमे अनेक दलीलोके साथ समझाया। यह काम करना मेरा धर्म है, अैसी भाषा भी अुन्होने काममें ली। मै स्वय तो ग्रामसेवाका कर्तव्य छोडनेको राजी थी ही नही। परन्तु शायद काकासाहबको पू० महात्माजीका समर्थन मिलेगा, अिस कल्पनासे श्री शकररावजी अस्वस्थ हो गये थे। वे मानते थे कि मै सासवड आश्रम छोडकर चली जाअूगी, तो यहाके कामको नुकसान पहुचेगा। अिसलिअे पू० महात्माजीने अुन्हे आश्वासन देकर निर्भय किया।

हिटलरकी स्वलिखित पुस्तक 'My Struggle' मैंने पढ ली थी और हिटलरके बारेमें अेक रूसी पुस्तक भी मैंने पढी थी। पू० महात्मा-जीको मैंने यह बात बताअी थी। वे भी जिज्ञासासे ये पुस्तकें पढ गये।

महाराष्ट्र प्रान्तीय काग्रेस समितिने किसानोकी हालतका अध्ययन करनेके लिअे अेक किसान-समिति अुस समय नियुक्त की थी। यह समिति अुस अर्सेमें सासवड आअी थी। समितिके कुछ सदस्य समाजवादी थे। आश्रममे ग्रामोद्योगी रसोअी बनी, जो अुन्हे पसन्द आअी थी।]

वर्धा,
१०–९–'३५

चि० प्रमा,

राखी समय पर मिल गअी थी।

जुन्नरके कागज मिले। अच्छे थे। मुझसे जिसे अधिक आवश्यकता थी अैसी खुरशेदबहन[1] को वह जत्था दे दिया।

खादी मिल गअी। अुसका अुपयोग करूगा। सूत अिकट्ठा तो हो रहा है। अिस पर बहुतोकी नजर पडती रहती है। और मेरी कताअी भी कितनी? १६० तार हो जाये वह दिन मेरे लिअे आनदका दिन होता है।

आज तक तो मै यही समझा हू कि देशी कलमे बहुत आती है। जिससे मै लिख रहा हू वह देशी मानी जाती है। तलाश करूगा।

समाजवादियोमे बहुतसे भले है, कुछ त्यागी है, कुछ तीव्र बुद्धिवाले है, कुछ ठग है। लगभग सभी पश्चिमके रगमे रगे हुअे है। किसीको भारतके गावोका सच्चा परिचय नही, शायद अुसकी परवाह भी नही है।

तेरी रसोअी पसन्द आअी, यह गनीमत है।

लक्ष्मीबाअी ठुसे[2] का नाम तो याद नही।

काकाने तुझे न्यौता दिया है। लेकिन तेरा धर्म तो वही रहनेका है। मैने अपने विचार नही बदले है। तुझे लालच दिया गया, अिससे देव अस्वस्थ हो गये है। अुन्हे मेरी ओरसे निर्भय कर देना। तेरी ओरसे तो वे निर्भय है ही।

हिटलरकी बात मुझे भी लगभग वैसी ही लगी है जैसी तू कहती है।

---

१ स्व० श्री दादाभाअी नवरोजीकी पौत्री और बहुत वर्षो तक पू० महात्माजीकी अेकनिष्ठ अनुयायी।

२ पूनाकी पुरानी काग्रेस कार्यकर्त्री। सत्याग्रहमे अुन्होने जेल भुगती थी। १९३७ के चुनावमे काग्रेसकी तरफसे बम्बअी असेम्बलीकी सदस्या चुनी गअी थी। सासवड आश्रममे दो वर्ष तक प्रति सप्ताह आती रही थी। विशेषत अुन्होने हरिजनोकी वैद्यकीय सेवा की थी।

मेरी विचारसरणीमे रही अेक बात याद रखी जाय तो सब कुछ समझमें आ जाय। मेरी तटस्थता परिणामके कालके बारेमें है, कार्यके बारेमे कभी नही। परिणामके बारेमे भी नही। धनिक धन छोडे या न छोडे, यह कहनेमे परिणामके विषयमें लापरवाही नही है, अुसके विषयमें निश्चिन्तता है। हमारा कदम ठीक होगा तो आगे पीछे अेक ही परिणाम आयेगा और अवश्य आयेगा।

बन्दरसे मनुष्य पैदा होनेकी बात मेरे गले नही अुतरती। वैसे मनुष्यका देह धारण करनेवाले जीवने वानरादिकी देह जरूर धारण की है, अिस बारेमें शका नही।

आततायीको मारनेकी बात मुझे पसन्द नही। आततायी किसे माना जाय? हत्यारे वगैरा लोगोको जेलमें डालना पडेगा, अिसे फिल-हाल तो मै मानता हू। परन्तु यह अहिसा है, अैसा कभी कहनेका मुझे स्मरण नही है, मेरी यह मान्यता तो है ही नही। मैने यह कहा है कि आजकी परिस्थितिमें यह अनिवार्य हो सकता है। अिसका अर्थ अितना ही है कि मेरी अहिसा अभी बहुत अपूर्ण है और अिसलिअे अैसी हिसाका अुपाय मुझे मिला नही है। पतनको पतनके रूपमें देखनेमे ही सत्य है।

अहिसाके बिना प्राप्त की हुअी सत्तामें दरिद्र-नारायणका स्वराज्य हो ही नही सकता। स्वराज्य-प्राप्तिमें जिस हद तक अहिसा होगी, अुसी हद तक दरिद्रोकी दरिद्रता मिटेगी। पूर्ण अहिसा तो न मुझमें है, न तुझमें या और किसीमे है। परन्तु अहिसाको माननेवाले रोज अधिक अहिसक बनेंगे और अिससे अुनका सेवाक्षेत्र बढता जायगा। हिसाके पुजारीका क्षेत्र सकुचित होता जायगा और अतमे अपने तक ही सीमित रह जायगा।

केलकरको निमन्त्रित किया, यह अच्छा किया।

बापूके आशीर्वाद

बा देवदासको लेकर शिमला गअी है। देवदास काफी बीमार था। अिन समय यहा काफी लोग रोगशय्या पर पडे है। मीरा बीमार है। अमतुलसलाम भी बीमार ही कही जायगी। नीमू और अुसके बच्चे मेरे साथ ही है। लक्ष्मी दिल्लीमे आज आ रही है। मद्रास जायगी। प्रभा यही है।

१६७

[मैं सासवड रहने गअी तवसे पहले दो वर्षमें मैं किसानोमे अितनी घुलमिल गअी थी कि अुनके साथ खेतोमें काम तो करती ही थी, लेकिन दो वार अेक किसान भाअीकी झोपडीमे अुनके और अुनकी पत्नीके साथ रहने भी गअी थी। अेक वार अेक महीने तक रही और दूसरी वार पद्रह दिन तक। वह झोपडी वहुत ही सुन्दर थी। और आसपासका प्रदेश अितना रमणीय था तथा वहांका मेरा जीवन भी अितना स्व.भाविक था कि अुसका वर्णन पू० महात्माजीको लिखे विना मुझसे रहा नही गया। अुसके अनु-सन्धानमे पू० वापूजीने अिस पत्रमे लिखा कि "कोठरीका वर्णन आकर्षक है। तेरा द्वेष करनेके वहुतसे कारण हैं।"

पू० महात्माजीसे मै मिली तव 'द्वेष' शव्दका अर्थ मैंने पूछा। श्री महादेवभाअी पास ही थे। पू० महात्माजीके मनमें 'अीर्ष्या' की भावना थी। परन्तु 'द्वेष' शव्दमे मैने कहा कटुता है, और महा-देवभाअी भी मुझसे सहमत हुअे। परन्तु पू० महात्माजी अपनी भूमिका पर अटल रहे। कहने लगे, "नही, 'द्वेष' शव्द ही ठीक हे।"

पू० महात्माजी टहलते समय लडकियोके कधो पर हाथ रखकर चलते थे। अिस रिवाजका त्याग अुन्होने अिस समय किया था। अुस त्यागका पत्रमें अुल्लेख हे।]

दुवारा नही पढा।

वर्धा,
२८-९-'३५

चि० प्रेमा,

आज लिखाना ही पडेगा। दाया हाथ केवल सोमवारको 'हरिजन' के लिअे काममे लेता हू। वाकी दिनोमे वाये हाथसे लिखता हू। अैसा करनेमें समय तो लगता हे। अिसके सिवा तेरे पत्रका अुत्तर तुरन्त देना चाहिये। १६ तारीखके आसपास जरूर आना। थोडा थोडा करके जितना चाहिये अुतना समय तुझे दूगा। घूमते समय दू तो चलेगा न?

यहा तू आये तब रहनेके दिन तय करके न आये तो अच्छा। दो दिन अधिक लगें तो भले ही लग जाय। यहा फैले हुअे सब काम तू धीरे धीरे देखे तो अच्छा होगा और बाते भी अलग अलग समयमे होगी तो ज्यादा अच्छा रहेगा।

मेरा सूत प्रभावतीने अिकट्ठा कर रखा है। भेजनेको भी मैंने अुनसे कह रखा है।

तेरी प्रेरणासे हिटलरकी पुस्तक पढ रहा हू। लेनिनके विषयमे भी मेक्स्टनकी लिखी हुअी पढी। हिटलरके बारेमें अेक और पुस्तक मगा रखी है।

कोठरीका वर्णन आकर्षक है। तेरा द्वेष करनेके बहुतसे कारण हैं।

मुझे विश्वास है कि मेरे त्याग[1] का सारा हाल तू जानेगी तब तू भी मुझसे सहमत होगी।

जमनालालजी बहुत करके दूसरी या तीसरी तारीखको आ जायेंगे।

मुझे तो अैसा याद है कि तेरे दोनो प्रश्नोके अुत्तर मैं अपने पिछले पत्रमें दे चुका हू। लेकिन तेरे अिस पत्रमें अपने अिस पत्रका कोअी अुल्लेख नही देखता। अुत्तर दुबारा सक्षेपमें दे रहा हू।

जिन्हे कोढ आदि रोग हो जाय अुन्हे जबरन नपुनक बनानेकी प्रथाको पसन्द करनेमें अमुक आपत्तिया आती है। अिससे अनेक प्रकारके अनर्थ पैदा होनेकी सभावना है। फिर किसी भी रोगको असाध्य मान लेना भी ठीक नही। सयमका प्रचार करके जितना फल पैदा किया जा सके अुतनेसे सतुष्ट रहना ही मुझे तो सुरक्षित लगता है। पग पग पर मुझे कायरताकी गध आती है। कायर कतवैया सूतमें पडी हुअी गाठको चाकूसे निकालेगा। कुशल कतवैया धीरज और कलासे गाठ खोलेगा और सूतको अविच्छिन्न रखेगा। अहिसक मनुष्य असाध्य मानी जानेवाली व्याधिसे पीडित लोगोंके लिअे अैसा ही कुछ अुपाय करेगा।

विदेशोमें हमारा नियमित प्रचार-कार्य मुझे तो रेलगाडीके साथ बैलगाडीकी प्रतियोगिता जैसा लगता है। हम यदि प्रचार-कार्यमें सच्ची बात पर अेक हजार खर्च कर सकते हो, तो प्रतिपक्षी करोड खर्च करनेका

---

१. पाठक परिशिष्टमें यह लेख देख ले।

सामर्थ्य रखता है। अिसलिअे मेरा यह दृढ विश्वास है कि हमें अपने आप होनेवाले प्रचार-कार्यसे मतोष मान लेना चाहिये।

वापूके आशीर्वाद

१६८

[ता० २२–९–'३५ के 'हरिजनवन्धु' में महात्माजीका 'अेक त्याग' नामक लेख प्रकाशित हुआ। वह लडकियोंके कवे पर हाथ रखनेका रिवाज छोड देनेके वारेमें था। अुस लेखके कारण लोगोंमें चर्चा हुअी थी। अुसके वाद दिसम्वरमे पू० महात्माजी खूनके दवावसे वीमार हो गये। दस सप्ताहका अनिवार्य आराम लेनेके वाद अच्छे हुअे। तव ता० १–३–'३६ के 'हरिजनवन्धु' मे अुनका 'प्रभु-कृपाके विना सव मिथ्या' नामक लेख छपा। अिस लेखसे भी समाजमे चर्चाका ववडर खडा हुआ। जिस वीच मैंने सुना कि 'पूनाके अेक महाराष्ट्रीय प्रोफेसरने पू० महात्माजीको अेक पत्र लिखा है।' अुसका आशय भी कुछ हद तक जाननेको मिला। अिस पर मैंने पू० महात्माजीको लिखकर पूछा कि, "पत्रकी वात सच है या झूठ?"

सासवडकी दो विवाहिता वहनोंने मुझे अपने अनुभव वताये थे। अेक वहनने पतिके साथ चार वर्ष तक और दूसरीने पाच वर्ष तक ब्रह्मचर्यका पालन किया था।]

६–५–'३६

चि० प्रेमा,

अव तू पत्र लिख सकती है। हम ८ तारीखको नदीदुर्ग जा रहे है।

मालूम होता है तूने अच्छे अनुभव लिये है। हमारे मनमे शका आनेसे हम जो लोग काग्रेसके सदस्य-पत्र पर हस्ताक्षर करे अुन्हे मना नही कर सकते। वहाने वनाकर तो मनुष्य (काग्रेसमे) शरीक होंगे ही। अन्तमे अच्छे आदमी अधिक होंगे तो सव कुशल ही होगा।

महाराष्ट्रीय प्रोफेसरके पत्रकी बात बिलकुल सच्ची है। मगर अुनकी कल्पना सर्वथा असत्य है। लडकियोंके कधे पर हाथ रखकर मैं अपनी विषय-वृत्तिका पोषण करता था, अैसा अुस लेखकके पत्रका अर्थ किया जा सकता है। अुनका कहना तो भिन्न ही था।

परन्तु बात यह है कि लडकियोंके कधे पर हाथ रखना मैंने बद किया अुसके साथ मेरी विषय-वासनाका कोअी सबध नही। अुसकी अुत्पत्तिका कारण केवल बेकार पडे पडे खाते रहनेमें था। मुझे स्राव हुआ। परन्तु मैं जाग्रत् था और मन अकुशमे था। मैं कारण समझ गया और तबसे डाक्टरी आराम लेना मैंने बन्द कर दिया। और अब तो मेरी स्थिति जैसी थी अुससे अच्छी कही जा सकती है। अिस बारेमे तुझे अधिक पूछना हो तो पूछ सकती है, क्योकि तुझसे मैंने बडी आशाये रखी है। अिसलिअे तू मेरे विषयमे जो कुछ जानना हो वह मुझसे जान ले।

अभी अभी मैंने जो लेख लिखे है[1], वे सचमुच विचार करने लायक है। यदि तू अुन्हे समझ गअी हो तो ब्रह्मचर्यका मार्ग सरल हो जाता है। जननेन्द्रिय विषय-भोगके लिअे हरगिज नही है, यह यदि स्पष्ट हो जाय तो सारी दृष्टि बदल जायगी न? जैसे कोअी रास्तेमे क्षय रोगीके खूनके बलगमको मणि मानकर अुसे हथियानेको ललचाये और वह बलगम है अैसा जानकर शान्त हो जाय, वैसी ही बात जननेन्द्रियके अुपयोगके विषयमे है। बात यह है कि यह मान्यता अितनी दृढ या स्पष्ट कभी थी नही। और अब तो नअी शिक्षा अिसकी निन्दा करती है, मर्यादित विषय-सेवनको सद्गुण मानती है, और अुसे आवश्यक बताती है। अिन सब बातो पर विचार करना।

बहनोंका जो अनुभव तूने भेजा है वह सुन्दर कहा जायगा।

अभी तो अितना काफी है।

कदाचित् लीलावती तेरे पास आ जायगी।

बापूके आशीर्वाद

---

१ पाठक वे लेख परिशिष्टमें देख ले।

१६९

[पू० महात्माजीका ता० १–३–'३६ का लेख (देखिये परिशिष्ट–२) पढनेके बाद आचार्य भागवतके और मेरे बीच चर्चा हुअी। अुसमे 'स्वप्नावस्था' शब्द और अिसका अर्थ मुझे जाननेको मिला। 'यह सबको होता है', अैसा आचार्य भागवतका मत था। मैंने आग्रहपूर्वक कहा कि, "पू० महात्माजी छत्तीस वर्षसे ब्रह्मचर्य पालन कर रहे हैं। अिसलिअे अुनके बारेमे यह सभव नही है।" आचार्य भागवतने अिसे स्वीकार नही किया और यह बात पत्रमे छेडनेकी अुन्होने मुझे प्रेरणा की। मैंने सकोचपूर्वक पत्रमें पूछा, जिसका विस्तृत अुत्तर पू० महात्माजीने अिस पत्रमे और अिससे पहलेके पत्रमे दिया। अिससे 'हरिजनबन्धु' के अुक्त लेखमे जो कुछ सदिग्ध था अुसका भी स्पष्टीकरण हो गया।

मैं साबरमतीके सत्याग्रह आश्रममे सेवाकी तालीम ले रही थी तबसे पू० महात्माजी समय समय पर मेरे पत्रोंमें अैसा लिखते रहते थे कि, "मैंने तुझसे बडी आशायें रखी है।" मेरी समझमे यह बात नही आती थी। मेरी नजरके सामने अुस समय 'देशकी आजादी' ही अेकमात्र ध्येय था और मैं मानती थी कि अुसकी प्राप्तिके लिअे मैं कुछ न कुछ सेवाकार्य कर दिखाअू, अितनी ही आशा पू० महात्माजी मुझसे रखते होगे। बादमे मुझे पता चला कि पू० महात्माजी राजनीतिक कार्यक्रम बनाते समय जनताके सामने भले ही केवल सत्य और अहिसा पर जोर देते थे, परन्तु आश्रमवासियोके सामने वे ब्रह्मचर्यका विशेष आदर्श रखते थे (देखिये १३–२–'३३ का पत्र) और मुझसे भी वे यही अपेक्षा रखते थे। पहले तो मुझे यह सहज बात लगती थी। परन्तु आगे चलकर आश्रममे और बाहरके समाजमे सेवक-सेविकाओके जीवनके विचित्र प्रसग आखोके आगे आने लगे, तब मुझे बेचैनी होने लगी। और अब तो पू० महात्माजीके जीवनका प्रसग जानकर मुझे कुछ डर लगा। यह बात सच है कि पू० महात्माजीके जीवनका यह प्रसग मुझे बहुत गभीर नही लगा। परन्तु वे स्वय दूसरोके और अपने जीवनके अैसे प्रसगोसे बहुत ही गभीर और दुःखी हो जाते थे, अिससे मुझे घबराहट होती थी। अिसके सिवा,

मेरा स्वभाव तो भावना-प्रधान और कुछ अुच्छृंखल भी ठहरा। अिसलिअे मेरे मनमें अैसे विचार आते कि मेरे हाथसे कोअी अैसी बात हो जाय, जिससे पू० महात्माजीको भारी शोक-संताप हो तो मेरी लज्जा और पीडा भी अपार होगी। अिसलिअे मैंने पू० महात्माजीसे प्रार्थना की कि, "मुझसे आप बहुत बडी आशा न रखें। मैं प्रयत्नशील हूं, परन्तु आपके आदर्श तक पहुंचनेकी शक्ति मुझमें है, अैसा संपूर्ण विश्वास मैंने तो नहीं रखा है। भगवानको जो करना होगा वही करेगा," अित्यादि।]

नंदीदुर्ग,
२१-५-'३६

चि० प्रेमा,

नंदीदुर्गमें तो रोजकी डाक लगभग रोज निबट जाती है, अैसा कहा जा सकता है। तेरा १८ तारीखका पत्र कल शामको पढा। आज अुसका अुत्तर दे रहा हूं।

तुझसे आशा तो जो रखता हूं वही रखूंगा। तू जैसा समझेगी और तेरी जितनी शक्ति होगी अुसके अनुसार तू करती रहेगी।

तूने प्रश्न ठीक पूछा है। और भी अधिक स्पष्टतासे पूछ सकती है। मुझे (स्वप्नमें) वीर्य-स्खलन तो हमेशा हुअे हैं। दक्षिण अफ्रीकामें वर्षोंका अन्तर पडा होगा। मुझे पूरा स्मरण नहीं है। यहां महीनोंका अन्तर होता है। स्खलन होनेका अुल्लेख मैंने अपने दो चार लेखोंमें किया है। यदि मेरा ब्रह्मचर्य स्खलन-रहित होता तो आज मैं दुनियाके सामने बहुत अधिक वस्तुयें रख सका होता। परन्तु जिसने पंद्रह वर्षकी आयुसे लगाकर ३० वर्षकी आयु तक — भले अपनी स्त्रीके साथ ही सही — विषय-भोग किया, वह ब्रह्मचारी बनने पर वीर्यको सर्वथा रोक सके, यह मुझे लगभग असंभव जैसा जान पडता है। जिसकी संग्राहक-शक्ति पंद्रह वर्ष तक दिन प्रतिदिन क्षीण होती रही हो, वह अेकाअेक यह शक्ति प्राप्त नहीं कर सकता। अुसका मन और शरीर दोनों दुर्बल बन चुके होते हैं। अिसलिअे मैं अपनेको बहुत अपूर्ण ब्रह्मचारी मानता हूं। परन्तु जहां पेड नहीं होते वहां अरंड ही प्रधान होता है, वैसी ही मेरी स्थिति है। यह मेरी अपूर्णता दुनियाने जान ली है।

जिस अनुभवने मुझे वम्वअीमे सताया, वह तो विचित्र और दु ख-दायी था। मेरे स्खलन सव स्वप्नमे हुअे, अुन्होने मुझे सताया नही। अुन्हे मै भूल सका हू। परन्तु वम्वअीका अनुभव तो जाग्रत् अवस्थामें हुआ। अुस अिच्छाको पूरा करनेकी तो मेरी वृत्ति विलकुल नही थी, मूढता जरा भी नही थी। शरीर पर मेरा पूरा कावू था। परन्तु प्रयत्न करते हुअे भी अिन्द्रिय जाग्रत् रही। यह अनुभव नया था और अशोभनीय था। अिसका कारण मैंने वताया वही हे।[1] वह कारण दूर होने पर (अिन्द्रियकी) जागृति वन्द ही हो गअी अर्थात् जाग्रत् अवस्थामे वन्द हो गअी।

मेरी अपूर्णताके वावजूद अेक वस्तु मेरे लिअे सुसाध्य रही है। वह यह कि मेरे पास हजारो स्त्रिया सुरक्षित रही है। मेरे जीवनमे अैसे अवसर आये है जव अमुक स्त्रियोको, अुनमे विषय-वासना होते हुअे भी, अुन्हे या यो कहो कि मुझे अीश्वरने वचाया है। मै सौ फीसदी मानता हू कि यह अीश्वरकी ही कृति थी। अिसलिअे अिस वातका मुझे कोअी अभिमान नही है। मेरी यह स्थिति मृत्युपर्यन्त कायम रहे, यही अीश्वरसे मेरी नित्य प्रार्थना रहती है।

शुकदेवकी स्थिति प्राप्त करनेका मेरा प्रयत्न है। अुसे मै प्राप्त नही कर सका हू। वह स्थिति सिद्ध हो जाय तो वीर्यवान होते हुअे भी मै नपुसक वन जाअू और स्खलन असभव हो जाय।

परन्तु ब्रह्मचर्यके वारेमे जो विचार मैंने हालमे प्रगट किये है, अुनमें कोअी न्यूनता नही है, न अतिशयोक्ति है। अिस आदर्श तक प्रयत्नसे कोअी भी स्त्री या पुरुष पहुच सकता है। अिसका अर्थ यह नही कि अिस आदर्श तक मेरे जीते जी सारा ससार या हजारो मनुष्य भी पहुच जायेगे। अिसमे हजारो वर्ष लगने हो तो भले ही लगे, फिर भी यह वस्तु सत्य है, साध्य हे, सिद्ध होनी ही चाहिये।

मनुष्यको अभी वहुत लम्वा मार्ग तय करना हे। अभी अुसकी वृत्ति पशुकी है। केवल आकृति मनुष्यकी है। अैसा लगता है कि चारो तरफ

---

१ यह कि वेकार पडे पडे खाते रहनेसे शरीरमें विकार पैदा होते है।

हिसा फैली हुअी है। जगत अनत्यसे भरा है। फिर भी जैसे सत्य और अहिसा-धर्मके विषयमें शका नही, वैसे ही ब्रह्मचर्यके विषयमे भी कोअी शका नही है।

जो प्रयत्न करते हुअे भी जलते रहते है वे प्रयत्न नही करते। वे मनमें विकारोका पोषण करते हुअे भी केवल स्खलन नही होने देना चाहते, स्त्री-सग नही करना चाहते, अैसे लोगो पर (गीताका) दूसरा अध्याय लागू होता है। वे मिथ्याचारी माने जायेंगे।

मै अभी जो कर रहा हू वह विचारशुद्धि है।

आधुनिक विचार ब्रह्मचर्यको अधर्म मानता है। अिसलिअे कृत्रिम अुपायोंसे सततिको रोककर विषय-सेवनका धर्म पालना चाहता है। अिसके विरुद्ध मेरी आत्मा विद्रोह करती है।

विषयासक्ति जगतमें जरूर रहेगी, परन्तु जगतकी प्रतिष्ठा ब्रह्मचर्य पर निर्भर है और रहेगी।

बापूके आशीर्वाद

१७०

[सन् १९३६ के दिसम्बरमें काग्रेसका अधिवेशन महाराष्ट्र प्रान्तके फैजपुर गावमें करनेका निश्चय हुआ था। श्री शकररावजीके आग्रहके कारण काग्रेस अधिवेशनके लिअे स्वयसेविका-दलका सगठन करनेकी जिम्मेदारी मैंने स्वीकार की और अुसके बारेमें पू० महात्माजीको लिखा। अुन्होने काग्रेस-अधिवेशनके समय तक काम करनेकी अनुमति दे दी।

पू० महात्माजी पत्रोंके लिअे जो हाथ-कागज काममे लेते थे और ग्रामोद्योगी स्याही अिस्तेमाल करते थे, अुससे अक्षर साफ नही दिखाअी देते थे, पढनेमें बडी दिक्कत होती थी। यह शिकायत मैंने महात्माजीसे की थी। फिर थोडे महीने बाद मैंने जुन्नरके बढिया कागज अुन्हे भेजे थे —यह बताकर कि मुझे लिखे जानेवाले पत्रोंके लिअे अिस कागजका अुपयोग किया जाय। परन्तु अुन्होने वे सब खुरशेदबहनको दे दिये।

श्री महादेवभाओी अेक दिन सवेरे प्रो० त्रिवेदीके साथ सासवड आकर मुझसे आश्रममे मिल गये। अुस समय अुन्होने मुझसे कहा कि, "मैंने 'वे खुदाओी खिदमतगार' नामक पुस्तक गुजरातीमे लिखी है।' अुसका मराठी अनुवाद आप करे।" श्री शकररावजी अुस समय वही थे। अुन्होंने प्रकाशनकी सुविधा कर देनेका विश्वास दिलाया। पुस्तकका अनुवाद पूरा हो जानेके बाद मैंने पू० महात्माजीसे अुसके लिअे चार पक्तियोकी प्रस्तावना लिख भेजनेकी प्रार्थना की थी।]

सेगाव-वर्धा,
२४-६-'३६

चि० प्रेमा,

काग्रेस-अधिवेशन तक यह काम करना ठीक है।

कागज सबधी तेरा अुलाहना अुचित है। यह कागज तो ठीक है न?

आटा, चावल, तेलके बारेमें धीरज रखकर प्रचार करती ही रहना। ये चीजे महगी होने पर भी सस्ती समझी जाय। हम नया अर्थशास्त्र बना रहे हैं। देश देशका अर्थशास्त्र अलग होता है। अिसके सिवा, गरीब और अमीरका अर्थशास्त्र भी अलग अलग होता है। अिसलिअे तू हारना मत।

बाजरेकी बात मैं जानता हू। बीज कैसा भी क्यो न हो, तो भी मिट्टी, पानी आदि अनुकूल न होने पर बीज अपना गुण खो देता है।

यह है चार पक्तियोकी प्रस्तावना

> 'खुदाओी खिदमगार'[1] अेक अैसी पुस्तक है जिसका अनुवाद हिन्दकी सब भाषामे होना चाहिये। गुजराती, अुर्दू, हिन्दीमे तो हो ही गया है। सभव है दूसरीमे भी होगा। अुचित ही है कि अब मराठीमें भी अनुवाद निकला है और अधिक हर्षकी बात यह है कि यह अनुवाद अेक सेविकाने किया है। अिस शुभ प्रयत्नके लिअे अुनको धन्यवाद। मेरी आशा है कि महाराष्ट्रकी जनता

१ यह पुस्तक नवजीवन प्रकाशन मदिर, अहमदाबादकी ओरसे प्रकाशित हुआी है।

'दो खुदाअी खिदमतगार' अर्थात् अीश्वरभक्तके चरितको प्रेमसे पढ़ेंगे।[1]

मो० क० गांधी

किसी समाधिस्थ मनुष्यके जीनेके बारेमें श्रद्धा न बैठे तब तक अुसे मृतदेह मानकर अग्नि-संस्कार करनेके प्रयत्नमें जितना तथ्य हो सकता है, अुतना ही अीश्वर पर श्रद्धा बैठने तक नास्तिक होनेमें है।

भावना और श्रद्धामें भेद हो तो भावना न होने पर भी श्रद्धा जमानेके लिअे प्रामाणिक रूपसे प्रार्थनामें बैठनेमें लाभ है।

जंगली लोगोंमें हम रहते हो तो अपने धर्मका प्रचार न करके नीतिधर्म (सदाचार) का प्रचार करें। जब अुनके हृदय-द्वार खुले तब अुन्हें (धर्मका) चुनाव करना हो तो करें। हम तो अुन्हें सभी धर्मोंका सामान्य ज्ञान करायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

१७१

[वर्षगांठके निमित्तसे मैंने महात्माजीके आशीर्वाद मांगते हुअे भगवानसे प्रार्थना की थी कि अुनकी सच्ची शिष्या होनेका परमात्मा मुझे बल दे। पुत्रकी अपेक्षा योग्य शिष्यके सामने गुरु अपना हृदय खोल देता है और अपनी गुप्त विद्या भी अुसे दे देता है, अैसे किस्से पुराणों और संत-चरित्रोंमें मैंने पढ़े थे। अुनका हवाला देकर मैंने अुन्हें लिखा था कि, "श्री जमनालालजी जैसे आपको अपना पिता भले ही मानें। परन्तु मुझे लगता है कि जब तक मेरे पिता जीवित हैं तब तक दूसरे पिता ढूंढनेकी मुझे जरूरत नहीं। आप तो महान गुरु हैं।"

सत्याग्रहाश्रममें सब अुन्हें "बापूजी" कहते थे। वहां 'महात्माजी' कहनेकी किसीको छूट नहीं थी। परन्तु मैं तो शुरूसे ही अुन्हें 'महात्माजी' कहकर पुकारती थी। मुझे अुन्होंने कभी रोका नहीं। अेक दिन शामको

---

१ मूल प्रस्तावना हिन्दीमें ही है और यहां शब्दशः अुद्धृत की गयी है।

घूमते समय लडकियोंने पूछा "बापूजी, आप हमें आपको महात्माजी कहनेमें रोकते हैं, तो फिर प्रेमाबहनको क्यों नहीं रोकते?" अुन्होंने कोअी अुत्तर नहीं दिया। परन्तु मैंने ही अुत्तर दिया "मेरी दृष्टिमें 'बापूजी' तो साधारण सम्बोधन है। अुनके जैसे अलौकिक पुरुषको सामान्य नामसे संबोधित करना मुझे अच्छा नहीं लगता। मैं जब 'महात्माजी' कहती हूं तब अेक ही मूर्ति मेरी आंखोंके आगे आती है। नाम अैसा होना चाहिये जो विशिष्ट व्यक्तिके लिअे ही काममें लिया जाय और जब काममें लिया जाय तब अेक ही मूर्ति आंखके सामने खडी रहे।"

श्री बलवंतसिंह और श्री मुन्नालाल दोनों साबरमतीके सत्याग्रहाश्रममें थे। बादमें सेवाग्राम आश्रममें शरीक हुअे। श्री बलवंतसिंह वर्षोंसे राजस्थानमें गोसेवाका काम कर रहे हैं। अुन्होंने 'बापूकी छायामें'[1] पुस्तक लिखी है।

तुकडे बुवा अर्थात् तुकडोजी महाराज। महाविदर्भके संत पुरुष, जो अीश्वर-भक्ति और सर्वोदय-विचारका संगठित प्रचार वर्षोंसे कर रहे हैं।]

सेगांव-वर्धा,
२२-७-'३६

चि० प्रेमा,

तेरी जन्मतिथिके दिन लिखाया हुआ कार्ड मेरे पास पहुंच गया था। मेरे आशीर्वाद तूने मान लिये, यह ठीक किया। शिष्या बननेके लिअे तुझे काल्पनिक महात्मा बनाना पडेगा। जो अिस नामसे प्रसिद्ध है वह महात्मा तो है ही नहीं, परन्तु पिताका स्थान जरूर बहुतोंके लिअे पूरा करता है। और अितनेसे अुसे संतोष है। अनेक लोग अुसे पिता होनेका प्रमाण दें तो अुसे बडा सन्तोष होगा।

तेरा काम ठीक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

मेरे साथ बा, मनु, लीलावती, बलवन्तसिंह और मुन्नालाल हैं।
तुकडे बुवा भी मेरे साथ रहते हैं।

---

१ नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदावादकी तरफसे प्रकाशित हुअी है।

१७२

[हिन्दू धर्मके वहुतसे सिद्धान्तोको पू० महात्माजी नये रूपमे रखते थे, तो वे अेक नये ही पथकी स्थापना क्यो नही करते? यह अथवा अिसी प्रकारका प्रश्न मैंने अुनसे पूछा था।

ता० २२-७-'३६ का पत्र अेक कार्डमें समा जाता, अुसके लिअे लिफाफा क्यो काममें लिया गया और अधिक पैसे खर्च क्यो किये गये? यह मैंने पूछा था।

मेरा सवाल यह था "आप वर्णाश्रम धर्मको मानते हैं, परन्तु अुसमें तो विषमता है। पहले तीन वर्ण अूचे कहलाते है और शूद्रोके लिअे तीन वर्णोकी परिचर्याको ही धर्मशास्त्रोने धर्म बताया है। महाराष्ट्रमे श्री ज्ञानदेवसे लेकर श्री रामदास स्वामी तक सभी सतोने यह विषमता अपने ग्रथोमें मान्य रखी है। 'शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता समदर्शिन' महापुरुषोकी दृष्टि अैसी कैसे हो सकती है?" अित्यादि अित्यादि।]

मेगाव-वर्धा,
१०-८-'३६

चि० प्रेमा,

तीन पैसोका कार्ड न लिखनेमें हेतु था।

तेरी राखी मेरे हाथ नही लगी। लगती तो मैं जरूर बाधता। परन्तु तूने भेज दी अिसलिअे अुसका रस अथवा पुण्य तुझे मिल गया।

तू नये नये काम हाथमे ले रही है, यह अच्छा है। तेरी पुस्तक अूपर अूपरसे देख तो जाअूगा।

मेगावके अनुभवोमें वृद्धि तो कर सकता हू, परन्तु अभी नही। न फुरसत है, न अिच्छा। अनुभव किसीको देने जैसे नही मानता।

जिस भाषाका मनुष्य अुपयोग करते है अुसका रूढ अर्थ तो होगा ही, परन्तु अुनका अपना अर्थ अुसमें जरूर होगा, जो आगे-पीछेके सबधसे घटाया जा सकता है। सत्यको सम्पूर्ण रूपमें किसीने जाना ही नही है, अिसलिअे जो मनुष्य जिस वस्तुको जिस रूपमें देखे अुसी रूपमे कहे, यही अुसके लिअे सत्य है। भले ही वस्तुत वह असत्य हो। अिसी प्रकार प्रत्येक युगमें अेक ही वस्तुके बारेमें विचार बदलते है और वे ही

अुस युगके लिअे सत्य माने जाते हैं। यह अर्थ अथवा विचार 'असतो मा सद् गमय' में समाया हुआ है।

जहा अूच-नीचका भाव अुड जाता है वहा शूद्र तीन वर्णोंकी सेवा करे, तो अुसमे मुझे दोष दिखाअी नही देता। शूद्रको कोअी वनाता [नही। तव यदि स्वाभाविक रूपमें] परिचर्या अुसका धर्म हो तो अुसे वदलनेका क्या प्रयोजन?[1] ब्राह्मण और भगी पेटके लायक ही कमाते हो तो दोनोमें भेद क्या? भगीके ज्ञानी वननेमे कोअी रुकावट नही है। मेरी कल्पनाके वर्णमे ज्ञानका अेकाधिकार किसीका नही है। स्त्रियोकी प्रार्थनाके श्लोको[2] पर विचार करना। चार वर्णोंके सामान्य धर्म कौनसे है? ज्ञानदेव आदिके वचनोमे अूच-नीच-भावका समर्थन करनेवाले वचन भले ही मिले। किसी सतका न्याय अिस तरह अुसके दो चार वचनोसे नही किया जाता। रामदासके वारेमें तू जो कहना चाहती है वह मै जानता हू। ये अुदाहरण अयोग्य सिद्ध हो तो भी मेरी दलीलको आच नही आती।

तेरी प्रार्थना मै स्वीकार नही कर सकता, क्योकि तूने अिन प्रार्थनाकी योग्यताका पूरी तरह विचार ही 'नही किया है। तू प्रचलित प्रवाहमे वह गअी है। तू, मै और सव अपने अपने माता-पिताके चौकठेमें ही पडे है। अुसे भूलकर नये कहलानेमे जितना अर्थ या अनर्थ है, अुतना ही पुराने चौकठेके त्यागमे है। अुसमे रहकर हम अनेक परिवर्तन कर सकते है। अिसीका नाम प्रगति या अुन्नति है। सर्वथा नये दीखनेका अर्थ है अुल्कापात या नया धर्म। हिन्दू धर्मके लिअे कही चौकठा होगा या नही? वच्चे रोज पानीमे नये अक्षर वनाते हैं और वनाते ही वे मिट जाते हैं। परन्तु अिसमे भी अुनके लिअे तो आनन्द है ही। अैसा ही आनन्द तू करना चाहती दीखती है। परन्तु पुराने चौकठेमे पले हुअे मुझ ६७ वर्षके वूढेको तू पानीमे अक्षर लिखनेके लिअे कैसे खीच सकेगी? मै तो किनारे

---

१ अिस वाक्यमे अधूरापन है। जैसा सूझा वैसा सुधारा है।

२ अहिंसा सत्यम् अस्तेय शौचम् अिन्द्रियनिग्रह ।
अेत सामासिक धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन् मनु ॥
अहिंसा सत्यम् अस्तेयम् अकामक्रोधलोभता।
भूत-प्रिय-हितेहा च धर्मोऽय सार्ववर्णिक ॥

पर खडा तेरे और तेरे जैसोंके खेल देखा करता हू। आगामी 'हरिजन' में अेक पत्रकी आलोचनामें अिससे सम्बन्धित कुछ तू देखेगी।

मेरा अज्ञान तेरे हाथ ठीक लगा। अभी और खोज करे तो अिससे भी घोर अज्ञान तेरे हाथ लगे। परन्तु जब तुझे मेरे पूर्ण अज्ञानका पता चलेगा तब तू भाग तो नही जायगी? अितना वचन दे दे तो मैं साफ कह दू कि मैं कुछ जानता ही नहीं, क्योंकि अैसा अध्ययन मैंने किया ही नही है।

साम्यवादके विषयमें अपने सन्तोषके लायक मैंने पढा है। स्वराज्यमे किसकी जरूरत होगी, यह तो स्वराज्यको देखू तभी कह सकता हू। मेरा विरोध तू जहा देखे वहा सत्य-असत्य तथा हिंसा-अहिंसाके सम्बन्धमे ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

१७३

[मासवड जानेके बाद मेरे हाथों लेखन-प्रवृत्ति शुरू हुअी थी। दैनिकों, मासिक पत्रों आदिके लिअे लेख तथा कहानिया लिखकर भेजती थी। बादमें मैंने पुस्तकें लिखना भी शुरू किया। पू० महात्माजीको शायद मेरी यह प्रवृत्ति पसन्द नही आयेगी, अैसा मानकर मैंने सकोचसे अिस विषयमे अुनकी राय पूछी थी।]

सेगाव-वर्धा,
१२-९-'३६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

महात्माकी सेवा कैसी होनी चाहिये, अिसका अर्थ तो तू महात्मा बने तभी जाने। अभी तेरी कल्पना जहा तक तुझे ले जायगी वहीं तक तू जायगी। महात्माको अेक फुसी भी हो जाय तो दुनिया भरमें शोर मच जाता है। बेचारे सामान्य आदमीको भगदर हो जाय तो भी वह फुसी मान लिया जाता है। कोअी अुसके बारेमें नही जानता। क्या करे?

आज ही अस्पताल छोडकर यहा आया हू। अभी कमजोरी तो खूब है, परन्तु अब यहा शक्ति आ जानेकी आशा रखता हू।

अब वहा बरसात शुरू हुअी मालूम होती है। यहा तो जरूरतसे ज्यादा होती रहती है।

तेरे दूसरे वर्णन रोचक है। तू अपना काम आगे बढा रही है। परिणाम तो जो आना होगा वह आयेगा।

तेरी लेखन-प्रवृत्तिकी आलोचना करनेकी बात ही नहीं है। जो शक्ति अीश्वरने तुझे प्रदान की है अुसका सदुपयोग तुझे अवश्य करना चाहिये।

लीलावतीका मामला बहुत कठिन तो है ही। अेक प्रयत्नमें तो मैं हार गया। अब दूसरा हाथमे लिया है। मैं बिलकुल तो हारनेवाला नही।

तेरा प्रश्न ठीक है। परन्तु मुझे स्वराज्य लेना है। मौतसे पहले कैसे मरू?

मीराबहनके बारेमे भी तूने जो लिखा है वह सही है। वह मुझसे दूर बिलकुल नही रह सकती। अब जो हो सो सही।

आज अधिक नही लिखूगा।

बापूके आशीर्वाद

१७४

[फैजपुर कांग्रेस अधिवेशनमे काम करनेके लिअे पूनामें स्वय-सेविकाओंकी छावनी मैंने शुरू की थी। अिसके लिअे पू० महात्माजीके आशीर्वाद मागे थे।]

सेगाव-वर्धा,
१४-१०-'३६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू तो अब गगन-विहारिणी हो गअी है। भले ही अुड। परन्तु थककर गिरना मत।

मेरे आसपास मीरा और नाणावटीके बिस्तर है। दोनो मोतीझिरेसे बीमार है।

यह कह सकते हैं कि मेरी डाक बन्द है। परन्तु अपनी छावनीके लिअे जो आशीर्वाद मागती है वे तो हैं ही। मेरी आशा है कि सेविका मूक बनकर किसी आडबरके बिना सेवा ही करेगी और समझेगी कि सेवाका अिनाम सेवा ही है।

मुझे बम्बअी जाना है, यह मैं तो नही जानता। अहमदाबाद जाना भी अब तो अनिश्चित हो गया है। मीराको अिस स्थितिमे रखकर तो हरगिज नही जा सकता। नाणावटीकी तबीयत अब सुधार पर कही जा सकती है।

बापूके आशीर्वाद

१७५

[छावनी समाप्त होते समय मुझे 'अुष्माघात' जैसा कुछ हो गया था और मैं बेहोश हो गअी थी। अिसलिअे पू० महात्माजी अुलाहना देते हैं।]

सेगाव-वर्धा,
१९-११-'३६

चि० प्रेमा,

पिछले पत्रमे अुत्तर देने लायक कुछ नही था। तुझे लिखनेका कोअी भी निमित्त मुझे अच्छा लगता है। समय ही नही था। परन्तु तेरे अतिम पत्रका अुत्तर तो देना ही पडेगा। काकाने तेरी बीमारीके समाचार अेक मिनटकी बातचीतमे दिये थे, परन्तु तूने लिखा है वैसी बीमारीके नही। अिस प्रकार तुझे बीमार क्यो पडना चाहिये? अिसमे मुझे तेरी लापरवाही मालूम होती है। शरीरको अीश्वरकी दी हुअी सपत्ति मानकर तू अुसका अुपयोग करे तो अिस तरह बीमार न पडे। शरीरसे जितना सहन हो अुतना ही काम करके सतोप क्यो नही मानती?

मैं वहा अेक दिसम्बरको आकर बैठू अथवा जनवरीमें भ्रमण करने निकलू, अैसी कोअी बात नही है। हा, प्रदर्शनीसे पहले मुझे फैजपुर जरूर जाना है।

बापूके आशीर्वाद

पुनश्च

वापस सेगाव आ गअी है। अुसके विषयमें कुछ भी नही कहा जा सकता। अुसके हेतु तो अूचे है ही। मेहनत भी करती है। परन्तु जब तक अधीरता न मिटे तब तक वह सच्ची प्रगति नही कर सकती। फिर भी यदि स्वराज्यकी आशा न छोडू, तो की आशा कैसे छोडू? मेरे जैसा आशावादी तुझे मुश्किलसे मिलेगा।

हरिलाल[1] तो खड्डेमे पडा है न? अुसकी भी आशा नही छोडता। फिर क्या? आर्यसमाजी बननेमें तो कुछ नही है।

बापू

१७६

[सासवडमे आश्रमके लिअे जो मकान मिला था वह वहाके तहसीलदारके षड्यत्रसे छोडना पडा। मालिक नाबालिग था, अिसलिअे अुस पर सरकारी दबाव पडा और यद्यपि कानून आश्रमके पक्षमे था (कानूनी भाडाचिट्ठी लिखी गयी थी) फिर भी यह सोचकर कि मालिकको असुविधा नही होनी चाहिये मकान छोड दिया गया। अेक और छोटा असुविधावाला मकान मिला। वहा आश्रम सवा वर्ष तक रहा। बादमें काग्रेस मत्रिमडलकी हुकूमत शुरू होने पर आश्रमको पुराना मकान फिर मिल गया।

श्री विनोबाजी काग्रेस कार्यकर्ताओको धीरज देनेके लिअे कुछ महीने फैजपुरमे रहे थे। अुनके साथ मेरा निकट परिचय अिसी अरसेमें हुआ। अुनके साथ बहुत 'विनोद' करती थी, वह सब पू० महात्माजीको मैं बताती थी। गभीर प्रकृतिके होने पर भी श्री विनोबाजी मेरे साथ खूब घुलमिल गये थे।]

---

१ पू० महात्माजीके बडे लडके। पहले मुसलमान हुअे, फिर आर्य-समाजी बने।

नेगाव-वर्धा,
१२-१२-'३६

चि० प्रेमा,

अितना लिखनेकी फुरसत न होते हुअे भी यह लिख रहा हू। पेडके नीचे पडा रहना पडे तो भी सासवड नही छूटना चाहिये। परन्तु मनमे भी कारण पदा न होने देना। मनमें भी क्रोध रखेगी तो पेडके नीचे रहनेका पुण्य या फल नही मिलेगा।

काग्रेस अधिवेशनमें जहा तक देहातको शोभा देनेवाला ठाट करते आये वहा तक किया जा सकता है। 'करते आये' शब्दको दोनो अर्थोमे लेना। अिस ठाटमें कला हो, और अुस पर अेक पाअी भी खर्च न की जाय।

मेरा आना २० तारीखको निश्चित हुआ है। हम कितने लोग आयेंगे, यह तो वहासे आनेवाले अुत्तर पर निर्भर करेगा।

विनोबाका काफी 'मनोरजन' कर रही दीखती है।

फिर बीमार न पडना। अपनी मर्यादामे रहकर काम करनेसे वह अधिक अच्छा और शोभास्पद होता है।

लीलावतीके भाअी सख्त बीमार हैं, अिसलिअे वह विलेपारले गअी है।

बापूके आशीर्वाद

१७७

[फैजपुर काग्रेसके बाद चुनावके सिलसिलेमे दौरा करते हुअे श्री शकररावजी मोटर दुर्घटनाके शिकार हो गये थे। अुन्हे काफी समय तक अस्पतालमें (पहले पूनाके, फिर बम्बअीके) रहना पडा था। वे पूनाके अस्पतालमें थे तब बारह दिन मैं अुनकी सेवा-शुश्रूषामे रही थी।

श्री जमनालालजीने मुझे विवाह करनेके बारेमें सवाल पूछे थे— यह सोचकर कि मेरी पसन्दका पुरुष पतिके रूपमें मिले तो मैं विवाह कर लूगी। अैसा कोअी पुरुष नही मिलता, अिसीलिअे मैं अविवाहित रही हू, अैसी अुनकी कल्पना थी। अिसलिअे नाम देकर 'अमुक पुरुषके साथ विवाह करना पसन्द है?' अैसे सवाल वे पूछने लगे।

ता० १३–१२–'३६ के 'हरिजनवन्धु' में 'चित्त-शुद्धिकी आवश्यकता' नामका पू० महात्माजीका लेख प्रकाशित हुआ था। अुसमे अुन्होने हरिजन-सेवा करनेवाले अेक कार्यकर्ताके नैतिक पतनका वर्णन और अुससे सबंधित अपने विचार दिये थे। अुसने दो स्त्रियोके साथ अेक ही समयमे अनैतिक सम्बन्ध रखा था और बादमे अुनमें से अेकके साथ विवाह कर लिया था। लेखमे दोनोके नाम दिये थे। अुसका नाम पढकर मुझे लगा कि "यह तो सत्याग्रहाश्रमकी लडकी मालूम होती है!" और अिस विषयमे पू० बापूजीसे पत्रमे मैंने सवाल किया। अुन्होने अुत्तरमें 'हा' लिखा और मेरा अनुमान सही निकला। अुसके विषयमे अिस पत्रमे थोडीसी चर्चा है।]

सेगाव,
५–२–'३७

चि० प्रेमा,

मेरे दाये हाथको आराम देनेकी जरूरत है और बायेंसे लिखनेमे बहुत समय चला जाता है। अितना समय कहासे निकालू? काम बहुत बढ गया है, अिसलिअे ज्यादातर तो लिखनेका दूसरोमे ही लिखवाता हू। सोमवारके दिन दाहिना हाथ काममे ले लेता हू।

लिखनेका काम करनेवाली विजया और मनु है। कुछ हद तक प्रभावती। विजयाको तू नही जानती होगी। वह पटेल है। बारडोलीकी है। जबरदस्ती आ गअी है, क्योकि सेगावमे किसी नये व्यक्तिको न लेनेका आग्रह तो था ही। यह आग्रह विजयाने तुडवा दिया। अपना मामला अुसने अिस ढगसे पेश किया कि मै अुसे मना करके अुसके हृदयको तोड नही सका। अुसे आश्रममे रखनेका अभी तक तो पछतावा नहीं हुआ। वह मूक भावसे काम कर रही है। अिस प्रकार वह   का बदला चुका रही है।

अब शकरराव अच्छे हो गये होगे। मैंने अुनके स्वास्थ्यके बारेमें हरिभाअू फाटक[1]से पुछवाया तो है। परन्तु तू मुझे ब्यौरेवार समाचार दे सकेगी।

---

१ पूनाके वृद्ध कांग्रेस कार्यकर्ता १९२० से १९३० तक महाराष्ट्रके नेताओमे से थे।

पटवर्धन[1] जब चाहे तब आ सकते हैं, यह मैंने अुनसे कहा था। परन्तु पहाड दूरसे ही सुहावने लगते है न?

तेरी कडी परीक्षा हो रही है। ग्रामीणोकी जेबमे पैसा डालनेकी बात आसान हे भी और नही भी है। यदि वे हमारा कहा माने तो बिना पूजी अथवा यो कहो कि कमसे कम पूजीसे सारे गावोकी आय दुगुनी की जा सकती है। अिसमे देहातको चूसनेवालोको गावोमें जो आय होती है अुसका समावेश नही है। परन्तु यदि वे हमारा कहा न माने अर्थात् हम कहे अुतनी मेहनत ही न करे, सिखायें वह अुद्योग न सीखे, तो आय बढाना कठिन ही नही, असभव भी है। अेक और बडी कठिनाअी यह है। केवल मुट्ठीभर आदमी ही गावोमे जाते है। वे भी अनुभवहीन होते हैं। अुनके शरीर गावोमे रहने जितने कसे हुअे नही होते। वे ग्रामीणोका स्वभाव नही जानते। अुनकी आवश्यकताओंसे सर्वथा अनभिज्ञ होते हैं। हाथसे काम करनेकी आदत नही होती, बुद्धि भी नही चला सकते। स्कूल-कॉलेजोमे प्राप्त ज्ञान देहातमे बिलकुल निरुपयोगी सिद्ध होता है। अैसी स्थितिमें धीरजकी आवश्यकता होती है। आत्म-विश्वास चाहिये। शरीर-सम्पत्ति हो तो अन्तमें देहातकी आर्थिक स्थिति सरकारी मददके बिना बहुत कुछ, यो कहे कि ५० प्रतिशत, सुधारी जा सकती है। ५० प्रतिशत तो मैं कमसे कम कहता हू। मेरी मान्यता तो अैसी है कि ९० प्रतिशत सुधारी जा सकती है। शरीर-सुधार, समाज-सुधार, नैतिक सुधार ये तीन मुख्य वस्तुअे हैं। अिनके लिअे तो सरकारी सहायताकी कोअी आवश्यकता नही है।

आर्थिक सुधारमे ही थोडीसी मदद हो तो काम आसान हो जाय। परन्तु अुपरोक्त तीन सुधारोके बिना सरकारी मदद कुछ भी नही कर सकती। अिसलिअे तू यदि खादी-शास्त्रमें सचमुच निष्णात हो जाय और बडेसे बडे प्रलोभनोके बावजूद गावसे न हटे, तो अुपरोक्त सब बातोका प्रत्यक्ष अनुभव करेगी।

---

१ पटवर्धन अर्थात् पु० ह० अुर्फ रावसाहब पटवर्धन, जो फैजपुर कांग्रेससे स्वयसेवक-दलके मुखिया थे।

तू गायके दूधका आग्रह नही रखती, यह ठीक नही। बाहर जाय तब तू गायके दूधका घी और पेडे साथमें रख सकती है। पेडे बिना शक्करके होने चाहिये। अर्थात् शुद्ध मावेके। अुनके साथ गुड खाना हो तो खाया जा सकता है। अैसा करनेसे खर्च बढता नही और दूधकी जरूरत अच्छी तरह पूरी की जा सकती हे। पेडे सूखे खानेके बजाय अुनका चूरा करके गरम पानीमे मिलाकर दूध बनाया जा सकता है। अुसमे कमी सिर्फ विटामिनोकी रहती है। परन्तु कुछ समय विटामिन न मिले तो कोअी हानि नही होती।

वही हे। यह सारा किस्सा बहुत करुण है। सभी ब्रह्मचारी न रहे यह तो बिलकुल समझमें आने जैमी बात है। जो अिन्द्रिय-निग्रह न कर सके वह खुशीसे विवाह कर ले। परन्तु विषयोका गुप्त सेवन करे, यह मुझे असह्य लगता है। मनुष्यका पतन विषयोके गुप्त सेवनसे होता है। अैसा करनेसे मर्यादा नही रहती। मुझे गृहस्थाश्रमसे जरा भी द्वेष नही। वह आवश्यक स्थिति हे। सुन्दर है। परन्तु आश्रमका तो अर्थ ही यह हे कि अुसके गर्भमे धर्म हो। गृहस्थ धर्म स्तुत्य है, स्वेच्छाचार निन्दनीय है। मेरा सारा विरोध केवल स्वेच्छाचारके खिलाफ है।

जमनालालजीने तुझसे जो प्रश्न किया वह तो ठीक था। अुन्होंने स्त्रीकी दृष्टि जानना चाही थी। विनोबा, मैं और दूसरे पुरुष कुछ भी कहे तो भी अनुभवी निष्कलक स्त्रीका अनुभव जाननेकी आवश्यकता होगी ही। और अन्तमे सच्चा योग तो स्त्रीका ही होना चाहिये। ब्रह्मचर्यका महत्त्व और अुसकी आवश्यकता सिद्ध करनेका भार केवल पुरुष पर होना ही नही चाहिये। आज तक यह भार ज्यादातर पुरुषने ही अुठाया है। अिसलिअे अिस भारने अधिकारका रूप ग्रहण कर लिया है। अिससे ब्रह्मचर्यकी फजीहत हुअी हे। अितना ही नही, जो आसान होना चाहिये था वह अितना कठिन बन गया है कि बहुतोको तो असभव ही लगता है। अिसमे भी अधिक दोष पुरुषोका ही पाता हू। स्त्रियोको अुन्होंने किसी न किसी तरह दबाकर रखा है। अैसा करनेमे (पुरुषकी) खुशामद और पशुबलने समान भाग अदा किया है। कुछ भी हो, अिसके फलस्वरूप मनुष्य-जातिका आधा अग निर्बल हो गया और रहा। परिणाम यह

हुआ है कि पुरुष अपने बहुतेरे प्रयत्नोमे असफल सिद्ध हुआ है। और यही ठीक हुआ अैसा कहा जायगा। अब स्त्रियोमें कुछ जागृति आअी है। लेकिन अभी तो यह जागृति विकृतिका रूप ले रही है। पुरुष स्त्रीकी स्वतन्त्रताके नाम पर अुसे लाड लडा रहा है। अुसके अहकारका पोषण कर रहा है। स्त्री स्वतन्त्रताको स्वेच्छाचार मान बैठी है। अिससे जो स्त्री-पुरुष बच सकें वे बचें। तू बचना।

बापूके आशीर्वाद

दुबारा नहीं पढ सका।

१७८

[श्री नरीमान किसी समय (१९२८ से १९३६ तक) बम्बअीके माने हुअे नेता थे। अुन पर यह आरोप लगाया गया था कि दिल्लीकी बडी विधान-सभाके चुनावमें अुन्होने वफादारीके साथ काग्रेसके अनुशासनका पालन नही किया। अिस बारेमें काग्रेसमें दो मत थे। अिसलिअे मैने पू० महात्माजीके सामने पत्रमे यह विषय छेडा था।

अप्रैल-मअीके बीच हम तीन सहेलिया सुशीला, किसन और मै श्री धुरधरजीको साथ लेकर रत्नागिरी जिलेके अेक मुन्दर स्थान बाघोटण गअी थी। वहा अेक आरोग्यभवन जैसी सस्था थी और गरमीमे वहा बहुत लोग रहने आते थे। अूपरके पत्रमे सत्याग्रहाश्रमकी जिस लडकीका अुल्लेख हुआ है वह वहा अपने पतिके साथ आअी थी। मिलनेके बाद मैने महात्माजीके लेखमे वर्णित घटनाके बारेमें अुससे पूछा। परन्तु अुसने अपने निर्दोष होनेका दावा किया। बादमे अुसके पतिने अुसका झूठ स्वीकार किया। यह किस्सा मैने पू० महात्माजीको पत्रमें बताया था।

सासवडका काम बन्द करके ठेठ गावमें जानेकी बात चल रही थी, परन्तु अमलमें नही आअी थी। सासवड स्थायी रूपमें कार्यक्षेत्र रहा।

अुस वर्ष राष्ट्रीय सप्ताहमें (६ अप्रैलसे १३ अप्रैल तक) गाधी-सेवा-सघका सम्मेलन कर्णाटकके हुदली आश्रममे हुआ था। श्री शकररावजी अस्पतालमे होनेके कारण सम्मेलनमे अुपस्थित नही हुअे। परन्तु सासवड

आश्रमके सचालक आचार्य भागवत (जो किसी समय पूनाके राष्ट्रीय महा-विद्यालयके अध्यापक थे), मै और हमारे दो साथी वहा अुपस्थित थे। आ० भागवतकी अिच्छा थी कि हम चारोको पू० महात्माजी थोडा समय दे और हमारा मार्गदर्शन करे। परन्तु वह सफल नही हुअी।

अुसी सम्मेलनमें 'विधान-सभाके आगामी चुनावमें गाधी-सेवा-सघके सदस्य अुम्मीदवारके रूपमे भाग ले या नही' अिस विषय पर चर्चा हुअी थी। अनेक लोगोके साथ मैने भी अेक भाषण किया था। वह पू० महात्माजीको अच्छा नही लगा। मुझे अुलाहना मिला कि, "तेरे विचार कच्चे है।" अुसके बाद मैने अेक वर्ष तक सार्वजनिक भाषण न करनेका व्रत लिया था।]

तीथल-वलसाड,
१३-५-'३७

चि० प्रेमा,

आज ही तेरा पत्र मिला और आज ही जवाब दे रहा हू। तेरा पहलेका पत्र तो मेरे बस्तेमे रखा ही है। खैर, अिसको तो निवटा दू। अुसका भी हो जायगा।

सुशीलासे कहना कि यहा तुम सब आते तो मजा जरूर आते, परन्तु वहाका अेकान्त मै कैसे देता? और वहाकी ठडक, तेरा वहाका वर्णन ठीक हो तो? यहा तो गरमी मालूम होती ही है।

नरीमानके साथ अन्याय होनेकी बात मै नही जानता। यह कैसे हो सकता है कि बम्बअीमे जो नेता हो वह सारे प्रान्तका नेता होना ही चाहिये? और तीन प्रान्तोके प्रतिनिधियोको कौन बहका सकता है, कौन दबा सकता है? यदि अन्याय हुआ हो तो वे ही प्रतिनिधि सब आज भी जीवित है, वे कैसे बरदाश्त करेगे? अिसलिअे अन्यायकी बात मेरी तो समझमे ही नही आती। सरदारने क्या किया, यह भी मेरी समझसे बाहर है। सारा आन्दोलन मुझे तो कृत्रिम लगा है। लेकिन अगर मै न समझता होअू तो तू मुझे समझा। मेरा नरीमानके प्रति कोअी दुर्भाव नहीं है। अुनके प्रति जो आरोप लगाये जाते है अुनका अिस वस्तुके साथ कोअी सम्बन्ध नही। अिन आरोपोके सच-झूठके बारेमें तो नरीमान जब चाहे तब जाच

हो सकती है। नरीमान तेरे मित्र है, यह मैंने आज ही जाना। मेरा मत तो मैंने केवल तटस्थ भावसे प्रकट किया है।

. के बारेमे पढकर दु ख हुआ। मैंने जो अुन दोनोने कहा वही प्रकाशित किया है। और वह भी अुनकी अिच्छासे। के मनमे सत्यासत्यका भेद नही है, अैसा मुझे लगता है। तू यह पत्र अुसे पढनेको दे/सकती है।

देवको मैंने पत्र लिखा था। अुनका अुत्तर भी आया है। मैंने तुरन्त ही नही लिखा था।

सासवड बन्द हो गया, यह अच्छा नही लगा। 'अनारभो हि कार्याणाम्' वाली बातको मै मानता हू। अब कुछ हाथमे ले तो अुसे पकडे रहना।

मुझसे तुम चारो जनोने समय मागा होता तो अच्छा होता। तेरी अिस दलीलको मै मानता हू कि सासवडकी परिस्थिति जाने बिना मै क्या कह सकता था? तेरा यह कहना भी सही है कि गावोके अनुभवोका अभी मेरा आरभकाल ही है। अिसलिअे हम सब अेकसे ही है। अितने पर भी मेरे विचारोमे थोडी मौलिकता है और अिन सबका बल अहिंसा है। अिसलिअे शायद तुम चारोको ही कुछ न कुछ जाननेको मिल जाता।

तू विचार करनेकी कला साध रही है, यह मुझे पसन्द है,' क्योंकि हुदलीके तेरे भाषणमे मुझे विचार-शून्यता मालूम हुअी। वे विचार मुझे दिमागसे निकलनेवाले धुअे जैसे लगे। वे तेरे हृदयके अुद्गार नही थे। मुझे तो समय निकालकर तुझसे अुस विषयमे बाते करनी थी और दो और दो चारकी तरह तेरे सामने अुन विचारोकी शून्यता सिद्ध कर दिखानी थी। परन्तु तू जल्दी भाग गअी, अिसलिअे मुझे समय ही नही मिला। मुझे तेरी विचार-शून्यता सिद्ध कर दिखानेकी अुतावली तो थी ही नही, अिसलिअे मैंने तुझे रोका नही। मुझे अितना विश्वास है कि तेरा यह दोष तू स्वय कभी देख लेगी। अितनेमे तो तेरे पत्रमे ही अुसका स्वीकार देखता हू। हुदलीके विचारोमें तुझे यह दोष दिखाअी न दे, यह सभव है। लेकिन अगर सचमुच विचार करना सीख लेगी तो हुदलीके विचारोकी न्यूनताअे तू देखे बिना नही रहेगी।

अिसलिअे सिद्धान्तो पर मेरी राय मागना तूने स्थगित कर दिया, यह मुझे पसन्द है। और जब तक विचार करनेकी कला हाथ न लगे तब तक तू भाषण देना बन्द रखेगी, तो मुझे और भी अधिक अच्छा लगेगा। अिससे तू विचार करनेकी कला जल्दी साध लेगी।

तुम सबको बापूके आशीर्वाद

१७९

तीथल-वलसाड,
२९-५-'३७

चि० प्रेमा,

शायद तेरे पत्रका पूरा जवाब न दे सकू। प्रयत्न करूगा। मैंने भाषण न करनेका हुक्म तो नही निकाला। लेकिन अगर निकाला हो तो मै अुसे वापिस ले लेता हू। मुझे किसी पर भी अपना हुक्म नही चलाना है। तेरे विचारोमें परिवर्तन हो जाय तो अिसमे मैं क्या कह सकता हू? तू अपने स्वभावके अनुसार आचरण करेगी, जैसे सबको करना चाहिये।

शुद्ध प्रेमके लिअे स्पर्शकी आवश्यकता नही होती, अिस कथनका अर्थ अैसा थोडे ही है कि स्पर्शमात्र मलिन है। अपनी माके प्रति मेरा शुद्ध प्रेम था, लेकिन अुसके पैर दुखते तब मै अुन्हे दबाता था। अुसमे कोअी मलिनता नही थी। विकारी स्पर्श दूषित है। अिसलिअे मै यह कहूगा कि जो लोग अैसा कहते है कि स्पर्शके बिना शुद्ध प्रेम अशक्य है, वे शुद्ध प्रेमको जानते ही नही है।

नरीमानके बारेमे तू क्या कहना चाहती है, यह अभी तक मै समझा नही हू। अुनके साथ अन्याय किस प्रकार हुआ और किसने किया? सत्यके खातिर भी तुझे अपने मनकी सफाअी करनी चाहिये। मेरे लिअे यह असह्य है कि असे मामलेमे मेरे और तेरे बीच मतभेद रहे। यदि तू दृढता-पूर्वक यह मानती हो कि अुनके साथ अन्याय हुआ है, तो तुझे वह अन्याय मेरे सामने साबित कर देना चाहिये। क्योकि अिच्छा न होने पर भी मुझे

अिस मामलेमे पडना पडा था। अिसके सिवा, नरीमानसे तो मैंने कहा ही है कि जब वे चाहे तब अुनके मामलेकी जाच करनेको मै तैयार हू, परन्तु वे आये या न आये, तेरा धर्म स्पष्ट है।

के बारेमें तू जो मान बैठी है वह ठीक नही है। तुझे जो सबूत मिला है अुसकी कोअी कीमत नही। अैसी बात माननेसे पहले सम्बन्धित व्यक्तिसे पूछना चाहिये। मै यह नही कहना चाहता कि अुसने असत्याचरण नही किया होगा। परन्तु अिसका यकीन कर लेना चाहिये। मुझे कोअी कहे कि प्रेमाने अैसा किया तो क्या तुझसे पूछे बिना मुझे अुसकी बात मान लेनी चाहिये?

तू हुदलीमे जो बोली वह तेरे हृदयके अुद्‌गार भले ही हो। परन्तु अब तू जो लिख रही है अुससे तेरा भाषण भिन्न था, अितना तू स्वीकार करेगी? जो भी हो, मैंने तो तुझे बता दिया कि मेरा अनुभव तेरे अनुमानसे अलग था। तू मेरे अनुभवसे अपने अनुमानका मूल्य अधिक जरूर आक सकती है। परन्तु मै क्या करू?

बापूके आशीर्वाद

१८०

सेगाव-वर्धा,
५-७-'३७

चि० प्रेमा,

आज तो अितना ही लिखना है कि लौटती डाकसे तुझे 'गीताअी' भेजी है। मिली होगी। बाकी समय मिलने पर।

बापूके आशीर्वाद

१८१

['आज ११ है' अर्थात् अेकादशी है। दशमीको जन्मदिवस था। (आपाट सुदी)]

२०–७–'३७

चि० प्रेमा,

तू कैसी अजीब है! तेरा १६ तारीखका पत्र आज २० तारीखको ११ बजे मिला। आज ११ है। दशमीको कैसे आशीर्वाद पहुचाता? मेरा पिछला पत्र मिल गया होगा। तुझे क्या कहू? आशीर्वाद तो है ही। आगे बढती ही रह और विजय प्राप्त कर।

बापूके आशीर्वाद

१८२

[पू० महात्माजी बहुत करके खूनके दबावसे बीमार थे, आराम ले रहे थे।

जब मै १९२९ में सत्याग्रहाश्रममे थी, तब अेक बार पू० महात्माजीके साथ टहलते समय अेक भाअीसे हुअी अुनकी बातचीत मै बडे ध्यानसे सुन रही थी। पूछनेवाले भाअीने ब्रह्मचर्यके पालनकी कोशिश करनेवाले अेक विवाहित प्रोफेसरका किस्सा बयान किया था और अुस मामलेमे पू० महात्माजीका मार्गदर्शन मागा था। महात्माजीके समझाये हुअे विचार मुझे बहुत पसन्द आये और याद रहे। तबसे अुस कथाकी बुनियाद पर अेक अुपन्यास लिखनेकी अिच्छा मनमें रही थी। मासबड आनेके बाद दो तीन वर्षमे अुसे पूरा किया। 'काम और कामिनी' नामक अुपन्यास मैने लिखा। प्रस्तावनामे अुपरोक्त प्रेरक सवाद देनेकी अिच्छा हुअी और वह जैसा याद था वैसा लिखकर मैने पू० महात्माजीको भेज दिया और सुधार करना आवश्यक लगे तो करके भेजनेकी अुनसे प्रार्थना की।

सवादको जोडकर मैने जो प्रश्न स्पष्टीकरणके लिअे पूछे थे, अुनके सम्बन्धमें मेरे खयालसे पू० महात्माजीने यह चेतावनी दी थी कि अिनका

‘अनर्थ’ होगा। खैर, अुन्होने नया ही सवाद भेज दिया। अुसे मैंने ज्योका त्यो, मूल अितिहासके साथ, पुस्तकमे छपवा दिया। अिस अुपन्यासका गुजराती अनुवाद श्री शकुन्त रावलने किया है और वह प्रकाशित भी हो गया है।]

सेगाव-वर्धा,
२५-८-’३७

चि० प्रेमा,

मेरे स्वास्थ्यके वारेमें तो तूने सुना ही होगा। कमसे कम मानसिक परिश्रम और अधिकसे अधिक आराम, यह हुक्म है। मस्तिष्क और दाहिना हाथ पूरा आराम चाहते है, अिसलिअे तुझे अभी जितना चाहिये अुतना ही कह कर निवटा देता हू।

तेरी राखी वाध ली। समय पर मिल गअी थी।

तेरे प्रश्नोका अुत्तर नया ही लिख डाला है। पुराने अुत्तर गलत नही है। अपूर्ण होनेके कारण अुनका अनर्थ हो सकता है। पुराना लौटाता हू। अिसे रद कर देना। यह छपाया ही नही जा सकता। नया अुपयोगी हो तो छाप देना। तेरे पत्र सुरक्षित रखे है। तवीयत अच्छी होने पर अुत्तर दूगा। अथवा लिखानेकी अिजाजत दे तो तुरन्त भी शायद मिल जाय।

मेरे वारेमे चिन्ताका कोअी कारण नही। परन्तु मुझे वहुत सावधान रहकर चलना है।

वापूके आशीर्वाद

प्रश्न अेक प्रोफेसर है। अुनकी स्त्री भी है। प्रोफेसर ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते है। पत्नीको यह स्वीकार नही है। अैसी परिस्थितिमे अुन भाअीका क्या धर्म है?

अुत्तर यह प्रश्न तभी अुत्पन्न होता है जब विवाहके वाद पतिको ब्रह्मचर्यका विचार आया हो। धार्मिक विवाहका मेरा अर्थ यह है कि स्त्री-पुरुष-सग केवल सन्तानके लिअे ही हो। विकारतृप्तिके लिअे कभी नही। जहा विवाहका यह अर्थ नही किया जाता हो वहा तो दोनो अेक-दूसरेकी सुविधाका ध्यान रखेगे। जहा सम्मति न हो वहा तो वलात्कार ही माना जायगा।

अब अूपरका प्रश्न ले। जहा पतिको ही ब्रह्मचर्य-पालनकी अिच्छा हुअी हो और पत्नीको नही हुअी, वहा यदि पति बिलकुल निर्विकार हो गया हो अर्थात् गीताके अध्याय २, श्लोक ५९ की भाषामें अुसे पर-दर्शन हो गया हो, वहा सभोग ही असभव है। पत्नी पतिकी दशाको समझकर स्वय ही शान्त हो जायगी। परन्तु प्रश्नमें तो प्रयत्नकी ही बात है। जिन प्रयत्नकी विवाह करते समय कल्पना ही नही थी, वह प्रयत्न दोनोंकी सम्मतिसे ही हो सकता है। अर्थात् पति ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन पत्नीकी अनुमतिके विना नही कर सकता। सामान्य सयमका प्रयत्न तो सभी करें। जहा दोनोमे से अेककी भी अिच्छा सग करनेकी होती हे वहा अधिकाशमे दूसरेकी तैयारी होती है। अथवा थोडी प्रार्थनाके बाद हो जाती है। जहा अैसा नही होता वहा अनबन पैदा होती है। जत बहुतोंके लम्बे अनुभव परसे और अुस पर किये गये विचार परसे मै अिस निर्णय पर पहुचा हू कि सयमका पालन अेक दूसरेके अधीन ही है। अिसलिअे यही कहना चाहिये कि प्रश्नमे दोष हे। क्योंकि जहा ब्रह्मचर्य स्वयसिद्ध है वहा प्रश्न अुठता ही नही। जहा विकार होने पर भी प्रयत्नकी ही बात है वहा प्रश्न करनेकी कोअी बात नही।

[पू० महात्माजीकी तबीयत खराब होनेके बाद मैंने अुन्हें पत्र लिखना लगभग बन्द कर दिया था। वर्षमे दो-तीन बार अुनसे मिलनेके मौके जा जाते थे अिसलिअे पत्रव्यवहार स्थगित कर देनेमे कोअी खास दिक्कत नही होती थी।]

१८३

[सासवडके आश्रमको गाधी-सेवा-सघकी तरफसे मदद मिलती थी, परन्तु स्वतत्र रूपसे मुझे व्यक्तिगत खर्च करनेकी आवश्यकता होती थी। आश्रममे शरीक होनेके बाद तीन-चार वर्ष तक मैंने अपना केवल भोजन-खर्च आश्रम पर डाला था। जेब खर्चके लिअे आश्रमसे मैं कुछ नही मागती थी। बादमे अैसा समय आया कि अुसके लिअे स्वतत्र रूपमें कुछ कमाअी करनेकी आवश्यकता मुझे प्रतीत हुअी। अिसके लिअे पू०

महात्माजीकी स्वीकृति मैंने मागी। अिस पर अुन्होंने खुद मदद देनेका आश्वासन दिया और २५ रुपये मुझे भेज भी दिये। अिस बातका पता श्री शंकररावजी तथा आचार्य भागवतको लगा तब दोनोंने अुसका विरोध किया और आश्रमसे ही सारा खर्च लेनेका आग्रह किया। बादमें मैंने वैसा ही किया।]

५-६-'३८

चि० प्रेमा,

कैसी मूर्ख है! 'मुझे हर महीने ५ रुपये चाहिये, भेज दीजिये'— अितना लिखनेके बजाय कितना लम्बा पत्र! अब बता कैसे भेजूं? मनीआर्डरसे या मुझे ठीक लगे वैसे? हर महीने भेजता रहूं या तीन-चार महीनेके अिकट्ठे?

और कुछ लिखनेका समय नहीं है। तेरा पत्र फाड दिया है।

बापूके आशीर्वाद

१८४

[अपनी वर्षगांठके निमित्तसे मैंने प्रणाम लिखे थे और कुछ प्रश्न पूछकर पू० महात्माजीको बताया था कि वे बहुत काममें हों तो जवाब श्री महादेवभाअीसे लिखवा दें तो भी काम चल जायगा। तब प्रश्नोंके अुत्तर श्री महादेवभाअीने भेजे और वर्षगांठके आशीर्वाद पू० महात्माजीने अिस कार्डमें लिख भेजे।]

सेगांव,
१४-७-'३८

चि० प्रेमा,

तेरे पत्रका अुत्तर तूने तो नहीं मांगा, लेकिन अन्तमें लगा कि कार्ड तो लिख दूं। तुझे पत्र नहीं लिखता, मगर तेरा स्मरण तो अनेक अवसरों पर होता ही है। तू अुत्तरोत्तर अूंची ही अुठती रह। बाकी 'हरिजन' में और महादेवसे।

बापूके आशीर्वाद

१८५

दिल्ली,
२२-९-'३८

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी पुस्तक[1] भी मिली। परन्तु मैं अुस पर नजर डाल पाअू अुससे पहले तो काका ले गये। लौटायेंगे तब अूपर अूपरसे देखनेकी आशा तो रखता ही हू।

हा, अक्तूबरके अन्तमे सरहदसे लौटनेकी आशा रखता हू। तब तू और रावसाहब आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

१८६

[पढरपुर महाराष्ट्रका प्रसिद्ध तीर्थक्षेत्र है। वहा कार्तिकी अेकादशीके दिन बडा मेला भरता है। बम्बअी राज्यके मुख्य मत्री श्री खेर साहेबकी प्रेरणासे दर्शनार्थियोकी सेवाके लिअे मै वहा गअी थी। अुसका वर्णन मैंने पू० महात्माजीको लिख भेजा था।

पू० महात्माजीके मेरे नाम आये हुअे पत्रोमें से ९० पत्रोका अनुवाद मराठीमें हुआ और अुस समय 'वात्सल्याची प्रसाद-दीक्षा' के नामसे पुस्तक-रूपमे, नाम और सदर्भ अध्याहृत रखकर, प्रकाशित हुआ। कुछ लोगोने अुन पत्रोमे से कुछ पत्रोके बारेमे बडा बवडर खडा कर दिया। ता० २१-५-'३६ का पत्र तो खास तौर पर अुन लोगोका निशाना बना था। अिससे मुझे दुःख तो हुआ ही, परन्तु अिस बातने घबराकर गाधी-सेवा-सघके अध्यक्ष श्री किशोरलालभाअीने मुझे अेक कडा पत्र लिखा। मैंने पू० महात्माजीकी सलाह मागी। अुनके अुपदेशानुसार बादमे मैंने श्री किशोरलालभाअीको ब्यौरेवार स्पष्टीकरण करनेवाला पत्र लिखकर अुन्हे दुःख देनेके लिअे माफी मागी। अिससे अुनका समाधान हुआ और

---

१ पू० महात्माजीके चुने हुअे ९० पत्रोका मराठी अनुवाद 'वात्सल्याची प्रसाद-दीक्षा'।

अुन्होने मुझे यह जवाब लिखा कि "जिसका अन्त भला वह भला ही है। अब अिस प्रकरण पर पर्दा डाल दे।" पू० महात्माजीको अिन प्रकाशित पत्रोके कारण महाराष्ट्रके 'कुछ आलोचकोके ववडरका सामना करना पडा। अिसका भी मुझे कम दुख नही हुआ। परन्तु वे तो अभयदानी ठहरे।।]

सेगाव,
१५-११-'३८

चि० प्रेमा,

बहुत दिनो बाद तेरा पत्र देखनेको मिला। तू जहा जाय वही तुझे यश मिले, अिसमे आश्चर्य क्या?

पटवर्धन जब चाहे तभी आ सकते है। कुटुम्ब-जाल कठिन वस्तु है। बीमारिया और दुर्घटनाअे होती ही रहती है। तुझे तो बीमार पडना ही नही चाहिये। अिसका सुनहला अुपाय सब बातोमे मर्यादा-पालन है।

तू नअी सहेलीको खुशीसे साथ ला सकती है।

किशोरलालने मुझसे भी बात की थी। मै स्वय पुस्तक नही पढ सका। परन्तु जिन पत्रोका विरोध किया गया है अुन्हे मैंने पढ लिया है। मुझे विरोधमे कोअी तथ्य नही लगा। अुनके छपनेसे मुझे हानि पहुचना सभव नही। हानि तो तब पहुचे जब मै करनेकी बात न करू और न करनेकी बात करू। अिसलिअे (पुस्तक) वापस लेनेकी कोअी बात नही है। अुनमे से अेक पत्र अैसा है जिसे शायद प्रकाशित करनेकी अनुमति मै न देता और वह केवल आजके समाजका रग देखते हुअे। मै मानता हू कि छपवानेमे भी तूने तो सारी सावधानी रखी थी।

किशोरलालने जो कुछ लिखा है वह सब शुद्ध भावनासे लिखा है, अुसका दुख न मानना। अुन्हे विनयपूर्वक स्पष्टीकरण दे देना।

मेरी तबीयत ठीक है।

खान साहबने अेक सेविकाकी माग की है। मेरे मुह पर तेरा नाम आ गया था, परन्तु तेरे मौजूदा कामसे मै तुझे नही हटाअूगा। अिसलिअे तुझे भेजनेकी बात अभी तो छोड दी है।

बापूके आशीर्वाद

१८७

[राजकोटमे राजा-प्रजाके बीच सघर्ष हुआ था, अुस अरसेमे पू० महात्माजी राजकोट गये थे। वहा अुन्हे अुपवास करना पडा था, जिसके कारण वाअिसरॉयने देशके बडे न्यायाधीशको अिस प्रकरणका फैसला देनेके लिअे पच नियुक्त किया था।]

राजकोट,
८-३-'३९

चि० प्रेमा,

सुशीला पास बैठी है। अपना काम भूली हुअी जैसी कर रही है। मै तो परम आनन्दमें था। बाकी सुशीलाने लिखा ही है। अधिक लिखना डॉक्टरोका द्रोह करना होगा।

बापूके आशीर्वाद

१८८

[मध्य प्रदेशके तत्कालीन मुख्यमत्री डॉ० खरेने काग्रेसका अनुशासन भग करके काग्रेस पार्लमेटरी बोर्डकी अनुमति लिये बिना अपने दो साथी मत्रियोको मत्रि-मडलसे अलग कर दिया, अिसलिअे अुनके खिलाफ कार्रवाअी की गअी और अुन्हे मुख्य मत्री-पदसे अिस्तीफा देना पडा। अुनके बाद डॉ० खरे पूना आये और वहाकी वसन्त-व्याख्यानमालाकी तरफसे अुन्होने अेक सार्वजनिक भाषण दिया। अुस भाषणमें काग्रेस पर अनेक आरोप लगाये जायगे, यह विश्वास होनेसे श्री शकररावजी भी अुस सभामे अुपस्थित थे। अुनका हेतु यह था कि दूसरे दिन अुसी जगह पर वे भाषण देकर डॉ० खरेके आरोपोका खडन करे। अुस समय श्री शकर-राव देव काग्रेस कार्यसमितिके सदस्य थे। पूनामे काग्रेस-विरोधी लोगोका बडा दल तो था ही। अुसे डॉ० खरेके भाषणके बहाने मौका मिल गया। अुस सभामें ये काग्रेस-विरोधी लोग ही मुख्यत थे। मै अुस समय सासवड आश्रममें थी। मुझे बादमें पता लगा कि सभामें डॉ० खरेने सामने बैठे हुअे शकररावजीकी ओर अुगलीसे अिशारा करके अैसा भाषण दिया कि श्रोता लोग खूब अुत्तेजित हो गये और सभा समाप्त होने पर

अुन्होंने शंकररावजी पर हमला कर दिया। शंकररावजीके थोड़े-बहुत साथियोंने अुनका बचाव किया, परन्तु दूसरे दिन वहां सभा हुअी तब कांग्रेसी लोगोंका बहुमत होनेके कारण विरोधी लोग सभास्थलसे बाहर अिकट्ठे होकर अपशब्दों और गालियोंकी गर्जना करते रहे। मेरे कुछ स्नेहियोंने मुझसे कहा कि गालियां देनेवाले लोगोंने मेरे नामका भी अुपयोग किया और होली जैसी धांधली मचाअी!। वैसे तो फैजपुरके कांग्रेस अधिवेशनके बाद तथा चुनावके आरम्भसे ही कांग्रेस-विरोधी लोगोंने शंकररावजीको बदनाम करनेमें कोअी कोशिश अुठा नहीं रखी थी। और पूना, बबअी तथा नागपुरके कुछ विरोधी अखबारोंमें नाम दिये बिना हम दोनोंके बारेमें गुप्त प्रचार चलता ही था (क्योंकि मैं शंकररावजीके आश्रममें रहकर सेवाकार्य करती थी), फिर भी मैंने अुसकी ओर ध्यान नहीं दिया था। ये ही अखबार पू० महात्माजीके बारेमें भी गंदा प्रचार करते थे। अिसलिअे अुन्हें 'पाप' मानकर मैं कभी अुन्हें हाथमें भी नहीं लेती थी। लेकिन यह प्रसंग बिलकुल अलग था। अिसमें खुली बीभत्सता थी। अिसलिअे मुझे दुःख हुआ और मनमें विचार आया कि राजनीतिक विरोधमें चरित्र-सम्बन्धी बदनामी भी होने लगेगी, तो आगे चलकर शंकररावजीके लिअे कांग्रेसका सेवाकार्य करना कठिन हो जायगा। अिसलिअे मैं अिस गांव और प्रान्तको छोड़कर चली जाअूं तो ठीक होगा। मेरा निमित्त नहीं रहेगा तो फिर केवल राजनीतिक विरोध बाकी रह जायगा। परन्तु अुससे शंकररावजीका कोअी खास बिगाड़ नहीं होगा।

यह सोचकर मैंने पू० महात्माजीको ब्यौरेवार पत्र लिखकर अपना अिरादा बताया और सासवड तथा महाराष्ट्र छोड़कर अन्यत्र जाकर सेवा करनेकी तैयारी दिखाअी। यह भी लिख दिया कि वे मुझे स्थान बतायेंगे तो वहां जानेको भी मैं तैयार हूं। अिस पत्रका अुत्तर राजकोटसे मिला।

अपने बाह्याचारके मामलेमें पू० महात्माजीको मैंने बताया कि श्री शंकरराव पर हुअे हमलेके साथ मेरे बाह्याचारका कोअी सम्बन्ध नहीं था। हम दोनों महाराष्ट्रमें थे, तो भी हमारे कार्यक्षेत्र अलग थे। वे राजनीतिके क्षेत्रमें काम करते थे, मैं रचनात्मक सेवाक्षेत्रमें थी। हम शायद ही सार्वजनिक रूपमें साथ आते थे। फैजपुर कांग्रेस अेकमात्र अपवाद हुअी। परन्तु

सासवडके जिस आश्रममें मैं रहती थी अुसके संस्थापक शंकररावजी थे, अितना कारण विरोधियोंके लिअे काफी था। और लोगोंने अिस घटनाका अनुचित राजनीतिक लाभ अुठाया था।]

राजकोट,
२३-५-'३९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आज ही मिला। पढ़कर तुरन्त नारणदासको दे दिया। देवके बारेमें मैंने अखबारोंमें पढ़ा था। अिसका अुपाय सहनशीलता और काल है। आक्षेपोंका अुत्तर भी न दिया जाय। अुनकी सभाओंमें भी न जाया जाय। देव यदि न गये होते तो डॉ० खरे अितने न गुर्राते। प्रतिपक्षी न हो तो गाली देनेवालेको मजा नहीं आता।

तू देवका संग छोड़े अिसकी मुझे आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। जब तक दोनोंके मन निर्दोष हैं और संग केवल सेवाके लिअे ही है तब तक देवको छोड़नेकी या तेरा काम बदलनेकी जरूरत मुझे मालूम नहीं होती। संभव है कि तेरा बाह्याचार बदलनेकी जरूरत हो, परन्तु यह तो तू ही सोच सकती है अथवा मुझसे तू मिले और मैं जी भरकर तुझसे बातें कर सकूं तो ही पता चले।

मैं दूसरी तारीखको बम्बअी पहुंचनेकी आशा रखता हूं।

बापूके आशीर्वाद

१८९

बम्बअी,
२६-६-'३९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी मिला। मेरी दृष्टिमें भी तू दस वर्षकी ही है। सदा अैसी ही रहना। मैं यहां काममें डूबा हुआ हूं। यहां मैं पहली तारीख तक हूं।

बापूके आशीर्वाद

१९०

[पू० महात्माजीके पत्रोके मराठी अनुवाद 'प्रसाद-दीक्षा' के लिअे मुझे १२५ रुपये मिले। मैंने अुन्हे पू० महात्माजीको अर्पण करना चाहा और अिसके लिअे अुनसे अनुमति मागी। अिस वारेमे अुन्होने अपनी राय वताअी।

श्री केलकरने अुस समय अपनी आत्मकथा 'गतगोष्टी' के नामसे अेक वडे ग्रथके रूपमे प्रकाशित की थी। अुसमे पू० महात्माजीके वारेमे अुन्होने अपने वहुतसे कडवे मत लिखे थे। अुसकी चर्चा मैंने पू० महात्माजीको लिखे अपने पत्रमे की थी।

स्वामी सत्यदेवका कौनसा वचन मैंने अुद्धृत किया था, यह अव याद नही आ रहा है। वहुत करके 'गतगोष्टी' मे श्री केलकरने यह वचन दिया होगा। परन्तु स्व० लोकमान्य तिलक महाराजके साथ पू० महात्माजीका सत्य पर आधारित नीतिके सम्वन्धमे जो मतभेद हुआ था अुसके वारेमें मैंने पूछा था।

विहारमे रामगढ काग्रेसका अधिवेशन होनेवाला था। वहा स्त्रियोमे पर्दा होनेसे स्वयसेविका-दलका सगठन करनेका काम वहुत मुश्किल था। अेक दिन श्री शकररावजीके नाम श्री राजेन्द्रवावूका तार आया. "स्वय-सेविकाओके शिविरके लिअे प्रेमाको भेज दे।" श्री शकररावजी मुझे जानेके लिअे कहने लगे। अपने रिवाजके मुताविक मैंने पू० महात्माजीको पत्र लिखकर आज्ञा मागी थी।

अेक वार मै वर्धामें थी — या सेवाग्राममे यह याद नही — तव स्व० श्री महादेवभाअी मुझसे कहने लगे, "आप अितना सूत कातती है तो वापूको अपने सूतकी धोतिया क्यो नही देती?" मैंने कहा, "मेरी वडी अिच्छा है कि मै अुन्हे अपने सूतकी धोती दू। परन्तु अुन्हे तो वहुतोसे धोती भेंटमें मिलती होगी। मेरी धोती यो ही पडी पडी सडती रहे तो फिर देकर क्या करू?" वे कहने लगे, "अरे, कहा भेट मिलती है? कोअी नही देता!" मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने पूछा, "वम्वअीसे अवन्तिकावाअी गोखले और गौरीवाअी खाडिलकर तो भेजती थी!" वे कहने लगे, "अैसी दो अेक कही न कहीसे आती

होगी। परन्तु बापूजीको जरूरत तो रहती ही है।" यह सुनकर मैंने सकल्प किया कि हर साल अपने सूतकी दो धोतिया पू० महात्माजीको अर्पण करूगी — खास तौर पर अनकी वर्षगाठके दिन। १९३९ में पहली बार मैंने धोतिया भेजी और बादमें अन्त तक सकल्पके अनुसार भेजती रही। अनके अवसानके बाद भी धोतीके बजाय अतने सूतकी आटिया अनका पवित्र स्मरण करके सेवाग्राम आश्रमको अर्पण करती हू।

जब मैंने पू महात्माजीको पहली बार धोतिया भेजी तब अन्होंने चि० कनुसे मुझे अेक कार्ड लिखवाया। असका आशय यह था "पू० बा अेक दिन पू० बापूजीसे कहने लगी, 'आप जो धोती पहनते हैं वह फट गअी है। दूसरी हमारे पास नही है। क्या किया जाय?' तब पू० बापूजीने कहा, 'भगवान देगा।' और असी दिन आपका पत्र आया कि आपने धोतिया भेजी है। अिससे प्रसन्न होकर पू० बापूजी पू० बासे कहने लगे, 'देखो, भगवानने धोती भेज दी।' फिर मुझसे कहा, 'यह बात प्रेमाको लिखकर बता देना।' अिसलिअे यह कार्ड आपको लिख रहा हू।"]

सेगाव-वर्धा,
२९-८-'३९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आज ही मिला। राखी तो अमतुलसलामने बाधी और पत्र मैं लिख रहा हू।

पहले तो तेरे प्रश्नोके अत्तर १२५ रुपये देवको क्यो नही दे देती? पुस्तकके लिअे कोअी दे तो लेनेमें आपत्ति नही, और जो आये वह सब अथवा असमें से जितना तू दे सके अतना देवको दे दे।

देवकी यह बात मुझे बिलकुल समझमे आती है कि अनका खर्च महाराष्ट्रसे ही निकलना चाहिये। यदि महाराष्ट्र खर्च न अठाये तो समझना चाहिये कि महाराष्ट्रको अनकी सेवा नही चाहिये।

पटवर्धन जब चाहे तब मेरे साथ आकर रह सकते है। यहा (जगहकी) तगी तो हमेशा रहती ही है।

तुझसे जब आया जाय तब आ जा। कम या ज्यादा जगहका तेरे लिअे प्रश्न ही नही है। यहा आअी कि तू अच्छी हुअी ही समझ। हा, अितनी

वात जरूर है कि मुझे वीचमें कही जाना पड सकता है। तो भी क्या? और जाना पडेगा तो तू तुरत जान लेगी।

केलकरको जीतनेका जो प्रयत्न मैंने किया अुसे मेरा मन जानता है और वे स्वय जानते है। अुन्हे (काग्रेस) कार्यसमितिमे लेनेवाला भी मैं ही था। अुसका अुद्देश्य अेक ही था कि वे लोकमान्यके अुत्तराधिकारी माने जाय। जिस हद तक अुनके अनुकूल वना जा सके और अुन्हे जीता जा सके अुस हद तक वैसा करना मै अपना धर्म समझता था। अव भी समझता हू। लोकमान्यके साथ मतभेद होने पर भी मैं अपनेको अुनका पुजारी मानता हूं। अुनकी विद्वत्ता, अुनकी देशभक्ति और अुनकी वहादुरीके लिअे मेरे मनमे पूरा आदर था।

स्वामी सत्यदेवने जो कहा अुसमे जरा भी सचाअी नही है। मेरे मुहसे अैसा वचन निकल ही नही सकता। वचन निकले तो मेरा सत्य और मेरी अहिंसा लज्जित हो।

मै अवश्य मानता हू कि देशहितके लिअे वे असत्य और हिंसाका आचरण कर सकते थे। अुन्होंने मुझसे ही कहा था। यह चीज पत्र-व्यवहारका विषय भी वनी थी। अुन्होंने 'शठ प्रति शाठचम्' का प्रतिपादन किया था। अुसके विरुद्ध मैंने कहा था, 'शठ प्रत्यपि सत्यम्' — यह क्या तू नही जानती थी?

मै मानता हू कि तेरे सव प्रश्नोके अुत्तर पूरे हो गये।

तेरे पत्रकी मैं प्रतीक्षा कर ही रहा था। अपनी प्रवृत्तिके वारेमे तूने जो लिखा अुसके सवधमें मुझे कोअी आलोचना नही करनी हे। तू जो करे मुझसे पूछकर ही करना चाहिये, अैसा मैं नही मानता। भल हो जाय तो भी क्या? मुझे विश्वास है कि तू आश्रमके व्रतोको ध्यानमे रखकर ही जो करना हो सो करती है और करेगी।

हा, राजेन्द्रवावूने तेरे विषयमे पूछा था। मैंने कहा था कि 'प्रेमा जिम्मेदारी अुठाने योग्य अवश्य है। वह जिम्मेदारी ले तो मैं विरोध नही करूगा। अैसा हो तो आपके अूपरसे भारी वोझा अुतर जायगा। परन्तु मै अुस पर दवाव नही डालूगा। अिसके लिअे आपको देवसे माग करनी चाहिये। प्रेमा अुनके मातहत काम करती है।' अव तो वस न?

सुशीलाका पत्र अिसके साथ है। धोतिया आने पर काममें लूगा। भले वे कैसी भी हों।

बापूके आशीर्वाद

१९१

[पू० महात्माजीके अिसमे आगेके दो पत्र विना तारीखके है। पू० महात्माजीकी अनुमति लेकर श्री राजेन्द्रबाबूकी आज्ञानुसार मै रामगढ काग्रेसके लिअे स्वयसेविका-दलका सगठन करने विहार गअी। अेक वार अक्तूबरका पूरा महीना वहा रही। अुस समय प्रवास करके मैंने प्रचारका काम किया। वादमे दिसम्बर १९३९ में फिर गअी। वहा चार महीने रहकर शिविर चलाया और रामगढ काग्रेसका अधिवेशन पूरा होनेके वाद २० मार्चको वहासे रवाना हुअी।

यह पत्र मुझे अक्तूवर १९३९ मे विहारके दौरेमे मिला था, अैसा स्मरण है। अुस समय काग्रेस कार्यसमितिने (यूरोपमे दूसरा महायुद्ध शुरू हो जानेके कारण परिस्थितिका विचार करके) अिस आशयका प्रस्ताव पास किया था कि काग्रेसकी नीतिमे 'अहिंसा' का प्रथम स्थान नही है। अिससे मेरे मनमे यह भय पैदा हुआ कि कही कागेस पू० महात्माजीका नेतृत्व न खो वैठे। मेरी तो अटल श्रद्धा थी कि पू० महात्माजीका अवतार-कार्य ही 'भारतका स्वातन्त्र्य' है, और अुनके नेतृत्वमे ही काग्रेस अुसे प्राप्त कर सकेगी। अव यदि काग्रेस अुनका त्याग कर देगी तो देशको और दुनियाको भी कितना नुकसान अुठाना पडेगा, अिसका विचार मनमे आने पर मैं घवराअी और पू० महात्माजीको पत्र लिखकर अपनी वेदना अुन्हे वताअी। यह पत्र अुसका अुत्तर है।]

सेगाव-वर्धा,
(सी० पी०)

चि० प्रेमा,

तू क्यो निराश होती है? तेरी श्रद्धा कितनी छिछली है? सारा जगत विरोध करे तो भी जो टिक सके वही है श्रद्धा, अुसीका मूल्य है। अुसके विना अहिंसा कैसे टिक सकती है? तू यह कहे कि तेरेमे अहिंसा

है ही नही, तो यह दूसरी वात हुअी। अैसा हो तो अिसमें तू क्या कर सकती है? परन्तु अैसा हो तो अिसमे निराशा किस लिअे? तव तो जो हो अुसे तुझे देखते रहना चाहिये। मुझमे सच्ची अहिसा होगी तो तुम लोगोमे से किसी न किसीमे अैन मौके पर वह दीप्त होगी ही। परन्तु मुझमे अगर नही होगी तो तुम सवमे वह कहासे आयेगी? अिसलिअे परीक्षा तो मेरी हो रही है। अिससे तुझे तो (खुशीसे) नाचना चाहिये।

विहारमें तूने अच्छी शुरुआत की है। मगर अव क्या होगा? किया हुआ काम व्यर्थ कभी नही जाता। लौटते समय तो यहा तू अुतरेगी ही।

वापूके आशीर्वाद

१९२

[यह पत्र वहुत करके जनवरी १९४० मे मिला होगा। विहारमे मैंने अक्तूवर और दिसम्वर १९३९ तथा जनवरी १९४० मे दौरा किया। तव वहा स्व० श्री सुभाषवावूके फॉरवर्ड व्लॉकका जोर जगह जगह दिखाअी देता था। अुसमे गाधी-सेवा-सघ और काग्रेसके कुछ कार्यकर्ता फसते दिखाअी दिये। अिस वारेमे कुछ किस्से मैंने पू० महात्माजीको पत्रमे लिख भेजे। अिस पर अुन्होने यह पत्र दोनो सस्थाओके अध्यक्षोको पढनेके लिअे भेजा।

प्रभा अर्थात् प्रभावती देवी जयप्रकाश। विहारमे स्वयसेविकाओंका दल खडा होनेवाला था। जनताने अुस पुकारको स्वीकार कर लिया। परन्तु दलकी सरदारी करनेवाली कोअी वहन चाहिये थी। अिसके लिअे योग्य महिला नही मिली। मेरी नजरके सामने प्रभावती वहन थी। अुन्हीको जिम्मेदारी सौंपनेका मेरा विचार था, क्योकि वे ही अकेली योग्य दिखाअी देती थी। परन्तु जव विहारमे मैं पहली वार अक्तूवरमे गअी और पटनामें वे मुझसे मिली अुस समय अुन्होने कोअी विशेप अुत्साह नही दिखाया था। अुन्होने यह आश्वासन दिया था कि अभी मेरी तवीयत ठीक नही है, अेकाध महीनेमे कामके लायक ताकत आ जाने पर काम किया जा सकेगा। दूसरी वार दिसम्वरमें जव मैं वहा गअी तव प्रभा-

वती वहन सेवाग्राम गअी हुअी थी। अुन्हे भेजनेके लिअे मैने पू० महात्माजीको पत्र लिखा। अुसीका यह जवाव है।

अिस पत्रके वाद मैने प्रभावती वहनके साथ लगनसे पत्रव्यवहार शुरू किया। पहले तो, "तवीयत अच्छी नही है, मुझे अग्रेजी पटना है" अैसा अेक विचित्र अुत्तर मिला। अुसके वाद मुझे जरा व्यग्विार लिखना पडा कि "आपके प्रान्तकी प्रतिष्ठाका सवाल है। अत अग्रेजी पटनेकी वात अभी तो आपको छोडनी चाहिये। स्वयसेविका-दलके लिअे नेतृत्व करनेवाली कोअी महिला चाहिये और वह विहारकी ही हो तो शोभा दे। अिस जिम्मेदारीके लायक और कोअी महिला मुझे मिली नही। अिसलिअे आपको यहा आना पडेगा।" अिससे प्रभावती वहन अपने दायित्वके प्रति सावधान हुअी और पू० महात्माजीकी अनुमति लेकर रामगढ आ गअी। फिर तो अुन्होने वहा सुन्दर काम कर दिखाया।]

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र वहुत ही खवरोसे भरा है। राष्ट्रपति और किशोरलाल भाअीको वह पत्र पढवाया। दोनो विचारमे पड गये। प्रभाका स्वास्थ्य अच्छा नही कहा जा सकता। यहा आअी हे। अुसमे पहले जैसा अुत्साह नही रह गया हे। कल रातको ही आअी। मैने अुससे वातें नही की। हुक्म देकर तो आज भी वापस भेज सकता हू। परन्तु यह तो तू नही चाहेगी। अभी तो यह यही रहे तो ठीक। अुसका मन जरा शात हो जाय, शरीर अच्छा हो जाय, फिर आगेका विचार करूगा।

वापूके आशीर्वाद

१९३

२९-१-'४०

चि० प्रेमा,

वा की खास माग प्रभासे मिलनेकी न होती तो प्रभा तुरत वहा आ जाती। अुसके स्वास्थ्यका तू ध्यान रखना। तव वह तुझे जितना चाहिये अुतना काम देगी। परन्तु तू यह कहा नही जानती ?

वापूके आशीर्वाद

१९४

दिल्ली,
५-२-'४०

चि० प्रेमा,

यह आ रही है प्रभा। अब अुसे हाथमें लेना। अुसे दूध, घी और कुछ फलोकी जरूरत रहेगी। अिसके बिना वह शरीरको टिका नही सकती। अिन चीजोके बिना काम चलाया जा सके तो बहुत ही अच्छा। परन्तु यह प्रयोग अिस समय करने लायक नही है। यह अिससे काम लेनेका समय है। अुसकी खुराकके लिअे जो पैसा खर्च हो वह तू मुझसे मगवा लेना। बाकी सब तो प्रभा ही तुझे कहेगी।

हम कल सवेरे वापस जा रहे है। बा साथ आ रही है।

बापूके आशीर्वाद

१९५

[मै बिहारमे थी तब मेरे हाथसे बाह्याचारकी कुछ भूले हुअी थी। सासवड लौटी तब राष्ट्रीय सप्ताहमे प्रायश्चित्त-स्वरूप सात दिनके अुपवास मैने किये। रिवाजके मुताबिक पू० महात्माजीको समाचार देनेके बजाय पहले अुपवास शुरू कर दिये, बादमे पत्र भेजा। अुसका यह जवाब हे। अुपवास पूरे होनेके बाद मै सेवाग्राम जाकर अुनसे मिली और सारी बाते अुनके साथ कर ली।]

सेवाग्राम,
१८-४-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। पैड[1] भी मिला।

तूने अुपवासके बारेमे पहले लिखा होता तो अच्छा रहता। मै शायद तुझे न रोकता। परन्तु तुझे अुसका ज्यादा अच्छा अुपयोग बताता।

---

१ हाथ-कागजका पैड भेजा था।

अब अुपवासके बाद तुझमे शक्ति धीरे धीरे आ रही होगी। तेरा पत्र अधूरा है। जो कहना चाहिये वह तू नही कह सकी, यह तेरे लिअे ठीक नही माना जायगा। अब लिख सके तो लिखना। आकर बाते कर लेनी हो तो आ जा।

बापूके आशीर्वाद

१९६

[कांग्रेसकी ओरसे देशमें स्त्री-संगठन करनेकी योजना तैयार की जा रही थी और अुसमें भाग लेनेका मुझसे आग्रह किया जा रहा था। मैंने पू० महात्माजीका मार्गदर्शन अिस विषयमें मांगा था।]

सेवाग्राम-वर्धा,
१०–६–'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। सब कुछ गडबडीमें पड गया है। अिनमें से मार्ग निकालना होगा। हम दैवाधीन हैं। अुसे जो करना होगा वह करेगा।

संगठनके बारेमें तेरी आत्मा कहे वैसा करना। मेरा विरोध नही है। प्रोत्साहन भी नही है।

बापूके आशीर्वाद

१९७

[२१ जून, १९४० के दिन वर्धामें हुअी कांग्रेस कार्यसमितिने कांग्रेसकी नीतिकी घोषणा करनेवाला प्रस्ताव स्वीकार किया। अुसमें स्पष्ट रूपसे कहा था कि, "अब आगे कांग्रेस गांधीजीके साथ अन्त तक नही चल सकती।" अिसलिअे पू० महात्माजी अब 'अेकाकी योद्धा' रह गये — यह कल्पना असह्य होनेसे मैंने अुन्हें पत्र लिख भेजा था। यह अुसीका अुत्तर है।]

सेवाग्राम,
२५–६–'४०

चि० प्रेमा,

घवराती क्यो है? अैसा तो होता ही रहता है। अिसीमे मेरी परीक्षा है। 'अपूर्व अवसर' (-वाला भजन) याद है? "अेकाकी विचरतो वळी स्मशानमा'—'अेकाकी विचरता हू और वह भी स्मशानमे' अिस भजनकी अिन कडियो पर विचार कर लेना। कमेटी दूसरा कुछ कर नही सकती थी। सवाल तो सवके सामने खडा है। तुम सव भी क्या करोगे, यदि मै खोटा रुपया सावित होअू? हमने वीरोकी अहिंसा आजमाअी ही नही। अव समय आया है। 'मुसीवतमें अडिग खडा रहे वही मर्द'—यह कहावत मुझे मेरे मेमन मुवक्किल सुनाया करते थे। तू होशियार हो जा।

वापूके आशीर्वाद

१९८

[जुलाअीके पहले सप्ताहमे कांग्रेस कार्यसमितिने दिल्लीमे प्रस्ताव पास किया। वह प्रस्ताव श्री राजाजीने तैयार किया था। खान अव्दुल गफ्फारखा अहिंसाके हिमायती थे। वे अकेले ही पू० महात्माजीके साथ रहे। पाच सदस्य तटस्थ रहे। वाकी सव—सरदार वल्लभभाअी भी—राजाजीके साथ थे। अिस प्रस्तावसे मुझे वडा आघात पहुचा था। वुढापेमे पू० महात्माजीकी अत्यन्त कडी कसौटीका समय आया था, जिससे मुझे चिंता भी हुअी थी। अगस्तमे पूनामे अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी वैठक होनेवाली थी। वहा आप जायगे या नही, यह भी मैंने महात्माजीसे पूछा था।]

सेवाग्राम-वर्धा,
१२–७–'४०

चि० प्रेमा,

तेरा सर्वार्पणका पत्र मिल गया। तुझसे अिससे कम मिल ही नही सकता। मेरी चिन्ता न करना। मुझे निराशा तो है ही नही। कमेटीके प्रस्तावसे तेरे जैसा आघात भी नही पहुचा। तू 'हरिजन' और 'हरिजन-

बन्धु' पढती रहना। मुझे नयी रचना तो करनी ही पडेगी। परन्तु अैसे कामके लिअे मैं अपनेको अभी तक बूढा मानता ही नहीं।

तेरी वर्षगाठके आशीर्वाद गाडी भरके लेना। वर्षगाठ आये तो अेक वर्ष कम हुआ न?

मेरा वहा आना जरा भी निश्चित नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

१९९

सेवाग्राम,
७-८-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। सच्ची अहिंसा तो अगर प्रगट होनेवाली होगी तो अिसी समय प्रगट होगी। पहले तो हमे अपना घर ही सुधारना होगा। जो हमसे जुदा हो गये है अुनके प्रति अुदारता दिखाना हमारा प्रथम धर्म है। अिसमें सफल होंगे तो दूसरा कदम हमें आसान मालूम होगा। यदि अिसमें असफल होंगे तो अगला कदम अुठाया ही नहीं जा सकता। अिसकी स्पष्ट प्रतीति हो रही है या नहीं? 'हरिजन' और 'हरिजन-बन्धु' खूब सावधानीसे पढना।

बापूके आशीर्वाद

२००

[रामगढ काग्रेससे लौटनेके बाद मैंने अेक पुस्तक लिखी थी 'सत्याग्रही महाराष्ट्र'। अुसमे लोकमान्य तिलक महाराजके अवसानसे लेकर फैजपुर काग्रेस तकके महाराष्ट्रके राजनीतिक अितिहासका वर्णन था। महाराष्ट्र काग्रेसमें परिवर्तनवादी और अपरिवर्तनवादी कार्यकर्ताओमे सघर्ष कैसे चला और बादमे महाराष्ट्रमें काग्रेस-निष्ठा और पू० महात्माजीका नेतृत्व अिन दोनोका अुत्कर्ष कैसे होता गया, यह सारा अितिहास अुसमें वर्णन किया गया था। यह पुस्तक मैंने पू० महात्माजीको समर्पण की

थी। अिसलिअे पुस्तककी अेक प्रति अुन्हे भेजी और लिखा, "आपको मराठी भाषा अच्छी तरह नही आती और आप अनेक कामोमे फसे हुअे है। अिसलिअे पुस्तक न पढ़ सके तो भी कमसे कम 'अर्पण-पत्रिका' तो पढ ही लीजिये।" अुस पत्रका अुत्तर अिसमे है।

अुनकी वर्षगाठकी भेट — मेरे सूतकी दो धोतिया भी भेजी थी।

सेवाग्राम,
६–१०–'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। पुस्तक मिली। अर्पण-पत्रिका पढी। धोतिया पहनी थी और अभी तक दूसरी धोतियोके साथ पहन रहा हू। पुस्तक अपने पास रख ली है। पढ लेनेकी अिच्छा तो है।

बापूके आशीर्वाद

२०१

[व्यक्तिगत सत्याग्रहकी तैयारिया हो रही थी। मैंने पूछा कि अुसमे स्त्रियोके लिअे स्थान है या नही। कारण, प्रारभमे तो अैसा लगता था कि पू० महात्माजी नेताओ तथा धारासभाके सदस्योको ही जेल भेजना चाहते थे।]

सेवाग्राम,
१८–१०–'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। स्त्रियोके लिअे अिसमे अवश्य स्थान है। परन्तु मुझे यह पता नही है कि यह लडाअी मुझे और देशको कहा ले जायगी। सब अीश्वरके हाथमे है।

बापूके आशीर्वाद

२०२

सेवाग्राम,
२८-१०-'४०

चि॰ प्रेमा,

तू कैसी है? अनशन तो कपालमें लिखा ही दीखता है। सत्याग्रहीको कभी कभी तो करना ही पडता है। परन्तु मेरे बिना तू न जी सके तो खुशीसे मेरे साथ चलना। परन्तु वह लंघन करके नहीं। योगाग्नि प्रगट करके जल मरना। तू जो अुपवास करती है अुसे लंघन ही कहा जायगा। अुपवासका अधिकार होना चाहिये। जो यह समझते हैं वे तो मेरे जैसेके अुपवाससे नाचेंगे। वे अिस अुपवासको अुत्सव मानेंगे। अुनके खानपानका दूसरा काम करेंगे। अुपवासके लिअे शर्तें तो होंगी ही। अुनका पालन हो जाय तो अुपवास बन्द हो जाय। अकल न गवा बैठना।

बापूके आशीर्वाद

२०३

[अपने अपने प्रांतोंसे चुने हुअे सत्याग्रहियोंको कानून-भंग करनेकी अिजाजत दी जाय, यह सिफारिश पू॰ महात्माजीने कांग्रेस कार्यसमितिसे की, अिसलिअे श्री शंकररावजीने मुझे भी जेल जानेके लिअे 'तैयार' रहनेको कहा। यह बात मैंने पू॰ महात्माजीको बताओी। अुसका जवाब।]

सेवाग्राम,
११-११-'४०

चि॰ प्रेमा,

शंकरराव कहे वैसा करना। परन्तु शंकरराव मुझसे पूछे बिना कुछ न करें।

बापूके आशीर्वाद

२०४

सेवाग्राम,
२५-११-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आया, तेरा नाम भी सूचीमे देखा। अीश्वर तेरी रक्षा करेगा।

बापूके आशीर्वाद

२०५

[पू० महात्माजीकी अनुमति आनेके बाद श्री शकररावजीकी तैयार की हुअी योजनाके अनुसार महाराष्ट्रमे पहले-पहल सत्याग्रह मैंने किया और मुझे तीन मासकी सादी सजा हुअी। जेलसे पू० महात्माजीको पत्र लिखकर मै अपनी जेलवासी बहनोकी हालत अुन्हे बतलाया करती थी। जेलसे लिखे गये मेरे पहले ही पत्रका यह अुत्तर है। श्री सरोजिनी देवी नायडू मेरे पहली बारके जेलवासके समय हमारे साथ ही थी। परन्तु अुनकी तन्दुरुस्ती बिगड जानेसे सरकारने अुन्हे छोड दिया।

पहली सजा भुगतकर छूटनेके बाद पू० महात्माजीकी अनुमतिसे मै अुनसे मिलने सेवाग्राम गअी थी। जेलवासी बहनोंके बारेमे अुनसे मैंने कुछ प्रश्न पूछे, जिनके अुत्तर अुन्होने लिख दिये। अिसलिअे कि मै दूसरी बार जेल जाअू तब वह पत्र लेकर ही अदर जाअू और अुनके हाथका लिखा हुआ पत्र बहनोको पढाअू तो अुसकी सत्यताके बारेमे किसीको शका न रहे। अिसलिअे अिस पत्र पर तारीख या हस्ताक्षर नही हैं। (देखिये आगे पत्र न० २०६)

श्री लीलावतीबहन मुन्शी अुस समय जेलमे थी। मेरे साथ अुन्होने पू० महात्माजीकी सलाहके लिअे अेक प्रश्न भेजा था। वे बम्बअी नगर-पालिकाकी सदस्या थी। अुस नगरपालिकाके नियमानुसार प्रति वर्ष चार कौमोमें से अेकका प्रतिनिधि मेयर चुना जाता था। यह कौमी चुनाव

वन्द करनेके प्रयत्न चल रहे थे। लीलावतीबहनका विचार यह था कि मेयर-पदके लिअे कोअी स्त्री-अुम्मीदवार खडी रहे, तो हिन्दू, मुस्लिम, पारसी, अीसाअी सब कौमें अुसका स्वागत करेंगी और कौमी चुनाव बन्द करनेमें बडी सहायता मिलेगी। अुस वर्षके मेयर हिन्दू थे। अगले वर्षके लिअे अुम्मीदवार होनेकी लीलावतीबहनकी अिच्छा थी, कारण नगर-पालिकाके कुछ सदस्योंने अुन्हें सुझाव दिया था कि वे खडी हों तो सभी सदस्य अुनके अनुकूल होंगे। मेयर कांग्रेसी रहेगा, यह भी अिसमें लाभ था। अिसलिअे अुन्होंने पू० महात्माजीका मार्गदर्शन मांगा था।

जेलमें कमजोर, रोगी और बच्चोंके साथ भी स्त्रियां आने लगी थीं। बादमें वे सत्याग्रहीकी मर्यादाओंका पालन नहीं कर पाती थीं। अूंचा वर्ग प्राप्त करनेवाली स्त्रियां अपराधी स्त्रियोंसे अधिकार जतला कर सेवा लेती थीं। अिन सब बातोंकी पू० महात्माजीके साथ चर्चा हुअी थी। सेवाग्रामसे लौटते ही मैं तुरत जेल चली गअी। तब यह पत्र साथ ही था।]

सेवाग्राम-वर्धा,
२८-१२-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिला। धोत्रे[1] वगैराको भेजकर नारणदासको भेजूंगा।

सुना है कि सुशीला तुझसे मिल गअी है। तब तो सब कुछ सुना होगा। भागवत[2] ने भी मुझे लिखा तो था ही।

कताअी, प्रार्थना वगैरा नियमानुसार होती है यह सरोजिनीदेवीने भी कहा था। सब बहनें अच्छे शरीर लेकर और रचनात्मक कार्यके लिअे खूब कुशलता प्राप्त करके निकलेंगी, अैसी आशा रखता हूं।

प्रभावती अभी यहीं है। जयप्रकाशके साथ अुसने खूब यात्रा की। यहां तीन दिन रही। आज या कल जयप्रकाश आयेंगे और ले जायंगे। तेरी दी हुअी शिक्षा और दीक्षा अुसके लिअे फलवती सिद्ध हुअी है।

१ श्री रघुनाथराव धोत्रे। गांधी-सेवा-संघके मंत्री।

२ आचार्य भागवत। सासवडके हमारे आश्रमके संचालक।

पहली जनवरीको अपने काम पर लग जायगी। अेक मासकी छुट्टी लेकर निकली थी।

मेरे स्वास्थ्यके बारेमे अखबारोमे जो निकले अुसे निकम्मा समझना। मेरी तबीयत ठीक ही रहती है। अपनी तन्दुरुस्तीकी सभाल रखता हू। जब तक अीश्वरको मुझसे काम लेना है तब तक तन्दुरुस्ती अच्छी ही रखेगा।

बा साथ ही है। वह शान्त है। लीलावती यहा आनेके बारेमे सयमसे काम ले रही है।

महादेव वगैरा सब मजेमे है।

बापूके सबको आशीर्वाद

२०६*

लीलावतीबहनसे कहना कि अुन्हे स्त्रियोका ही विचार करना है। अपना कभी नही। काग्रेसीके खातिर अनुशासन हरगिज नही तोडा जा सकता और स्त्रियोको अुसमे नही जोडा जा सकता। यह स्त्रियोकी दृष्टिसे भी भयानक है। परन्तु अीसाअियोकी बारी आये तब अीसाअी स्त्रीको लिया जा सकता है। अिसी तरह हिन्दुओकी बारी आये तब हिन्दू स्त्रीको और मुसलमानकी बारी आये तब मुसलमान स्त्रीको लिया जा सकता है।

जो बहनें कमजोर और रोगी है अुन्हे वापस हरगिज नही आना चाहिये। अिसी तरह कोअी बहन अपने बच्चेको लेकर जेलमे नही जा सकती।

क और ख वर्गवाली बहने जितनी कम सुविधाये भोगे अुतना अधिक अच्छा है। असलमे तो ग वर्गसे कुछ भी ज्यादा सुविधा न भोगना ही हमारा आदर्श है।

जुर्माना अदा करनेमे अुद्देश्य यह है कि जैसे जेलका भय छोडा है वैसे ही जुर्मानेका भी छोडे। अिसका यह अर्थ कभी नही कि अुधार

* देखिये पत्र २०५ की टिप्पणी।

लेकर भी जुर्माना अदा किया जाय। परन्तु अपनी कीमती चीज कौडियोंके मोल भी न जाने दी जाय।

यही मानकर चलना है कि लडाअी लम्बी चलेगी। घबडानेकी बातें सिर्फ अपनी कमजोरीकी ही निशानी है। अन्तमें जीत हमारी है, यह निश्चित समझना चाहिये।

२०७

सेवाग्राम,
१२-८-'४१

चि० प्रेमा,

मासवडसे तेरा पत्र मिला था। कल जेलका मिला। वहांका वर्णन पढकर मुझे खूब आनंद हुआ। सब बहनें अेकदिल होकर रहें और श्रद्धा-पूर्वक रचनात्मक काम करती रहें, तो मैं जानता हूं कि स्वराज्य नजदीक आयेगा।

६ तारीखको यहां बच्चों और बीमारोंको छोडकर सबने २४ घंटेका अुपवास किया। आज भी यही संकल्प है। कुछ अखंड चरखे चल रहे हैं। अेक अखंड पींजन और कुछ अखंड तकलियां भी चल रही हैं। यह व्यवस्था करनेमें बाबला[1] और कनू[2]का बडा हाथ है। सब अुत्साहसे काम कर रहे हैं।

अब तेरे प्रश्न।

१ अुपवासके विषयमें तो अितना ही कह सकता हूं कि वह मेरे जीवनका अंग है। कभी भी आ सकता है। अिस समय तो वह मेरे सामने नहीं है। परन्तु मेरा बल अुसकी शक्तिमें और अुसके प्रति मेरी श्रद्धामें रहा है। सत्याग्रही अन्तमें मरकर अपनी टेक रखेगा, जैसे हिंसावादी दूसरोंको मारकर टेक रखता है। कितना बडा भेद! अिसलिअे किसीको मेरे अुपवासकी संभावनाको तलवारके रूपमें देखना

१ श्री महादेवभाअीका लडका नारायण देसाअी।

२ श्री नारणदास गांधीका लडका कनू गांधी।

ही नही चाहिये। आनेवाला ही होगा तो अुसका स्वागत करना और प्रार्थना करना कि अुसे सहन करनेका बल अीश्वर मुझे दे।

२ 'हरिजन' बन्द हो गया, क्योंकि दिल्लीसे अकल्पित पत्र मिला। अुस परसे देखा जा सका कि सरकारकी वृत्ति 'हरिजन'का स्वागत करनेकी नही थी, और अिस बारकी लडाअीमे 'हरिजन'को लडनेका कारण नही बनाना है।

३. वर्तमान राजनीतिका असर मुझ पर कुछ नही है, क्योंकि मैंने समझ लिया है कि अभी कुछ नही हो सकता। अिसीलिअे मैंने कहा है कि यह लडाअी लम्बी है। अिसीमे हमारा हर प्रकारसे श्रेय है।

महादेव फिर अेक दिनके लिअे आज बम्बअी गये है। दुर्गाको बीमार छोडकर गये है। दोनो हिम्मतवाले है। अिन दोनोने समझकर अपनी आहुति दी है।

सब बहनोको मेरे आशीर्वाद।

बा अभी दिल्लीमे है। अुसकी तबीयत ठीक होती जा रही है, परन्तु समय लगेगा।

बापूके आशीर्वाद

२०८

सेवाग्राम-वर्धा,
११-५-'४१

चि० प्रेमा,

अिस बार तुझे देरसे पत्र लिख रहा हू। कामकी भीड बहुत है। और तेरा पत्र भी पत्रोके ढेरमे दबा रहा।

वहाके समाचार तो मुझे मिलते ही रहते है।

मेरा स्वास्थ्य अुत्तम रहता है।

सबकी परीक्षा अच्छी तरह हो रही है।

अम्तुलसलाम तो बीमार ही रहती है। बा दिल्लीमे अभी कमजोर हो गअी है। सुशीला[1] खूब सेवा-शुश्रूषा कर रही है। अच्छी हो जानेकी आशा रखती है। लीलावतीको बाकी सेवाके लिअे भेजा है।

---

१ डॉ० सुशीला नय्यर, प्यारेलालजीकी बहन।

महादेव अहमदाबाद गये है। वे अब १३ तारीखको वापस आयेंगे।

वहा सब बहने खूब कातती होगी। प्रार्थना अच्छी तरह चलती होगी।

बापूके आशीर्वाद

२०९

[मै जेलमें थी तब मेरी बम्बअीकी सहेली सुशीला पै बम्बअीमें मोतीझिरेसे बीमार थी। छूटनेके बाद मै अुससे मिल आअी।

राधाबहन — स्व० श्री मगनलालभाअीकी पुत्री — सुशीलाके घरके नीचेकी मजिलमें अपने भाअीके साथ रहती थी।]

सेवाग्राम,
४-७-'४१

चि० प्रेमा,

जिस पत्रके लिअे मैने लिखा था कि नही मिला वह बादमें मिल गया।

तू लिखती है वह सच है। बहुत तेजीसे काम करनेमे कभी कभी पत्रोके जवाब रह जाते है। और कभी कभी दुबारा दे दिये जाते है। जैसा तेरे बारेमें हुआ। जवाब देना रह जाय अिसके बजाय दुबारा दे दिया जाय यही अच्छा है न? मैने तुझे पत्र लिखा तभी मुझे खयाल हुआ था कि अिसका अुत्तर तो दे दिया होगा। तेरे पत्रोका अुत्तर अधिकतर लौटती डाकसे लिखनेकी आदत पड गअी है। परन्तु अूपर जवाबकी तारीख नही लिखी थी। अिससे भ्रम हो गया। यह तो हुआ व्यर्थका व्याख्यान।

सुशीलाका मोतीझिरा भयकर कहा जायगा। राधाबहनने अुनके बारेमे मुझे कुछ अधिक विस्तारसे लिखा है। आज मै सुशीलाको लिख रहा हू। जमनादासने अुसकी बडी सेवा की।

अप्पा[1] तो बढिया काम कर ही रहे है। अिस बार तू सीधी आयेगी ही।[2]

धनुष-तकली मिली होगी। वह ठीक बनी हो तो गति अच्छी देती है।

अपनी अुर्दू अच्छी कर लेना। लिखना और पढना आना ही चाहिये।

अपना वजन बढाना।

कनूकी सगाअी हो गअी, अैसा माना तो था। परन्तु अब अैसा नही है। भविष्यमे क्या होगा, यह तो दैव जाने।

राजकुमारी[3] जलवायु-परिवर्तनके लिअे शिमला गअी है।

मेरी और बाकी तबीयत अच्छी है। महादेव देहरादून गये है। आज मुलाकात करके लौटेंगे। अहमदाबादमे अुन्होने बढिया काम किया अैसा कहा जायगा।

सब बहनोको

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री अप्पासाहब पटवर्धन, महाराष्ट्रके 'गाधी' कहलानेवाले पुराने रचनात्मक कार्यकर्ता। अेम० अे० की परीक्षा पहली श्रेणीमे पास होनेके बाद पूनामे प्रोफेसर हो गये। परन्तु असहयोग आन्दोलनके समय (१९२०) मे नौकरी छोडकर पू० गाधीजीके पास सस्कार लेने सत्याग्रहाश्रम चले गये। वहासे लौटकर महाराष्ट्रमे अपने रत्नागिरी जिलेमे रहे। आज साठसे अधिक अुमरमे भी भारी सेवाकार्य कर रहे है। खास तौर पर हरिजनोके काममे अुन्होने क्राति करा दी है। कुछ सुन्दर पुस्तके भी लिखी है।

२ अिसके बादका अेक वाक्य जेलवालोने काट दिया है।

३ राजकुमारी अमृतकौर।

२१०

[अेक वर्षमे मैं चार वार जेल हो आअी। तीन वार तीन तीन मासकी सादी सजा भुगती। चौथी वार तीन महीनेका कठोर कारावास मिला था। परन्तु देशमें क्रिप्स साहव आनेवाले थे, अिसलिअे जैसे सव राजनीतिक कैदी छोड दिये गये, अुसी तरह मैं भी सजाका समय पूरा होनेसे पहले छोड दी गअी। अुसके वाद पू० महात्माजीको पत्र लिखकर मैंने पूछा कि, "अव मैं क्या करू?" यह अुसीका अुत्तर है।]

सेवाग्राम,
५-१२-'४१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

तू छूटी अिसलिअे तेरी और मेरी जिम्मेदारी वढ गअी है। तेरे तुरत जानेकी वात अभी नही है। मैं सोच रहा हू।

९ तारीखको मैं वारडोली जाअूगा। तू राजकोट हो आ। वहाका काम पूरा करके वारडोली आना। वहासे तुझे तुरत नही निकालूगा।

लक्ष्मीवाअी[1] के विषयमें मुझे पूरा सन्तोष है। वे वहुत भली और विचारशील है।

तेरी तवीयत अच्छी होगी। और कुछ लिखनेके लिअे समय नही है। नागपुरसे छूटे हुअे सव लोग मिलने आये है। भरी मजलिसमें यह सव लिख रहा हू।

वापूके आशीर्वाद

---

१ श्री लक्ष्मीवाअी वैद्य। पूनाकी महिला कार्यकर्त्री। वे वी० अे०, वी० टी० है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमे कुछ वर्ष तक अध्यापिका थी। वादमे पूना आकर लडकियोंके अेक हाअीस्कूलमें अध्यापिकाका काम करने लगी। व्यक्तिगत सत्याग्रहके समय जिस कामसे अिस्तीफा देकर जेल गअी। खादीकार्यमे अुन्हे विशेष रुचि थी। जेलमे भी अच्छी सेवा की। मेरे साथ सेवाग्राम आअी थी। पू० महात्माजीने कामके सिलसिलेमे अुन्हे कुछ मास आश्रममे रख लिया था।

२११

[छूटनेके वाद मै राजकोट गअी। सुशीला तथा श्री नारणदास-काकासे मिलकर वारडोली गअी। सुशीला भी मेरे साथ थी। परन्तु अेक दिनके वाद वह वम्वअी चली गअी। मै लगभग अेक सप्ताह तक वारडोलीमे ही रही। वहा काग्रेस कार्यसमितिकी वैठक अनेक दिन तक चलती रही।

कुछ नेता और अुच्च कोटिके माने जानेवाले रचनात्मक कार्यकर्ता पू० महात्माजीके वारेमे आपसमे वात करते थे तव आलोचना करते थे कि, "वूढा आजकल जरूरतसे ज्यादा वोलता रहता है। सामनेवालेको मूर्ख ही समझकर वकवास करता रहता है। अिसके पास अुदाहरण तो केवल दक्षिण अफ्रीकाके ही होते हैं। 'जब मै दक्षिण अफ्रीकामे था' यह वचन वार-वार कहता रहता हे। हममे कोअी वुद्धिशक्ति है या नही? हमारी तो सुनता ही नही।" अैसी आलोचना अपने सामने होती सुनती तव मै चिढ जाती और आलोचकोसे लडने लगती। वादमे अेक-दो भाअियोसे मैने कहा कि, "देखिये, यह वात मै महात्माजीसे कहूगी।" "भले ही कहिये," अुन्होने अुत्तर दिया। अिसलिअे मैने महात्माजीको पत्रमे सावधान किया।]

सेवाग्राम,
३०–१–'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरा काम वहा अच्छा चल रहा है।

तूने मेरे वातूनीपनके वारेमे याद दिलाकर अच्छा किया। मूर्ख तो मै तुझे कहूगा ही। परन्तु तेरी आलोचना ध्यानमे रखूगा। तू दूसरोकी जो साक्षी देती है, वह मेरे लिअे चेतावनीका काम करेगी। अेक वात जरूर सच्ची लगती है। मेरे पिछले अनुभव दलील नही कहे जा सकते। मुझे भले ही वे वल दे। परन्तु दलीलमे अुनका गौण स्थान है। पिछले

अनुभव भी दूषित हो तो अुन्हे दुवारा करनेमे दोष कम नही हो जाता बल्कि बढता ही है।

तेरी दूसरी शिकायत तो मै बिलकुल मान लेता हू। मै लम्बे रसपूर्ण पत्र लिखने जैसा नही रहा। यह तो जेल जाअू तब हो। वैसे ही बातें करनेवाला भी मै नही रहा। समयाभाव बहुत बढ गया है।

लक्ष्मीबाअी आज जा रही है। मुझे वे बहुत अच्छी लगी है। अुनका स्वास्थ्य बिलकुल अच्छा हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

२१२

[श्री शकररावजी बहुत बारीक सूत कातते है। व्यक्तिगत सत्याग्रहके समयके जेलवासमे वे रोज अेक गुडी सूत कातते थे। ये सब गडिया मेरे पास ही आती थी। अेक बार सेवाग्राम गअी तब पू० महात्माजीको मैने शकररावजीके सूतका सुन्दर थान दिखाया। अुन्होने अुसकी तारीफ की। परन्तु पास ही किशोरलालभाअी बैठे थे। वे कहने लगे, "बापूजीको खादी दिखाती हो, परन्तु देती क्यो नही? अैसी सुन्दर खादी खुद ही रख लेती हो!" शकररावजीके सूतकी साडिया मैने कुछ सहेलियोमे बाट दी थी। अब पू० महात्माजीको भी देनेका सुझाव आया तो मुझे बहुत आनन्द हुआ और मैने कहा, "अब आगेसे हर वर्ष शकररावजीके सूतके दो अुत्तरीय वस्त्र पू० महात्माजीको देती रहूगी। अपने सूतकी जो दो धोतिया भेजती हू, अुनके साथ यह जोडी भी भेजती रहूगी।" महात्माजीके अवसान तक यह क्रम चला।

अिस समय श्री शकररावजीके सूतके दो अुत्तरीय पहली ही बार बुनवाये थे। ये अुत्तरीय तथा मेरे सूतकी दो धोतिया मैने श्री शकर-रावजीके साथ ही सेवाग्राम भेजी थी। अैसा खयाल है कि अुस समय वर्धामे कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठक हो रही थी। पू० महात्माजीको मैने पत्र भी भेजा। अुसमे लिखा था, "आप जब यह भेंट पहनेगे तब आपको देखने मै वहा नही हूगी, परन्तु शकररावजीकी आखोमे आपको देखूगी। अिसलिअे वे वहा रहे तब तक अिन्हे पहनियेगा।"]

सेवाग्राम,
१७–३–'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। धोतिया भी मिली। कल पहन कर जानेवाला हू। अधिक नही लिखूगा।

बापूके आशीर्वाद

२१३

[श्री सुचेताबहन कृपालानी अुस समय अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी महिला-शाखाकी अध्यक्षा नियुक्त हुअी थी। महाराष्ट्र शाखाकी अध्यक्षा बननेके लिअे वे मुझसे कह रही थी। अिसलिअे पू० महात्माजीसे मैंने पूछा। यह अुसीका जवाब है।]

सेवाग्राम,
२२–३–'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। देवकी प्रसादी रोज पहनी जाती है। खूब हलकी धोतिया है। बढिया है।

तू सुचेताको लिख दे "मुझको कहा गया है कि यह काम मैं हाथमे लू। आप लिखे कि मुझे क्या क्या काम करने पडेगे। मेरे हाथ भरपूर रहते है। यो तो मै महिला-सेवा कर ही रही हू। विशेष क्या करना चाहिये, जो हम नही करते है?"

अैसा पत्र लिखना और जवाब मुझे भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

२१४

सेवाग्राम,
१६–४–'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

शकररावकी धोतियाकी सब अीर्ष्या करते हैं। तू जो व्यवस्था करे वह स्वीकार है।

शकररावको कोअी पकडे, यह सभव नही है।

अपने लेखोमे मैं भरसक विचार भरता हू। तू ध्यानपूर्वक अुन्हे पढना और न समझे सो पूछना।

शकररावको जो शका थी अुसका अुत्तर दे दिया है। वह तूने पढा होगा।

अन्तमे तो सबको, जैसा मैंने लिखा है, अपनी जिम्मेदारी पर काम करना है। जिस हद तक हम गावोमे फैलेंगे अुसी हद तक सुशोभित होंगे, अिस बारेमे मुझे शका नही है।

सूतके माप (चलन) के बारेमे मेरी योजनाको समझना। 'खादी-जगत' मे आयेगी।

बापूके आशीर्वाद

२१५

सेवाग्राम-वर्धा,
१९–४–'४२

चि० प्रेमा,

तेरे सब पत्र मिल गये है। अुन सबके अुत्तर दिये है। रूखे अुत्तर थे, परन्तु डाकका ठिकाना न हो तो मैं क्या करूं? तू ही कह। 'हरिजन' पढकर जो ठीक लगे वह करना।

बापूके आशीर्वाद

२१६

बम्बअी,
१४–५–'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू मेरे पत्रोकी शिकायत करती है, यह ठीक नही है। पत्र अिधर-अुधर चले जाय तो अिसका क्या किया जाय?

सुचेताने लिखा है अुस विषयमे अगर तू वह भार अुठा सके तो ले लेना। परन्तु ब्यौरेवार जान तो ले कि क्या करना है। अिसके सिवा मेरी तैयारियोमे अुसका स्थान कहा रहेगा, यह सोच लेना है। अिसमे तो शकरराव ही तेरा अधिक मार्गदर्शन कर सकते है, क्योकि अुन्हीको वहाका भार वहन करना है। मै क्या करूगा, यह तो अेकाअेक नही कह सकता। परन्तु जो होगा वह तुरन्त ही करना होगा।

मै नेता बन जाना चाहता हू, यह कहना तो ज्यादती है।

यहासे शनिवारको निकलनेकी आशा रखता हू। मेरी तबीयत ठीक ही है।

सुशीला यहा है अिसका भी मुझे पता नही है, तब मेरे पास आअी तो कहासे होगी?

बापूके आशीर्वाद

मेरे साथ महादेव, प्यारेलाल, कन्हैया है। प्यारेलाल मथुरादासको[1] देखने नासिक गये है।

२१७

[क्रिप्स साहबकी समझौतेकी बातचीत असफल हुअी और सामूहिक सत्याग्रह सामने दिखाअी देने लगा। जापानने ब्रह्मदेश पर कब्जा जमा लिया था और भारत पर आक्रमण होनेकी सभावना दिन-दिन बढती जा रही थी। जनतामे बेचैनी बढ रही थी। कार्यकर्ता और नेता परेशानीमे पडे थे। भविष्यमे क्या करना होगा, अिस बारेमे लोगोमे

१ स्व० श्री मथुरादास त्रिकमजी। पू० महात्माजीके भानजे, जो बम्बअी नगरपालिकाके मेयर थे। अुस समय नासिकमे बीमार थे।

अनेक प्रकारके अनुमान होने लगे। नेताओमे अेकवाक्यता नहीं थी। अिस-लिअे सेवाग्राम जाकर पू० महात्माजीसे बातचीत करके अपनी तमाम शकाओका निवारण कर लेनेकी मेरी अिच्छा हुअी। अिसलिअे मैंने अुन्हे पत्र लिखकर वहा आनेकी अनुमति मागी थी।]

सेवाग्राम
८-८-'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू आनेकी अिजाजत मागती है, सो मेरी तरफसे तो है ही। पर देवकी अिजाजत सच्ची। आये तब शकाओका निवारण करा लेना। तू अपनी बुद्धि काममे ले तो सब शकाओका अुत्तर तू ही दे सकती है। मै विश्वासके साथ कहता हू कि तेरी शकाओमें कोअी सार नही है। अधिक लिखनेका समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

२१८

[प्रारभमें वर्षगाठके आशीर्वाद है।

बम्बअीमे अखिल भारतीय काग्रेस समितिकी बैठक होनेवाली थी, अिसलिअे मैंने सेवाग्राम जानेके बदले बम्बअी जाकर ही पू० महात्माजीसे मिलना पसन्द किया। बम्बअीसे मैं अुनके साथ सेवाग्राम जानेका मनोरथ रखती थी।]

सेवाग्राम,
२३-८-'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरे मनोरथ पूरे हो। अिसमे सब-कुछ आ गया।

बम्बअीमें मुझसे मिलना और वहा तुझे सतोष न हो तो जरूर मेरे साथ यहा आना, यदि मै आजू तो। आजका लाभ अुठाय, कलकी कौन जानता है।

बापूके आशीर्वाद

२१९

[१९४२ के अगस्तमे अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी जो प्रसिद्ध वैठक वम्वअीमे हुअी थी, अुसे देखने मै गअी थी। ८ अगस्तकी रातको पू० महात्माजीका भाषण हुआ, फिर राष्ट्रपति मौलाना आजाद वोले। अुसके वाद वैठक पूरी हुअी। अुस समय व्यासपीठ पर जाकर मै पू० महात्माजीसे मिली और अुनसे पूछा "अव आगे क्या कार्यक्रम है?" अुन्होने कहा "अब ११ तारीखको वर्धा जाना है।" मैने कहा "महात्माजी, मैने तो सुना है कि आज रातमे आपको और सब नेताओको पकड लिया जायगा!" वे हसते हसते कहने लगे, "मेरे अितना साफ और विस्तृत भाषण देनेके वाद अगर सरकार मुझे पकडेगी तो वह मूर्ख कहलायेगी।" मुझे आश्चर्य हुआ। अेक क्षण चुप रहकर मैने कहा, "आप वर्धा जाय तो मुझे आपके साथ चलना है।" वे वोले "तुझे मेरे साथ वैठकर ही वर्धा चलना है!"

परन्तु भावी कुछ और ही थी। ९ तारीखको अुषकालसे पहले सव नेता पकड लिये गये। श्री शकररावजीके पकडे जानेकी खबर मुझे समय पर मिल जानेसे मै वहा मौजूद रह सकी। परन्तु कोअी सवारी न मिलनेसे मै विडला-भवन समय पर नही पहुच सकी और न गिरफ्तारीके समय पू० महात्माजीसे मिलना ही हुआ। किसनका भाग्य था कि वह अुसी समय पकडी गअी और अेक ही रेलगाडीमे अुसने पूना तक पू० महात्माजीके साथ यात्रा की। शामकी गाडीसे मै पूनाके लिअे रवाना हुअी। परन्तु पूनाके शिवाजी नगर स्टेशन पर मुझे गिरफ्तार कर लिया गया और मै रातको यरवडा जेल पहुच गअी।

फिर डेढ वर्ष तक जेलवास रहा, जिसका अितिहास यहा देनेमे औचित्य नही होगा। पू० कस्तूरवा वीमार पडी तब मुझे अुनकी सेवाके लिअे आगाखा महलमें ले जानेवाले थे। जेलोके बडे अधिकारी मेजर भडारीने पू० महात्माजीकी मेरे लिअे की गअी सूचनाको स्वीकार भी कर लिया था। परन्तु दूसरे ही दिन दूसरे नामकी माग की और वादमे मनु गाधीको वुलवा लिया गया, अित्यादि वाते मुझे छूटनेके वाद मालूम हुअी। खैर,

हमेशाकी तरह अिस वारका कारावास भी मेरे लिअे तपस्याका सिद्ध हुआ — सबसे कडी तपश्चर्या कहू तो भी अतिशयोक्ति नही होगी।

मै ३० जनवरी १९४४ के दिन जेलमुक्त हुअी। मेरे साथ श्री मणि-बहन पटेल थी। राजनीतिक स्त्रियोमे सबसे अतमे छूटनेवाली हम दो थी। मुझे क्या पता था कि चार वर्ष बाद ठीक अिसी दिन पूज्य महात्माजीका बलिदान होगा!!

सासवड आश्रमके अधिकाश सदस्योके जेल चले जानेसे और बाकी लोगोके अपने अपने गाव चले जानेसे आश्रम बन्द हो गया था। अुसे फिर चालू किया गया। परन्तु हमारे पुराने साथी और आश्रम-सचालक आचार्य भागवत जेल जानेके बाद भिन्न विचारके हो गये थे। वे पहले काग्रेसके पक्के अनुयायी थे और अब अुसके कट्टर विरोधी हो गये। आश्रमका और अुनका सम्बन्ध टूट गया। बादमें तो आश्रमको महिलाश्रमका रूप प्राप्त हुआ।

छूटनेके बाद मैं काग्रेसके काममे लग गअी थी। फरवरी-मार्चमे १९ दिनकी अवधिमे महाराष्ट्रके अलग अलग जिलोका दौरा करके मैं मुक्त हुअे मुख्य मुख्य कार्यकर्ताओसे मिल आअी। बादमे जिन काग्रेस कार्य-कर्ताओकी बैठक शुरू हुअी और काग्रेस रचनात्मक समितिकी स्थापना हुअी। अुसके अध्यक्ष खेरसाहब थे। अेकाध महीने मैंने कामचलाअू मत्रीका काम किया। बादमें काग्रेसके पुराने मत्री पैरोल पर छूटे तो अुन्हे मत्रीपद सौपकर मैं साधारण सदस्य रही। सरकारने प्रान्तीय काग्रेस समितिको गैरकानूनी घोषित किया था। जब तक सरकारने काग्रेस परसे प्रतिबन्ध अुठा नही लिया तब तक प्रान्तमे रचनात्मक समितिके द्वारा ही काम होता था। प्रान्तीय अध्यक्षके आदेशानुसार मैं प्रान्तीय स्त्री-सगठनका काम करती थी। काग्रेस बन्धन-मुक्त हुअी, अुसके बाद भी वह काम चालू ही रहा। सन् १९५१ के चुनावके बाद मैंने काग्रेसकी सदस्यता छोड दी। अुस समय महाराष्ट्र काग्रेस स्त्री-सगठन समितिने प्रस्ताव पास करके स्वय ही अपना विसर्जन कर दिया! (सन् १९५२)

पू० महात्माजी छूटे तब मैं सासवडमे ही थी। बादमे अुनसे मिलने पर्णकुटी गअी। बहुत दिनो तक अुनका मुकाम पूनामे ही था। फिर कारणवश पत्रव्यवहार शुरू हुआ।

पू० महात्माजी थोडे दिन पूनामे रहे और बादमे जुहू चले गये। वहा मै अुनसे मिलने गअी थी। तब श्री सरोजिनीदेवी अुनके पास रहती थी। डॉ० सुशीला नय्यर मुझे और मेरी सहेलियोको महात्माजीके पास ले गअी, परन्तु श्री सरोजिनीदेवी अिससे बहुत नाराज हुअी। अुन्होने मुझसे कहा, "मै बूढेकी चौकीदार हू। मेरी अिजाजतके बिना किसीको यहा नही आना चाहिये।" पू० महात्माजीकी बीमारीमे अुन पर पहरा लगे तो अिसमें मुझे बुरा लगनेका कोअी कारण ही नही था। अिसलिअे फिर मै अुनसे मिलने गअी ही नही। परन्तु वे फिर पूना आये तब रचनात्मक समितिके सदस्योको अुनका मार्गदर्शन मिले, अिसके लिअे कार्यक्रम तय करनेका काम मुझे सौपा गया था। प्रो० लिमये अुस समय समितिके सूत्रधार थे। अुन्होने ऑपरेशन कराया था, अिस कारण वे कमजोर हो गये थे। पू० महात्माजीको मैने पत्र तो लिखा, परन्तु अुसमे जुहूके 'द्वारपाल' का स्मरण कराया और लिखा कि, "पूनामे यदि कोअी द्वारपाल हो तो अुसकी अिजाजत लेकर ही मै कार्यक्रमकी योजना करना चाहती हू।"

पू० महात्माजी जेलसे छूटे तब अुनकी तबीयत ठीक नही थी, अिसलिअे बहुत दिन तक किसी प्रकारका सार्वजनिक कार्यक्रम नही हो सका। परन्तु जुहूमे स्वास्थ्यलाभ करनेके बाद वे पूना लौट आये और डॉ० दिनशा मेहताके नर्सिंग होममे रहने लगे। वही ता० २९-६-'४४ को लगभग ५० महाराष्ट्रीय कांग्रेस कार्यकर्ताओको अुन्होने मार्गदर्शन दिया।]

पूना,
१८-६-'४४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आज मिला। तू जैसी जल्दबाज थी वैसी ही आज भी है। तेरी अिच्छा हो तब आ जाना। यहा तो द्वारपाल मै ही हू। लोग मेरी प्रार्थना स्वीकार करके आते ही नही। जिन्हे मै बुलाअू वे ही या जिन्होने आनेकी माग की हो और मैने मान ली हो वे ही आते है। मुझसे जाच कराये बिना किसी अफवाहको मानना ही नही चाहिये। ढीठ बनकर अिस बार यहा कोअी नही आ सका। तेरे पास नाम हो तो

मुझसे पूछ लेना। जुहूके बारेमें भी पूछना हो तो पूछ लेना। तेरे पत्रोंको कोओी नही रोकना।

प्रो० लिमयेसे मिलनेके सकल्पसे ही मै आया हू। जिन्हे वे लाना चाहे ला सकते है। अभी तो प्रोफेसर खुद ही बीमार है। जो काम मै जुहूमे नही कर सका वह यहा कर लेना चाहता हू। प्रो० लिमये तेरे द्वारा पुछवाये, अिसे मै अपने लिअे शरमकी वात मानता हू। अुनके लिअे मेरे मनमे बहुत आदर है।

आज तो अितना काफी है न? देशपाडेजीके[1] वारेमें अलग लिखनेकी जरूरत नही रह जाती न?

बापूके आशीर्वाद

२२०

[पू० महात्माजीसे मैने विनती की थी कि वे सेवाग्राम जाय तब मुझे भी अुनके साथ चलना है। अुन्होने अनुमति दे दी। तदनुसार मै अुनके साथ वर्धा होकर सेवाग्राम गअी। बम्बअी जाना नही हुआ। कल्याण होकर ही हम लोग वर्धा गये।]

पचगनी,
२४-७-'४४

चि० प्रेमा,

सुशीला दिल्ली गअी है। मै यहासे २ अगस्तको रवाना होअूगा और सीधा वर्धा जाअूगा। बम्बअी जाना पडेगा या कल्याण, यह नही जानता। तू मेरे साथ अथवा जब मरजीमें आये तब आ सकती है। मेरी तबीयत अच्छी है।

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री गो० आ० अुर्फ तात्यासाहब देशपाडे। वे महाराष्ट्र प्रान्तीय काग्रेस समितिके मत्री थे।

२२१

[जेलसे छूटनेके बाद देशकी बिगडी हुअी हालतको देखकर पू० महात्माजी अुपवासका विचार करने लगे थे। कार्यकर्ताओंके आग्रहके कारण तथा हालत सुधारनेके लिअे जीतोड मेहनत करनेका वचन सभीने दिया अिसलिअे अुन्होने अुपवास स्थगित कर दिया। २८ ओर २९ अक्तूबर १९४४ को बम्बअी राज्यकी चारों प्रान्तीय कांग्रेस समितियोंके कार्यकर्ताओंकी अेक बडी सभा बम्बअीमे हुअी। अुसमे रचनात्मक कार्यको विशाल स्वरूप देनेका और अुसकी गति बढाने तथा कांग्रेस सगठनको मजबूत करनेका सभीने निश्चय किया और अेक योजना बनाअी।]

सेवाग्राम,
६-११-'४४

चि० प्रेमा,

तू बिलकुल पागल है। मौतसे पहले ही मर रही है क्या! अुपवासका डर ही है न? वह आया तो नही। अीश्वरकी आज्ञाके बिना थोडे ही आयेगा? जो अुसका रहस्य समझता है वह तो अुसका स्वागत ही करेगा। अुस दिनको धन्य दिवस मानेगा। अुपवास आया तो वह मुझे अकेलेको ही करना होगा। मेरे साथ कोअी अुपवास नही कर सकता। मै चल बसू तो बादमे अेकके बाद दूसरेको करनेका अवसर जरूर आ सकता है। परन्तु अिसकी बात आज क्यो की जाय? तू अपने काममे मशगूल रह और दूसरोको रख।

बापूके आशीर्वाद

२२२

[अुस समय जो अनेक प्रश्न जेलमुक्त कार्यकर्ताओंके सामने खडे थे, अुनमें से कुछ मैंने पूछे थे। भूगर्भगत कार्यकर्ताओंके बारेमे राय मागी थी। कांग्रेसमें ही राजनीतिक मतभेदोंकी रस्साकशी चल रही थी। अिस मामलेमे भी पूछा था। पू० महात्माजी जेलमे छूटे तब अुनकी तबीयत बिगडी हुअी तो थी ही, परन्तु मानसिक भार सहन करनेकी अुनकी

ताकत भी बीमारी और कमजोरीके कारण घट गयी थी। बहुत दिनके अुपचार और आरामके बाद वे पहलेकी तरह काम करने लगे।]

सेवाग्राम,
१-३-'४५

चि० प्रेमा,

पत्रका अुत्तर आज ही दे पा रहा हू। विवश हू।

अखबारो पर भरोसा न करना। मैंने निर्णय नही दिया है। विरोधी लगनेवाले दो मत बताये है। सदस्य न बनानेका मत अतिम और अधिक परिपक्व है। परन्तु जो सदस्य बनाये अुसे मनाही नही है।

भाअी पाटीलके साथ मैंने बात नही की। सभव है कि प्रस्ताव मुझे खुरशेदबहनने या और किसीने बताये हो। परन्तु मेरी अनुमतिका क्या अर्थ? सब अपनी जिम्मेदारी पर काम करे — गाधीवादी हो या विरोधी हो। गाधीवाद जैसी कोअी चीज नही है, यह कहा जा सकता है। समाजवादियोसे मै अधिक मिला हू। अुनकी बहुतसी बाते मेरे गले अुतरी है। अथवा यो कहा जाय कि वे मुझसे अधिक मिलते-जुलते हो गये है।

परन्तु मेरा नाम कोअी न ले। मै भूगर्भमें रहना पसन्द नहीं करता। परन्तु रहनेवालोकी निन्दा नही करता। रहनेकी निन्दा करता हू। दोनोका भेद समझना।

जिन्नासाहबके साथ हुअी बातचीतमें मेरे साथ कोअी नही था। थे, तो थोडे ही। राजाजी। औरोने तो कुछ जाना भी नहीं था।

बाकी सब समझ गया हू। परन्तु ब्यौरेमें जानेके लिअे समय नही है। तू अपने रास्ते चलती रह। जितनी सच्ची स्त्रिया मिले अुन्हे जुटाकर काम कर। सारे देशका भार न अुठा। जो तुझसे हो सके अुसीका भार अुठाना। अधिक पूछना हो तो पूछना।

बापूके आशीर्वाद

निराशा जैसी कोअी चीज न तो मेरे जीवनमें थी और न होगी। सब मर जाय तो भी मुझे निराशा नही हो सकती। मै जो कहता हूं वह भी सच्चा है और भूलाभाअीका प्रयत्न भी सच्चा है। तू अपना काम करती जा।

२२३

[कस्तूरबा स्मारक कोष अेकत्रित हुआ था। अुसमे से सस्था खडी हुअी थी। अुसका विधान बन गया था। पू० महात्माजी अुसके अध्यक्ष थे और श्री ठक्करबापा मत्री वने थे। दूसरे प्रान्तोमें काम शुरू हो गया था। महाराष्ट्रमे सब जगह ठडा था। महाराष्ट्रमें आठ लाखका चदा जमा हुआ था। अेक प्रान्तीय समिति भी स्थापित हुअी थी। अुसमे अधिकाश पुरुष ही थे। महाराष्ट्रकी प्रतिष्ठा न जाय, अिसलिअे कोअी काम शुरू करनेकी मुझे अुत्कण्ठा थी। मैंने स्वयस्फूर्तिसे अिसकी योजना बनाअी और मत्री श्री ठक्करबापाको भेजकर महाराष्ट्रमे शिविर शुरू हो अिसका प्रयत्न आरभ किया। आचार्य भागवतने अिस शिक्षाकार्यमें मदद देनेका मुझे आश्वासन दिया था।]

बम्बअी,
१७-४-'४५

चि० प्रेमा,

तेरे पहले पत्रका अुत्तर दिया या नही, यह भूल गया। दूसरा आज मिला। मै २० तारीखको महाबलेश्वरके लिअे रवाना होअूगा और महीना भर वही रहूगा। यह घटनाचक्र पर आधार रखता है। वहा तू आये तो ही मिलना हो सकता है। जरूरत हो तो कही भी चले जाय। नही तो महाबलेश्वर किसलिअे?

तेरी बताअी पुस्तक अभी तक तो नही मिली। मिल जायगी। आचार्य भागवत शरीक होगे, यह अच्छी बात है। यह माना जा सकता है कि मेरी तबीयत ठीक रहती हे।

पुस्तक मिल गअी।

बापूके आशीर्वाद

२२४

[श्री भूलाभाजी अुन समय वाअिसरॉय लॉर्ड वेवलसे मुलाकातें कर रहे थे। वे ससदीय कार्यक्रम (Parliamentary प्रवृत्ति) फिरसे शुरू करनेकी हिमायत करते थे। अिस पर कुछ अखबारवाले नाराज हुअे थे। कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्य अहमदनगरके किलेमें कैद है तब तक भूलाभाजीको सरकारके साथ समझौता करनेका अधिकार नही, अैसे लेख समाचारपत्रोंमें छप रहे थे। और, अेक खबर अैसी भी अखबारोंमें प्रकाशित हुअी थी कि अहमदनगरके किलेमे बन्द कार्यसमितिके सदस्योंको श्री भूलाभाजीकी यह प्रवृत्ति पसन्द नही है।

अिन सब अखबारी बातोंका अुल्लेख मैंने पू० महात्माजीको लिखे पत्रमे किया था।]

पंचगनी,
१२-६-'४५

चि० प्रेमा,

तेरा लम्बा खत मिला। मैंने आदर्श बताया है, अुसे सामने रखकर सब सवालोंका जवाब तू ही दे सकती है, जैसे युक्लिडकी आदर्श लाअिन सामने रखकर सब जाननेवाले दूसरी लाअिन बना सकते हैं। अभी देख।

क्योंकि मैं आदर्श जानता हू, लिखी-पढी बहनोंका अुपयोग [मैं] आदर्श सिद्ध करनेके ही लिअे करूगा। अुसमें जीवन-वेतन देना पडे तो दूगा। लेकिन वे जो लेगी अुससे अधिक देती रहेगी। अगर नही देगी तो निकम्मी है। अुनको शिक्षिका बनानेके लिअे शिबिरकी आवश्यकता होगी तो अैसा करूगा।

पश्चात (पिछडी हुअी) बहनोंके लिअे छह महीने दू, १२ महीने दू या अुससे अधिक, वह तो अनुभवकी बात होगी न? मुझको अिसकी दरकार नही होगी, क्योंकि अुद्योगोंके मारफत ही [वे] सीखेंगी। अिसलिअे अपना खर्च अुठाती रहेंगी अथवा जल्दीसे जल्दी अुठाने लायक बनेंगी।

मैं निष्फल हुआ अैसा माना जाय तो अुससे क्या? मेरी निष्फलता तो आदर्श नही है। और जो आदर्शकी तरफ जाता है अुसको निष्फल कैसे

कहे ? तू खुद आश्रममें रहकर आदर्शको नही पहुची है। तो आदर्शको पहुचना असभव सिद्ध करेगी या तू नालायक सिद्ध होगी ?

अनपढ बहनोको शिविरमे लेनेसे अशक्यता ही फलित होगी, तो देहातोको आगे ले जाना अशक्य हो जाता है। आचार्य भागवत निष्फल सिद्ध हो जाये या तू कहती है अैसे ही वह कहते हो, तो भी मुझे कुछ डर नही। जो आज असभवित-सा लगता है अुसीको सभवित कर बतानेसे हमारी योग्यता सिद्ध होगी।

सुशीला प यही है। अुसको मै यह खत देता हू। वह और लिखेगी।

अब दूसरी बात। भूलाभाअीके बारेमे मैने तुझे [जो] कहा है अुस पर कायम हू। वे अिस वक्त यही है। अभी प्रात ६-४० हुअे है। वे दस बजे जायगे। [जो] जेलमे है वे छूटेगे अैसा मै नही जानता हू। अगर छूटेगे तो अच्छा ही है। भूलाभाअी पर अगर लोग गुस्से होते है तो मुझ पर भी होना चाहिये, क्योकि अुनका काम जो मै जानता हू अुसे नापसन्द करू तो वे करनेवाले नही है। वर्किंग कमेटीके लोगोने कहा है अैसा [जो] माना जाता है, अुसे मै नही मानता हू। और अगर अुन्होने कुछ कहा भी है तो बगैर अधिकारके कहा है। जेलमे रहनेवाले बाहरकी बात क्या जाने ? मेरे कानूनके मुताबिक तो अुनको यह जाननेका अधिकार भी नही है। और मुझसे मतभेद होगा तो क्या हर्ज है ? बाहर निकलकर जो करना चाहे वह करनेका अुन्हे अधिकार है। मुझे तो मत देनेका कोअी अधिकार है ही नही। मेरी स्थिति तो सलाहकारकी ही है न ? अखबारोकी बात मानना ही नही, और माननेसे फायदा भी क्या है ? मैं कल मरूगा अैसा भविष्य जाननेसे मुझे नुकसान ही है। अैसा ही अिसमे भी समझो। हा, अितना कहू [कि] जो अखबारवाले जानते है वह भूलाभाअी नही जानते। मै तो जानू ही क्या ?

अमुक स्थितिमे क्या करूगा अुसका तो मै क्या कहू ? दूसरे भी क्या कहे ? मै आज जो करता हू अुस परसे अगर भविष्यका परिचय मिले तो ले लेना। मुझको तो वह भी नही, क्योकि दिन प्रतिदिन मै समझता जाता हू कि काल्पनिक बातो पर अभिप्राय बाधकर हम अपना जीवन बिगाडते है। जो चीज बने अुस पर हम क्या करते है वही सार्थक है। दूसरा सब निरर्थक।

[यहा तकका भाग मूल हिंदीमें है। नीचेका भाग गुजरातीसे अनूदित है।]

मे ी मर्यादा और मेरी दृष्टि तू अभी तक नही जानती? कुमारप्पाने अिस्तीफा दिया तो मुझे पूछकर ही दिया न? अगस्त १९४२ के प्रस्तावमें सैनिक सहायता देनेका लिखा हुआ है, अुसमें भी मैं था न? मैं स्वय अेक चीज करू और दुनिया अुससे अुलटा करे और मैं अुनका साक्षी बनू, तो अिससे क्या हुआ? मैं करू भी क्या? मैं तुझे अितना ही कहता हू कि अितने समय तक तू मेरे साथ रही और बादमें दूर चली गयी, फिर भी तू अैसा व्यवहार करती है जैसे मेरे साथ ही है, तो भी मैं तुझे यही कहूगा कि मेरा व्यवहार देख, मेरे वचन देख, अुन पर विचार कर और फिर तुझे जो ठीक लगे वैसा कर। अिसीमें मेरा साथ है अैसा समझ, क्योंकि मैं सबको अपने जैसा नही बनाना चाहता। सब जैसे हैं वैसा व्यवहार करे, यही मेरी शिक्षा है। मेरा कहा जिसने पचा लिया होगा वह तो कभी शकित नही होगा और आगे बढता ही जायगा।

मणिबहन भी यही है। बाकी सब बातोंका अुत्तर देना सुशीला पै पर डाल रखा है।

बापूके आशीर्वाद

अिसे ध्यानपूर्वक पढना। न समझे तो फिर पूछना।

२२५

सेवाग्राम,
१९-७-४५

चि० प्रेमा,

तेरा ११ तारीखका पत्र आज पढा। राजकुमारीका भी नाम ही है। डाक कालकामे मिली मालूम होती है। अिस समय साढे चार बजे हैं। दातुन-कुल्ली करके यह लिख रहा हू। मच्छरदानीमें हू। बत्ती बाहर है। अब प्रार्थनाकी घटी बजेगी।

तेरी वर्षगाठ आज है। यह पत्र तेरे हाथमे तो दो दिन बाद मिलेगा। तुझे अभी तो वहुत वर्ष विताने है। अुन्हे सुखमे और सेवामें विताना। सेवा हमारे हाथमे है और सुख-दु खको समान माने तो सुख भी हमारे हाथमें ही है। विष्णु[1]को भूलना ही सच्चा दु ख है न? अुसे क्यो भूले?

तुझ पर चिढनेकी वात मुझे याद नही है। अगर चिढा हूगा तो कारण रहा होगा। परन्तु मेरी चिढ चिढ ही नही है। यह तो तू समझती है न?

तू अपना शिविर स्वतत्र रूपसे चलाये और रुपया न मागे, तो क्या हर्ज है? तुझसे दूसरे सीखेगे। मै भी सीखूगा।

बापूके आशीर्वाद

२२६

[वम्बअीमे अखिल भारतीय काग्रेस समितिकी बैठक २१, २२, २३ सितम्बर १९४५ को हुअी थी। अुसमे मैं अुपस्थित थी। अहमदनगरके किलेसे वडे नेता मुक्त होकर आये अुसके वाद यह बैठक हुअी थी। पू० महात्माजी अपनेको काग्रेसकी 'अन्तिम आवाज' नही मानते थे। सर्वोपरि तो कार्यसमिति ही थी। अिसलिअे सबको यह आशा थी कि अब देशको कोअी निश्चित मार्ग मिलेगा। परन्तु मुझे तो निराशा ही हुअी। काग्रेसकी आन्तरिक शुद्धि और वाहरी मार्गदर्शन, अिन दोनो मामलोमें कुछ भी नही किया गया। मुझे अैसा लगा कि अिस बैठक पर १९४२ की पूरी छाया थी। अमुक लोगोका अभाव भयावह भी लगा। और पू० महात्माजी मौलाना साहवके आग्रहसे अिस बैठकमे मौजूद रहनेके लिअे आये तो थे, परन्तु वीमारीके कारण निवासस्थान पर ही बिस्तरमे रहे। बैठकमे किसीने अुनकी गैरहाजिरीका अुल्लेख करके दु ख तक प्रगट नही किया। यह मुझे वुरा लगा। मैंने मराठी दैनिक 'नवा काळ'मे अेक लेख लिख भेजा, जो अुस पत्रने छाप दिया। शीर्षक था 'आम्ही कोठे आहोत'? (हम कहा है?) अुसमें मैंने अिस बैठककी कडी आलोचना की थी।]

---

१ विपद् विस्मरण विष्णो।

पूना,
३०-९-'४५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र पढा। अुत्तर लिखकर पत्र फाड डालूगा।

तू पागल ही है। मुझे जरा बुखार आ जाय तो अिसमें प्रार्थना करनेकी क्या बात है? और मै पडालमें न होअू तो अिनका खेद कैसा? अितने बडे जलसेमें कोअी हो या न हो, अुसका क्या असर हो सकता है और किसलिअे हो? मुझे यह सब अनुचित लगता है। जैसा मुझे लिखा है वैसा तूने 'नवा काळ' में लिख भेजा हो तो तूने भूल की है।

तेरे शिविरके बारेमें मैंने बापाको लिख दिया है। अुसे कुछ दिन हो गये। तुझे अनुमति मिल जानी चाहिये। अुसके साथ अस्पताल हो तो अच्छा ही है।

शकररावजी पर आजकल मै नाराज हू, अैसी शका भी तुझे किसलिअे होती है? मेरे सामने यह सवाल ही नही अुठता। सातारा सम्बन्धी अुनका लेख मैंने नही पढा। अैसा बहुत ही कम मेरे पढनेमें आता है।

मै मौन रखू या न रखू, अिसके साथ कमेटीके सदस्योका सम्बन्ध होना ही नही चाहिये।

चरखा-द्वादशीके बाद चि० नारणदासके आनेकी सभावना जरूर है।

तू नजदीक होने पर भी मिल नही जाती, अिसमें क्या हुआ? तू काम तो करती ही रहती है। फिर मिलनेसे ज्यादा क्या हो जायगा? काम न हो तब तो मिल जानेकी छूट तुझे है ही।

बापूके आशीर्वाद

२२७

पूना,
३-१०-'४५

चि० प्रेमा,

तेरे पत्रका मैंने तुझे लम्बा अुत्तर भेजा है। वह अब तो मिल गया होगा। तूने अपना लिखा सच्चा कर बताया है। 'नवा काळ' का लेख मुझे भेजना।

बापूके आशीर्वाद

२२८

['नवा काळ' वाला लेख पू० महात्माजीने मगवाया अिसलिअे मैंने भेज दिया। श्री शकररावजीने मुझसे कहा था कि अग्रेजीमे अनुवाद करके अुसे अग्रेजी अखबारोमें छपवाया जाय। शकररावजीको वह लेख पसन्द आया था और अुनकी अिच्छा थी कि अुसका व्यापक प्रचार हो। पर पू० महात्माजीने अैसा करनेसे मना कर दिया अिसलिअे वह बात वही रही।

सितम्बर १९४२ में सुशीला राजकोट छोडकर बम्बअी आ गअी थी। परन्तु अुसने आन्दोलनमें भाग लिया और दो बार — तीन और अेक महीनेकी — सादी सजा भुगती।

अगस्त १९४४ मे मै पू० महात्माजीके साथ वर्धा गअी तब सुशीला भी कल्याणसे मेरे साथ शरीक हो गअी थी। अुसके बाद वह समय-समय पर पू० महात्माजीके पास स्वतत्र रूपमें जाकर थोडे थोडे समय रहने और काम करने लगी थी। काम अलबत्ता दफ्तरका ही करती थी।

महाराष्ट्रमें मै सेवाकार्य करने लगी तब आश्रममें स्वतत्र सेविकाके रूपमें रह कर ही काम करती थी। सत्याग्रहाश्रमके अनुभवके बाद किसी भी प्रकारकी जिम्मेदारी लेकर काम करनेकी बात मैं हमेशा टालती रहती थी। शकररावजी कअी बार सुझाते कि "सस्था ही सेवाकार्यका निश्चित रूप है। अिसलिअे स्त्रियोकी सस्था खोलकर अुसका सचालन करनेसे काम चमक अुठेगा।" मुझे यह बात पसन्द नही आती थी। अिस

प्रकार दस वर्ष बीत गये। फिर कस्तूरबा कोष अिकट्ठा हुआ। परन्तु महाराष्ट्रमें काम तो शुरु हुआ ही नही। अिसलिअे मनमें विचार आया कि, "चलो, हम कामकी बुनियाद डालें। बादमें अिमारतका काम और किसी बहनको सौप देंगे। यह महाराष्ट्रकी अिज्जतका सवाल है। कोअी बहन आगे आनेकी हिम्मत नही करती, तो हम ही कामकी शुरुआत करे।" अिस प्रकार मैंने प्रयास आरम्भ किया। परन्तु महाराष्ट्रकी समिति (कस्तूरबा ट्रस्टवाली) कार्यक्षम नही है, अैसा अनुभव हुआ। प्रत्येकका मत अलग होता था, बातोंमे समय चला जाता था। परन्तु काम तो होता ही नही था। अिसलिअे मैंने श्री ठक्करबापासे मुलाकात करके अुनका आश्वासन प्राप्त किया और काम शुरू कर दिया। सासवडके पास अेक छोटे गावमें शिविर आरभ किया। परन्तु अुसे शुरु करनेसे पहले जो जो मुसीबतें अुठानी पडी वे मेरी कल्पनाके बाहर थी। स्थानीय समितिकी सहायता तो मिलती ही नही थी। समितिके मत्री अनेक कारणोंसे मुझ पर नाराज थे। शिविरके मामलेमें अुनका मतभेद भी था। ठक्करबापा जानते थे कि महाराष्ट्रमें काम करना आसान नही था, और वे स्वय किसीको प्रेरणा देकर यह काम करा नहीं सकते थे। अिसलिअे प्रान्तीय समितिको अलग रखकर मेरे द्वारा हाथमें लिये हुअे कामको मजूरी और रुपया दिया जाय, यही अेक मार्ग अुनके सामने था। अुन्होंने यह मार्ग अपनाया। परन्तु वे हमेशा दूर दूर प्रवासमें जाते थे, अिसलिअे रुपयेकी मदद समय पर मिलनेमें कठिनाअी होती थी। शिक्षा और सस्कारकी दृष्टिसे शिविर सफल हुआ। महाराष्ट्रके, खास तौर पर पूनाके, विद्वानोंकी बहुत सहायता मिली। आचार्य भागवत भी पाच महीने शिविरमें आकर रहे और अुन्होंने पढाया।

समय बीतने पर पू० महात्माजीने देखा कि जगह जगह स्थापित समितिया कामके लिअे अुपयोगी नही हैं। अिसके सिवा, वे अिस सस्थाका सेवाकार्य और व्यवस्था-तत्र सब कुछ बहनोंको सौंपना चाहते थे। अिसलिअे अुन्होंने सारी समितिया तुडवाकर प्रत्येक प्रान्तमें महिला-प्रतिनिधि नियुक्त की। महाराष्ट्रमें कोअी योग्य महिला न मिलनेसे यह स्थान कुछ समय तक खाली ही रहा।]

पूना,
६-१०-'४५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र पढकर फाड दिया। कतरन[1] सुशीलाके साथ लौटा रहा हू।

तेरा लेख सुशीलासे पढवाकर सुन लिया, ताकि कोअी भूल न करू। अिसका अग्रेजी छपवानेमें कोअी सार नही। मराठीमे है वही काफी है। अिसमे भाषादोष नही है। परन्तु सब कुछ हर समय कहने लायक नही होता। तू कभी मिलेगी तब अिस विषयमे बात करेगे। खास अिसी बातके लिअे आना हो तो भी समय निश्चित करा कर आ जाना। तेरे शिविरके बारेमे बापाने ट्रस्टियोको निवेदन भेजा है। १६ तारीखको तो यहा समितिकी बैठक रखी है, तब देख लूगा।

बापूके आशीर्वाद

२२९

[श्री ठक्करबापाने महाराष्ट्रकी प्रतिनिधिके रूपमे सुशीला पैका नाम सुझाया था। मैं काग्रेस महिला-सगठन समितिका रचनात्मक कार्य करती ही थी। शिविरका काम महीनो तक चलता है। अिस प्रकारके सस्था-सचालनकी जिम्मेदारी लेनेके लिअे मैं अपनेको योग्य मानती ही नही थी। लोक-सग्रह करनेकी अपनी शक्ति पर सुशीलाको विश्वास था। अिसलिअे वह अिस कामको हाथमे ले लेती तो मुझे अच्छा लगता। अिस-लिअे मैंने भी यह जिम्मेदारी स्वीकार करनेका अुससे आग्रह किया। परन्तु महाराष्ट्रमें काम करना अुसने मजूर नही किया। बुनियाद खडी करनेका काम कोअी खेल नही है।

लगभग १४-१५ वर्ष पहलेकी घटनाओको क्रमानुसार याद करके प्रस्तुत करनेमें थोडी कठिनाअी मालूम हो रही है। फिर भी मैं प्रयत्न करूगी। महाराष्ट्रकी प्रान्तीय कस्तूरबा निधि समितिके मत्री प्रातके अेक वयोवृद्ध और सेवाकार्यमे जीवन बितानेवाले सज्जन थे। (वे आज

१ 'नवा काळ' मे छपे लेखकी।

भी जीवित हैं और सेवा कर रहे हैं।) १९२० से पू० महात्माजीके अनुयायी थे। कस्तूरबा निधि अेकत्र करनेका काम शुरू हुआ तब अुन्होंने मुझे पू० बाका अेक छोटासा जीवन-चरित्र लिख देनेको कहा, ताकि निधि जमा करते समय लोगोंको पू० बाके विषयमें जानकारी मिले। मैं अुस समय बहुत ही काममें थी। अिसलिअे मैंने अुनसे प्रार्थना की कि, "मुझे जरा भी समय नहीं है। अमुक लेखकसे लिखनेको कहिये। वे अच्छा जीवन-चरित्र लिख देंगे।" परन्तु मंत्रीजीने हठ पकड़ लिया कि, "स्त्रीका जीवन-चरित्र स्त्री ही लिखे तो शोभा दे। और आप तो कस्तूरबाको जानती थीं, अिसलिअे आप ही लिखिये।" अैसे दबावसे मैंने रात-दिन अेक करके जीवन-चरित्र-संबंधी अेक लेख लिखा और अुन्हें भेज दिया। परन्तु मंत्रीजीने अुन दूसरे लेखकका ही, जिनका नाम मैंने पहले सुझाया था, लिखा हुआ लेख छपवाया और मेरा लेख लौटा दिया। अिससे मैं नाराज हुआी और अुन्हें अुलाहना दिया, "मैं आपसे पहले ही कह रही थी कि मुझे समय नहीं है, मुझे तकलीफमें न डालिये। अुन सज्जनसे ही लिखवा लीजिये। परन्तु आपने सुना नहीं और मैंने जो लेख भेजा अुसे लौटा दिया। मुझे नाहक क्यों तंग किया?" अिस पर वे मेरा ही दोष निकालने और झूठी दलीलें देने लगे, जिनका मैंने अेकके बाद अेक खंडन कर दिया। अिस पर संतप्त होकर वे व्यर्थकी तकरार करने लगे। वृद्ध होनेसे अुनके प्रति रहे आदरके कारण मैं वापस आ गआी। परन्तु मंत्रीजीके मनमें वह कांटा बहुत समय तक चुभता रहा। बादमें महाराष्ट्रमें कस्तूरबा ट्रस्टका शिविर खोलनेका प्रयास मैं करने लगी। अुसमें वे सहमत नहीं हुअे। अुनके विचार भी स्वतंत्र थे। अुन्होंने केन्द्रीय कार्यालयको लिख भेजा कि मेरे साथ प्रान्तीय कार्यालयका सहयोग नहीं हो सकेगा। फिर भी ठक्करबापाने निश्चय किया था कि महाराष्ट्रमें काम शुरू होना ही चाहिये, अिसलिअे अुन्होंने मुझे सहायताका आश्वासन दिया। अिस पर ये मंत्रीजी ट्रस्टके अध्यक्ष पू० महात्माजीसे मिले और अुनके सामने मेरी बहुतसी शिकायतें कीं। अुनमें वह जीवन-चरित्रकी पुस्तकवाली घटना भी बताअी। "प्रेमाबाअीने मेरा अपमान किया। मेरी सारी अिज्जत पर पानी फेर दिया।" यह वर्णन करते समय अुन

वृद्ध महाशयकी आखोसे आसू बहने लगे। अिससे पू० महात्माजीको बहुत बुरा लगा और वे मुझ पर नाराज हो गये। शिविर अभी शुरू नही हुआ था। मुझे मदद दी जाय या नही दी जाय, यह बात चल ही रही थी कि बीचमे यह घटना हो गअी।

मेरा खयाल है कि पू० महात्माजीका पूनासे १२–१०–'४५ का लिखा हुआ कार्ड मुझे मिला और तदनुसार मै १७ तारीखको अुनके साथ घूमने गअी। अुसी समय बहुत करके मुझे पू० महात्माजीकी नाराजीका पात्र बनना पडा। वे मुझे फटकारने लगे, "अैसे वृद्ध, सेवा-परायण, माननीय सज्जनका अपमान किया ही कैसे जा सकता है? तू अपनी मर्यादा नही जानती।" अैसे अैसे अुलाहने मुझे सुनने पडे। मैने कहा कि, "मै अुनसे बिना कारण थोडे ही लडने गअी थी। अुन्होने मुझे लेख लिखनेको मजबूर किया था। अुसमे मेरा समय व्यर्थ गया अुसका क्या?" परन्तु महात्माजी मेरी कोअी भी दलील सुननेको तैयार नही थे। बहुत ही कठोर बनकर अुन्होने मुझे आडे हाथो लिया। मैं समझ गअी कि अब मेरे कामके लिअे मदद नही मिलेगी। मै अुदास होकर अपने स्थान पर चली गअी। मुझे बहुत बुरा लगा। मैं सोचने लगी कि पद्रह वर्ष पहले जब मै जवान और अनुभवहीन थी तब मुझे पू० महात्माजी फटकारते थे वह तो ठीक था। परन्तु अब मेरी अुमर ३५ से अधिक हो गअी है। मैंने स्वतत्र रूपसे काम किया है। महाराष्ट्रमे ही नही परन्तु बिहार जैसे दूसरे प्रान्तमे भी किया है, अनुभव प्राप्त किया है। वह सब आज अेक वृद्ध साथीके आसुओकी बाढमे बह गया! आखिर है क्या? अैसा लगता है कि पू० महात्माजीकी दृष्टिमे तो मैं कभी लायक बनूगी ही नही। अिसके सिवा, सुशीलाकी ओरसे समाचार मिला कि, "तेरी किसीसे बनती नही, तेरा स्वभाव तेज है, अैसा महात्माजी कहते थे, और वे अिस निर्णय पर पहुचे है कि महाराष्ट्रमें कस्तूरबा ट्रस्टका काम तुझे नही सौपा जा सकता।" यह खबर मिलनेके बाद मेरा दुःख और गुस्सा दोनो बढ गये और मैंने भी निश्चय कर लिया कि यह शिविर मेरे हाथसे पूरा हो जाय, तो फिर पू० महात्माजी जिस सस्थासे सबध रखते हो अुसमें मै कभी काम नही करूगी।

पू० महात्माजीका मत कुछ भी बना हो, परन्तु ठक्करबापाकी राय दूसरी रही और अुन्होंने मुझे शिविर चलानेके लिअे मदद देना जारी रखा। शिविर १५ दिसम्बर १९४५ को सासवडसे तीन मील दूर पिंपळे नामक गावमें शुरू हुआ। अुद्घाटन करने श्री शंकररावजी आये थे। श्री ठक्करबापा भी अुपस्थित थे। मनमें अुत्साह होनेसे और समर्थन प्राप्त होनेसे मैंने अुस शिविरको सफल बनानेके प्रयासमें कोअी कसर नही रखी। पूनासे बडे बडे विद्वान, कार्यकर्ता तथा सरकारी खेती-विभागके अधिकारी पढाने आते थे। शिक्षाके बारेमें ठक्करबापाकी कोअी भी अपेक्षा मैंने बाकी नही रखी। शिविरमें तीन गायें भी थी। शरीर-श्रम, अध्यापन तथा गावके लोगोकी सेवा आदि सबको ध्यान दिया गया था। आचार्य भागवत पाच महीने आकर वहा रहे थे और पढानेमें मदद देते थे।

परन्तु पू० महात्माजीके प्रति मेरे मनमे रोष था। मैंने बहुत दिन तक अुन्हे पत्र ही नही लिखा। अुनका १२–१२–'४५ का कार्ड मिला था तब मैंने हमेशाकी तरह साफ दिलसे जवाब भी नही दिया था। यदि मै जिम्मेदारी लेनेके लायक नही हू अैसा पू० महात्माजी मानते है, तो फिर महाराष्ट्रकी प्रतिनिधि किसे बनाया जाय अिस बारेमें मेरी सलाह भी क्यो मागते है? अुसे देनेका अधिकार भी मुझे कहा है? अिस मान्यताके कारण मैंने अुन्हे कोअी भी राय देनेकी अनिच्छा लिख भेजी। अिससे पू० महात्माजी परेशानीमे पड गये। पूछताछ करनेवाला दूसरा पत्र अुन्होने भेजा (२३–१२–'४५)। तब लबे अुत्तरमें मैंने अपना सारा रोष अुडेल दिया। पू० महात्माजीसे रुठनेका मेरे जीवनका यह तीसरा और अतिम प्रसग था। अुसका गाभीर्य और बातका महत्त्व समझकर बादमें महात्माजीने अपनी युक्ति फिर शुरू की। परन्तु अिस बार मैं जल्दी नही मानी। पू० महात्माजी पूनामे डॉ० मेहताके नर्सिंग होममें रहते थे और मैं पूनामें थी, फिर भी अुनसे मिलने नही गअी। अेक बार शंकर-रावजी अुनसे मिलने गये तब अुनके साथ वहा तक गअी, परन्तु अदर न जाकर बाहर सुशीलासे मिली। शकररावजी तथा सुशीला दोनोको मैंने चेतावनी दे दी थी कि पू० महात्माजीको यह न बतायें कि मै यहा

आओी हू। मैं अुनसे मिले विना वापस अपने मुकाम पर आ गओी, अिस बातका पता लगने पर वे बहुत दु खी हुअे। सुशीला पर नाराज हुअे और कहने लगे "वह यहा आओी थी यह तूने मुझसे क्यो नही कहा? मैं खुद मिलकर अुसे समझाता।" शकररावजीको मेरा रवैया अच्छा नही लगा। वे मुझे अुलाहना देने लगे कि, "तुम अैसा कैसे कर सकती हो? रोष भी कितने दिन तक रखा जाय? अुसका कोओी अत है या नही? और महात्माजीके साथ अैसा वरताव?" सुशीला भी समझाने लगी, "महात्माजीको बहुत दु ख होता है। अिसलिअे अब तू गुस्सा छोड दे।" अपने खडित अभिमानका बदला लेनेके वाद मेरे मनमे विवेकका अुदय हुआ। विवेक मनसे पूछने लगा, "जिसे सर्वार्पण कर दिया अुससे यदि अुलाहना मिले, तो अुसके लिअे रूठनेका अधिकार हमे हो सकता है? अैसा हो तो सर्वार्पण किस कामका?" फिर तो अपने दु खका कारण मैं ही वनी। अुसके वाद मैं पू० महात्माजीसे मिलने गओी। मुझे देखकर वे कहने लगे, "तूने मेरा त्याग कर दिया है न?" मैंने जवाब नही दिया। वादमे अुन्हे दु ख देनेके लिअे माफी मागी और दुवारा अैसा न करनेका वचन दिया।

शिविरका पूर्णाहुति-समारोह २८ मओी, १९४६ को पूनामें हुआ। श्री ठक्करवापा अुस समय मौजूद थे। वृद्ध तपस्वी श्री कर्वे सेविकाओको आशीर्वाद देनेके लिअे पधारे थे। और श्री मोरारजीभाओीने प्रमाणपत्र वितरित करके दीक्षान्त भाषण दिया। शिविरमे दी गयी शिक्षा और सेवाकार्य आदि सब वातोका ब्यौरेवार वर्णन मैंने विवरणमे पढकर सुनाया। १९ वहनोमे से अेक अपने खर्च पर सस्कार ग्रहण करनेके लिअे आओी थी। ६ वहने आगे परिचारिका (नर्स) का अध्ययन करने जानेवाली थी। वाकी १२ वहने ग्रामसेवाके लिअे तैयार हो गओी थी और अुन सवकी सेवाओको अलग अलग जिलोके आठ गावोने स्वीकार किया था। अिस-लिअे अेक महीनेकी छुट्टी भोगकर वे अपने अपने कार्यक्षेत्रमे काम पर लगनेवाली थी।

समारोह समाप्त होनेके वाद मैंने श्री ठक्करवापासे कहा, "महा-राष्ट्रकी प्रतिष्ठाके खातिर मैंने यह काम हाथमे लिया था। अब शुरुआत

हो गअी है। आप कोअी योग्य महिला ढूंढकर मुझे बतायें तो यह काम मैं अुन्हें सौंप दूं और मुक्त हो जाअूं!" भगवानने मेरी टेक पूरी कर दी, अिसलिअे मैं मन ही मन अुनका अुपकार मानती थी।

बापा कुछ नहीं बोले। जूनमें या लगभग अेक महीने बाद जुलाअीके शुरूमें पू० महात्माजी पूना आकर रहे थे। तब मैं अुनसे मिलने गअी। डॉ० मेहताके नर्सिंग होमके बगीचेमें सुबह घूमते हुअे अुन्होंने अेकाअेक मुझसे प्रश्न किया, "महाराष्ट्रकी प्रतिनिधिकी जिम्मेदारी मैं तुझे सौंपना चाहता हूं। बोल, तेरा क्या कहना है?"

मैं थोडी देरके लिअे तो अवाक् रह गअी। परन्तु बादमें पूछा, "मुझे तो आप अिस कामके लिअे नालायक मानते थे। अब कैसे मानस-परिवर्तन हुआ?"

वे साफ दिलसे बोले, "बापाने मुझसे कहा कि दूसरे प्रान्तोंमें शिविर हुअे, परन्तु वहां पढी हुअी बहनें तुरत ही काममें नहीं लगीं, जब कि महाराष्ट्रमें देरसे शिविर होने पर भी सस्कार पाअी हुअी सब बहनें काममें लग गअी हैं। महाराष्ट्रमें आठ ग्रामकेन्द्र शुरू भी हो गये हैं। दूसरी जगह कहीं भी अैसा काम नहीं हुआ। अिसलिअे प्रेमाको ही महाराष्ट्रकी प्रतिनिधि बनाना चाहिये।"

"परन्तु मेरे स्वभावकी मर्यादा आप जानते हैं। मुझे आप बार बार टोकते और डाटते रहेंगे तो मैं क्या करूंगी? अुस परिस्थितिमें मुझसे काम नहीं होगा।"

महात्माजी हंसते हंसते जल्दीसे बोले, "मैं तुझे कोरा चेक देता हूं। मैं तुझे कभी कुछ नहीं कहूंगा। तेरे जीमें आये वही तू करना।"

अिन शब्दोंसे मुझे गहरी वेदना हुअी। मेरी स्मृति परसे पर्दा थोडा हट गया और लगभग पंद्रह वर्ष पहलेका अेक दृश्य आंखोंके सामने तैरने लगा। साबरमतीमें आश्रम और वाडजके बीच हम दोनों घूम रहे थे और मैंने महात्माजीसे कहा था, "मैं आश्रमकी जिम्मेदारी लेनेके लिअे नालायक हूं। अिसलिअे आप मुझे वापस ले लीजिये।" पू० महात्माजीने जवाब दिया था कि, "मैं तुझसे भिक्षा मांगता हूं। तुझे ही यह जिम्मेदारी लेनी चाहिये।"

मैंने देख लिया था कि मेरी योग्यतासे प्रसन्न होकर नही, परन्तु मुझसे कोअी योग्य बहन न मिलनेके कारण लाचार होकर महात्माजी मुझे यह जिम्मेदारी सौपनेको तैयार हुअे थे। पद्रह वर्ष पहले जो हुआ था अुसीकी पुनरावृत्ति आज भी हुअी थी। अितने वर्षोमे मैंने जरा भी प्रगति नही की थी! पू० महात्माजीके मनमे कर्तृत्वका महत्त्व नही था, अुदार चारित्र्यका विशेष मूल्य था। और मुझमे तो अुसकी कमी थी ही। पू० महात्माजीसे विदा ली तब मेरा अत करण भारी हो गया था। पूनामे शकररावजीके मुकाम पर जाकर मैंने अुन्हे सारी बात कही। मेरे मनकी व्यथा भी बताअी और कहा, "कस्तूरबा ट्रस्टका काम लेनेकी मेरी अिच्छा नही है। मै तो महात्माजीसे ना कहनेवाली हू।" परन्तु शकर-रावजीका मत दूसरा था। वे मानते थे कि सस्था-सचालन करनेसे जीवन-विकासमे मदद मिलती है। अिसलिअे वे मुझसे यह जिम्मेदारी लेनेका आग्रह करने लगे। बादमे मै काममें गुथ गअी। थोडी देर बाद शकर-रावजी मेरे पास आकर बोले, "महात्माजीका फोन आया था। अुन्होंने पुछवाया था कि प्रेमा प्रतिनिधि बननेको राजी है या नही। तुम्हारी तरफसे मैंने स्वीकार कर लिया है।" मै विरोध करने जा रही थी, परन्तु अुन्होने अिशारेसे मुझे चुप करके कहा, "अपने प्रिय बूढेको अब और न सताओ।" (पू० महात्माजीको मै 'Old Beloved' कहती थी, यह मेरे स्नेही और स्वय महात्माजी भी जानते थे।)

अिस प्रकार भीतरकी प्रसन्न प्रेरणाके बिना मैंने यह जिम्मेदारी अपने सिर ली। परन्तु अुसके पीछे मेरा 'पाप' छुपा हुआ था, वह भी साथ ही चला। परिणाम यह हुआ कि कामको कोअी निश्चित स्वरूप देकर दो तीन वर्षमे अुसे किसी और योग्य बहनको सौपकर स्वय निवृत्त होनेका जो अिरादा मैंने किया था वह सफल नही हुआ। पूरे नौ वर्ष मुझे अिसमें देने पडे और जब मै काम सौपकर निवृत्त हुअी, तब मुझे भारी मानसिक क्लेशमे से गुजरना पडा। अपने प्रति असतोष, कामके प्रति असतोष, अिस सारे समयमें कार्यकर्ताओ या छात्राओकी भूलोके लिअे किये गये अुपवास और अतमें काम सौप देनेके बाद भी प्रायश्चित्त-स्वरूप किये गये चार दिनके अुपवास आदि घटनाओसे मनमे विचार आया 'गहना कर्मणो गति'।]

पूना,
१२-१०-'४५

चि० प्रेमा,

तू १७ तारीखको सुबह साढे सात बजे मेरे साथ टहलना। अधिक समय नही है।

बापूके आशीर्वाद

२३०

सोदपुर,
१२-१२-'४५

चि० प्रेमा,

चि० सुशीलाने भाअी श्यामलालको निम्नलिखित पत्र लिखा है

"मत्रीजी,
कस्तूरबा स्मा० निधि, कार्यालय, वर्धा,

आपका पत्र मिला। महाराष्ट्रकी प्रतिनिधि बननेके लिअे अध्यक्ष महोदयकी सूचनाके लिअे मैं आभारी हू। परन्तु अिससे मुझे आश्चर्य हुआ। महाराष्ट्रमे बरसोसे काम करनेवाली अेक बहन मौजूद है और वे अिस समय क० स्मा० निधिका ही काम कर रही हैं। अुनका नाम प्रेमा कटक है। महाराष्ट्रकी प्रतिनिधि बननेका अधिकार अुनका है, क्योकि अुन्होने अपनी शुद्ध सेवासे ही अुसे प्राप्त किया है। महाराष्ट्रमे वे परिचित भी हैं। अिसलिअे अुनका पद स्वीकार करना मेरे लिअे असभव है। आशा है अध्यक्ष महोदय मुझे क्षमा करेगे।"

मैंने तो मान लिया था कि सुशीला अिस कामकी जिम्मेदारी तुरत ले लेगी और अिसलिअे मैंने श्यामलालकी अिस सूचनाका स्वागत किया कि वही अुसे लिख देगे। परन्तु जब सुशीला तेरी ही सिफारिश करती है और तू फिर भी स्वय आनेसे अिनकार करती है, तब तेरी सलाह

लेता हू कि अिस मामलेमे क्या करना अुचित है। काम अधिक अच्छा हो सके और सुशोभित हो सके, अैसा ही करना चाहिये न? सुशीलासे मिलकर कहना हो तो मिलकर कहना। जो सुझाव देना हो वह देना। अुपरोक्त पते पर अुत्तर देगी तो मै जहा हूगा वहा मिल जायगा।

बापूके आशीर्वाद

२३१

सोदपुर,
२३-१२-'४५

चि० प्रेमा,

तेरा ता० १७-१२-'४५ का पत्र विचित्र है, अुसकी भाषा विचित्र है। अैसा तेरा यह पहला ही पत्र है। तू बहुत काममें लग गअी है। तू सेविका होनेका दावा करती है और समय-समय पर रुपया मागना पडे अिससे शरमाती है। यह कैसे आश्चर्य और कैसे दुःखकी बात है? सेवाके खातिर रुपया मागनेमे शरम कैसी? रेलगाडीसे सिर निकालकर पैसा पैसा मागते तूने मुझे देखा तो है ही। भीख मागनेमे तूने मदद भी दी है। परन्तु जिस पत्रका मैं अुत्तर दे रहा हू वह तो किसी सेठका पत्र मालूम होता है। अपने स्वार्थके लिअे पैसा मागे और शरमाये अिसे तो मै समझ सकता हू। परन्तु सेवाके खातिर तो सौ बार पैसा मागे तो भी क्या ज्यादा कहा जायगा? तूने जो अधिक पैसेकी माग की है, अुसकी नकल भी नही भेजी। यदि तूने मुझे अध्यक्षके नाते पत्र लिखा हो तो नियमानुसार मन्त्रीको लिखना चाहिये। मन्त्रीके मारफत आये हुअे पत्रका अुत्तर मै तुरत भेज सकता हू। यदि मुझे बुजुर्गकी हैसियतसे लिखा हो तो तुझे अितना ब्यौरा देना चाहिये, जिससे मै तुरत पैसा भेज सकू।

मैने तो तुझे पुत्री, साथी और सुशीलाकी सगी बहनसे भी ज्यादा पासकी मानकर तेरा मार्गदर्शन चाहा। वह मार्गदर्शन देनेके बजाय तूने अैसा पत्र लिखा, मानो हम अेक-दूसरेको जानते ही न हो। यह क्या

है, समझमें नही आता। अिस पत्रका अुत्तर सोदपुर भेजना। मैं बंगालमें भ्रमण करता हूगा। यहासे वहा पत्र पहुचा देगे।

बापूके आशीर्वाद

२३२

रेलमें,
मौनवार,
१४-१-'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अिसका जवाब क्या दू? जिसे तू मान लेती है अुसका अस्तित्व ही न हो, तो क्या अुत्तर दिया जाय? कोअी कहे कि आकाशमे पुष्प है, तो अुससे क्या कहा जा सकता है?

रजत सीप मह भास जिमी, तथा भानुकर वारी।
जदपि असत्य तिमि काल तिमि, भ्रम न सकअि कोअु टारी।।[1]

तुलसीदासका यह दोहा याद करके हसना हो तो हसना।

तू अितनी नाजुक-मिजाज होगी, यह तो मैंने सोचा ही नहीं था। और को तू कैसे विशेषण देती है? तू जब शात चित्तसे लिखेगी तब ज्यादा लिखूगा। सुशीलाका पत्र मिल चुका है। मैंने तो बापाको यह सलाह दी है कि जहा योग्य बहन प्रतिनिधिके रूपमें न मिले वहा जगह खाली रखी जाय।

तेरी अिच्छाके अनुसार तेरा पत्र फाड डाला है।

बापूके आशीर्वाद

---

१ दोहेका शुद्ध पाठ अिस प्रकार है
रजत सीप महु भास जिमि जथा भानुकर बारि।
जदपि मृषा तिहु काल सोअि भ्रम न सकअि कोअु टारि।।

२३३

नअी दिल्ली,
२२–४–'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पागलपनसे भरा सुशीलाके नामका पत्र मराठीमे सुना, अुसका अनुवाद भी सुना। ध्येय जानना अच्छा है। ध्येय-पुरुपको छोड दिया जाय। दु ख यह है कि ध्येय-पुरुप ही तेरा ध्येय है। अैसा वहुतोके जीवनमे होता है और वादमे वे दु खी होते है। ध्येय-पुरुषको जब ध्येय वनाते हैं तव अर्थ यह होता है कि वह हमारे अनुकूल वोले-चाले तव अच्छा लगता है। और अैसा न करे तो अुससे हम रूठ जाते है। अिसलिअे ध्येयको हमेशा स्वतत्र रखा जाय। जब तक अैसा नही करेगी तू दु खी रहेगी। और तेरा काम भी रुकेगा। पढी तो है परन्तु गुनी नही! अव गुनना सीख, न सीखी हो तो अितना मुझसे सीख ले। अिसमे ध्येय और ध्येय-पुरुपका झगडा ही नही है। क्योंकि गुननेका अर्थ है व्यवहार-ज्ञान प्राप्त करना। व्यवहार भी सत्य और असत्य दोनो होता है, यह ध्यानमे रखना। तू जाग।

वापूके आशीर्वाद

२३४

दिल्ली,
२६–४–'४६

चि० प्रेमा,

तेरा लवा पत्र पढ लिया। अुसमे कुछ भी खानगी नही है। मैंने अुसे सुशीला पैको पढनेके लिअे दिया है।

मुझे तेरे पत्रसे दु ख नही हुआ। मै अितना देखता हू कि मेरा गर्व अुतरता जा रहा है। मै मानता था कि मै वहुतोको पहचानता हू। अव अपना अज्ञान मै अधिक स्पष्ट रूपमे देख सकता हू। यह वात मुझे पसन्द है।

मैं तेरी प्रवृत्तियोंको कब अपनी आंखोंसे देख सकूंगा, यह तो नहीं जानता[1]। परन्तु कभी न कभी देखनेकी अिच्छा तो है।

मुझे लगता है कि तू आवेशमें रहा करती है। यह सच हो तो वह मिटना चाहिये।

तुझे अेक पत्र लिख रखा था। अुसे सुशीलाने रोक लिया। अब तो वह भी अिसके साथ जायगा।

तुझ पर या किसी दूसरे पर दबाव तो मैंने डाला नहीं। डालना भी नहीं है। तेरे कामके बारेमें मैंने भूल की हो तो मैं सुधार लूंगा। तू दिये हुअे वचनों[2] का पालन कर। अिस विषयकी बापासे चर्चा करूंगा।

बापूके आशीर्वाद

२३५

दिल्ली,
२७-४-'४६

चि० प्रेमा,

अपने पत्रमें तूने तीन मुद्दे अुठाये हैं।

१ शिविरमें तालीम लेकर निकली हुअी बहनें कस्तूरबा-निधिके अधीन सेवा करनेको बंधी हुअी हैं।

२ ट्रस्ट अुन्हें वेतन और काम देनेको बंधा हुआ है।

३ हर जिलेमें अेक प्रौढ अुमरकी और अेक कम अुमरकी, अिस प्रकार दो बहनोंको साथ रखा जाय।

यद्यपि ट्रस्टके नियमोंमें ये मुद्दे नहीं आते, फिर भी नियम बनानेसे पहले तुझे वचन दे दिया था, अिसलिअे अुपरोक्त तीनों मांगें मान ली गअी हैं।

---

१ पिंपळे गावका शिविर और काम देखनेका मैंने महात्माजीको आमंत्रण दिया था।

२ शिविरमें आअी हुअी बहनोंको नीचेके पत्रमें लिखे तीन मुद्दोंके रूपमें वचन दिये थे।

साथ ही यह सिफारिश की जाती है कि

१ सम्बधित स्थान और जिलेसे जितना चदा अिकट्ठा किया जा सके किया जाय।

२ जहा अेक अनुभवी परिपक्व अुमरकी बहनसे काम चलाया जा सके वहा अेकको ही भेजा जाय, क्योकि बराबरीकी दो बहने अेक ही स्थान पर जाय तो दोनोमे टक्कर होनेकी सभावना है। परन्तु अेक छोटी अुमरकी और अेक बडी अुमरकी हो तो दोनोको साथ रखनेमें कोअी हर्ज नही।

यह अपवाद-स्वरूप है। अिस बातका ध्यान रखना होगा कि यह अपवाद नियम न बन जाय।

२३६

[शिविरमे दफ्तरके कामके लिअे मैं हाथका कागज काममे लेती थी। पूनाकी कुछ सस्थाये दिखानेके लिअे (जिनमे ज्यादा सरकारी थी) मैं छात्राओको ले जानेवाली थी। अुन सस्थाओके सचालकोको मैं पत्र लिखती थी अुन कागजो पर अग्रेजीमे पता लिखनेकी आवश्यकता लगी, अिसलिअे थोडेसे कागजो पर अग्रेजीमे पता छपवा लिया था। अुपयोगके बाद बाकी रहे कागज दूसरोको पत्र लिखनेके काम आ गये। अुनमे से अेक पू० महात्माजी तक पहुच गया।]

मसूरी,
७–६–'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मजेदार है। तू अब पत्र लिखनेमे अितना परिश्रम न करे तो तेरा समय बच जायगा। जो वर्णन तूने मुझे लिखा है तू अुसे छपवायेगी अथवा अैसा ही जो कुछ हो अुसकी नकल मुझे भेजेगी, तो मैं सब जान लूगा। तेरा झगडा भी मुझे मीठा लगता है। अिसलिअे झगडकर भी तू अपना काम करती रहना और मेरे जैसेसे जो कुछ लेना हो वह ले लेना।

तूने अपने पत्र लिखनेके कागजो पर पता अंग्रेजीमें क्यो छपवाया? नागरी-अुर्दूमें अथवा यह तुझे पसन्द न हो तो केवल नागरीमें क्यो नही छपाया? अंग्रेजी किसके लिअे?

मणिवहन नानावटी[1] तुझे ब्यौरा न दे, यह मुझे आश्चर्यकी बात लगती है। मणिवहनसे मैं पूछू?

दिल्लीके वाद मेरा कार्यक्रम पूनाकी ओर आनेका और हो सके तो पचगनी जानेका है। जहा जाअू वहा आनेकी तुझे छूट है।

वापूके आशीर्वाद

२३७

[पू० महात्माजी मुझे राजी करनेको अितने अुतावले हो गये थे कि पूनासे अपने आप ही सासवड आनेका अुन्होंने प्रस्ताव किया। मुझे तो वहुत आनद हुआ। सासवडके लोग खुश हुअे और स्वागतके लिअे सारी तैयारिया होने लगी। शकररावजीकी सुविधाके अनुसार १३ तारीख (जुलाअी १९४६ की होनी चाहिये) निश्चित की गअी। पू० महात्माजी अेकाअेक बोल अुठे, "तेरहवी है। देखना, कोअी मुसीबत न आ जाय।" अैसे वहममे मेरा विश्वास नही था। परन्तु सतवाणी फली, अुसका कोअी क्या करे? मेरा खयाल है कि १० तारीखकी रातको पढरपुरसे वम्वअी राज्यके आरोग्य विभागके मत्री डॉ० गिल्डरका तार पू० महात्माजीको मिला कि, "सासवड न जाअिये, वहा प्लेग है।" मुझे ११ तारीखको खवर लगी। मुझे आश्चर्य हुआ। शेष दो दिन मैं दौरे पर रही। अिसलिअे ११ तारीखको सासवड जाकर देखा तो वहा प्लेग था ही नही। परन्तु दूर कोनेके किसी गावमे प्लेगका अेक केस हुआ था, अैसा मालूम हुआ। वादमे डॉ० गिल्डरसे मिलकर मैंने वडी वहस की। परन्तु वे न माने और पू० महात्माजी सासवडमे न आ सके।]

---

[1] वम्वअीके अुपनगरमे रहनेवाली खादीप्रेमी वहन, जिन्होंने अन्य वहनोकी मददसे वर्षो तक अेक खादी भडार चलाया था। आगे चलकर वे अखिल भारत चरखा-सघकी कार्यकारिणीमे चुनी गअी थी।

पचगनी,
२६–७–'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरा दुःख मैं समझता हू। मै अिस वारकी यात्रामें सासवड नही आ सकूगा, अिसका मुझे कम दुःख नही है। परन्तु तुझे और मुझे डॉ० गिल्डरका मानस भी समझना चाहिये। वह सीधे आदमी है। अुन्हे जो ठीक लगता है वह कहते है और करते है। मुझे प्लेगका डर नही। परन्तु सार्वजनिक व्यक्तिके नाते मै सार्वजनिक कार्यमे अपनी मरजीके मुताविक नही चल सकता। हम दोनो अेक तत्रके अधीन है। मै अुसकी आज्ञा या अिच्छाका अनादर करू तो दूसरो पर अुसकी आज्ञाका प्रभाव हलका पडेगा। यह मै कैसे कर सकता हू? देव तो यह वात समझ गये वैसे ही तुझे भी समझना चाहिये। मै पूना छोड़ू अुससे पहले भी यदि सासवड आनेकी अिजाजत मिल जाय तो मै आ जानेको तैयार हू। मै २८ तारीखको पूना पहुच रहा हू। डॉ० गिल्डरके साथ वाते करके देखूगा और जरा भी सभव हुआ तो सासवड आ जाअूगा। नही तो तू यह पत्र लोगोको पढवा सकती है। यह भी अेक अच्छा पाठ होगा।

सुचेता[1] मेरी अिच्छासे नही गअी। अुसने सयानापन किया यह तू भले माने, मै नही मानता। परन्तु तेरा या मेरा मानना किस कामका? अुसे सूझे वही ठीक। अव मुझे दूसरी वहनकी तलाश करनी होगी। मैंने तो सुशीलाके साथ वात की है। परन्तु वह तेरे साथ सलाह करेगी। वह दूसरी सहेलियोसे भी पूछ ले, हितेच्छुओको पूछे और वादमे निश्चय करे। तेरी मदद मिलेगी न?

तू मेरे साथ ही वर्धा चलना। मुझे अच्छा लगेगा।

वापूके आशीर्वाद

---

१ श्री सुचेतावहन कृपालानी कस्तूरवा गाधी स्मारक ट्रस्टकी सयोजक-मत्री थी। परन्तु अुत्तर प्रदेशकी विधान सभामे प्रवेश प्राप्त करनेके लिअे वे चुनावमे भाग लेनेवाली थी, अिसलिअे ट्रस्टके नियमानुसार अुन्हे अपने पदसे अिस्तीफा देना पडा।

२३८

[महाराष्ट्रमे कस्तूरबा ट्रस्टके केन्द्र चलने लगे। अिस बीच अेक अजीब मुसीबत आजी। सेविकायें ट्रस्टके साथ शर्तमें बधी हुआी थी कि शिविर-शिक्षणके बाद दो वर्ष तक वे गावोमे जाकर काम करेगी। आचार्य भागवत शिविरमें मेरे साथी थे। महिलाओके जीवन-विकासके मामलेमें वे स्वतत्र विचार रखते थे। वे शिविरमे और केन्द्रोमें जाकर भी सेविका-ओको विवाहके लिअे तैयार करने लगे और अुनकी सगाअी भी कर देने लगे। मैंने अुनसे अैसा न करनेकी प्रार्थना की। परन्तु वे कहने लगे कि सेविकाये कस्तूरबा ट्रस्टके साथ जीवन भरके लिअे बधी हुआी नही है। केवल दो वर्षके कामके लिअे बधी हुआी है। विवाहके बारेमे विचार करनेको वे स्वतत्र है। मैंने अुन्हे समझाया कि दो वर्षका करार पूरा होने तक अुनके मनमे बुद्धिभेद पैदा नही होना चाहिये। अुन्हे विवाहके लिअे तैयार करनेसे वे सेवाकार्य छोड देती है, अैसा अनुभव हुआ है। परन्तु आचार्य भागवत नही माने। तब मैंने पत्र लिखकर पू० महात्मा-जीसे मार्गदर्शन मागा। अिस पत्रमे वह आया। अिसलिअे आचार्य भागवतको मैंने सूचना दी कि आअिदा वे केन्द्रोमे न जाय और सेविकाओसे न मिले-जुले। अुन्होने अिसे स्वीकार किया।]

नअी दिल्ली,
१६–१०–'४६

चि० प्रेमा,

तेरे दो पत्र मेरे सामने है। दूसरा आया कि मैंने जवाब शुरू कर दिया था। परन्तु जिनके लिअे यहा आया हू वे आ गये अिसलिअे अधूरा रहा। अिससे आज फिर शुरू कर रहा हू।

न्यूरेम्बर्गकी बात जाने देता हू। जहा जगलीपन ही चल रहा हो वहा यह क्या और वह क्या। सब 'यही' है।

यह कथन अनुचित है कि मैं रचनात्मक काम छोडकर यहा आया हू। अिसी तरह यह कहना भी ठीक नही कि मैं राजनीतिके वश हो गया हू। असलमें जीवनके टुकडे नही होते। अवयवोके नाम अलग अलग

होने पर भी शरीर अेक ही है। अिसी तरह जीवन भी अेक है। तू भूल देख सकती है अिसलिअे तुझे तो भूल ही माननी चाहिये। यह देखते हुअे तू अपनी भूल देखेगी और मेरे जीवनका अैक्य देखेगी, अथवा मुझे सुधारेगी। मैंने यह मोह कभी नही रखा कि मै जो मानता हू वही सच है। हा, यह सच है कि मै जो मानू वह मेरे लिअे तो सत्य ही है, नही तो मै सत्याग्रही नही रहता। यही नियम सबके लिअे है।

अब तेरा असली सवाल लेता हू। लडकिया कुमारी रहे, यह मुझे अच्छा लगेगा। पर यह चीज जबरन् हो ही नही सकती। अिसलिअे जिसे विवाह करना हो अुसके लिअे सुविधा पैदा करनी चाहिये।

आचार्य भागवतका यह धर्म था — और है — कि अुन्हे तुझे और दूसरे साथियोको समझाकर नियमपूर्वक जो करना हो सो करना चाहिये था। अुन्होने सलाह-मशविरा किये बिना जो किया वह अनुचित किया। और तुझे भी अुनसे कुछ प्राप्त करनेके लोभसे अुनका अनुचित व्यवहार सहन नही करना चाहिये, जो तूने किया है। यहा भी अंतिम निर्णय तो तुझीको करना होगा, क्योकि अैसे अवसर आते है जब अिस तरहके कडवे घूट पीने पडते है। मैने तो तुझे अेक नियम बताया है।

अिससे अधिक लिखनेका समय नही है।

सुशीलाने यदि यहा बैठकर अधिक समझा होगा तो तुझे लिखेगी। मेरा मौन चल रहा है। अुससे मुझे लाभ हुआ है। मेरे स्वास्थ्यके टूट जानेका डर था। अधिक मिलेगे तब।

अेजेण्टो[1] की सभा नही हुअी, यह मुझे खटकता है।

बापूके आशीर्वाद

---

१ अेजेण्ट यानी कस्तूरबा ट्रस्टके प्रान्तीय प्रतिनिधि। ट्रस्टका अेक प्रस्ताव अैसा था कि प्रान्तीय प्रतिनिधियोकी बैठके वर्षमे दो बार की जाय। अुनमे से अेक पू० महात्माजीकी अुपस्थितिमें होनी चाहिये।

२३९

[यह पत्र नोआखालीसे भेजा हुआ है। सुशीला भी महात्माजीके साथ वहा गओी थी। वहा कुछ महीने काम करके वह वापस बम्बओी चली गओी।]

३-१२-'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आज ही मेरे हाथ आया। मै बहुत दूर हू। यहा डाकघर नही है। तार तो हो ही कैसे सकता है?

मै तो यही चिपट गया हू। शायद यहासे हटना ही न हो। सब कुछ ठीक हो जाय तो ही हट सकता हू। न हो तो यहा मरना मुझे प्रिय लगेगा। अभी तो यह समझ ले कि सेवाग्राम, अुरुलीकाचन वगैरा सब मैने छोड दिया है।

मै अकेला पडा तो हू। परन्तु मुझे अकेला रहने कौन देता है? यह कसौटी तो शायद मेरे भाग्यमे नही है।

धोतिया आयेगी तब तुझे लिखूगा। तुरत पहनूगा।

मेरी अहिंसाकी सच्ची परीक्षा यहा होगी। काम कठिन है।

सुशीला गावमे जानेके बाद कल ही पहली बार आओी। वर्षगाठ थी न? काममे खूब गडी है।

तू अपने कामोमे कैसे छूट सकती है? तुझे तो अेक गाव आसानीसे सौंपा जा सकता है। तू बिलकुल योग्य है। परन्तु तेरा वहाका काम मै छुडवाना नही चाहता। आसानीसे आया जा सके तो आ जा।

सुशीलाने तो तुझे विस्तारसे सब कुछ लिखा ही होगा, अिसलिअे अब अधिक नही लिखूगा।

बापूके आशीर्वाद

२४०

[पू० महात्माजी दूर चले गये थे, असलिअे वर्षगाठके दिन धोतिया और अुत्तरीय वस्त्र अुन्हे देनेकी व्यवस्था नही हो सकी। बादमे जनवरी १९४७ मे शकररावजी जब अुनसे मिलने नोआखाली गये तब यह भेट ले गये थे। १४ जनवरीको सक्राति थी। अुसके लिअे सुशीलाको मैने 'तिलगुड' भेजा था। वे अुसने पू० महात्माजीको सक्रातिके दिन ही दिये। सुशीलाने लगातार पत्र लिखकर मुझे वहा नोआखाली आ जानेको प्रेरित किया, तो मैने पू० महात्माजीसे अिजाजत मागी। अुन्होने अिजाजत दी तब फरवरीमे वहा जाकर दोनोसे मिल आअी।]

कळा,
२४-१-'४७

चि० प्रेमा,

तेरा कार्ड मैने सभालकर रख छोडा है। आज दूसरे गावकी यात्रा करते हुअे यह लिख डालता हू। तेरे तिलगुड सुशीलाने ठीक सक्रातिके दिन दिये और सबको खिलाये। मैने तो खाये ही। शकररावने धोतिया भी दी थी। वे भी पहनी। अब तू फुरसतसे आयेगी तब मिलूगा। परन्तु अितना कह दू कि तू अितनी झझटसे बच। अितने रुपये बचा और अपना कर्तव्य करती रह। वह अिस यज्ञमे भाग लेनेके बराबर ही होगा। जो तू वहा बैठकर प्राप्त कर रही है वह यहा आकर प्राप्त नही कर सकेगी। परन्तु तुझे जैसा रुचे वैसा करना।

तू शान्त होगी।

बापूके आशीर्वाद

२४१

१८-४-'४७

चि० प्रेमा,

जिसे हमने यज्ञ माना हो अुसे प्रियजनोंकी वेदना मिटानेके लिअे भी बन्द नहीं कर सकते। परन्तु जहां हम स्वयं ही कर्ता हों और कर्म भी हों, वहां तटस्थताको कठिन मानकर अपने विरुद्ध कोअी कदम अुठाया जा रहा हो तो अुसे अुठाने देना चाहिये। विचार तो जो थे वही हैं। और अुनमें मैं अधिक दृढ होता जा रहा हूं। वहां मैं दोष नहीं देखता।

बापूके आशीर्वाद

२४२

[मैं नोआखाली पू० महात्माजीसे मिलने गअी थी तब मैंने यह मांग की थी कि जाड़ा पूरा होनेके बाद पू० महात्माजीके ओढ़नेकी शाल प्रसादस्वरूप मुझे मिलनी चाहिये। पू० महात्माजीने मेरी मांग स्वीकार की और शाल भेज दी।

कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्टके अध्यक्ष होने पर भी पू० महात्माजी अुस समय अुस संस्थाकी बैठकोंमें अुपस्थित नहीं रह सकते थे। थोड़े दिन बाद प्रान्तीय प्रतिनिधियोंकी बैठक हुअी थी। अुसमें कर्णाटकके प्रतिनिधिने वहांकी ग्राम-सेविकाओंके कुछ दुःखद किस्से पेश किये थे। अुनका अुल्लेख मैंने अपने पत्रमें किया था। अुसके बारेमें पू० महात्माजीने सवाल किया।]

पटना,
१९-५-'४७

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र कल मिला। आज मौनवार है, अिसलिअे जवाब तुरत दे सकता हूं।

तुझे शाल भेजी, अिसमे अुपकार कैसा? तव तो तू कोअी चीज मुझे भेजे तव मुझे भी तेरा अुपकार मानना चाहिये।

‘विनयनी पूरणी मागे ते न होय प्रेम प्रेमीनो’

—जो विनयकी पूर्ति चाहे वह प्रेमीका प्रेम नही।

कर्णाटककी वात पूरी नही समझा। मुझे फिर लिखना। क्या वहुतसी लडकिया विगड गअी?

मालूम होता है महाराष्ट्रका काम तू अच्छी तरह चमका रही है।

मुझे अुपवास करना ही पडे तो अुस समय तेरा पास रहना मुझे अच्छा लगेगा। परन्तु अच्छा लगेगा अिसीलिअे क्या अैसा किया जा सकता है? अुस समय जो मेरा और तेरा धर्म होगा वह सोच लेगे। अभीसे अिसका विचार भी हम न करे। जिसका तूने अुल्लेख किया है अुतनी नोटिस भी मैने सकोचपूर्वक ही दी। न देता तो ठीक नही होता।

गाडगिल[1] जो खवर लाये वह गलत है। स्त्रियोके विरुद्ध अुपवास करनेकी वात मुझे सूझती ही नही। अुपवासका विचार मनसे निकालकर तू अपने काममे लगी रह।

डॉक्टर गिल्डर डॉक्टरी दृष्टिसे यही कहेगे कि मेरी दृष्टि स्पष्ट है। गीताजीके दूसरे अध्यायके जो श्लोक शामको रोज हम रटते है वैसा स्थितप्रज्ञ जो मनुष्य हो जाय, वह १२५ वर्ष अवश्य जियेगा। अीशोपनिपद्मे ‘शतम्’ शव्द है। अुसका अर्थ ९९+१ नही है। १२०, १२५ या १३० वर्ष होता है। मैने तो वम्वअीमे ७ अगस्त १९४२ को १२५ वर्ष गिनाये थे। वही मै कहा करता हू। परन्तु मै अपने काम-क्रोधको न जीतू, तो १२५ वर्ष जी ही नही सकता। जीनेकी अिच्छा भी मुझे छोडनी चाहिये। अिसलिअे मेरी यह अिच्छा शर्तवाली है।

वापूके आशीर्वाद

---

१ श्री न० वि० गाडगिल, १९३९ से ७–८ वर्ष तक महाराष्ट्र प्रातीय काग्रेस समितिके अध्यक्ष। यह पत्र लिखा गया अुस समय केन्द्रीय मत्रि-मडलमे विजली, खान वगैरा अुद्योग-विभागके मत्री थे। आजकल पजावके राज्यपाल है।

२४३

[श्री शकरराव देव अुस समय काग्रेसके मन्त्री थे। महाराष्ट्रमें राष्ट्र-सेवादल (जो पहले काग्रेसकी सस्था थी, वादमें समाजवादी दलको मिली) की तरफसे शकररावजीके विरुद्ध अैसा झूठा प्रचार हो रहा था कि 'जनरल शाहनवाज अखिल भारतीय काग्रेस सेवादल विभागके अध्यक्ष थे, परन्तु शकररावजीने अुन्हे त्यागपत्र देनेको विवश किया। जिसमें महात्मा गाधीजीकी सहानुभूति तो ज० शाहनवाजकी ओर थी।" अिसके वारेमें पू० महात्माजीके साथ मेरा पत्रव्यवहार चला और अुपरोक्त प्रचार झूठा सिद्ध हुआ। अिस पर वह पत्रव्यवहार प्रकाशित करनेकी मैंने अुनसे अिजाजत मागी थी।]

नअी दिल्ली,
१५-६-'४७

चि० प्रेमा,

अिस समय ४-३० वजे है। प्रार्थनाके वाद लिखने वैठा हू। आस-पासके लोग सो रहे है। निव टूट गअी है, अुठकर लेने जाना नही चाहता। अितनेमे चि० मनु फलोका रस लाती है, अिसलिअे निव मगाता हू। अव नअी निव है अिसलिअे अुसके अूपरकी चरवी नही जाती तव तक वह चलेगी नही। अिसी तरह जीर्ण मनुष्योंकी गाडी घिसटती हुअी चलती है। स्वातन्त्र्यकी नअी लहरमें तुम सव अुडो वहा मेरे जैसेका क्या?

अव देखता हू कि अीश्वर मुझे कहा ले जा रहा है।

मेरा पत्र छापनेकी अनुमति मै नही दूगा। मेरा तो कुछ नही विगडेगा परन्तु मेरी अधूरी स्मरण-शक्तिसे दूसरोका कही नुकसान हो जाय अिस भयके कारण।

जनरल शाहनवाजने कहा कि अुनके हाथमे सारा अधिकार न हो तव तक वे अपने कामको चमका नही सकते। अिस पर मैंने कहा कि अैसा हो तो अुन्हे निकल जाना चाहिये। अिसके सिवा मेरा कोअी सम्बन्ध अिस वातसे नही।

विहारमे मेरे अधीन काम करना चाहती थी अिसलिअे मैंने रख लिया। मुझे तो बहुत ही मदद देती है। यह बिलकुल सच है कि अुसे अहिंसा और सत्यकी कोअी परवाह नही। अैसे कितने ही आदमी हैं जो काम कर रहे हैं। आज अहिंसा और सत्यकी कीमत ही कहा है? तू अधूरा विचार करती है। अपना काम सुशोभित करती रह और स्वय सुशोभित होती रह।

बापूके आशीर्वाद

२४४

[पू० महात्माजीके अवसानसे पहलेकी मेरी अन्तिम वर्षगाठके अवसर पर (अुस समयके वातावरणसे दु खी होकर और अुसका अत अज्ञात होनेके कारण) मैंने पत्रमे यह अिच्छा प्रगट की थी कि, "आप यह लोक छोडकर जाय अुससे पहले भगवान मुझे बुला ले।"]

नअी दिल्ली,
२५-६-'४७

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी वर्षगाठकी बात समझा। मुझसे पहले सब जाना चाहो, यह कैसी बात है? फिर मेरा क्या हाल होगा? यह कैसा स्वार्थ? परन्तु यह अच्छा है कि मरना-जीना किसीके हाथमे नही है। सारे प्रयत्न व्यर्थ हैं। हाथमे सो साथमे, यह कहावत अच्छी है।

ज० शाहनवाजके मामलेमे मैं सार्वजनिक रूपमे क्या कहू? कोअी कुछ लिखे अुसके लिअे मैं जिम्मेदार कैसे हो सकता हू?

मै जो कहू या करू अुसके लिअे मैं जरूर जिम्मेदार हू। बाकीके लिअे नही।

मेरा और तेरा पत्रव्यवहार प्रकाशित करनेमे कोअी सार नही है। देवको कुछ प्रकाशित करना होगा तो वे मुझे पूछ लेंगे।

के बारेमें तू जो कहती है वह सही हो यानी मैं तेरा कहना पूरी तरह समझा होअूं, तो कहूंगा कि तू बहुत बारीक भेद निकालती है। विचार कर।

अितना जरूर है। तू आकर मेरे साथ कुछ समय रह जाय तो शायद ज्यादा समझमें आ सके। अर्थात् थोड़े अंतमें दो चार-दिनका समय निकालना, अथवा जो काम हाथमें आये अुसे करते रहना। दुनियाको जैसे चलना हो वैसे चले।

तू अपना काम सुशोभित कर रही है।

सुशीला पैं गअी।

बापूके आशीर्वाद

२४५

[मेरे पिताजीके अवसानके समाचार मिलनेके बाद मुझे लिखा हुआ सान्त्वनाका पत्र।]

नअी दिल्ली,
२७-९-'४७

चि० प्रेमा,

तूने अपना पिता खोया और समझ सके तो बहुतसे पाये। हम सबके लिअे जो अुमरमें बड़े अथवा ज्ञानमें बड़े हैं वे सब पिता हैं। अैसी स्त्री हो तो हमारी मा है। हमारे बराबरवाले सब भाअी-बहन हैं और छोटी अुमरके सब लड़के-लड़की हैं। अिसलिअे हमारा संसार अमर कहा जायगा। फिर तू पिताके लिअे शोक क्यों करे? और मृत्यु तो हमारा सच्चा मित्र है। यह ठीक हो तो हमारे प्रियजन अपने घनिष्ठ मित्रसे मिले, अिसमें दुःख क्यों हो? प्रियजनोंका वियोग हो तब हमें अपने सेवाकार्यमें अधिक गुंथ जाना चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

२४६

[पू० महात्माजीकी वर्षगाठके अवसर पर अपने सूतकी दो धोतिया और शकररावजीके सूतके दो अुत्तरीय (ओढनेकी चादरे) मै वर्षोसे अुनके लिअे भेजती थी। १९४७ मे दोनो वस्त्र वुनकर आनेके वाद धोवीके पास भेजकर दो वार भट्टीमे चढानेके वाद वर्षगाठके दिन अुनके पास पहुचाने जितना समय नही था। अत अेक वार भट्टीमे चढाकर धो डालनेके वाद धोतिया अैसीकी अैसी शकररावजीके साथ पूनासे नअी दिल्ली भेज दी। वे सफेद नही हुअी थी। पू० महात्माजी अुन्हे अुसी रूपमे पहनना चाहते थे। परन्तु मालूम होता है अुनके साथ रहनेवाले किसीने अुनसे पूछे विना धोवीके यहा भेज दी।

मेरे पिताजीके अवसानसे मुझे जो दु ख हुआ अुसे दूर करनेके लिअे अुन्होने जो दलीले दी थी, खास तौर पर सेवाकार्यमे अधिक गुथ जानेकी सिफारिश, वे मुझे पसन्द नही आअी। अिसलिअे मैने अपना विरोध पत्रमे वताया था।]

नअी दिल्ली,
१२–१०–'४७

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे पास समय तो है ही नही।

मैने जो लिखा वह मेरा ही था। किसीके कहनेसे लिखनेवाला मै नही हू।

तेरे पत्रमे जो अुलाहना है अुसे मे समझता हू। मै क्या लिखू ? तुझे दु ख देनेके लिअे तो मै कुछ नही लिखूगा।

धोतिया शकरराव बडी श्रद्धासे लाये थे। पर गफलतसे धोने दे दी गअी। मेरा अिरादा तो अुसी रूपमे अुन्हे पहननेका था। मागने पर पता चला कि क्या हुआ। अिसमे क्या ? तुम सवकी सावधानीसे ठीक ११ तारीखको तो मिल ही गअी थी।

अधिक जव तू आयेगी तव।

वापूके आशीर्वाद

२४७

[पू० महात्माजीने मिलनेके लिअे आनेकी अनुमति तो दी, परन्तु मैं तुरन्त ही नही गअी। कस्तूरबा ट्रस्टके प्रान्तीय प्रतिनिधियोंकी बैठक दिसम्बरके दूसरे सप्ताहमें नअी दिल्लीमें करना तय हो गया था, अिसलिअे मैं अुस समय जाकर अुनसे अन्तिम बार मिल आअी।]

नअी दिल्ली,
२८-१०-'४७

चि० प्रेमा,

तेरा कार्ड मिला। तू आ सके तब आ जाना और मेरे साथ दो-चार दिन बिताना। तब हम भावनाकी बाते करेंगे।

बापूके आशीर्वाद

२४८

[नअी दिल्लीमे पू० महात्माजीके अवसानसे पहलेका अन्तिम अुपवास शुरु हुआ, अुसके समाचार मिलनेसे पूर्व मैंने अेक पत्र तथा तिल-गुड़की पोटली अुन्हे भेजी थी। वर्षोंसे अुन्हे तिल-गुड भेजनेका मेरा रिवाज था। १४ जनवरीके दिन संक्राति थी। अुपवासकी खबर मिलनेके बाद मैंने दूसरा पत्र लिखा। श्री शकररावजी अुस समय नअी दिल्लीमें थे। अुन्हे लिखा कि, "अुपवासके दिनोमे दिल्लीसे बाहर न जाये। रोज पू० महात्माजीको देखने जाअिये और मुझे पत्र लिखिये।"

अपने पहले पत्रमे मैंने तीन प्रश्न पूछे थे

१ समाजवादी दलके विषयमें आपका मत।

पडित जवाहरलालजी भारतके प्रधानमत्री हो गये अुसके बाद काग्रेसके अध्यक्षपदसे अुन्हे त्यागपत्र देना पडा। अुसके बाद किसे अध्यक्ष बनाया जाय, अिस बारेमें काग्रेस कार्यसमितिमे चर्चा हुअी थी। मुझे यह

खबर मिली (जो अन्यत्र भी फैली थी) कि जवाहरलालजीने स्वय ही आचार्य नरेन्द्रदेवका नाम सुझाया। तब पू० महात्माजीने अुन्हे अपनी अनुमति देते हुअे कहा, "जयप्रकाशको भी अध्यक्ष बना सकते हो।"—ये अथवा अिसी अर्थके शब्द अुन्होने कहे।

अिसलिअे मैंने पत्रमे पू० महात्माजीसे पूछा "जयप्रकाशजीके पीछे बहुमत नही है, फिर भी अुनका नाम आपने कैसे सुझाया? यह कदम लोकतात्रिक सस्थाके सविधानसे बाहर माना जायगा या नही?"

२ भारतमे भाषावार प्रान्त-रचना होनेकी चर्चा अुस समय खुले रूपमे हो रही थी। बम्बअी राज्यके महाराष्ट्र और गुजरात दो अलग राज्य हो जाय तो भौगोलिक दृष्टिसे और महाराष्ट्रीय लोगोका बहुमत होनेसे बम्बअी शहर महाराष्ट्रमे आना चाहिये, अैसा दावा महाराष्ट्रीय करते थे। अिस विषयमे पू० महात्माजीकी राय मैंने पूछी थी।

३ काग्रेस अब सत्ताधारी बन गअी थी अिसलिअे केवल पुलिस पर ही नही, सेना पर भी अुसका अधिकार हो गया है। अिसलिअे काग्रेसमे सत्यके साथ अहिंसाको भी जीवन-सिद्धान्त माननेवालोको आअिदा सदस्यके रूपमे रहना चाहिये या बाहर निकल जाना अुचित है, अिस बारेमे अुनका मार्गदर्शन मागा था।

पू० महात्माजीका १६ तारीखको लिखा हुआ पत्र श्री शकर-रावजीने विमान-मार्गसे सासवड भेजा, जो मुझे १७ तारीखको सुबह ११ बजे जब मै डाक लाने गअी तब मिला। साथमे श्री शकररावजीका पत्र था जिसमे लिखा था

"आज दोपहरको चार बजे (पू० महात्माजीसे मिलने गया) तब अुन्होने मुझसे कहा, 'प्रेमाके पत्रका अुत्तर आधा लिखवा डाला है और तुम रातको आओगे तब अिसे पूरा कर दूगा। तुम जल्दी भेजनेका प्रबन्ध करना।' अिसलिअे मै रातको आठ बजे गया तब पत्र लिखनेका काम चालू ही था। अुपवासके चौथे दिन अितना लबा पत्र जिस व्यक्तिको गाधीजी लिखवा रहे थे, अुससे वहा बैठे हुअे सभी लोगोको अीर्ष्या होना स्वाभाविक था। मनु आभासे कहने लगी, 'पुत्रीको पत्र लिखवा रहे है, अिसलिअे अितना लम्बा है।'"]

नओी दिल्ली,
१६-१-'४८

चि० प्रेमा,

तेरे दोनो पत्र कल मिल गये। 'तिल-गुड' तो सक्रांतिके दिन ही मिल गये थे। वह (डाकमे आओी) छोटीसी पोटली अपनी मेज पर पड़ी हुओी मैंने देखी। अुसके साथ लगाया हुआ जो पुट्ठा था वह नजरके बाहर था। देखा तो अुस पर तेरा नाम पढा। सक्रांति याद आओी और मैं समझ गया। आभासे खुलवाओी और कहा कि यहा जितने लोग है अुनमे अेक भाग तो बाट दिया जाय और दूसरा भाग मेरे लिअे रख लिया जाय — क्योकि अुपवासमे तो मैं खा नही सकता। अुस समय जो लोग मौजूद थे अुनमे अुसी समय तिल-गुडके दाने बाट दिये गये। तिल-गुडके महत्त्वके विषयमें तेरा काव्य पढा। खुशी हुओी। जिस त्योहारका शुद्ध भावना बढानेमें अुपयोग हो अुसकी मैं अवहेलना नही करूगा, परन्तु जिस त्योहारके साथ राग-रग वगैराका प्रदर्शन जुडा हुआ हो, वह त्योहार मुझे खटकता है।

शकररावदेवने कल बताया कि तूने खास तौर पर लिखा है कि तेरी ओरसे वे मुझे रोज देख जाय और पत्र लिखे। अुन्हें अैसा करना ही पडा तो वे अपना कर्तव्य चूकेंगे, अितना तू विचार कर ले। अुन्हें अलग अलग जगहो पर जाना चाहिये। जिसके बजाय अेक बूढेको देख जानेके लिअे वे अपनी जिम्मेदारी छोड दे? और मुझे देखनेके लिअे तेरे यहा आनेकी क्या जरूरत? तू अितना समझ कि यहा भी सेवा करनेवाले बहुत लोग है। अुन सबको आने दू तो मेरा अुपवास लम्बाता ही रहे, क्योंकि मेरी सेवामे अुन्हे सर्वस्व मिल गया अैसे भ्रममे पड कर वे अपने अपने स्थानको चूकें। फिर भी अैसा लगे कि तुझे आना ही चाहिये, तो आनेकी तुझे छूट है।

तेरे दोनो पत्र सुन्दर काव्य जैसे है। मैं नही जानता था कि भाषा पर तेरा अितना बडा अधिकार है।

समाजवादियोंके बारेमें मैं यह मानता हू कि वे त्यागी है अध्ययनशील है और साहसी है। वे क्या कर रहे है, यह मैं नही जानता।

अखबारोमे जो कुछ आता है अुतना जानना काफी हो तो अुतना ज्ञान मैं रखता हू। वह भी सूक्ष्म रूपमे नही। मुझे लगता है कि वे काग्रेसमे रहे और वह भी कार्यसमितिमे, तो वे काग्रेसकी शक्तिको बढायेगे। अिसका कारण यह है कि काग्रेसके खर्च पर अैसे आदमी अपने दलकी शक्ति बढानेकी कोशिश कभी नही करेगे और करेगे तो अुनके दलका क्षय होगा। यदि अिससे अलटी बात सच हो तो मेरे विचारोका अनुसरण करनेवाले लोग समाजवादियो अथवा अन्य विरोधियोके प्रति प्रेमभाव रखे और अविश्वासको प्रेमसे जीते। प्रेमसे कट्टरसे कट्टर विरोधीको भी जीता जा सकता है। न जीता जा सके तब समझना चाहिये कि दोष हमारा है। हमारा प्रेम अधूरा है।

मैंने जब जयप्रकाशका नाम राष्ट्रपतिके रूपमे रखा तब जो शब्द मेरे मुहमे किसीने रखे है वे मैंने जरूर कहे होगे, क्योकि अुस समय तो वह बात सत्य थी। आज अुसमे कुछ फर्क पड गया है। यह कैसे, अिसमे जानेकी जरूरत नही। यह हो सकता है कि मेरे प्रेमसे राष्ट्रपति बननेकी योग्यता अनायास किसीमे पैदा हो जाय। परन्तु मेरे प्रेमके साथ अैसी योग्यताका कोअी सम्बन्ध नही है। अितना जरूर है कि जो वाक्य मैंने कहा है वह किस सदर्भमे और किस ढगसे कहा है, अिसका तो मै भी वर्णन नही कर सकता।

यह बात सच है कि बहुमतवाले दलके लोगोमे से कार्यसमिति चुनी जाती है, फिर भी बहुमत अपने ही दलमे से अध्यक्ष चुने यह बात हमेशा सच नही होती। समझदार कार्यसमिति हो और अल्पमतवाले दलमे से भी कोअी होशियार और प्रामाणिक मनुष्य मिल जाय तो वह अुस मनुष्यको जरूर पसन्द करेगी। तो ही लोकतत्र अन्तमे सफल होगा। कृपण बहुमत सदा भयकर परिणाम लाता है।

अुनके विचार और नीति जहा तक मै जानता हू वहा तक राष्ट्रके लिअे घातक नही है, अुनकी रीति राष्ट्रहितकी विरोधी है। परन्तु यदि वे अध्यक्ष हो जाय तो अुन्हे काग्रेसकी नीतिका ही अनुसरण करना चाहिये। खूबी यह है कि विरोधी वातावरणके बीच अुन्होने स्वय ही राष्ट्रपति बनना नामजूर कर दिया। जिस मनुष्यने बाहर रहकर विरोध किया

वही जब सारे राष्ट्रका सरदार बन जाय, तब अगर अुनमें जरा भी देशप्रेमकी भावना हो तो वह अपना विरोध अवश्य छोड देगा। यह कानून मेरे घरका नहीं है। यह सर्वमान्य कानून है — अर्थात् लोकतंत्रमें। आश्चर्य है कि यह बात तू कैसे नहीं समझी। मैंने अपने मानसकी बात समझा दी। अिसका यह अर्थ कभी नहीं कि कोअी अपने विचारको छोडकर मेरे खातिर या मुझसे भी बडेके खातिर अपने विचारके विरुद्ध काम करे।

२ यह चीज पूरी तरह समझानेमें मुझे अेक पुराण लिखना पडेगा। अिसकी आशा तो तू अिस अुपवासके चौथे दिन नहीं रखती होगी। मैंने पहले क्या लिखा है, यह तो मुझे याद नहीं। अुनका विचार अिस समय अप्रस्तुत होगा। अिस समय मैं क्या सोचता हूं वही मेरे लिये और तेरे लिअे भी सच्चा होगा। सभी काम बहुमतसे ही किये जाय, यह नीति घातक है। जहां धर्मका भंग न होता हो वहां लेन-देनकी गुंजाअिश है। मेरे दिमागमें तो अितना ही है कि यदि आज ही कानूनसे भी भाषावार प्रान्त बना देने जरूरी हो, तो जो कुछ कांग्रेसने १९२० में किया वही क्यों न कायम रखा जाय? अैसा हो और सब मिलकर प्रत्येक प्रान्तकी सीमा भी निश्चित कर दें, तो महाराष्ट्र, गुजरात और बम्बअीके प्रश्नका निबटारा हो सकता है। अब तो मुझे अिसे समेट लेना चाहिये, क्योंकि यह पत्र ले जानेके लिअे देव यहां बैठे हैं। मैंने अुन्हें बुलाया था।

३ कांग्रेस अब भी राजनीतिक संस्था है और आगे भी होगी। परन्तु जब अुसके हाथमें राज्यकी लगाम होगी, तब वह स्वाभाविक रूपमें ही अेक दल, चाहे कितना ही बडा क्यों न हो, बन जायगी। अिसलिअे जो अहिंसामें संपूर्ण निष्ठा रखते हो वे राज्याधिकारी नहीं होंगे।

अितने विस्तृत अुत्तरकी आशा तूने अिस अवसर पर तो नहीं रखी होगी। परन्तु लिखवा सका हूं, यह बताता है कि अिस बारका अुपवास मुझे कमसे कम कष्ट दे रहा है।

बापू

की। अिस निर्णय पर पहुचनेमे मुझे गहरा दु ख हुअे विना नही रहा। अिस प्रथाके चालू रहते या अुसके कारण मेरे मनमे कभी अेक भी मलिन विचारने प्रवेग नही किया। मेरा आचरण हमेशा खुले आम हुआ है। मै मानता हू कि वह आचरण पिता करता है वैसा ही था, और अुसके कारण जिन अनेक वालाओका मै मार्गदर्शक और रक्षक वना हू, अुन्होने दूसरे किसीके सामने न की हो अितने विश्वासके साथ और अितनी निर्भयतासे अपने मनकी वाते मेरे सामने की है। जिस ब्रह्मचर्यको हमेशा अन्य स्त्री या पुरुपके स्पर्शके सामने रक्षणकी दीवार रचनेकी जरूरत हो और जो जरासे भी प्रलोभनके सामने आते ही स्खलित हो जाय, अुसे मै सच्चा ब्रह्मचर्य नही मानता। फिर भी मैने जो छूट ली है अुसमे रहे खतरोसे मै वेखवर नही था।

अिसलिअे मैने अूपर वताअी हुअी खोजके परिणामस्वरूप, मेरी प्रथा चाहे जितनी शुद्ध रही हो, तो भी अुसका त्याग कर दिया है। मेरे प्रत्येक आचरणको हजारो स्त्री-पुरुष सूक्ष्मतासे देखते है, क्योकि मै जो प्रयोग कर रहा हू अुसमे अखड जागृतिकी आवश्यकता है। जिन कामोका मुझे दलीलोसे बचाव करनेकी जरूरत पडे, वे काम मुझे नही करने चाहिये। मेरे अुदाहरणका कोअी भी मनुष्य अनुसरण कर सकता है, अैसी धारणा मेरी कभी नही थी। अिस युवकके अुदाहरणने मुझे सावधान कर दिया है। मैने अिसे चेतावनी समझा है और आशा रखी है कि जिन्होने मेरे अुदाहरणके असरसे या अुसके विना भूले की है, वे वापस सन्मार्ग पर मुडेगे। निर्दोष यौवन अेक अनमोल धन है। क्षणिक अुत्तेजनाके लिअे, जिसे आनन्दका गलत नाम दिया जाता है, यह धन नष्ट नही करना चाहिये। अिस घटनाकी लडकीकी तरह जो निर्बल मनकी लडकिया हो, वे अितना वल सम्पादन करे जिससे शठ या अपने कियेका भान न रखनेवाले युवकोकी चेष्टाओका — भले वे कितनी ही निर्दोष क्यो न हो — विरोध करके वे अुन्हे रोक सके।

हरिजनवन्धु, २२–९–'३५

२

प्रभुकृपाके बिना सब मिथ्या है

डॉक्टर मित्रो और स्वेच्छासे मेरे जेलर बने हुअे सरदार वल्लभभाअी तथा जमनालालजीकी कृपासे 'हरिजनबन्धु' के पाठकोके साथ मेरी साप्ताहिक बातचीत थोडे-बहुत अशमे फिरसे शुरू करनेकी मुझे प्रयोगके रूपमे छूट मिली है। यह छूट देते समय अुन्होने कुछ शर्तें मुझ पर लादी है और अुन्हे मैंने अभी तुरन्त तो स्वीकार कर लिया है। वे शर्तें ये हैं (१) मेरे साप्ताहिकोके लिअे भी अत्यन्त आवश्यक हो अुतना ही मैं लिखू और वह भी सप्ताहमे अेक-दो घटेसे ज्यादा परिश्रम न करना पडे अुतना ही, (२) अपने व्यक्तिगत या पारिवारिक प्रश्नो और समस्याओके बारेमें लिखनेवालोके साथ मै पत्रव्यवहार न करू (अैसे अेक दो प्रश्नोके सिवा जिनमे मै शुरूसे लेकर अब तक पूरी तरह फस चुका हू), (३) किसी भी सार्वजनिक कामकाजको मै स्वीकार न करू और अेक भी सार्वजनिक सभामे शामिल न होअू या भाषण न दू। अिसके अलावा, निद्रा, आराम, व्यायाम और आहारके बारेमे भी नियम बनाये गये है। लेकिन अुनसे पाठकोका कोअी सम्बन्ध न होनेके कारण मै यहा अुनका अुल्लेख नही करूगा। मुझे आशा है कि मेरे साप्ताहिकोके पाठक और पत्रलेखक अिस बारेमे मुझे सहयोग देगे और महादेव देसाअी पर, जिनके द्वारा मेरे सामने आवश्यक पत्र रखे जाते हैं, दया करेगे।

मेरी तबीयत बिगडनेके कारण जाननेकी पाठकोको सहज ही अिच्छा होगी। डॉक्टर मित्रोने बहुत सावधानी और परिश्रमपूर्वक मेरी परीक्षा की और अुनका कहना मै जहा तक समझा हू वहा तक अुन्हे मेरे अेक भी अवयवमे कोअी बिगाड मालूम नही हुआ है। अुनकी राय यह है कि मेरी तबीयत बिगडनेका कारण यह है कि मेरी खुराकमे पौष्टिक तत्त्व (प्रोटीन) और गरमी पैदा करनेवाले तत्त्व (शक्कर और स्टार्च) अुपयुक्त प्रमाणमें नही थे और मैंने काफी अरसेसे अतिशय मानसिक परिश्रम किया है। मेरे

रोजके सार्वजनिक कार्योके अलावा कष्टदायी व्यक्तिगत प्रश्नो पर भी मैंने घटो सिरपच्ची की। मुझे खुदको भी याद है कि पिछले बारह महीनोसे या अुससे भी ज्यादा समयसे मै यह शिकायत करता आया हू कि मेरा बढता हुआ काम मै कम नही करूगा तो मेरा शरीर टूट जायगा। अिसलिअे जब मेरी तबीयत बिगडी तो मुझे कोअी आश्चर्य नही हुआ। मेरे आसपासके अेक व्यक्तिने मेरी अस्वस्थता देखकर घबराहटमे तुरन्त जमनालालजीको लिख न दिया होता और अुन्होने वर्धाके सब डॉक्टर अिकट्ठे न किये होते और बम्बअीसे डॉक्टर न बुलाये होते, तो सम्भव है कि मेरी बीमारीका दुनियाको जरा भी पता न चलता।

जिस दिन मेरी तबीयत बिगड़ी अुस दिन सुबह अुठते ही मुझे चेतावनी तो मिल चुकी थी। मेरी गरदनके अूपरके भागमे विचित्र दर्द शुरू हुआ था। लेकिन मैंने अुसकी परवाह नही की और किसीसे कुछ कहा भी नही। दिनका कार्यक्रम हमेशाकी तरह चालू रखा। शामको घूमते समय अेक मित्रके साथ अत्यन्त गम्भीर और थकानेवाली बात करनी पडी, अुसके परिणामस्वरूप मेरी तबीयत बिगडी और मैंने बिस्तर पकडा। साथियोके व्यक्तिगत प्रश्न मेरे लिअे तो स्वराज्यके प्रश्नो जितने ही महत्त्वके ठहरे। अैसे प्रश्न अेक बार छिड जाय फिर मै अुन्हे छोड नही सकता। अैसे प्रश्नोकी चर्चा और अुनके निराकरणमे अेक पूरे पखवाडे तक मेरे खूनका पानी हुआ था। फिर और कोअी परिणाम कैसे आ सकता था?

अगर मेरी बिगडी हुअी तबीयतके बारेमे धाधली न मचाअी गअी होती तो भी कुदरतकी चेतावनीकी मै अवहेलना न करता, मैंने काफी आराम किया होता और मै अच्छा हो जाता। लेकिन जो हो गया अुसे देखते हुअे मुझे लगता है कि अितनी धाधली ठीक ही थी। डॉक्टर मित्रो द्वारा रखी गअी असाधारण सावधानी और मेरे दोनो जेलरो द्वारा की गअी असाधारण सभालके परिणामस्वरूप मुझे जबरन् अतिशय आराम लेना पडा। अितना आराम स्वेच्छासे तो मैंने नही ही लिया होता। अिस आरामके समयमे मुझे आत्मनिरीक्षणके लिअे खूब अवकाश मिला। अिससे मुझे लाभ हुआ, अितना ही नही बल्कि मेरे आत्मपरीक्षणने मुझे बता दिया है कि गीताका जो अर्थ मैंने किया है अुसके मेरे पालनमें

गभीर त्रुटिया थी। चाहे जितने गभीर व्यक्तिगत प्रश्न मेरे सामने आये, लेकिन किस लिअे मैंने मनोमथनमे पडकर अतिशय कष्ट भोगा, मैंने अुनका विचार पूरी अनासक्तिसे क्यो नही किया ? अुनके लिये मैंने भारी वेदना अुठाअी और अपना खून जलाया, यह तो स्पष्ट ही है। गीताके पुजारीके शरीर और मन पर अैसे प्रश्न व्यथा अुत्पन्न नही कर सकते, वह तो 'सम-दु ख-सुख' और 'धीर' रहता है। लेकिन मै धीर नही रहा। मेरी सचमुच यह मान्यता है कि गीतामाताके अुपदेशके अनुसार व्यवहार करनेवालेके मन और आत्माको जरा और व्याधि लग ही नही सकती। अैसे गीताभक्तका शरीर नीरोग वृक्षके पके फल या सूखे पत्तोकी तरह समय आने पर गिर जाता है, लेकिन अुसकी आत्मा तो सदा ताजी ही रहती है। बाणशय्या पर लेटे हुअे भीष्म पितामह द्वारा युधिष्ठिरको दिये गये अलौकिक अुपदेशका रहस्य यही है।

डॉक्टर मित्रोने हमेशा मुझे अपने आसपास घटनेवाली घटनाओंसे बेचैन न होनेकी सलाह दी है। अैसी बेचैन करनेवाली घटनाओकी खबर मुझे न देनेकी भी खास सावधानी रखी गअी थी। ये लोग मुझे जितना अल्प गीताभक्त समझते थे अुतना अल्प तो मै नही था, फिर भी अुनकी सावधानी और सूचनाके पीछे रहस्य था। जमनालालजीने मुझे मगनवाडीसे महिलाश्रम ले जानेकी माग की तब मुझे कितना दु ख हुआ था यह मै जानता हू। लेकिन जमनालालजी क्या करे ? अनासक्तिपूर्वक काम करनेकी मेरी शक्तिके बारेमे अुन्हे श्रद्धा रही ही न थी। मेरी तबीयत गिर गअी, अितनी ही बात अुनके सामने मेरे अनासक्तिके दावेको न माननेके लिअे काफी थी। अुनका लगाया हुआ अपराध मै स्वीकार करता हू।

लेकिन अभी तो मेरे दु खका कटोरा पूरा भरा नही था। मै सन् १८९९ मे ब्रह्मचर्यका ज्ञानपूर्वक और आग्रहपूर्वक पालन करनेका प्रयत्न करता आया हू। ब्रह्मचर्यकी मेरी परिभाषामे शरीरकी ही नही बल्कि विचार और वाणीकी शुद्धिका भी समावेश होता है। शारीरिक शुद्धि तो मै अीश्वरकी कृपासे पालन कर सका हू। पिछले छत्तीस वर्षोके सतत प्रयत्न-कालमे मानसिक शुद्धि भी अेक ही बार खतरेमे पडी थी। वैसे ही मनोविकारका दर्शन अिस बीमारीके दिनोमे अेक बार मुझे हुआ और

मै काप अुठा। मुझे अपने प्रति तिरस्कार पैदा हुआ। विकारका दर्शन होते ही मैने अपने साथियो और डॉक्टरोसे वात की। वे वेचारे मेरी क्या मदद करते? मैने अुनसे किसी तरहकी मददकी आशा भी नही रखी थी। मुझ पर पूरे आरामकी जो कडी शर्त अुन्होने लगाअी थी, अुस शर्तका मैने भग किया और कामकाज शुरु किया। मैने अपने दु खद अनुभवकी वात सव पर प्रगट की, अिसलिअे मेरा मन काफी हलका हो गया। मुझे अैसा लगा कि मेरे अूपरसे भारी वोझ अुतर गया। मुझे कोअी भी हानि हो अुससे पहले मै सावधान हो गया।

लेकिन गीतामाताका क्या? अुसका अुपदेश तो स्पष्ट है। अुसमे कोअी परिवर्तन नही कर सकता। अिस ध्रुवतारेकी निशानी सामने रखकर जिसका मन चलता है, अुसे विकार छू नही सकते। अिस ध्रुव-तारेसे — अिस सर्वनियन्तासे मै कितना दूर होअूगा यह तो वही जानता है। 'महात्मा' के रूपमे प्रसिद्ध हो जानेके वावजूद अीश्वरकी कृपासे मै कभी फूला नही, वेवकूफ नही वना। लेकिन मेरे भीतर गर्वका थोडा भी जो अश रहा होगा, वह जवरन् आराम करना पडा अुससे गल गया है। अिससे मेरी मर्यादाअे और अपूर्णताअे स्पष्ट हो जाती है। लेकिन अिन मर्यादाओ और अपूर्णताओसे शरमानेकी जरूरत नही है। अिन्हे दुनियासे छिपाअू तो ही शरमानेकी जरूरत हो सकती है। गीतामाताके अुपदेशके वारेमे मेरी श्रद्धा पहले जितनी ही आज भी जाग्रत है। अिस अुपदेशका जीवनमे साक्षात्कार तभी होता है, जव अुस अुपदेशके पालनके लिअे सतत प्रयत्न किया जाय। लेकिन वही गीताजी कहती है कि यह साक्षात्कार प्रभुकृपाके विना नही होता। प्रभुकृपाकी शर्त भगवानने न रखी होती, तो आदमीका सिर फिर जाता और अुसके अभिमानकी सीमा न रहती।

हरिजनवन्धु, १–३–'३६

प्रेम पन्थ

प्रेमपन्थ पावकनी ज्वाळा, भाळी पाछा भागे जोने,
माही पडचा ते महासुख माणे, देखनारा दाझे जोने।
हरिनो मारग छे शूरानो।।[१]

मेरे जीवनमे प्रार्थनाने बहुत हिस्सा अदा किया है। मै बिलकुल बच्ची थी तब मुझे किसीने व्यक्तिगत या सार्वजनिक प्रार्थनाके बारेमे कुछ कहा हो या सस्कार दिये हो अैसा मुझे याद नही है। लेकिन ननमालमें मै रहती थी तब मेरे नाना कभी कभी पोथी पढ कर सुनाते थे। अुमकी कथाअे मै सुनती थी। छोटी या बडी सभी अुमरके भक्तोको भगवान सकटसे बचाते है, अैसे किस्से अनेक बार सुननेमे मेरे मनमे श्रद्धा जागी और यह विश्वास पैदा हुआ कि अुन भक्तोकी तरह मै भी भगवानसे प्रार्थना करु तो वह मेरी भी सहायता करेगा। बादमे मैंने अिसका अनुभव किया। बचपनके सकट भला कितने बडे हो मकते है! फिर भी समय समय पर अुस अुम समयकी मेरी भावनाके अनुमार मुझे जब सकटभरी परिस्थिति लगती तब मै चुपचाप मनमें भगवानकी करुणाके लिअे याचना करती, पोथीमे से सुने हुअे भक्तोके करुणा-वचनोका अुपयोग करती। सकटके प्रसग अैमे होते थे बीमारी, परीक्षा, अबेरेमे जानेके प्रसग, अच्छा न लगनेवाला काम, अनिच्छासे करनेके प्रमग, स्कूल जाते समय चिलबिले आदमियो द्वारा सताये जानेके प्रमग। लेकिन अनुभव अैसा हुआ कि प्रार्थनासे या तो सकट दूर हो जाते है, या मदद अथवा बल मिलता है। अिसलिअे मेरी श्रद्धा बढती ही गअी।

पूज्य महात्माजीके आश्रममे जाकर साधना करनेकी मेरी अिच्छा सब तरहसे अनुकूलता प्राप्त करके आखिरमे सफल हुअी। यह भी

---

१ अर्थ प्रेमका मार्ग आगकी ज्वालाके समान है। लोग अुसे देखकर वापस भाग जाते है। जो अुसके भीतर प्रवेश करते है, वे महासुख भोगते है। और बाहरसे देखनेवाले जल जाते है। हरिका मार्ग शूरोका है।

प्रार्थनाका ही फल है अैसी मेरी श्रद्धा है। वहा चारेक वर्प वितानेके वाद और जेलमे ग्यारह महीने रहनेके वाद फिर निर्णयकी मुसीवत आकर खडी हुअी तव भी प्रार्थना काम आअी। जेलसे छूटनेके पहले भविष्यके मार्गदर्शनके लिअे भगवानसे प्रार्थना की, तव अुसकी कृपासे वह काम सरल हो गया।

प्रार्थनाके साथ मेरे जीवनसे जुडी हुअी अेक गूढ घटना सूचक स्वप्नोकी है। वुद्धिनिष्ठ विद्वान अिसे हसकर टाल देगे। लेकिन मैं तो अपने अनुभवके आधार पर कहती हू। जव जव मेरे जीवनमे कोअी खास परिवर्तन होनेका समय आया है, अथवा मार्गदर्शनकी अपेक्षा होती है, अथवा अपेक्षा न होने पर भी मेरे हाथसे कोअी काम होनेकी अपेक्षा नियति रखती है, तव तव मुझे सूचक स्वप्न आये है। सत्याग्रह आश्रममे आनेके वाद मुझे अेक अैसा स्वप्न आया था, जिसका स्पष्टीकरण पूज्य महात्माजीने अपने ढगसे किया था। सासवड आनेके वाद भी फिरसे (वह) स्वप्न आया।

सासवड आनेके वाद मेरे मनमे दो विचार-प्रवाह वहने लगे। अेक, मनमे अैसी चिन्ता वनी रहती थी कि जिस क्षेत्रमे अभी तक कोअी कार्य नही हुआ है अुसमे नया प्रयोग करते समय ज्ञान और अनुभव न होनेसे कार्यशक्तिमे अुतनी कमी रहेगी। साथी नये, क्षेत्र नया, अपनी वुद्धि तथा शक्तिके मापका कोअी अन्दाज नही। अिसके सिवा यहाका वातावरण भी सत्याग्रह आश्रमके वातावरणसे मिलता नही था। महाराष्ट्रमे रचनात्मक कार्यकर्ता भी राजनीतिमे पूरा रस लेते है। विद्वत्ताको प्रथम आदर मिलता है और चर्चा तथा वाद-विवाद पूरे जोशसे चलते है। दो महाराष्ट्री मिले कि वाद-विवाद आरम्भ हुआ ही समझिये। ये सव वाते मेरे स्वभावके विरुद्ध थी। अिस वातावरणमे अपने ढगका सेवा-कार्य कैसे होगा, अिसकी चिन्ता मनमे वनी रहती थी।

दूसरा विचार पूज्य महात्माजीके वारेमे था। सत्याग्रह आश्रममे थी तव वे भले ही दूर रहे तो भी पास ही लगते थे। पत्रव्यवहार द्वारा अुनके साथ सान्निध्य कायम रहता था। वीच वीचमे मिलना भी हो जाता था, अुनका सहवास भी मिलता था। अव मै दूर आ पडी थी। वे भी वहुत

दूर थे। पत्रव्यवहार नियमित चलेगा या नही, अुनके मनमें मेरा स्थान रहेगा या नही, अैसी अैसी चिन्तायें मनमें हुआ करती थी। सूर्यमालामें अपने कक्षमे घूमनेवाले ग्रह जिस प्रकार सूर्यमे प्रकाश और शक्ति प्राप्त करते है, वैसे ही दूर रहते हुअे भी पूज्य महात्माजीसे स्नेह, सहानुभूति तथा बल प्राप्त करनेकी आशा मै रखती थी। अिस प्रकार दो तरहकी चिन्तामें मन व्यग्र हो गया था। और भविष्य अधकारमय लगता था।

अैसी स्थितिमे रातको यह स्वप्न आया

मैने देखा कि अेक विशाल मैदानमें मै बैठी हू। मैदान अितना विस्तीर्ण था कि दूर गोल घूमता हुआ आकाश क्षितिजके पास अुससे मिलता हुआ दिखाअी देता था। पेड, मकान, रास्ता कुछ भी नही दीखता था। मनुष्य भी नही थे। सर्वत्र हरी घास अुगी हुअी थी और मैदानमे मध्यबिन्दुके रूपमे अेक कुरसी पर मै बैठी हुअी थी। थी तो अकेली ही, लेकिन अैसी प्रतीति होती थी कि मेरे पीछे ही अेक व्यक्ति खडा है। मुझे वह व्यक्ति दिखाअी नही पडता था, दृष्टिसे ओझल था, लेकिन वह पुरुष था, मेरा रक्षक कहो या तारनहार कहो, लेकिन वह साथ देनेवाला था, अिस बारेमे मुझे शका नही थी। अिस स्थितिमे मै बैठी थी तभी अचानक सामनेसे चार-पाच सुन्दर बालक, सुन्दर पोशाक पहने हुअे, हाथमें फूलोके गुच्छे लिये दौडते आये और पास आकर अुन्होंने वे गुच्छे मुझे दे दिये। मै अुनके साथ बाते करने लगी, अितनेमें वैसे ही दूसरे बच्चे दौडते हुअे आये और अुन्होंने भी मुझे गुच्छे दिये। अिसी तरह बालकोंके झुण्ड वहा आते गये और सभी मुझे गुच्छे देने लगे। आखिरमें बालक ठहर गये और चारो दिशाओंसे और अूपर आसमानसे पुष्प-गुच्छोकी वृष्टि मेरे अूपर होने लगी, जिससे मै ढक गअी और चौंककर नीदसे जाग गअी।

जागनेके बाद स्वप्नका विचार आया। मैने जाना कि स्वप्नमें जो पुरुष मेरे पीछे अदृश्य रूपमे खडा था वे पूज्य महात्माजी ही थे। अुनके आशीर्वाद मेरे साथ हमेशासे है, अिसलिअे अुनका असर मेरे सेवाकार्यमें दृश्य फल दिये बिना नही रहेगा, अैसा विश्वास मनमें दृढ हो गया।